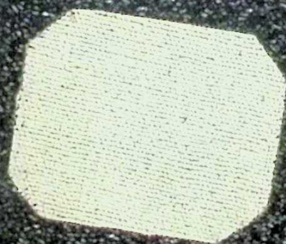


AYURVED MAHA SAMMELAN PATRIKA

1956 G. K. U.

जनवरी १९५६

पौष २०१२

आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका



प्रधान सम्पादक:

कविराज स्वामी चेतनानन्द आयुर्वेदालंकार

॥ श्री धन्वन्तरयेनमः ॥

यत्प्रभापटलोद्भासि भासतेऽद्यापि भारतम् ।
आयुर्वेदात्मकं ज्योतिः शाश्वतं नः प्रकाशताम् ॥

आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका

(अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन का मासिक मुख-पत्र)

प्रधान सम्पादक—कविराज स्वामी चेतनानन्द आयुर्वेदालंकार

पत्रिका कार्यालय—महालक्ष्मी मार्केट, चांदनी चौक, देहली ।

वर्ष ४३ अंक १ | दिल्ली, पौष २०१२, जनवरी १९५६ | वार्षिक ५) एकप्रति ॥)

सम्पादकीय

४१वें आयुर्वेद महासम्मेलन कुर्नूल की अद्वितीय सफलता

ता० २९, ३० तथा ३१ दिसम्बर को अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का अधिवेशन सानन्द सम्पन्न हो गया । जो महानुभाव इस महासम्मेलन में पधारे थे उनमें प्रत्येक का यही मत था कि इस अधिवेशन की अभूतपूर्व विजय रही है । इस वार्षिक अधिवेशन से पूर्व जिस प्रकार का वातावरण था उसको देखकर किसी को भी यह आशा नहीं थी कि यह सम्मेलन निर्विवाद सम्पन्न हो सकेगा । परन्तु बात उल्टी ही रही । एक भी ऐसा प्रस्ताव नहीं हुआ जिस पर मत-विभाजन हुआ हो । बल्कि सर्वसम्मति से प्रत्येक प्रस्ताव पारित हुआ । बीच-बीच में गतिरोध के बादल मंडराते रहे परन्तु जल्दी एक ऐसा कार्यकर्त्ताओं की ओर से तूफान आ आ जाता था जिससे सारे बादल छिन्न-भिन्न हो जाते थे और प्रकाश अपनी किरणें स्वच्छरूप से फैला देता था । सदस्य महानुभावों की महानता तथा उदारता को भी हम नहीं भुला सकते । कार्यकुशल नेता जब अपना प्रस्ताव वैद्य महानुभावों के सामने लाते तो एकदम वैद्य समुदाय गरम होकर विरोध करने पर तुल जाता परन्तु दो ही मिनट के बाद उनका मूड (Mood) बदल जाता और कार्यकुशल नेता के मत से सहमत होकर उस कार्य को जो घन्टों में भी पूरा नहीं हो सकता था मिनटों में पूरा कर देते थे । इससे कार्य की गतिविधि में नई चेतना मिलती थी और सारी वैमनस्यता दूर होकर सद्भावना में बड़ी सौम्यता से बदल जाती रही । बड़ी ही आश्चर्यजनक तथा सन्तोषप्रद सफलता पाकर सदस्यगण अपने-अपने स्थान को प्रस्थान कर गये । हो सकता है कि भोजन आदि की व्यवस्था से किसी को शिकायत हो परन्तु महासम्मेलन के कार्यों से किसी को भी शिकायत नहीं हो सकती ।

इस बार महासम्मेलन के भूतपूर्व प्रधान वैद्यरत्न पं० शिवशर्मा जी वर्त्तमान महा-

सम्मेलन प्रधान के आदेश को पाकर दुभाषिया रूप में सारे अधिवेशन का कार्य सम्पन्न कराते रहे। जिसमें क्षमादान भी आलौकिक रहा।

नागपुर में आयुर्वेद रस शोधकार्य

आयुर्वेदाचार्य श्री वेणीमाधव जोशी शास्त्री, रिसर्चस्कालर,नागपुर विश्वविद्यालय, के विशेष निमन्त्रण पर हम नागपुर एक दिन ठहरे। दोपहर को श्री लक्ष्मी नारायण इन्स्टीच्यूट जहां पर शास्त्री जी कार्य करते हैं, वहाँ गये। श्री शास्त्री जी ने पारद के अष्ठ संस्कार पूर्ण कर लिए हैं। शेष आठ पूर्ण करने में प्रयत्नशील हैं। उनका यह शोधकार्य सशास्त्रीय तथा अनुभवपूर्ण हो रहा है। भिन्न-भिन्न प्रकार की भट्टियों का निर्माण तथा कार्य प्रणाली प्रमाणित रूप से उन्होंने चला रक्खी हैं। महर्षियों की अनुभवपूर्ण परम्परा आधुनिक ढंग से सिद्ध करके दिखलाने पर शास्त्री जी कटिबद्ध है। हमें पूर्ण आशा है कि इसी ढंग से अथक परिश्रम से शास्त्री जी अपनी इन लुप्त प्राय: पारद संस्कार क्रियाओं को सप्रमाण पूर्ण करके आयुर्वेद जगत् में नवचेतना का संचार करेंगे। हमारा वैद्य समाज से विनम्र आग्रह है कि जब जब नागपुर जाने का अवसर मिले तब अवश्य ही पारद संस्कार पर किये गये शोधकार्य का अवलोकन करें। इससे उनको इस विषय में बड़ी प्रेरणा मिलेगी। हम शास्त्री जी के बहुत कृतज्ञ हैं कि उन्होंने अपने इस विलक्षण साहसपूर्ण कार्य से अवगत कराया। हम विश्वविद्यालय के अधिकारियों को भी धन्यवाद दिये विना नहीं रह सकते जिन्होंने इस कार्य को पूर्ण कराने का संकल्प कर रखा है!!

एक विदेशी चिकित्सक की एलोपैथिक चिकित्सकों की कानमरोड़ी

"दी प्रैक्टिशनर" नामक मेडीकल साप्ताहिक लन्डन, में एक विदेशी चिकित्सक उन डाक्टरों को जो अन्धाधुन्ध कीटाणुनाशक औषधि जैसे कि पेनसिलीन अथवा इस प्रकार की अन्य औषधियों का प्रयोग करते हैं, सावधान करते हुए लिखते हैं कि इस प्रकार के प्रयोग ने एक प्रकार के नवीन कीटाणुओं को जन्म दे दिया है जो पहले कीटाणुओं की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली हैं जिन पर इन दवाइयों का प्रभाव कम होता जा रहा है। अगर कोई डाक्टर किसी बीमार पर पेनसिलीन का प्रयोग करता है और उस हालत में कोई कीटाणु जीवित बच रहता है तो उस पर दूसरी बार पेनसिलीन का प्रभाव न्यूनतम होता चला जायगा इसलिए मामूली बिमारियों पर ऐसी औषधियों का प्रयोग कदापि नहीं करना चाहिए।

यह है उस विशेषज्ञ की चेतावनी जो इस विषय का महान पंडित है। इधर हम अपने देश के डाक्टर भाइयों को देखते हैं कि जहां उनको कुछ और समझ में नहीं आया तो उस पर पेनसिलीन का टीका रोगी को लगा देते हैं, फिर उसकी किस्मत!!

क्या डाक्टर लोग अपने इस नेता की आवाज सुनकर कुछ होश सम्भालेंगे? हठधर्मी छोड़कर विवेकपूर्ण कर्म करना ही बुद्धिमत्ता का लक्षण है।

आशा है कि इस गोशमाली को विदेशी चिकित्सक न भूलेंगे!!

भारतीय स्वास्थ्य विभाग से न्याय की मांगः—

ऐलोपैथी में पाण्डु-कामला महारोग की अभी तक कोई सफल चिकित्सा नहीं

ता० १३ जनवरी १९५६ को रेडियो ब्राडकास्ट में पूना विषाक्त अनुसन्धान केन्द्र के निर्देशक डाक्टर टेलफोर्ड वर्क, अमेरिका के एल. विश्वविद्यालय के डाक्टर जोसेफ मैल-निक, भारत सरकार के स्वास्थ्य सेवाओं के प्रधान निर्देशक लैफ्टीनेन्ट कर्नल सी. के. लक्ष्मनन और नई दिल्ली की चिकित्सा अनुसन्धान की भारतीय परिषद् के सचिव डाक्टर सी. जी. पण्डित ने भी भाग लिया। इनका विवरण रेडियो तथा पत्रों से सबने सुन लिया है। विदेशी चिकित्सकों ने यह स्पष्टतया बता दिया है कि ऐलोपैथी में जिसके पीछे बड़े बड़े राष्ट्र लगे हुए हैं अभी तक कोई सिद्ध चिकित्सा इस पाण्डुरोग की नहीं पाई गई है। उन्होंने आगे चल कर सत्यवादिता से यह भी कहा कि हमारे लोगों में विषतत्व लगातार बढ़ रहा है। उदा-हरणार्थ दक्षिणी भारत में गत कुछ महीनों में दिमाग की सूजन से जितने आदमी मरे हैं उतने दिल्ली में पाण्डु रोग से नहीं मरे, फिर भी विषाक्त तत्वों से पैदा होने वाले रोगों का भारत के लोगों से जो सम्बन्ध है वह गम्भीर और विचारणीय है। पाण्डुरोग का प्रभाव गर्भिणी स्त्रियों पर भी विशेष पड़ रहा है आदि। यह शोचनीय है।

हमें सूचना मिली है कि दिल्ली के अस्पतालों में जितनी गर्भिणी स्त्रियां प्रविष्ट हुई हैं उनमें आधी मर गई हैं।

हम सरकार से जनहितार्थ अनुरोध करते हैं कि वह अपने यहां निर्देशकों के सत्य तथा स्पष्टवादिता के तथ्यों को स्वीकार करके सिद्ध देशी चिकित्सा की शरण में आकर आयुर्वेद तथा यूनानी समाज से सहायता की मांग करे। इसमें अपनी मानहानि का प्रसंग न लाकर जनकल्याण को अधिक स्थान दे। देशी चिकित्सा हमारे राष्ट्र के घर घर की सिद्ध चिकित्सा है। नगरपालिका तथा दूसरे देशी औषधालयों में द्रुतगति से रोग मुक्त होने की संख्या सरकार देख सकती है और उनसे उसको काफी देशी चिकित्सा सिद्ध पद्धति के शत प्रतिशत प्रमाण मिल जायेंगे। अतः भारत सरकार के स्वास्थ्य विभाग से हमें यही निवेदन करना है कि वह भारतीय जनता से न्याय करें तथा ऐलोपैथी जैसी असफल चिकित्सा जनता पर लादने का दुराग्रह छोड़ दे।

हम जनता से भी विशेष प्रार्थना करेंगे कि वह भी अपने देश के जलवायु के अनुसार अपनी देशी चिकित्सा प्राप्त करने के लिए सरकार को बाध्य करे तथा जहां तहां खुले हुए इस चिकित्सा के औषधालयों से सहायता प्राप्त करके अपने जीवन की रक्षा करे। दूसरे के आश्रित रहना भी अपने आत्मघात के समान है। विदेशी जितनी भी औषधियां हैं वह अभी परीक्षण अवस्था में ही चल रही है। यह केवल हमारा मत नहीं प्रत्युत उन विदेशी विशेषज्ञों का मत है जहां से उन औषधियों का आविष्कार हो रहा है।

—स्वामी चेतनानन्द

४१ वें अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन कुरनूल का

संक्षिप्त कार्यविवरण

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का ४१ वां वार्षिक अधिवेशन ता० २९, ३० तथा ३१ दिसम्बर १९५५ को आन्ध्र राज्य की राजधानी, कुरनूल नगर में सानन्द सम्पन्न हो गया। देश भर के प्राय: सभी प्रान्तों के प्रतिनिधि तथा स्वागत समिति के सदस्य आदि लगभग १५०० से भी अधिक संख्या में इस अधिवेशन में सम्मिलित हुए। उत्तर भारत के विभिन्न प्रान्तों के लगभग २०० प्रतिनिधि उपस्थित थे।

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का कार्यालय दिनांक २७-१२-५५ को मध्यान्होत्तर कुरनूल पहुंचा। उसी दिन उत्तर भारत के अनेक प्रतिनिधि भी वहां पहुँचे। महासम्मेलनाध्यक्ष वैद्यराज श्री वाई० पार्थनारायण पण्डित, भूतपूर्व महासम्मेलनाध्यक्ष वैद्यरत्न श्री पं० शिवशर्मा, महासम्मेलन प्रधानमन्त्री वैद्यराज श्री वामनराव दीनानाथ जी, विद्यापीठाध्यक्ष श्री भि० वि० डेग्वेकर आदि २८ दिसम्बर को पहुँचे। स्टेशन पर पुष्पहार आदि पहिना कर उनका भव्य स्वागत किया गया। पश्चात् उन्हें तथा अन्य सभी समागत प्रतिनिधियों को बसों द्वारा कोल्स हाई स्कूल जहां प्रतिनिधियों के निवास का प्रबन्ध था पहुँचाया गया।

अधिवेशन में भाग लेने के लिए पधारे हुए अन्य प्रमुख व्यक्तियों में सर्व श्री वैद्यरत्न कविराज प्रतापसिंह, वैद्य द० अ० कुलकर्णी, उपसंचालक आयुर्वेद विभाग, उत्तर प्रदेश, वैद्यराज हरिदत्त शास्त्री, डायरेक्टर आफ आयुर्वेद बम्बई, श्री गोवर्धन शर्मा छांगाणी, नागपुर बद्रीविशाल त्रिपाठी, कानपुर, महेन्द्रकुमार शास्त्री, बम्बई, कालीदास चट्टोपाध्याय, कलकत्ता, विजयकाली भट्टाचार्य, कलकत्ता, बनमालीदास, कटक, प्रिंसिपल भट्टाचार्य, गौहाटी, (आसाम) कविराज भूपेन्द्रनाथ गुप्ता, शिमला (हिमाचल), कंवर रामेश्वरसिंह, जालन्धर, देवराज शास्त्री, अमृतसर, वी०बी०नटराज शास्त्री, त्रिचनापल्ली, वैद्य सीताराम मिश्र, बम्बई, नित्यानंद सारस्वत, पिलानी, दामोदर अनन्त हलसीकर, हुबली, स्वामी चेतनानन्द, देहली, पं० नानकचन्द्र, देहली, विरंचिलाल शर्मा, इस्लामपुर (राज०), पं० मोहनलाल शास्त्री, देहली, श्रीराम शर्मा, बम्बई, तिरूवेंकटाचार्य, हैदराबाद, रामानुज स्वामी, हैदराबाद, कविराज पुरुषोत्तमदेव मुल्तानी, हैदराबाद ब्रह्मदत्त शर्मा, भुसावल, वेणीमाधव शास्त्री जोशी, नागपुर, दत्तात्रेय शास्त्री जलूकर, नसीराबाद, गयाप्रसाद शास्त्री, हैदराबाद, सी० के० दिवाकरन, हैदराबाद, वैद्यनाथ मिश्र, मुजफ्फरपुर, किशनचन्द्र पंजाबी, बम्बई, एम० वैंकट शास्त्री, विजयवाडा, भुवनचन्द्र जोशी, देहली, शंकरदत्तगौड़, जबलपुर, शिवकरण शर्मा छांगाणी, नागपुर, गुलराज शर्मा मिश्र, नागपुर, चन्द्रशंकर रविशंकर वैद्य, राजकोट, हरनाथ त्रिपाठी, कानपुर,

ज्वालाप्रसाद शर्मा, बोदवड, राधाकृष्ण, हैदराबाद, चन्द्रमणि प्रसाद, रींवा (विन्ध्यप्रदेश) आदि के नाम विशेषतया उल्लेखनीय हैं।

स्थायी समिति का अधिवेशन

ता० २८-१२-१९५५

दिनांक २८-१२-५५ को अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन की स्थायी समिति एवं विद्यापीठ कार्यकारिणी समिति का १९५५ वर्षीय अन्तिम अधिवेशन कोल्स हाई स्कूल के विशाल हाल में बड़े सोहार्द पूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुआ। इसमें एजण्डे के प्राय: सभी विषयों पर सर्वसम्मति से निर्णय हुए, केवल नागपुर केन्द्र में हुई अव्यवस्था के विषय पर तत्सम्बन्धी समिति की रिपोर्ट को लेकर कुछ मतभेद उपस्थित हो जाने के कारण उस पर निर्णय नहीं हो सका। इसके अतिरिक्त कुछ मिश्रित विषय भी शेष बच रहे थे। क्योंकि उस समय रात्रि के तीन बज गये थे अत: इन पर विचार करने के लिए स्थायी समिति का अधिवेशन आगामी दिनके लिए स्थगित कर दिया गया। इस अधिवेशन का विशेष कार्य-विवरण इसी अङ्क में अन्यत्र प्रकाशित है।

ता० २९-१२-५५

आज अधिवेशन का कार्यक्रम प्रातःकाल ८ बजे से प्रारम्भ हुआ। सर्वप्रथम उस्मानिया कालेज में महासम्मेलन मण्डप के समीप धन्वन्तरि पताका फहराई गई। तत्पश्चात् सामान्य प्रदर्शनी, द्रव्य गुण सम्भाषा परिषद्, विज्ञान परिषद्, ऐतिहासिक आदि परिषदों का उद्घाटन किया गया। ऐतिहासिक परिषद् का उद्घाटन संसद सदस्य एवं लखनऊ विश्वविद्यालय के जगत् विख्यात ऐतिहासज्ञ माननीय श्री राधाकुमुद मुखर्जी ने किया। आपने आयुर्वेद के इतिहास पर सम्पुष्ट प्रमाणों द्वारा विवेचनात्मक प्रकाश डाला। द्रव्य गुण सम्भाषा परिषद् श्री बिष्णुभोटला रामकृष्ण शास्त्री की अध्यक्षता में हुई जिनका भाषण इसी अंक में आगे प्रकाशित है।

महासम्मेलन का उद्घाटन

मध्यान्होत्तर २ बजे महासम्मेलनाधिवेशन का उद्घाटन आन्ध्रराज्य के कोआपरेशन मिनिस्टर श्री एम० संजीवा रेड्डी द्वारा किया गया। तत्पश्चात् स्वागताध्यक्ष श्री सत्यनारायण राजू, अध्यक्ष, आंध्रराज्य कांग्रेस कमेटी, ने राष्ट्रभाषा में भाषण करते हुए समागत प्रतिनिधियों का स्वागत किया। आपने कहा कि समयाभाव के कारण यद्यपि मेरे लिये यह सम्भव नहीं था कि स्वागताध्यक्ष के उत्तरदायित्व को निभा सकूँ तथापि डा० लक्ष्मीपति के आग्रह के वशीभूत होकर मुझे यह पद स्वीकार करना पड़ा। इस छोटे से नगर का यह अहोभाग्य है कि आप सब महान् व्यक्ति यहां एकत्रित हुए हैं। पं० शिवशर्मा को जब मैंने देखा तो मैं समझा कि वे कोई योरोपियन व्यक्ति हैं। केवल वेशभूषा से ही वे देसी मालूम पड़ते थे। अस्तु, आज प्रातःकाल जब मैंने उनका भाषण सुना और मुझे यह पता चला कि

ये ही पं० शिवशर्मा हैं तो मैं विमुग्ध हो गया और एक महान् पुरुष का दर्शन कर मुझे अतीव आनन्द हुआ। मैं आंध्रवासियों की ओर से आप सब का हार्दिक स्वागत करता हूं। आप सभी विद्वज्जन जिस महान उद्देश्य के लिये यहां एकत्रित हुए हैं वह सफल हो यही मेरी कामना है। आंध्रराज्य से मेरी यह प्रार्थना है कि वह आयुर्वेद के विकास के लिये हर प्रकार की सुविधायें प्रदान करे तथा बजट में आयुर्वेद के लिये अधिक धन दे। तत्पश्चात् स्वागतमन्त्री श्री डा० लक्ष्मीपति ने औपचारिक रूप से सभापति पद के लिये वैद्यराज श्री वाई० पार्थनारायण पंडित का नाम उपस्थित किया जिसका अनुमोदन प्रत्येक प्रान्त के प्रतिनिधियों की ओर से किया गया। तदनन्तर श्री वाई० पार्थनारायण जी पंडित ने सभापति का आसन ग्रहण किया। स्वागताधिकारियों ने उन्हें पुष्पमालायें पहिनाईं।

अध्यक्षीय भाषण

अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री सभापति जी ने महासम्मेलन विद्यापीठ का सामान्य विवरण उपस्थित करते हुए कहा कि हमें संगठन की दृढ़ता के लिये महासम्मेलन नियमावलि का विचारपूर्वक संशोधन करना चाहिये। आज प्रान्तीय संस्थाओं को प्रधानों के चुनाव के लिये पांच-पांच नाम प्रस्तावित करने का अधिकार प्राप्त है। महासम्मेलन सदस्यों को भी सभापति निर्वाचन में मत देने का अधिकार है किन्तु प्रान्तीय संस्थाओं के सामान्य सदस्यों को मतदान का यह अधिकार प्राप्त नहीं। प्रान्तीय संस्था का सदस्य न होते हुए भी एक व्यक्ति महासम्मेलन का सदस्य बन सकता है। महासम्मेलन सदस्य के लिये यह आवश्यक नहीं कि वह प्रान्तीय संस्था का सदस्य बने। इसी प्रकार प्रान्तीय संस्था के सदस्य के लिये भी यह आवश्यक नहीं कि वह महासम्मेलन का सदस्य हो। यह स्थिति मेरे विचार में प्रान्तीय संस्थाओं तथा महासम्मेलन के मध्य निकट सम्पर्क की स्थापना में सहायक नहीं। इस विषय में अ० भा० कांग्रेस कमेटी के विधान का अनुसरण कर संस्था के संगठन को सबल बनाना चाहिये।

आपने महासम्मेलन सदस्यों की संख्या को भी असन्तोषजनक बताया। आपने कहा कि इसके लिये आयुर्वेदिक व्यवसाय के प्रत्येक व्यक्ति से सम्पर्क स्थापित करने योग्य संगठित प्रणाली का अभाव ही दोषी है। महासम्मेलन सदस्य वृद्धि में प्रान्तीय संस्थायें आवश्यक रुचि नहीं लेतीं। सभापति जी के विचार में यह आवश्यक है कि महासम्मेलन के कम से कम एक लाख साधारण सदस्य हों। संस्था के संगठन तथा प्रातिनिध्यक स्वरूप उसकी सदस्य संख्या पर निर्भर करता है। संस्था की शक्ति के बढ़ने के साथ साथ उसकी सदस्य संख्या भी अनिवार्य रूप से बढ़ेगी। इसके लिये उचित प्रचार तथा संगठन प्रणाली का निर्माण किया जाना आवश्यक है। आपने प्रत्येक सदस्य से कम से कम दो-दो सदस्य बनाने तथा संस्था को संगठित करने की अपील करते हुए कहा कि मेरी यह हार्दिक इच्छा है कि इस वर्ष के अन्त तक कम से कम दस हजार साधारण सदस्य बनाये जायें। इसकी सफलता सभी के सहयोग पर निर्भर है।

आपने अपने भाषण में संस्था में प्रचलित कुछ विध्वंसक प्रवृत्तियों का उल्लेख करते हुए कहा कि हमारे लिये यह उपयुक्त नहीं है कि हम जिन पर कि आयुर्वेद के पुनः निर्माण का उत्तरदायित्व है, क्षुद्र स्वार्थों के लिये आपस में लड़ें और न्यायालय में जायें। विरोधी पक्ष के लिये मेरे हृदय में सम्मान है। बिना विरोधी पक्ष के सत्य की प्रतीति नहीं होती। किन्तु सहिष्णुता तथा विवेकहीन विरोध, जिससे एक महान् संस्था का विध्वंस होता हो, चाहे वह प्रमुख एवं सशक्त व्यक्तियों की ओर से ही हो, अक्षम्य एवं असह्य है। व्यक्तिगत स्वार्थों के लिये संस्था को नष्ट करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये। इसके विपरीत संस्था के हित के लिये व्यक्तियों का बलिदान करना गौरवास्पद होगा। अब समय है कि इस महान् संस्था के समस्त देश में विस्तार एवं मूलभूत उद्देश्यों की सिद्धि के लिये वैद्य आपसी अविश्वास, वैरभाव को भुला दें और यदि आवश्यक हो तो सामाजिक एवं व्यक्तिगत सम्मान का भी बलिदान कर दें और एक सम्पन्न एवं वीर सैनानी के समान आयुर्वेद की रक्षा में अग्रसर हों। तत्पश्चात् आपने आयुर्वेद की वर्तमान अवस्था, विभिन्न राज्यों में आयुर्वेद की स्थिति, केन्द्रीय स्वास्थ्य मन्त्रालय और आयुर्वेद, पंचवर्षीय योजनाओं में आयुर्वेद आदि विषयों पर संक्षेप में विचार प्रकट करते हुए आयुर्वेदोन्नति के लिये सुझाव प्रस्तुत किये। आपके भाषण का हिन्दी भाषान्तर आगे प्रकाशित है।

शुभकामनाएं

इसके पश्चात् अधिवेशन की सफलता के लिये प्राप्त शुभकामनायें पढ़कर सुनाई गई जिनमें श्री यू० न० ढेबर, अध्यक्ष, अ० भा० राष्ट्रीय कांग्रेस, श्री विष्णुराम मेंधी, मुख्यमन्त्री, आसाम, श्री वी० एस० कुमार स्वामी राजा, राज्यपाल, उड़ीसा, श्री गोविन्द मेनन, मुख्यमन्त्री, त्रिवेन्द्रम, श्री एम० पी० सुखाडिया, मुख्यमन्त्री, राजस्थान, श्री पी० सी० रेड्डी, उत्पादनमन्त्री, भारत सरकार, श्री आर० आर० दिवाकर, राज्यपाल, बिहार, श्री गोविन्दबल्लभ पन्त, गृहमन्त्री, भारत सरकार, श्री के० सन्थानम, उपराज्यपाल, विन्ध्यप्रदेश, श्री एम० विश्वेश्वरैया, संसद सदस्य, श्री तख्तमल जैन, मुख्यमन्त्री, मध्यभारत, श्री गुलजारीलाल नन्दा, योजनामन्त्री, भारत सरकार, श्री सी० सी० विश्वास, विधिमन्त्री, भारत सरकार, श्री बी० पट्टाभि सीतारमैया, राज्यपाल, मध्यप्रदेश, श्री सी० वी० रमन, बंगलौर, श्री आर० एम० अग्रवाल, अध्यक्ष, म्यु० कमेटी, देहली, विशेषतया उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त सर्वश्री छोटेलाल सूरजगढ़, ए० एन० उदासी बूटी वैद्य, बम्बई, वाघाजी के० सोलंकी, प्र० म० कच्छ वैद्य सभा, मुंद्रा, क० अतुलविहारीदत्त, कलकत्ता, अमरनाथ वैद्य, संयोजक, उत्तर प्रदेश वैद्य सम्मेलन, देहरादून, एस० एस० शास्त्री, पवनजे, जगन्नाथप्रसाद शुक्ल, प्रयाग, भ्रमरदत्त मिश्र, केकड़ी, बिहारीलाल वैद्य, बुदरुखां, ब्रजनन्दन मिश्र, पानापुर, बद्रीप्रसाद सूरतगढ़, श्यामलाल शास्त्री, नगीना, सिद्धिशंकर शर्मा, कनेछन, जीवराम कालीदास शास्त्री, गोंडल, मोतीशंकर सनाढ्य, कोटा, मदनमोहन शर्मा, ज्वालापुर, वैकुण्ठनाथदेव अधिकारी, गोहाटी, कृष्ण शास्त्री कवड़े, पूना, आर्य वैद्यन एन० रामा वारियार, मदुरा, घासीराम

गणपतराम जोशी, देवास जूनियर, गंगाप्रसाद गुप्त, भागलपुर, इत्यादि वैद्यों की ओर से शुभकामना के तार तथा पत्र प्राप्त हुए। (स्वागत समिति के पास प्राप्त शुभकामना के सन्देशों को आगामी पत्रिका में प्रकाशित किया जायगा)

सन्ध्या को ६ बजे योग व्यायाम परिषद् का उद्घाटन हुआ जिसमें योग व्यायामों का प्रदर्शन किया गया तथा स्वास्थ्यरक्षा में योग व्यायामों के महत्व पर प्रकाश डाला गया।

रात्रि को ९ बजे कल की स्थगित स्थायी समिति एवं विद्यापीठ कार्यकारिणी का अधिवेशन कोल्स स्कूल के हाल में पुनः प्रारम्भ हुआ। नागपुर केन्द्र के विषय पर तब तक कोई सर्वमान्य समझौता नहीं हो सका था अतः इस विषय को पुनः स्थगित कर दिया गया। तत्पश्चात् मिश्रित विषयों पर विचार एं निश्चय करने के अनन्तर ता० ३०-१२-५५ को पुनः मिलने के लिये अधिवेशन स्थगित किया गया।

इसके पश्चात् निश्चित कार्यक्रम के अनुसार विषय निर्वाचिनी समिति का अधिवेशन होना था किन्तु प्रस्ताव समिति प्रस्तावों पर पूर्ण विचार नहीं कर सकी थी अतः यह निश्चय किया गया कि विषय निर्वाचिनी समिति का अधिवेशन ता० ३०-१२-५५ रात्रि को ९ बजे किया जाय। तदनन्तर आज का कार्यक्रम समाप्त हुआ।

ता० ३०-१२-५५

आज प्रातःकाल ९ बजे से विभिन्न परिषदों के अधिवेशन हुए। योग व्यायाम परिषद् में कुछ आश्चर्यजनक क्रियायें देखने में आयीं। एक व्यक्ति ने, जो देखने में ग्रामीण प्रतीत पड़ता था, श्वास नियंत्रण द्वारा अपनी छाती साधारण स्थिति से १२ इंच तक छोटी कर दी तथा पुनः साधारण स्थिति से फुलाकर १८ इंच तक बढ़ा दी। वायु को शरीर के किसी अंग में भी स्थिर कर उसे किस प्रकार दृढ़ बनाया जा सकता है इसका प्रदर्शन उसने हाथोंमें वायु को स्थिर करके किया। हाथ की मुट्ठियां इतनी दृढ़ता से बन्द हो गईं कि कई व्यक्तियों के एक साथ प्रयत्न से भी न खुल सकीं। सबसे अद्भुत प्रदर्शन जो उसने किया वह हृद्गति का कुछ क्षण के लिये रोकना था जिसका प्रत्यक्ष अनुभव वहां उपस्थित अनेक व्यक्तियों ने किया।

शिक्षासम्मेलन का उद्घाटन

सायंकाल ४ बजे आन्ध्रराज्य के स्वास्थ्यमन्त्री माननीय श्री काला वेंकट राव द्वारा नि० भा० आयुर्वेद शिक्षासम्मेलन (विद्यापीठ) का उद्घाटन किया गया। अंग्रेजी में भाषण करते हुए आपने कल के मुख्य महासम्मेलन अधिवेशन में सम्मिलित न हो सकने पर खेद प्रकट किया। आपने कहा कि आयुर्वेद एक सस्ती, सुलभ और प्रभावशाली चिकित्सा प्रणाली है और हम चाहते हैं कि उसका समुचित विकास हो, किन्तु हम देखते हैं कि जनता का झुकाव अधिकतर ऐलोपैथी की ओर है वे ऐलोपैथी की मांग करते हैं, विवशतया हमें इस ओर ध्यान देना ही पड़ता है। अतएव राज्य की वर्तमान चिकित्सा प्रणाली, जो

(शेष पृष्ठ ७३ पर देखिए)

अध्यक्षीय भाषण

जो वैद्य श्री वाई० पार्थनारायण पण्डित, बंगलौर

द्वारा ४१वें अ०भा०आयुर्वेद महासम्मेलन करनूल में ता० २९-१२-५५ को पढ़ा गया

स्वागत समिति के महा माननीय अध्यक्ष जी, तथा इस प्रकृत सम्मेलन के समागत मान्य सदस्यगण,

४१ वें अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन में अध्यक्षता रूप आदरणीय स्थान प्राप्त करने के कारणभूत आप सज्जनों को अपना हार्दिक अभिनंदन समर्पण करना मेरा आद्य कर्तव्य है। मेरी महती भावना है कि एक वैद्य के जीवन काल में इस महती संस्था के अध्यक्ष पद का आदर बढ़कर है। राजनैतिक क्रांतियों के कारण, एक साधारण प्यादा भी राष्ट्राध्यक्ष का स्थान प्राप्त करने में समर्थ हो सकता है। परन्तु वैज्ञानिक जगत में, यह आदरणीय स्थान, शास्त्राध्ययन, प्रयोग प्रवीणता और वर्षों तक वैद्यकीय सेवा निर्वहण के परिणामस्वरूप ही, वैज्ञानिक साथियों की प्रशंसा का पात्र बनकर प्राप्त किया जा सकता है। मैं उन लगभग तीन लाख भारतीय आयुर्वेद वैद्य बंधु और भगिनियों के प्रति जो, हजारों वर्षों से, परम्परा क्रम से वैद्यक विद्या की ज्योति को सदा जागृत रखते आये हैं, जो गुरुकुलों तथा कलाशालाओं में वैद्यकीय शिक्षा-प्रबोधन, रोगनिराकरण, तथा रोग प्रतिबंधनोपायों के द्वारा राष्ट्र की सेवा करते आये हैं और जो, सामाजिक तथा आर्थिक प्रगति के साधक हैं—अपनी कृतज्ञता जताते हुए हार्दिक अभिनन्दन समर्पण करने के साथ-साथ यह अटल विश्वास भी दिलाता हूँ कि इस महती संस्था के गौरव और महत्व की सदा रक्षा करने के लिये विधेय सैनिक के समान सेवा करता रहूँगा।

गत वर्ष, तिरुवनंतपुर (ट्रिवांड्रम) के ४० वें सम्मेलन से कई मास पूर्व ही आयुर्वेद कांग्रेस के तत्कालीन अध्यक्ष श्री पंडित शिवशर्मा जी ने मुझे बताया कि वे अध्यक्ष स्थान के प्रतिस्पर्धी नहीं बनेंगे। पर मैंने उसे माना नहीं। पूर्ण कलाकार, धैर्यशील, प्रज्ञ तथा विचक्षण शीलता से सरकार और समाज की दृष्टि में आयुर्वेद कांग्रेस को उच्च स्थान प्राप्त कराने वाले श्री पंडित शिवशर्मा जी ही और कुछ समय तक अध्यक्ष बने रहें—इस इच्छा से मैंने और मेरे मित्रों ने श्रीयुत शिवशर्मा जी से सानुरोध अध्यक्ष पद को संभाले रहने का आग्रह किया। श्रीयुत शर्मा जी ने यह कह कर इसका प्रतिरोध किया कि मैं अधिक संख्या में वैद्य बन्धुओं के नेता बन कर उत्तरदायित्व ग्रहण करने के लिये आगे बढ़ने में बाधक बनना नहीं चाहता।

श्रीयुत शिवशर्मा जी ने, तिरुवनंतपुर के सम्मेलन के उपरान्त, अध्यक्ष स्थान से

बिदा होने की प्रार्थना करते हुये उस स्थान के लिये मेरा नाम कार्यकारिणी में रखा। कार्यकारिणी ने भी सर्वसम्मति से यह सूचना उचित मान कर यह आदर मुझे दिया।

श्री पंडित शिवशर्मा जी वैद्य समुदाय का आदर प्राप्त करने के सर्वथा योग्य हैं। मेरा यह दृढ़ कथन है कि यदि श्री शिवशर्मा जी चाहते तो दसों वर्षों तक यह अध्यक्षता उनको ही निरातंक प्राप्त हो सकती थी। तिरुवनंतपुर में मुझे, इस महत्व को मानने पर, मेरा प्रोत्साहन, प्रेरणा, व पथप्रदर्शन करने वाले तथा उस कार्य में सहायता देते रहने वाले, अपने माननीय मित्र, श्री डा० लक्ष्मीपति, वैद्यराज श्रीदत्तजी, श्री वामनरावजी, श्री नटराज शास्त्रीजी, श्री शिवशर्माजी आदि का मैं अत्यन्त आभारी हूँ।

प्रकृत अधिवेशन

कर्नूल में सम्मिलित इस मसासम्मेलन के लिये अध्यक्ष निर्वाचन में मुझे प्रथम चुनने के उपलक्ष्य में, सभी प्रान्तीय संस्थाओं तथा उनके साधकों का भी मैं कृतज्ञ हूँ। अविरोध चुनाव को महत्व देने के लिये अपना नाम वापिस लेकर मुझे समादृत करने वाले, श्री यादवजी त्रिकमजी आचार्य, श्री कविराज प्रतापसिंहजी, श्री डा० ए० लक्ष्मीपति और पंडित श्री शिवशर्माजी आदि के प्रति भी मैं हार्दिक आभार प्रदर्शन किये बिना नहीं रह सकता।

वार्षिक सम्मेलन

वर्ष भर किये गये संस्थाओं के कार्यों का पर्यवेक्षण कर, भावी प्रगति के साधक-बाधकों का निर्वहण कर, उन्हें कार्यरूप देने के लिये सर्व सदस्यों की सहमति प्राप्त करना और उसके लिये कार्यनिर्वाहक मंडली की नियुक्ति करना, वार्षिक सम्मेलनों का मुख्य कर्तव्य है। आयुर्वेद कांग्रेस ने अब तक जिन कर्तव्यों में सफलता प्राप्त की तथा अनेक प्रकारांतरों से उनको साध्य बनाया है, उन पर विवेचन करना भी कर्तव्य है।

आयुर्वेद कांग्रेस संस्था

इस महा-संस्था को स्थापित हुए लगभग पचास वर्ष हुए। इस काल में चालीस अधिवेशन सम्पन्न हुए। उस संस्था का विधान राष्ट्र के राजनैतिक वातावरण के साथ अपनी स्थिरता कायम रखने के लिये, यदा-कदा परिवर्तित होकर प्रबल और प्रगतिपूर्ण जनतन्त्र संविधान से परिपुष्ट है। भारतवर्ष में हजारों वर्षों से प्रचलित कई राजनैतिक कोलाहलों और कृतियों के कारण वैज्ञानिक और शास्त्रीय शिक्षा की क्षति हुई। प्रतिफल-स्वरूप राजाश्रय के अभाव में वैद्यक शिक्षा के आधार गुरुकुल तथा वैज्ञानिक संस्थाएँ विधि-विधान सहित शास्त्राध्यापन, प्रयोग शालाएँ, चिकित्सालय, आदि क्रमशः क्षीणता को प्राप्त हुये। महर्षि चरकाचार्य आदियों ने, वैद्यशास्त्र परिचयहीन, तथा प्रयोगज्ञान रहित को वैद्य बनने के अयोग्य बतलाया है। इसको पुष्टकर वैद्यकीय वृत्ति पाने के लिए उत्तम शास्त्राध्ययन में आसक्ति उत्पन्न करने के लिये तथा आयुर्वेद कांग्रेस के विकास के लिये ही उसके

आधीन "निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ" की स्थापना की गई। उस विद्यापीठ के सम्मेलन का भी इस अवसर पर आयोजन किया गया है। भारत के मुख्य वैद्यनायकों के नेतृत्व में यह विद्यापीठ सभी तरह से उन्नति प्राप्त करते हुए राष्ट्र में हजारों की संख्या में आयुर्वेद उपाधिधारियों को तैयार कर रही है।

इस वर्ष भी वैद्य विद्या पारीण, विज्ञान और न्याय शास्त्र में विशारद सुप्रसिद्ध पंडित श्री दिग्वेकर जी को विद्यापीठ का अध्यक्ष चुनकर जो समुचित कार्य किया गया है उस पर आंतरिक आनन्द अभिव्यक्त करता हुआ यह दृढ़ विश्वास प्रकट करता हूँ कि उनके नेतृत्व में विद्यापीठ दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करेगी।

प्रान्तीय संस्थाएँ

ये संस्थाएँ अखिल भारतीय महासभा के चुनाव के लिये अध्यक्ष का नाम प्रस्तावित करने तक का ही अधिकार रखती हैं। लेकिन उन प्रान्तीय संस्थाओं के सदस्यों को अध्यक्ष के चुनाव में अपना मत देने का अधिकार प्राप्त नहीं। प्रान्तीय संस्था का सदस्य अ० भा० आ० कांग्रेस का सदस्य नहीं माना जाता। लेकिन "राष्ट्र सभा" (कांग्रेस) के सदस्य को अपनी प्रान्तीय संस्था का सदस्य बने रहने की आवश्यकता नहीं। इसलिये मेरे विचार में यह उपर्युक्त विधान इस संस्था की प्रगति में साधक नहीं है। 'राष्ट्रीय' सभा के विधान के अनुसार किसी भी प्रान्तीय शाखा संस्था का सदस्य राष्ट्रीय सभा का सदस्य माना जाता है। यदि इसी रीति-नीति को अपनी संस्था के विधान में समावेश कर लें तो प्रान्तीय और केन्द्रीय संस्था में निकट सम्बन्ध बढ़ेगा तथा उन्नति दिनों दिन बढ़ेगी। आप बन्धुओं से मेरा सविनय निवेदन है कि इस विषय का विचारपूर्ण दृष्टि से अनुशीलन करें। यद्यपि चुनाव में प्रान्तीय स्थायी सदस्यों को मतदान का अधिकार नहीं है फिर भी प्रान्तीय संस्था का सदस्य बन सकता है। वैसे ही कांग्रेस का सदस्य न बनकर प्रान्तीय संस्थाओं का सदस्य होना केन्द्र तथा प्रान्तीय संस्थाओं के बीच सम्बन्ध बढ़ाने में यह विधान सुविधाजनक नहीं है।

"अखिल राष्ट्रीय सभा" के विधान की ही भांति अपने संविधान में भी आवश्यक परिवर्तन आना चाहिये। उसमें यह विधान है कि किसी शाखा संस्था का सदस्य राष्ट्रीय सभा का भी सदस्य समझा जाता है। प्रांतीय संस्था तथा काँग्रेस का एक साथ सदस्य बन सकता है। इन विषयों पर समुचित विचारदृष्टि प्रसारित करने की आपसे प्रार्थना करता हूँ।

सदस्यता

महासभा की व्यापकता को देखते हुए यह कहना ही पड़ता है कि उस व्यापकता के अनुसार उसके सदस्यों की संख्या बढ़ नहीं रही है। उसके लिये कारण ये हैं कि हम में उचित व्यवस्था सम्बन्धी विभाग नहीं और प्राँतीय संस्थाओं की केन्द्रीय संस्था की सदस्यता की उन्नति में अधिक रुचि दिखाई नहीं पड़ती। मेरे मत में लगभग एक लाख स्थायी सदस्य तथा एक हजार तक आजीवन सदस्य बन जाना आवश्यक है। संस्था की प्रमुखता एवं प्रव-

लता उस सदस्य संख्या पर अवलम्बित रहती है। यदि यह व्यवस्था तथा आयोजन सहित कार्यक्रम तैयार किया जाय तो शीघ्र ही सभी वैद्यबन्धु इस महासभा के सदस्य बनने के लिये स्वयं सन्नद्ध होंगे। इसके प्रचार एवं व्यवस्था के लिये शाखाओं को ठीक प्रकार से कार्यरत होना चाहिये। सुविस्तृत भारतवर्ष में अकेली केन्द्रीय सभा ही कार्य कर सदस्य संख्या वढ़ा नहीं सकती। अतः प्रान्तीय संस्थाएँ ही इस महती आकाँक्षा को सफल बनाने में समर्थ हो सकती हैं। इसके लिये आप मान्य सदस्यों की ही सहायता अत्यन्त आवश्यक है। आप सभी सहृदय बन्धुओं से मेरा अनुरोध है कि प्रत्येक सदस्य कम से कम दो दो सदस्यों के क्रम से सदस्य बना दें—इस श्रमदान के द्वारा महामंडल को प्रबल बननें में सहायता पहुँचायें।

महामण्डल की व्यवस्था तथा प्रचार साधनों की पुनर्रचना करा इस सभा की सहायता प्रान्तीय संस्थाओं को भी प्राप्त कराने की योजना तैयार कर आप महानुभावों के विचारार्थ उपस्थित की जायगी। आपसे प्रार्थना करता हूँ कि इस वर्षान्त तक कम से कम एक हजार आजीवन सदस्यों तथा दस हजार मान्य सदस्यों को एकत्रित करने में आप सब सहयोग दें।

घर के भीतर

यद्यपि यह इतना सन्तोषजनक नहीं है तो भी कर्तव्यनिष्ठा की दृष्टि से हमें आन्तरिक व्यवहार पर भी परामर्श करना चाहिए। व्यक्ति महान् उद्देश्य को साध्य करने के हेतु संस्थाओं की रचना करते हैं। स्थापित संस्थाओं की उन्नति के लिए कन्धे से कन्धा मिला कर परिश्रम करते हैं। लेकिन कालांतर में अभिप्राय-भेद उत्पन्न होते हैं। इन अभिप्राय-भेदों पर रचनात्मक दृष्टि से विचार करना चाहिये, इसके विपरीत मातृ-संस्था को शिथिल करना अनुचित है। किन्तु प्रायः हम यह देखते हैं कि स्वार्थ-त्याग एवं बलिदान से जिस संस्था की अपने हाथों रचना की है, अभिप्राय-भेद एवं असहिष्णुता से प्रेरित होकर उसकी ही जड़ उखाड़ने के लियें भी हम झिझकते नहीं। राजनैतिक, सामाजिक, साहित्यिक आदि आदि सभी संस्थाओं में यही आंतरिक फूट किसी न किसी तरह बढ़कर, विकृत होकर, विरोधी संस्थाओं की पारस्परिक होड़ को बड़ी तेजी से जन्म दे रही है। यह एक शतरंज का खेल बन रहा है। अन्त में प्रत्यक्ष और परोक्ष विरोधी बने हैं। ऐसे कई उदाहरण नित्य सुन रहे हैं। अधिकार की माँग, असहिष्णुता और ईर्ष्या उन्हें कर्तव्यच्युत, किंवा कर्तव्य विमुख कर रही है। आजकल हमारी मातृ संस्था में भी, उसके परिमित क्षेत्र में ही कई एक छोटी फूट उत्पन्न हो रही हैं। कुछ प्रान्तों में आजकल विमनस्कता बढ़कर विरोधी प्रान्तीय संस्थाओं का रूप ले रही है। जिन्होंने आपस में भाई-चारे से प्रेरित होकर आयुर्वेद की उन्नति के लिये कमर कसी थी वे ही विरोधियों के समान बनकर कुछ मामलों को अदालतों तक ले गये और कुछ प्रान्तों में प्रांतीय संस्थाओं की उन्नति में व्यक्तिगत भाव बाधक बन रहे हैं।

कुछ समय पूर्व केन्द्रीय संस्था में भी ऐसी विषमताएँ कहीं-कहीं दिखाई देकर विकृत भयंकर रूप प्राप्त करने लगी थीं। लेकिन दैववशात् मित्रों और श्री पंडित शिवशर्मा जी

के परिश्रम और—अधिकृत सुझावों के कारण वह अनहोनी दूर हुई और संस्था अविक व्यवस्था से कार्यभार चलाने लगी। पुनश्च ऐसा ही एक प्रसंग कुछ सदस्यों द्वारा पुनः उत्पन्न किया गया है। अभिप्राय भेद को मेरी पूर्ण सहानुभूति है क्योंकि प्रतिपक्षियों के विना सत्यपथ का दिग्दर्शन सम्भव नहीं। लेकिन किसी भी महान् व्यक्ति से ऐसे विध्वंसक कार्यक्रम के कार्यान्वित किये जाने पर आग्रह किया जाय, जो असंयत, परामर्श रहित तथा संस्थाओं को छिन्न-भिन्न करने वाले कार्यक्रम माने जाते हैं, वे अक्षम्य हैं। व्यक्तियों के लिये संस्थाओं को बलि चढ़ाना ठीक नहीं है। संस्थाओं के उद्धार के लिये अधिक संख्या में व्यक्तियों का बलिदान होना ही गौरवप्रद विषय होगा। इस संक्रमण काल में, आयुर्वेदोद्धार के लिये सुव्यवस्थित आन्दोलन देश भर में व्याप्त हो सकेगा। सभी वैद्यों को, आपस के मतभेद त्याग कर, अपनी व्यक्तिगत प्रतिष्ठा को संस्था की प्रगति के लिये न्योछावर करते हुए, "अस्त्रों से लैस वीर योद्धाओं" के समान इस पवित्र कार्य में हाथ बटाना चाहिये।

यदि यह साधना व्यवस्थित रूप से कार्यगत होनी है तो आपस का मेल, सहृदयता और विचार विनिमय आवश्यक हैं। केन्द्रीय संस्था के कर्मचारियों को भारत भर में प्रवास कर, प्रान्तों में संभाव्य विरोधों को शीघ्रातिशीघ्र दूर कर सुसंगठित करने के लिये प्रयत्न करना चाहिये। इस एकता का अभाव ही आज की असहयोगी मनोवृत्ति का कारण है। इस एक त्रुटि को दूर करने के लिये प्रान्त-प्रान्त में प्रवास करना पड़ेगा। इस कार्य में सभी प्रकार के अभिप्रायं-भेद के पक्ष-विपक्ष के मित्रों का सहयोग मुझे प्राप्त होगा—ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

प्रगति की साधना

आयुर्वेद अनादि काल से ही राष्ट्र की अमूल्य सम्पत्ति रहा है। एक हजार वर्षों की राजनैतिक परतंत्रता में आयुर्वेद, अपना अधिकांश साहित्य, विज्ञान तथा प्रयोग भंडार खो चुका है। परन्तु फिर भी उसकी सम्पूर्णता एवं उसका अस्तित्व ज्यों का त्यों है। उस अवशिष्ट वैद्यशास्त्र का ज्ञान भंडार, देश सेवा के लिये पर्याप्त मात्रा में संसिद्ध तथा सर्वोन्नति प्राप्त करने में समर्थ भी है। पर केवल उसे बढ़ाने की आकांक्षा भर ही चाहिये। मैं बड़े अभिमान के साथ कहना चाहता हूँ कि चरक संहिता, सुश्रुत संहिता, वाग्भट्ट संहिता आदियों में निहित सर्वलक्षण सहित वैद्यकीय मूल शास्त्रीय विषयों से बराबरी करने वाले, दूसरे कोई ग्रन्थ संसार की अन्य किसी भाषा या देश में नहीं हैं। अभी हम में ऐसे योग्य, योग्यता प्राप्त वैद्यक विद्या प्रवीण हैं जो उपर्युक्त वृहद्ग्रंथों, रसशास्त्रों तथा पुराणेतिहासों से प्राप्त होने वाले वैद्यकीय आधारों से, फिर से उच्च श्रेणी के चिकित्सालयों, प्रयोगशालाओं तथा शिक्षण केन्द्रों को स्थापित कर चला सकेंगे। पर उन्हें पुनर्रचना करने की आकांक्षा में सफलता प्राप्त होने के लिये, प्रजाजन का प्रोत्साहन एवं शासक वर्ग का उदारतापूर्ण सहयोग अत्यन्त आवश्यक है। आयुर्वेद वैद्यों को जनादर और जनाश्रय प्राप्त है। लेकिन कहना पड़ता है कि शासकवर्ग की कृपा-दृष्टि अभी काफी प्राप्त नहीं है। इसके तीन प्रमुख कारण हो सकते हैं।

पहला यह हो सकता है कि मन्त्रिमण्डल के सभी सलाहकार, आयुर्वेदेतर आधुनिक वैद्यक के पारीण हैं। इन्हें न आयुर्वेद में विश्वास है न श्रद्धा। इन पंडितमन्यों की दृष्टि में आयुर्वेदीय वृत्ति बहिष्करणीय है। किसी के यह कहने पर कि आयुर्वेद का भी प्रभाव है, वे उसे पाश्चात्य वैद्यक की कसौटी पर कसकर देखना चाहते हैं। योग्यता तथा वैज्ञानिक जगत में प्राचीन वैद्यक शास्त्र का प्रोत्साहन और वर्धन करना अर्वाचीनों की राय में अपमानजनक होगा ऐसा कहकर वाद करने वाले कर्मचारी देशीय वैद्यक की प्रगति के लिये, केन्द्र के आरोग्य प्रशासन तथा मन्त्रिमण्डल में सलाहकार रह रहे हैं।

दूसरा यह है कि आधुनिक चिकित्सा वाले, चिकित्सा-क्षेत्र में वैद्यों की प्रतिस्पर्धा से कटुता का अनुभव करते हैं। इसी कारण वे आयुर्वेद को समय के प्रतिकूल और अवैज्ञानिक कहते हुए शासकों से उसके क्रियाक्षेत्र को सीमित करने की माँग करते हैं। तीसरे विश्व की आरोग्य संस्थायें तथा विदेशी राष्ट्र केन्द्रीय मन्त्रालय पर आधुनिक चिकित्सा के नाम से अपने क्षेत्र के विस्तार के लिये दबाव डाल रहे हैं।

आयुर्वेद वैद्यक विभाग केन्द्रीय अरोग्य विभाग के मन्त्रिमण्डल में एक उपविभाग है। इस उपविभाग को हिताहित की सलाह देने वाले पाश्चात्य वैद्यक विज्ञान के कर्मचारी ही हैं।

ऐसी विपरीत रीतियां परिवर्तित होकर जब तक आयुर्वेदज्ञों को ही आयुर्वेद विभाग के सलाहकार नियुक्त नहीं करेंगे तब तक, इस अनीति, अनरीति को रोकना असम्भव ही है। अतएव, आयुर्वेद की भावी प्रगति के लिये परामर्श प्राप्त करने तथा उन्हें कार्यगत करने के लिये, केन्द्रीय आरोग्य विभाग की मंत्रिणी श्रीमती अमृतकौर को आयुर्वेदिक पंडितों की नियुक्ति ही करनी चाहिये।

केन्द्रीय मंत्रिमण्डल के लोगों तथा उनके अनुयायियों का, आयुर्वेद पर आक्रमण तथा आयुर्वेद के प्रति अपमानजनक आरोप आदि का संशोधन कर एक विस्तृत खुला पत्र केन्द्रीय शासन के सम्मुख उपस्थित करते हुए आयुर्वेद कांग्रेस के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री पंडित शिवशर्मा जी ने जनता में भी प्रचार किया। यही नहीं श्रीयुत शर्माजी ने अपने तीन बार के अध्यक्षीय भाषणों में आमने-सामने प्रश्नावलियों की बौछार कर प्रत्युत्तर माँगे। पर उत्तर क्या था? उसका विवरण लिखकर नहीं दिया गया। वल्कि शासन द्वारा आयुर्वेद वृत्ति को दबाने के लिये विधान बन रहे हैं। उन में "मैजिक क्योर एण्ड ड्रग्स एक्ट" अधिक मुख्य हैं। इसके अनुसार सिवा चर्मव्याधि की औषधों के, अन्य किसी प्रकार की औषधों को स्वतन्त्रतापूर्वक या अपनी इच्छा के अनुकूल प्रकट नहीं किया जा सकता। इन औषधों को वेचने की अनुमति देने वाले 'इण्डियन मेडिकल कौंसिल' के व्यक्ति हैं। ये सब के सब "अलोपैथिक" वैद्य ही हैं। ये आयुर्वेदिक औषधियों की सिफारिश कर ही सकते हैं। उन्हें ऐसा करने के लिये कोई नहीं रोक सकता। परन्तु ऐसा नहीं हो रहा है। अब प्रश्न यह है कि क्या ये पाश्चात्य वैद्य आयुर्वेदिक वैद्यों द्वारा विदेशीय औषधियों के प्रयोग किये जाने की शिफारिश करने के लिये तैयार हैं? दिन प्रतिदिन अधिक अंशों में बढ़ती रहने वाली आयुर्वेदिक औषधों की

बिक्री इस शासन के दुरुपयोग के कारण बहुत ही शीघ्र घट जाने एवं अस्तित्व हीन होने में सन्देह नहीं है।

अगर हम समय पर इन विषम परिस्थितियों का सामना नहीं करते तो इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि अनन्त काल से शत्रुओं का मुकाबिला करता हुआ जीवित यह आयुर्वेद अपने अस्तित्व को खो बैठेगा। इसलिये भगवान् से प्रार्थना करनी पड़ती है कि "हे, धन्वन्तरि, इन मित्रों के हाथों से निकालकर आयुर्वेद का उद्धार कीजिये।"

उन्नति किस ओर

केन्द्र और राष्ट्र कहाँ तक सफल हुए—अब हम इसकी समालोचना करेंगे। पता चला है कि, चार वर्षों से अब तक आरोग्य शाखा की अमात्या, तीन सभाओं का आयोजन कर, आयुर्वेद की स्थायी शिक्षा के लिये विवरण एवं नियम तैयार कर, चौथी सभा में, उन नियमों को सिद्ध करना चाह रही हैं। आयुर्वेद की भावी उन्नति के विषय में सुझाव देने के लिये आरोग्य विधान सभा ने केन्द्रीय आरोग्य मंत्रिणी श्रीमती अमृतकौर जी की अध्यक्षता में एक उपसमिति का आयोजन किया है। इसमें किसी आयुर्वेदिक वैद्य का न रहना आश्चर्य ही नहीं उत्पन्न करता अपितु खटकता है। आयुर्वेद की प्रतिनिधित्वहीन इन समितियों से शास्त्र का उद्धार कैसे सम्भव है ? मैं दृढ़ता से कह सकता हूँ कि ऐसी समितियाँ हमारा विश्वास और आदर प्राप्त नहीं कर सकतीं।

राष्ट्र

आयुर्वेदाभिवृद्धि के लिये 'राष्ट्र' किस प्रकार आगे बढ़े हैं उसका भी विचार करेंगे।

मद्रास की आयुर्वेदिक पाठशाला उन्नत महाविद्यालय में परिवर्तित हुई है। इसके आचार्य (प्रिन्सिपल) तथा प्राध्यापक (डीन) दोनों आयुर्वेद शास्त्र से अपरिचित ही हैं।

यह शालासंस्था, सिद्ध, आयुर्वेद तथा यूनानी वैद्य शास्त्रों के परिकरणों के संशोधन, संवर्धन के लिये ही संस्थापित है। लेकिन पता चला है कि इस शाला में, आयुर्वेद में उन्नत शास्त्राध्ययन के स्थान पर सिर्फ दस व्याख्यान झाड़कर, खासकर आधुनिक वैद्य शास्त्र (आलोपैथी) ही का अध्यापन किया जा रहा है। यहां के आयुर्वेद वैद्याधिकारी को निकाल कर उसको आधुनिक वैद्याधिकारी के कार्यालय में विलीन कर दिया गया है।

इसमें आयुर्वेद वैद्यक को आधुनिक वैद्यक का एक अङ्ग ही बनाया गया है। यह भी पता चला है कि राष्ट्र के कुछ प्रांतों में आयुर्वेद चिकित्सालयों को बन्द कर उनके स्थान पर आधुनिक वैद्यकविधान के चिकित्सालय स्थापित किये गये हैं।

आधुनिक वैद्याधिकारियों की निगाह में आयुर्वेद के उत्थान पतन का कोई अर्थ भेद नहीं। इन राष्ट्रीय चिकित्सालयों के काम-काजों के प्रति प्रजाजन से प्राप्त शिकायतों के अनुशीलन के लिये डा० यु० कृष्ण राव जी की अध्यक्षता में सम्पन्न एक समिति ने इस देश के आयुर्वेद चिकित्सा तथा शिक्षा सम्बन्धी कार्यों पर अपना मत प्रकट किया है। आयुर्वेदा-

भिवृद्धि को दृष्टि में रखकर कहना पड़ता है कि, इनके विषयों में अवश्य परिवर्तन आना चाहिये।

आयुर्वेद शास्त्र में संमिश्रित होने की योग्यता रहित आधुनिक पाश्चात्य वैद्यकशास्त्र के अधिकांश को आयुर्वेद शास्त्र के स्वल्पांश के साथ अथवा यों कहिए न के बराबर, मिला कर दी गई शिक्षा में उत्तीर्ण वैद्यों को आयुर्वेदिक वैद्य कहना, इस संमिश्रित वैद्य पद्धति का दुस्साहस है।

अतः इस शिक्षाक्रम को अति शीघ्र रोक कर ठीक करना चाहिए प्रत्येक आयुर्वेदिक वैद्य को रोग निवारण के अनुकूल अनुपान उसके अनुकूल क्वाथ, चूर्ण एवं रसौषध आदि तैयार कर लेने का समुचित ज्ञान प्राप्त किए रहना चाहिए। आज का पाठ्यक्रम, इस समुचित ज्ञान के प्राप्त करने में अनुकूल शिक्षा नहीं दे रहा है।

पंचवर्षीय योजनाएं

प्रथम पंचवर्षीय योजना में प्रजारोग्य शाखा के नाम पर ४७३७.३९ लाख रुपये नियत कर, उसमें से केवल ३३ लाख रुपये ही आयुर्वेद की उन्नति के लिए दिखाए गए थे। इस स्वल्प धनराशि में से भी अधिकांश उसे प्रदान नहीं की गई। इसके विपरीत आधुनिक चिकित्सा सम्बन्धी सभी योजनाओं को क्रियान्वित किया गया। योजना समिति में आयुर्वेद का कोई प्रतिनिधि भी नहीं। ग्रामीण स्वास्थ्य योजना में आयुर्वेद को कोई स्थान देने पर भी विचार नहीं किया गया।

यह प्रसन्नता का विषय है कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना में आयुर्वेद को प्रोत्साहित करने के निमित्त अधिक धनराशि प्रदान की गई है और इस सम्बन्ध में मेरा यह सुझाव है कि सम्मानित आयुर्वेदिक विद्वानों की एक समिति का निर्माण कर उसे आयुर्वेद की विकास योजनाओं को कार्यान्वित करने तथा परामर्श देने का कार्य सौंप दिया जाय।

यह भी प्रसन्नता का विषय है कि डा० पी० एम० मेहता की अध्यक्षता में केन्द्र द्वारा एक अनुसंधानशाला स्थापित की गई है। कुछ समय से आयुर्वेद में प्रवीण विद्वानों को स्थान देने की आवश्यकता को स्वीकार कर लिया गया है। और विभिन्न विभागों के संचालन के लिए समृद्धज्ञान एवं क्रियाकुशल आयुर्वेदिक डाक्टरों की नियुक्ति का प्रयत्न किया जा रहा है। हमें आशा है कि यह संस्था सत्य मार्ग का अवलम्बन कर फले फूलेगी।

आयुर्वेद का अर्थशास्त्र

यद्यपि अत्यन्त धन खर्च कर आधुनिक चिकित्सा के अनेकों महाविद्यालय खोले जा रहे हैं तो भी देश की चिकित्सा साहाय्य सम्बन्धी आवश्यकताओं की उचित रूप से पूर्ति करना असम्भव होगा। न ही देश आधुनिक चिकित्सा के खर्च के भार को सह सकता है। प्रत्येक आधुनिक चिकित्सा का स्नातक जिसकी शिक्षा पर अत्यधिक व्यय होता है, न केवल राष्ट्र के साधनों पर एक बोझ है बल्कि विदेशी औषधियों के निरन्तर आयात तथा भार-

तीय राष्ट्र के साधनों की कमी को उत्पन्न करने में अल्प सहायक हैं। आधुनिक चिकित्सा की पहुँच सामान्य जन तक कभी नहीं हो सकती और न ही आयुर्वेदिक वैद्यों के समान, जो कि देश के कोने कोने में पीढ़ी दर पीढ़ी से चले आ रहे हैं और जो ग्रामीणों के साथ रहते तथा विचार करते हुए उनके साथ मिलकर एकरूप हो गए हैं, योग्य संस्था बन सकती है। केवल आयुर्वेद ही देश की वानस्पतिक सम्मति का वास्तविक उपयोग कर सकता है तथा राष्ट्रीय सम्पति को देश से बाहर जाने से रोक सकता है। देश में ३-४ लाख आयुर्वेदिक चिकित्सक हैं। देशीय वनखण्डों से प्राप्त वस्तुओं को लाभप्रद एवं प्रभावशाली औषधों का रूप देकर राष्ट्रीय सम्पत्ति की रक्षा करने में उनकी देन महान है।

अतएव यदि आयुर्वेदिक विद्यालयों की स्थापना केवल आयुर्वेदिक चिकित्सा के प्रयोग के लिए स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम का संचालन तथा औषध-निर्माणशालाओं का विकास कर आयुर्वेदिक व्यवसाय को प्रोत्साहित किया जाय और उसे जनसेवा का उत्तरदायित्व संभाल दिया जाय तो हम अपनी सहृदय सरकार को विश्वास दिलाते हैं कि चिकित्सा पर किये जाने वाले व्यय के दसमांश से ही दस गुणा योग्यता से हम जनता की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकेंगे।

बम्बई राज्य

बम्बई राज्य अन्धकार में प्रकाश की एक रेखा है, जहाँ वहाँ के मुख्य मंत्री तथा स्वास्थ्य मंत्री ने आयुर्वेदिक व्यवसाय की आवाज को सुना है। उन्होंने चिकित्सा विभाग के अन्तर्गत राज्य में आयुर्वेद के विकास के लिए अनेक विभागों का निर्माण किया है जिनका संचालन केवल आयुर्वेदिक और यूनानी चिकित्सकों द्वारा ही किया जाता है। उन्होंने उचित वनस्पतियों की प्राप्ति एवं वितरण तथा जांगलीय सम्पति के समुचित उपयोग की समस्याओं पर विशेष रुचि से ध्यान दिया है। बहुत साहस के साथ शुद्ध आयुर्वेदिक पाठ्यक्रम एवं गुरुशिष्य परम्परा की स्थापना कर उन्होंने विवेक और शासकीय महत्ता का परिचय दिया है। अब यह बम्बई के आयुर्वेदिक व्यवसाय पर निर्भर है कि बम्बई राज्य के प्रशासन द्वारा उनमें जिस विश्वास की प्रतिष्ठा की गई है उसके योग्य सिद्ध हों और आयुर्वेद के एक ऐसे आदर्श राज्य की स्थापना करदें जिसका अन्य राज्य भी अनुकरण कर सकें।

सुझाव

अब मैं केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों से प्रार्थना करूँगा कि वे आयुर्वेदोन्नति को प्रोत्साहन देने के लिए दृढ़ कदम उठायें।

इस दिशा में मेरे निम्न सुझाव हैं:—

१. इस देश में रोग प्रतिकार के सुलभ एवं प्रभावी वैज्ञानिक साधन के रूप में आयुर्वेद को अवश्य स्वीकार किया जाये।

२. आयुर्वेदोन्नति की समस्त योजनायें केवल आयुर्वेदिक वैद्यों के परामर्श से ही तैयार की जानी चाहिये तथा उन्हें कार्यान्वित भी उनके सहयोग से ही किया जाय।

३. देश की समस्त आयुर्वेदिक शिक्षण संस्थाओं के लिये एक जैसा पाठ्यक्रम निर्माण करने के लिये वैद्यों की एक समिति नियुक्त की जाय।

४. आयुर्वेदोन्नति तथा पथ-प्रदर्शन के लिए केन्द्र तथा राज्यों में पृथक् पृथक् मंत्रालय खोले जायं।

५. जिन राज्यों में अभी तक भी आयुर्वेद से पृथक् विभाग नहीं खोले गये हैं वहां वैद्य की अध्यक्षता में उनका शीघ्र निर्माण करना चाहिये।

६. इस महासम्मेलन की ओर से राज्य सरकारों से निवेदन है कि वे आयुर्वेदिक विभागों को उन्नत कर उनके लिये समुचित एवं उदार बजट प्रदान करें।

७. वैद्यों को रिफ्रेशर कोर्स देने के लिये एक महाविद्यालय की स्थापना की जाये तथा उस महाविद्यालय से उत्तीर्ण होने वाले व्यक्तियों को ग्रामीण स्वास्थ्य योजनाओं के आधीन सेवा करने का अवसर प्रदान किया जाये।

८. आयुर्वेदिक ग्राम्य स्वास्थ्य केन्द्रों को चलाने से लिये समुचित साधनों की व्यवस्था की जाये।

कृतज्ञता

गत नवम्बर की दूसरी तारीख को जामनगर में स्थापित आयुर्वेद संबंधी संशोधनालय का सन्दर्शन कर, मेरे आनन्द की सीमा नहीं रही। उस मंगलमय अवसर पर, हमारे आदराभिमान के पात्र, भारत के प्रधानमंत्री पंडित नेहरू जी ने जो विवेचना पूर्ण वक्तव्य आयुर्वेदाभिवृद्धि के लिये दिया, उसके लिए हम सभी उनके प्रति कृतज्ञतापूर्वक अभिवंदन अर्पण करें। ऐसे समय में, भारत वसुन्धरा में ऐसे लोकनायक का प्राप्त होना, हमारा अहो भाग्य नहीं तो और क्या है? एक महान् राष्ट्र के निर्माण में हम उनके सहयोगी बनने में विशेषतया उपयुक्त हैं। आप सबकी ओर से मैं उन्हें उनके राष्ट्र निर्माण के कामों में अपनी वफादारी तथा सहायता का पूर्ण विश्वास दिलाता हूँ और उनसे प्रार्थना करता हूँ कि वे आयुर्वेद के विकास में व्यक्तिगत रुचि लें तथा केन्द्र में देशीय चिकित्सा के लिये एक प्रथक् सचिवालय की स्थापना करें। इससे आयुर्वेदिक व्यवसाय तथा आयुर्वेद को प्रगति प्राप्त होगी।

अन्त में इस महासम्मेलन का आयोजन कर, उसको चलाने में, निरन्तर अविश्रांत परिश्रम करने वाले स्वागत समिति के अध्यक्षजी, सदस्यों, पत्रकारों, प्रांतीय आयुर्वेद कांग्रेस को मैं हार्दिक अभिनन्दन देता हूँ। अपनी व्यक्तिगत कार्याधिक्यता को लक्ष्य न कर उत्साहित होकर, हार्दिक इच्छा से सेवा में निरत, भिषग्रत्न श्री आचंटि लक्ष्मीपति जी को भी हम सब अपनी कृतज्ञता अर्पण करते हैं।

जय भारत

निखिलभारतवर्षीयायुर्वेदविद्यापीठशिक्षासम्मेलनस्य करनूलनगरे एकचत्वारिंशदात्मकाधिवेशने सभापतेः भि० वि० डेग्वेकरस्य

अध्यक्षीयं भाषणम्

दिनांक ३० दिसम्बर १९५५

श्रीमन्तः स्वागताध्यक्षमहोदया विद्यापीठसदस्याश्च,

आयुर्वेदविद्यापीठस्यैकचत्वारिंशदात्मकेऽस्मिन्नधिवेशने पुनरपि मां सभापतित्वे नियोज्य मद्विषयक आत्मीयभाव एव भवद्भिर्निदर्शितस्तदर्थं पुनः पुनर्धन्यवादार्हाः सर्वे भवादृशाः ।

प्रस्ताविकम्

१. त्रिवेन्द्राधिवेशनतोऽद्ययावद्विगतेषु न्यूनाधिकसप्तसंख्याकमासेष्वस्या विद्यापीठसंस्थाया अत्यन्तमल्पीयसी सेवा मया कृता तस्या एव फलमेतद्भवतां मद्विषयकप्रेमनिदर्शनमिति ममानुमानम् । अस्याः संस्थायाः प्रतिष्ठां राजकीयसंस्थासु मनागपि विवर्धनाय कमपि प्रयत्नं कर्तुमवसरो दुर्भाग्यवशान्मया न प्राप्त इति खेदयुक्तं भवति मे मनः । विद्यापीठजन्यायुर्वेदमहामंडलसंस्था । तया स्वीकृतनियमानां परिरक्षणे, तन्नियमानुसारमेव सर्वं कार्यं भवत्विति विषये जागरूकतापूर्वकं कार्यसंचालनार्थमाग्रहकरणे, एवं विधानसंस्थायाः पावित्र्यरक्षणकार्य एव सर्वः सप्तसंख्याकमासकालो व्यतीतः । कस्यामपि संस्थायां यावत्काल तत्स्वीकृतनियमाक्षरानुसारमेव सर्वं कार्यं संचाल्यते तावदेव तस्याः प्रतिष्ठा संसारेऽस्मिन्नभिमन्यते । विधानस्वीकृतनियमानां परिपालनमेव प्रजातन्त्रात्मकराज्यस्य मूलाधिष्ठानम् । असावधानतयापि नियमानुकूल कार्यं कर्तुमसमर्थास्संस्थाधिकारिणः कदाप्यादरार्हा न भवेयुः । किमुत ते ये नियमविरुद्धं कार्यं कर्तुं धाष्ट्र्येण प्रवृत्ताः ।

२. गताल्पसंख्येषु मासेषु विधाननिर्दिष्टनियमानुकूलकार्यकरणार्थं मया सहकारिण आग्रहपूर्वं प्रेरिताः । तेनैवाहं केषांचिद्रोषपात्रस्संजात इत्येव दुःखितान्तःकरणोऽहम् । किन्तु सत्यमेव जयते नानृतमित्याप्तवाक्ये दृढविश्वासोऽहम् । तेनैव मन्ये ममासन्तुष्टसहकारिणोऽल्पकालादेवास्य वाक्यस्य सत्यतामनुभवेयुरिति । क्षन्तव्योऽहं तावत्तैः ।

३. क्षमायाचनापूर्वकमहमेवमधुना तासां समस्यानां विवेचनं कर्तुं प्रवृत्तो यासामस्ति प्राधान्यतः सम्बन्धो निखिलभारतवर्षीयायुर्वेदविद्यापीठसंस्थायाः प्रचारकार्येण समग्रे भारते ।

४. गतत्रिवेन्द्राधिवेशने मयाध्यक्षवैखर्यां प्राधान्येन त्रिदोषसिद्धान्तस्य स्पष्टीकरणार्थमेव विवेचनं कृतम् । यावदस्य सिद्धान्तस्याध्ययनं सूक्ष्मानुसूक्ष्मतया न क्रियते, तद्विषयकज्ञाने च छात्रैस्तथा वैद्यकव्यवसायकर्तृभिर्विज्ञानपूर्वकं (Scientific) शारीरावयवनिष्ठं ज्ञानं न सम्पाद्यते तावत्तैरायुर्वेदतत्वं पूर्णतयाऽध्यवसितमिति कदापि सिद्धं न भवेत् । महदाश्चर्यमिदं

यच्चरकसुश्रुतादिग्रंथचतुष्टयस्य प्रसिद्धैष्टीकाकारैश्चक्रदत्तारुणदत्तादिभिस्त्रिदोषवियषकं विवरणं कृतं तद्वैज्ञानिकपद्धत्या शरीरस्य विशिष्टांगोपांगेषु सर्वशरीरचराणां दोषाणां या याः क्रियाः सम्भवन्ति तासां विस्पष्टविवरणपूर्वकमेवकृतम् । सर्वमेतन्मयोदाहरणपुरःसरं तदधिवेशनभाषणे निर्दिष्टमेव ।

५. कतिपयमित्रैस्तत्पश्चादुपदिष्टोऽहं यदध्यक्षवैखर्या न केवलमेकसिद्धांतविषयकं विवरणं पर्याप्तं भवत्यपि तु विद्यापीठस्य संचलानार्थं तथैवायुर्वेदस्य सर्वाङ्गीणोन्नतिकरणाय या यास्तात्कालिकसमस्या आवश्यकमुपतिष्ठन्ते सर्वासामेव तासां विवेचनं कार्यम् । तथा तन्निराकरणायोपाया अपि सूचयितव्या अध्यक्षेण । सुहृदुपदेशमवनतशिरसा मान्यं कृत्वादौ विद्यापीठसम्बन्धिनीनां समस्यानां निर्देशपूर्वकं विवेचनं कार्यमन्ते तु त्रिदोषविषयकाऽवशिष्टभागो विचारितव्यः ।

प्रथमोविभागः

समस्या प्रथमा—आयुर्वेदीयं शिक्षणम्

६. कथंविधं शिक्षणमायुर्वेदच्छात्रेभ्यो दातव्यमिति प्रश्न आयुर्वेदविदामस्मिन्कालेऽत्यन्तजटिलस्संजात इत्यनुभूयते । आयुर्वेदविषयमधिकृत्य प्रसिद्धेष्वनेकानेकमासिकपत्रेषु सम्मेलनेष्वपि तद्विषयकाः प्रबन्धा अवलोक्यन्ते । नासावेतादृशजटिलः प्रश्न इति मे भाति । यथा कृषिकर्मणि निष्णातो भवतु मे पाल्य इत्यभिलाषा यस्य पालकस्य स तं तस्मिन्नेव विद्यालये प्रवेष्टुं यतेत यस्मिन्नुभयं प्रात्यक्षिकं ग्रन्थोक्तमपि शिक्षणं कृषिसम्बन्धि, तदानुषंगिकरसायनपदार्थविज्ञानादिशास्त्रविषयविशिष्टं च दीयते । यत एषामानुषंगिकविषयाणां विज्ञानेन कृषिसम्बन्धिनः सर्वे विषयाः सुस्पष्टतया विज्ञातुं शक्या भवन्ति । न तु तावद्यस्मिन्विद्यालये खगोलज्यौतिषादिशास्त्रविषयकं वातावरणशास्त्रविषयकं वा विज्ञानमध्यवस्यते, तेषां तच्छास्त्रविषयकप्रत्यक्षसम्बन्धाभावात् । यद्यपि तेषु सर्वेषु शास्त्रविषयकपाठ्यक्रमेषु गणितभूगर्भज्ञानविषयाणामन्तर्भावः क्रियते ।

७. अपि तु पाश्चात्यचिकित्साशास्त्रस्यैलोपेथेः प्रवेशो भारते यस्मात्कालात्संजातस्तदाप्रभृत्येवास्य चिकित्साविभागस्य संचालने, तद्विषयकशिक्षणसंस्थानिर्माणे च येषामधिकार आसीत्ते सर्व एव प्राधान्येनैलोपेथीयशास्त्रनिष्णाता आसन् । आयुर्वेदशास्त्रीयतत्वानां स्वल्पेऽपि ज्ञानाभाव उत विकृतविज्ञानसम्पन्नावस्थायां तथैवैलोपेथिकज्ञानरूपोपनेत्रसहायेन स्वकपोलकल्पितभ्रांतविचारपरिपूर्णमस्तिष्केष्वायुर्वेदतत्वानां मिथ्याज्ञानं संजातम् । यतस्तैस्सुप्रसिद्धायुर्वेदटीकाकाराणां गूढार्थतत्वविवेचनपूर्णाः प्रबन्धा मनागपि न सात्मीकृताः । एवमायुर्वेदशास्त्रस्य गर्भितार्था न विज्ञातास्तैः ।

८. एलोपेथिकशास्त्रीयग्रन्थानामेवाहोरात्रं संसर्गात्तेषां दृढ़विश्वासस्संजातो यच्चिकित्साशास्त्राध्ययनात्प्राग्यावत्कालं शरीरावयवानामायामविस्तारोत्सेधाकारबाह्याभ्यन्तरावरणच्छिद्रकाठिन्यादिविषयकं ज्ञानमेवं शरीरतन्त्रस्य तथा पाचनविसर्जनश्वसनाद्यनेकसंस्थानां सूक्ष्मातिसूक्ष्मं विज्ञानमेवं विवधानां शारीरावयवभागानां रासायनिकं पदार्थवैज्ञानिकं च गुण-

विज्ञानं सम्पादितं न भवेत्तावत्तस्य शरीरविषयकसम्पूर्णज्ञानाभावाद्रोगविज्ञानसम्पादनेऽसमर्थश्छात्रः कथं चिकित्सायामधिकृतो भवेत्। अतश्चिकित्साविषयकपाठ्यक्रमो विविधोपरिनिर्दिष्टातिविस्तृतशारीरविवरणयुक्तज्ञानादृते कदापि पूर्णतां न प्राप्नुयात्। अतस्त आयुर्वेदीयशिक्षणपाठ्यक्रमेऽपि पाश्चात्यशारीरस्य शारीरक्रियाविज्ञानस्य चान्तर्भावो हठात्कर्तुमिच्छति।

९. क्षणमपि ते विचारममुं न कुर्वन्ति यद्भारत आयुर्वेदकुलदीपिकास्सुप्रसिद्धा नातिप्राचीनकाले चिकित्साकार्यंकुर्वाणाः प्रातःस्मरणीया जयपुरनिवासिनः श्रीलक्ष्मीरामस्वामिनः पुण्यपत्तनस्था महर्ष्यण्णासाहेबपटवर्धना बंगालप्रांतस्था ज्ञानरंजनसेनाद्यनेके ललामभूताः कविराजा मद्रासप्रांतस्थाः श्रद्धेया डी० गोपालाचार्लादयोऽनेकानेकवैद्या अभवन्यैः पाश्चात्यशारीरस्य शारीरक्रियाविज्ञानस्य च कथंविधे विज्ञानाभावेऽपि तेषां रोगाणां सफला चिकित्सा सम्पादिता येषां तात्कालीना एलोपेथिनिष्णाताः पाश्चात्यचिकित्साभूषिता असाध्यत्वं घोषितवन्तः। अधुनाप्यस्या विंशत्यात्मकशताब्द्या उत्तरप्रथमभागे सन्त्यनेके शुद्धायुर्वेदीयचिकित्सामात्रावलम्बिनो मुम्बापुरीजयपुरदेहल्यादिनगरभूषणभूता ये पाश्चात्यज्ञानविज्ञानसम्पन्नास्सन्तोऽपि त्रिदोषविषयकविज्ञानमात्रैकावलम्बिनोऽमेरिकादिदेशेभ्यआगतानामसाध्यघोषितानां रुग्णानां चिकित्सां कुर्वन्त्याश्चर्यजनकां सफलतां च प्राप्नुवन्ति। साफल्यस्यास्य कारणं न कस्यचित्सफलघोषितप्रयोगस्योपयोगो, यथाधुनिकशास्त्रे पेनिसिलिनस्ट्रिप्टोमायसीनादयः प्रसिद्धीक्रियन्तेऽपि तु त्रिदोषसिद्धांतस्य शास्त्रीयं ज्ञानं येन साधारणमप्यौषधं लंघनाद्युपक्रमपथ्यकराहारविहारादियुतं, केवलं पथ्यमेव वाऽन्यचिकित्सानिष्णातत्यक्तरुग्णानां लाभकरं भवति।

१०. अतएव शुद्धायुर्वेदीयपाठ्यक्रमाध्यापनसमर्थानां महाविद्यालयानां संस्थापनमावश्यकं येष्वेकोप्येलोपेथिको विषयो नाध्यापनीयो भवतु। पाठ्यक्रमस्त्वायुर्वेदीयग्रन्थचतुष्ठयज्ञानविज्ञानयुक्त एव भवेत्। विषयाध्यापनं त्वाधुनिकवस्तुनिष्ठपद्धत्या कार्यम्। छात्रास्तु केवल तेनैव शारीरज्ञानेन शारीरक्रियाविषयकविज्ञानेन वा परिचिताः कार्या यद्ग्रन्थचतुष्टये वर्णितं पर्याप्तं त्रिदोषविषयकविज्ञानाय। तदपि स्थूलरूपात्मकेनाधुनिकशारीरविज्ञानेनाध्यापकैरुपबृंहितं कार्यं व्याख्यानसमये। यथा प्रत्यक्षशारीरस्य सिराधमन्याद्यध्यायेषु प्रारम्भिकं परिचायकं विवरणं भवेदपि तु सौश्रुतीयसंज्ञायुक्तम्। वस्तुत आयुर्वेदीयानां त्रिदोषसम्बन्धिविज्ञानमेव शारीरक्रियाविज्ञानम्। तेषां कृते हृदयाद्यवयवानां वामदक्षिणनिलयालिन्दानां कपाटपत्रिकाणां वा विज्ञानमकिंचित्करं यतस्तेन दोषविज्ञानं मनागप्युपबृंहितं न भवति। बोधककफपाचकपित्तक्लेदककफापानवातादि शरीरजद्रव्याणां स्थानवर्णरूपरसगन्धादिगुणानां परिचयो वृद्धदशायां तेषां शरीराद्बहिर्निष्क्रमणावस्थायां कार्यः। महास्रोतसः परिचय आलेख-(Charts) द्वारा तथा शरीरे बाह्यतो निर्देशेन कर्तव्यः। स्रोतसंज्ञकानां सूक्ष्मातिसूक्ष्मनलिकारूपावयवानां परिचयो रोमरन्ध्राद्यदृश्योदाहरणैः कार्यः। धमनीव्याकरणशारीरे निदर्शिता धमन्योऽजाशरीरे विशसनानन्तरं सुस्पष्टमवलोक्यन्ते। सर्वमेतन्मुंबापुरीप्रान्तीयशुद्धायुर्वेदविद्यालयसंस्थासु नासिकादिस्थानेष्वध्यापकैः स्वयमजाशरीरं विशस्य दर्शितमस्माभिर्दृष्टं च। एवं त्रिदोषविज्ञानाय परमावश्यकं यच्छारीरज्ञानं तत्सम्पादितं भवेत्।

११. श्वसनरक्तसंवहनमलविसर्जनादिक्रियाकर्तारश्शरीरावयवा अन्यावयवसहकार्यानपेक्षं स्वकीयं कार्यं कुर्वन्त्यतस्तेषां विकृतिविज्ञानविघातावपि स्वतन्त्रतया कार्यावितमतमायुर्वेदमूलसिद्धान्तविरुद्धम्। सर्वे शरीरावयवास्सर्वाण्यंगप्रत्यंगानि चात्मसंज्ञकजीवशक्तिव्याप्तानि। शक्त्या अस्यास्सान्निध्यादिदं शरीरयंत्रं दोषसंज्ञकशरीरजद्रव्यत्रयस्याहार संयोगाज्जीवरासायनिक (bio-chemical) क्रियया विभिन्नशारीरद्रव्याणि धातुमलादिसंज्ञाकान्युत्पादयति स्वं स्वं स्थानं च प्रापयति। शरीरजमूलत्रिदोषद्रव्याणामुदीरणं तु प्राधान्यतो महास्रोतस्येव तस्यान्यान्यविभागेषु, विभिन्नशारीरस्थानेष्वपि तेषामुत्पत्तिः। दैनंदिनगृहीताहारेण मिश्रीभूय तानि दोषसंज्ञकद्रव्याण्याहारं तेषु शारीरधातुषु परिणमन्ति यानि प्रतिक्षणं विनाश प्राप्नुवन्ति शरीरस्य सततकार्यकरणस्वभावात्। एवं धातुसाम्यं सम्पाद्यते। यदा तु मिथ्याहारविहाराभ्यां कालार्थकर्मणां हीनमिथ्यातियोगाच्चैषां स्रावरूपद्रव्याणां प्रमाणं शरीरे न्यूनातिरिक्तं वा भवति तदा तान्यहरहर्गतिमताहाररसेन मिश्रीभूय कृत्स्ने शरीरे संचरमाणानि स्रोतोवैगुण्याद्यस्मिन्शरीरावयवे तेषां संगस्तत्रैव व्याधिरुपजायते।

१२. उपरिनिर्दिष्टानां शरीरजद्रव्याणां महत्वं पाश्चात्यवैद्यकशास्त्रज्ञानामपि सम्मतं विविधाशितपीतलीढखादितस्य जन्तोर्हितसमाख्यातस्याहारस्य सम्यक्परिणतौ। किन्तु तानि द्रव्याण्येव नतु तदितराणि कान्यपि प्राणिशरीरे सकलशारीरक्रियासंपादने मूलभूतानि वृद्धक्षीणावस्थासु व्याध्युत्पादकानीति तु नाङ्गीक्रियते तैरधुना। सूक्ष्मातिसूक्ष्मजंतवः (bacteria) एव व्याधिकारणमिति तु तेषामाग्रहः। जन्तवस्तु न मूलकारणमपि तु परिणाम एवेत्यायुर्वेदीयानान्निश्चतो निर्णयः। अनुभूयते च तदनेकासु व्याधिषु। रोगस्तु निश्चयेन ज्ञायते तत्रानेकैर्ज्वरकासातिसाररूपलक्षणैरपि तु तस्यादिकारणकल्पिता जन्तवः प्रारम्भावस्थायां सूक्ष्मदर्शनयंत्रैरपि नोपलक्ष्यन्यते।

१३. एषां त्रिदोषसंज्ञकानां शरीरजद्रव्याणां गुणधर्मास्तथा तेषां श्वसनरक्तसंवहनपचनमलनिःसारणादिक्रियाकरणसनामर्थ्यमवगतं प्राचीनाचार्याणाम्। विकृतावस्थासु तज्जन्यशारीरपरिणामस्तु तैर्निर्दिष्टोष्टविधपरीक्षाद्वारा विज्ञातुम्। यतो दोषजन्याविकृतिश्शरीच्छिद्रेषूपदेहेषु पृथग्जन्मसु बहिर्मुखेषु मलभूतेषु द्रव्येषु (च० शा० अ० ६) दृष्टोत्पत्तिं याति। हस्तगतरोहिणीसिरायां (नाडीतिसंज्ञितायां) शारीरमलमूत्रजिव्हाशब्दस्पर्शदृगाकृतिष्वपि दोषाणां विकृतावस्था स्फुटीभवति तत्परिवर्तितमलमूत्रादीनांस्वरूपजन्यज्ञानात्।

१४. सर्वेषामाहारद्रव्याणां वनस्पत्याद्यौद्भिदद्रव्याणां धातूपधातुविषोपविषाद्यनेकपार्थिवद्रव्याणांच सहस्रावधिवर्षंयावदनुभूता गुणास्तथा त्रिदोषसंज्ञकशारीरद्रव्योत्पत्तिविषयकं तेषां कार्यमपि ग्रन्थचतुष्टये निघण्टुसंज्ञकेष्वन्येष्वपिग्रन्थेषु वर्णितमद्यावध्युपलभ्यते। सर्वाण्येतानि द्रव्याणि यदा मुखगुदघ्राणकर्णरोमरन्ध्रादिशारीरच्छिद्रद्वारा शरीरे प्रवेश्यन्ते तदा तेषां परिमाणे वातपित्तकफसंज्ञकद्रव्यत्रयस्य किं विशिष्टप्रमाणवर्धकोह्रासको वा भवतीति निर्दिशितं तेषु ग्रन्थेषु। सर्व एते प्रयोगास्साम्प्रतमपि रुग्णालयेषु कर्तुं शक्या गुणदोषा अपि प्रत्य-

क्षानुभूतियोग्याः। तत्कृतेऽनेकानेकप्रयोगशालाः स्थापयितव्याः। आयुर्वेदीयास्तु सहस्रावधि-वर्षेभ्यो रुग्णान्तदनुसारमेव चिकित्सन्ते तेषां प्रयोगाश्च सफलीभवन्ति।

१५. एवमस्यैव शरीरजद्रव्यत्रस्य वैषम्यविज्ञानमायुर्वेदस्य प्रधानो ज्ञेयविषयः। कस्मिंश्छरीरावयवे तद्दोषवैषम्यं संजातं फुप्फुसयोर्यकृतिवा हृदये मस्तिष्केवा उत्तान्त्रेषु प्लीह्नि वेति त्वायुर्वेदज्ञैर्न चिन्त्यते प्राधान्येन। तदानुषंगिकज्ञानं तु चिकित्सासौकर्याय सम्पादनीयम्। अपित्वादौ दोषवैषम्यविघातोपाया धातुसाम्यसम्पादनार्थं कार्या न किंचिदितरत्। यतः

धातुसाम्यक्रिया चोक्ता तन्त्रस्यास्य प्रयोजनम्॥

च० सू० अ० १।

धातुसाम्ये कृते सर्वाश्शारीरसंस्थास्सर्वेशरीरावयवाश्च यथापूर्वं स्वकीयं कार्यं कुर्वन्तो विकारविघातं सम्पादयन्ति तज्जन्यारोग्यावस्था च प्राप्यते। एतदेवायुर्वेदीयचिकित्सागूढ़तत्त्वं येनाविशेषज्ञोऽपि साधारणो वैद्यश्शारीरावयवकार्याणां विशेषज्ञानाभावेऽपि व्याध्यपहरणं कर्तुं समर्थो भवति।

१६. एतद्दोषवैषम्यविज्ञानं तु मलमूत्रादिशरीरनिर्गतद्रव्याणां वर्णस्पर्शशब्दविशिष्ट-गुरुत्वगंधरूपादि पांचभौतिकद्रव्यगुणैरेव सम्पाद्यत इति तु कथितपूर्वम्। नाडीविज्ञानेन ज्वर-धातुक्षयमन्दाग्न्यादयो विकारास्तथा तज्जन्यातिसारग्रहण्यर्शसोदरक्षयादिविज्ञानं संजायते। कतिपयवर्षाणां सततानुभवेनैव नाडीज्ञाने नैपुण्यं प्राप्यते। एवमेभिरुपायैर्विकृतिसम्पादकानां मूलदोषद्रव्याणां वृद्धिक्षयविषयकं निश्चयात्मकं ज्ञानं भवति।

१७. अत आयुर्वेदीयाश्छात्रा अनावश्यकेन पाश्चात्यशारीरविज्ञानेन तदानुषंगिकेण शारीरक्रियाविज्ञानेन वा कदापि भाराक्रान्ता न कर्तव्याः। तद्विषयकविज्ञानं पाठ्यक्रमादतीव संकुचितं करणायैलोपेथीयविद्यालयेष्वपि विचारोऽधुना क्रियते। आयुर्वेदीयानां कृते तु त्रिदोषविषयकं शारीरक्रियाविज्ञानमेव पर्याप्तमुपयुक्तं च। तत्तु तेषां सम्पूर्णतयाध्यापयितव्यं येन ते सकलव्याधिविज्ञानसमर्था भवेयुश्चिकित्साकार्यमप्यायुर्वेदशास्त्रविहितौषधैर्नत्वेलोपेथिकसूची-भरणादिभिर्यथाविधं सम्पादितुं योग्या भविष्यन्ति। कस्मिन्नपि शरीरावयवे या विकृतिस्संपाद्यते सा दोषत्रयविकृतिमूलैव। वृक्षमूले छिन्ने स्कंधशाखावरोहकुसुमफलपत्राशादीनां यथा नियतो विनाशस्तद्वदत्रापि।

द्वितीया समस्या—रोगप्रतिबन्धः।

१८. चिकित्साक्षेत्रे त्वधुना व्याधिप्रतिबन्धविषयको विचार उच्चैर्घोषितोऽवलोक्यते। एतत्तु समीचीनमेव। आयुर्वेदं प्रत्येषा समस्याऽपरिचिता विजातीयाऽसम्बद्धा वा कदापि नासीत्। सुश्रुतो ग्रन्थारम्भे सूत्रस्थाने ह्यायुर्वेदोद्देशं दर्शयन्नाह।

वत्स सुश्रुत! इहखल्वायुर्वेदप्रयोजनं व्याध्युपसृष्टानां व्याधिपरिमोक्षः स्वस्थस्य रक्षणंच।

स्वास्थ्यरक्षणमित्यायुर्वेदशास्त्रस्य प्रधानोद्देश। निराकरणप्रयत्नसद्भावेऽपि व्याध्युत्पत्तौ रोगनिवारणमिति द्वितीयोद्देशः। विविधानां शरीरसंस्थानां परस्परोपबृंहणकार्यमविरतं

संचालितं भवतित्यत्रैव स्वस्थस्य रक्षणम् । तत्तु स्वस्थवृत्तोक्तैर्दिनचर्यर्तुचर्या न वेगान्धारणी-याध्यायेषुविहितनियमपरिपालनैस्तथाहारविधिविशेषायतनानां सम्यगभीक्षणेन हितमेवानुरोधनेन कार्यमित्युपदिशन्त्याचार्याः । एतत्सर्वमाचरणं ब्राह्ममुहूर्ते बोधनानन्तरमनुदिनं विहितनियमैरनुष्ठेयमिति दैनंदिनधर्मकर्मस्वेवान्तर्विहितं प्राचीनैर्ऋषिभिः । अद्ययावन्नियमास्ते पाल्यन्ते ग्रामीणस्त्रीपुरुषैः, नगरवासिनस्सुशिक्षितसंज्ञाभिधेयास्सुधारकाः पाश्चात्यचिकित्सकाश्च ये खल्विदं सर्वं द्रव्यजातमशितपीतलीढखादितस्वरूपं मानवस्य यथेष्टभोगायैवोपसृष्टमित्येवं स्वयं मन्यमाना अन्यानपि तथाविधोपदेशं हठात्कुर्वन्त आयुर्वेदशास्त्रोपदिष्टनियमानां परिपालनमकिंचित्करमित्यादिशन्तो व्याधिसमुदायबाधया परिपीडयन्तीत्यहो दुर्भाग्यमस्यदेशस्य ! परदेशे निर्मितमेलोपेथिशास्त्रमद्ययावदस्मद्देशोत्पन्नस्यानुदिनं सेवमानस्याहारस्य विविधकृतान्नवर्गस्य च गुणदोषज्ञाने न तथा समर्थं यथा स्वविहित 'प्रोटीन्सफेट्सायल्से'-त्यादीनाम् । प्रोटीन्सादयः खलु साधारणगुणा, न तावद्विशिष्टा यैरस्मद्देशीयाः परिचिता भवितुमर्हन्ति । तथाविधमन्यशास्त्रज्ञानं न कथंचिल्लाभकरमस्मद्देशीयानाम् ।

१९. आयुर्वेदीयास्तु

पथ्येसति गदार्तस्य किमौषधनिषेवणम् ।
पथ्येऽसति गदार्तस्य किमौषधनिषेवणम् ।।

इति पद्योक्तमार्गस्यावलम्बिनः । रुग्णेन पथ्याहारविहारसेवने कृते शास्त्रविहितविशिष्टक्वाथचूर्णलेहाद्यौषधीनां प्रयोगो नापेक्षितः पथ्यसेवनेनैव व्याध्युपशमत्वात् । इत्युक्तपद्यपूर्वार्धभावार्थः । क्वाथादीनामौषधियोगानां सेवनं कुर्वता यदि पथ्यं न पाल्यतेऽपितु सर्वे पथ्यापथ्यपदार्था उपयुज्यन्ते तदा व्याधिर्नोपशाम्यत्यौषधिसंभूतदोषसात्म्यस्यापथ्योद्भूतदोषवैषम्येण निराकरणत्वात् । एवं रोगनिवारणाय शास्त्रविहितौषधियोगानां प्रयोगो न तथा नितान्तमावश्यक आयुर्वेदोक्तचिकित्सातत्वावलम्बिनो वैद्यस्य यथा पथ्यम् । केवलं यथोक्ताहारविहारपरिवर्तनेनैव धातुसाम्यं सम्पाद्यते व्याधिनाशश्च भवति । यथा मंथरक-(Typhoid) वातश्लेष्मज्वर (Influenza) श्वसनकसन्निपाता-(Pneumonia) दयोज्वरा लङ्घनेनोष्णोदकसेवनेनैवोपशाम्यन्ति शास्त्रविहितदोषप्रकोपदिनमर्यादासमाप्तेः । ज्वरादौ लंघनं कुर्यादित्यायुर्वेदस्य ज्वरचिकित्साविषयकं प्रधानं सूत्रम् । आगन्तुभिन्नाः सर्वे ज्वरा आमसंज्ञकापक्वद्रव्यसंचयादुत्पद्यन्ते । यकृदग्न्याशयोदीरितस्रावद्वयमिश्रणं पाचकपित्तसंज्ञितमिति त्रिवेन्द्राधिवेशनभाषणे कथितमेव । तत्पित्तं यदाऽसमर्थमामपाचनाय तदैव ज्वरोत्पत्तिः । लंघनेकृते तुस्वल्प प्रमाणोदीरितं पाचकपित्तमप्यामपाचनाय समर्थं । अकृते तु तन्न समर्थमाहारमामंचेति द्रव्यद्वयं पक्तुम् । तेन ज्वरा भूयोऽभिवर्धते ।

२०. अतिसारग्रहण्यादयो व्याधयः । केवलं तक्रसेवनेनैवोपशाम्यन्ति विशेषतस्त्वाद्यावस्थायाम् । उदररोगास्तु तथैव विरेचनेन तक्रदुग्धादिद्रवपदार्थसेवनेन च । एवमन्येऽपि कुष्ठरक्तदोषादिविकारा लवणाम्लकटुरसत्यागेन मधुरपदार्थसेवनेन च ।

एवमायुर्वेदीयस्वस्थवृत्तसदाचारौ स्वास्थ्यरक्षणायानपवादतया प्रभवत इतिग्रन्थचतुष्टय उद्घोषितमायुर्वेदज्ञैरनुभूतंच । बी. सी. ज्यादि सूचीभरणानि तु स्वस्थवृत्तसेवनं विना कदापि

रोगप्रतिबन्धं कर्तुं समर्थानि न भविष्यन्ति । चेद्गृहीतसूचीभरणः साहसवेगरोधविषमाशनादि-क्षयजनकाहारविहारौ यथेष्टं सेवितुं क्षमस्तदैव कार्यकारणसम्बन्धस्सिध्येत् । गृहीतविषूचिका-प्रतिबन्धकसुचिरकालेऽतिमात्रंविषमाहारसेवनसमर्थो भवेत्किम् ? एवं जितेन्द्रियतैव सर्वश्रेष्ठो रोगप्रतिबन्धकोपायः ।

समस्या तृतीया-संशोधनचिकित्सा ।

२१. ऊर्ध्ववाहुर्विरौत्यायुर्वेदो यद्व्याधीनां विनाशाय सर्वश्रेष्ठोपायस्संशोधन-चिकित्सैव ।

येतु संशोधनैः शुद्धा न तेषां पुनरुद्भवः ॥ अ. हृ. सू. १४

इति त्वायुर्वेदप्रतिज्ञा । दुर्भाग्यवसादेतद्विषये सर्वेषां शासकचिकित्सकरुग्णानां त्रयाणा-मप्यनास्था । किं कारणम् । चिकित्साशास्त्रमधुना लोककल्याणाय नाधीयते । अपितु द्रव्यो-पार्जनाय ।

नात्मार्थं नापि कामार्थमथभूतदयां प्रति । चरक ।

इति चरकवचनं विस्मृतं सर्वैश्चिकित्सकैः प्रायेण । कथं व्याधिरधिककालं पीडयेद्रुग्ण-मित्येव चिकित्सकानां लक्ष्यं येन चिकित्साप्रारम्भकालात्पंचवर्षादर्वागेवसर्वैहिकसुखसाधन-सुसंपन्नोभवेद्वैद्यः । भवतु तावत् ।

यदीरयेद्बहिर्दोषान् पंचधा शोधनं च तत् । अ. हृ. सू. ५

शोधनेन दोषाणां समूलोच्छेदाद्व्याधेः पुनरुद्भवो न संभाव्यते ।

निरूहो वमनं कायशिरोरेकोऽस्रविस्रुतिः ॥ अ. हृ. सू. ५

इत्येते पंच व्याधेःसमूलनाशका उपायाः ।

अत्रापि निरूहबस्तेः प्राधान्यम् । यतः

शाखागताः कोष्ठगताश्च रोगा
मर्मोर्ध्वसर्वावयवांगजाश्च ।
ये सन्ति तेषां नहि कश्चिदन्यो
वायोः परं जन्मनि हेतुरस्ति ॥ ३८ ॥
विण्मूत्रपित्तादिमलाशयानां
विक्षेपसंहारकरः स यस्मात् ।
तस्यातिवृद्धस्यशमाय नान्यद्
बस्ति विना भेषजमस्ति किंचित् ॥३९ ॥
तस्माच्चिकित्सार्धमितिब्रुवन्ति
कृत्स्नां चिकित्सामपि बस्तिमेके ॥च. सि. १ अ.

एवंगुणविशिष्टस्य सर्वरोगनाशकोपायस्यावलम्बनं न क्रियते प्रसिद्धेषु रुग्णाल-येष्वप्यायुर्वेदीयेषु । इत्यप्यायुर्वेदस्य दुर्भाग्यमाचार्याणां चावमानो यैरनेकवर्षसहस्रमनुभूताः षट्शतप्रयोगाः केवले चरकग्रंथे वर्णिताः । अस्मिन्विषये, दीर्घप्रयत्नः कार्यस्सम्मेलनेन येन

सर्वेष्वायुर्वेदीयरुग्णालयेष्वनुभूता योगा वैद्यसमुदायमुत्साहयन्ति प्रकाशनानन्तरं स्वकीयरुग्णानां चिकित्सार्थम् ।

समस्या चतुर्थी—शल्यचिकित्सा ।

२२. सन्त्यनेके वैद्या अहर्निशं ये महतास्वरेणोद्घोषयन्ति यदायुर्वेदशास्त्रं पाश्चात्यचिकित्साशास्त्रस्य प्रतिदिनंवर्धमानविज्ञानप्रवाहे क्षणमप्युपस्थातु समर्थं न भवेत् । तथा यथाविधा शल्यचिकित्साया आश्चर्यजनकोन्नतिः परदेशेषु (न तु भारते-इति स्मरणीयम्) सम्पाद्यते तामपि प्रासादशिखराद्वर्णयन्ति ।

मन्मते तु नावलोकितानीमान्यायुर्वेदसूत्राणि तैः—

सर्वशस्त्रानुशस्त्राणां क्षारः श्रेष्ठः बहूनियत् ।
छेद्यभेद्यादिकर्माणि कुरुते विषमेष्वपि ॥१॥
दुःखावचार्यशस्त्रेषु तेनसिद्धिमयात्सु च ।
अतिकृच्छ्रेषु रोगेषु यच्च पानेऽपि युज्यते ॥२॥ अ० हृ० सू० ३०

पुनश्च—

अग्निः क्षारादपिश्रेष्ठस्तद्दग्धानामसम्भवात् ।
भेषजक्षारशस्त्रैश्च न सिद्धानां प्रसाधनात् ॥ अ. हृ. सू. ३०-४०

नास्ति मया कश्चिदपि विचारः कर्तव्यस्तैः सार्धं येषां मत उपरिनिर्दिष्टवचनान्यतिशयोक्तिपूर्णानि, कथंचिदपि संशोधनं वा प्रयोगकरणं विना । तेषां कृते भवतु सोऽपि संशोधनविषयः । स च जामनगरादिसंशोधनकेन्द्रेष्वन्यासु वा तथाविधासु संस्थासु राष्ट्रीयशासनप्रतिष्ठापितास्वङ्गीकर्तव्यः यत्र तु केवलमनयोश्शाखयोरेव संशोधनं कार्यं भवेत् । क्षाराग्निकर्मणोर्विधिस्तु विस्तृतो वर्णितो ग्रन्थचतुष्टये । अद्योपलब्धविसंज्ञीकरणोपायै-(Anesthetics) रतीव सुकरः स च सम्पादितो भवेत् ।

अनुभव एषश्शल्यकर्मविदां यच्छतेषु संम्भाव्योण्डुकपुच्छदाहविकृतिषु (Appendicites) प्रायोऽर्धसंख्याकाधिकास्तद्विकाररहिता इति शस्त्रकर्मानन्तरमेवावगम्यते तैरपि तु पुच्छंछिद्यत एवातुरस्य मानसिकपरिणाममुत्पादयितुम् । शस्त्रकर्मानन्तरं प्रायस्सप्ताहादवगिवज्ञायते यत्कारणे वर्तमाने रुग्णः पूर्ववदेव दुःखपीड़ितः । केचिदेव शल्यकोविदा विज्ञानमात्रोपासका जबालिपुरस्था डाः चारीसदृशाश्शल्यकर्मानन्तरं तस्य वैयर्थ्यं प्रकाशयन्ति ।

वस्तेरश्मरी निष्कास्यते । अपि तु अश्मरीजनके मूलकारणे विद्यमाने सम्भवन्त्यपरा अश्मर्यः । येन पौनःपुन्येन शस्त्रकर्म कार्यं भवति । अर्शांसि च्छेद्यन्ते निष्कास्यन्ते च । वर्षद्वयाभ्यन्तरे पुनश्च तत्रैव वाऽन्यवलिविभागे समुद्भवन्ति । भगन्दरो भिद्यते व्रणरहितः क्रियते च । वर्षपर्यन्तं यथापूर्वं व्याधिरहितोदृश्यते । तत्पश्चात्तु पुनः स्रवति । एवं शस्त्रकर्मकतिपयदिवसंयावत्सिद्धमिव भाति । यतो विद्यमाने मूलव्याधौ तस्या बाह्यचिन्हं दूरीक्रियते शस्त्रकर्मणा । नैतद्व्याधिंप्रति विशुद्धो निराकरणमार्गः । आयुर्वेदस्तु निन्दत्येतानुपायान्यथाऽन्येपि शुद्धशास्त्रमात्रदृष्टयः । एवमन्येपि शंखध्वनिपूर्वकमुद्घोषितोपाया अन्ते गन्धर्वनगरवद्विलीयन्ते ।

कदाचिच्छेदितादर्शसोऽन्यदतिसमीपमुद्भवति । सम्भृताद्भगंदरादन्यस्तस्यैवान्यतटे प्रादुर्भवति। पूरितव्रणादन्यस्तस्यैवशरीरांगस्य समीपे प्रकटीभवति। मूलकारणे वर्तमान आभ्यन्तरविकृतिरन्योन्यस्थाने व्याधिमुत्पादयति। एतादृशीमुपचारपद्धतिं निन्दंत्यायुर्वेदविदः।

प्रयोगः शमयेद्व्याधिं योऽन्यमन्यमुदीरयेत्।
नासौ विशुद्धः शुद्धस्तु शमयेद्यो न कोपयेत्॥ अ० हृ० सू० १३-१६

अतएव क्षाराग्निकर्मभ्यां शस्त्रकर्मणोऽधमत्वं प्रतिपादितमायुर्वेदे।

सर्वमेतच्छस्त्रकर्मणो महत्त्वोच्छेदनाय कथितमिति तु न मन्तव्यम्। अपि तु तस्य प्रयोगो यत्रावश्यकस्तत्रैव करणीय इति द्योतनार्थम्। कलैव शस्त्रकर्म न तु विज्ञानमतस्तस्याः प्रयोगोऽप्यसाधारणकार्येष्वेव कर्तव्यः। अधुना तु शल्यतन्त्रविदां तत्क्रीड़ास्थानममितद्रव्योपार्जनसाधनंच संजातम्।

कला तु सम्पादनीयैव। सुश्रुतोक्तविधिना पूर्वप्रधानपश्चात्कर्माणि कार्याणि। संशोधनकेन्द्राणि स्थापयितव्यानि। शास्त्राण्यपि सुश्रुतनिर्दिष्टविधिवत्कारयितव्यानि लौहकारैर्यथा पं० शिवशर्मभिः समाहितान्युपलभ्यन्ते मुम्बापुर्यामन्यत्र वा। सर्वथा सुश्रुतोक्तशल्यतन्त्रस्य पुनःसंशोधनं कार्यमेव।

बम्बईप्रान्ते शासकैर्या अनेकास्संशोधनसंस्थाश्शुद्धायुर्वेदस्याध्ययनाध्यापनार्थं निर्मातुमिष्यन्ते तासु शल्यचिकित्साप्येकमंगं भवितुमर्हति। आयुर्वेदाधिकारिभिः (Directors) सर्वेष्वपि प्रान्तेषु सुश्रुतोक्तविधिना शस्त्रनिर्माणार्थं छेद्यभेद्याद्यष्टविधशस्त्रकर्मकरणार्थं च सुविधा देया। एवमिदमायुर्वेदाङ्गमप्युपबृंहितं भवेत्। प्रारम्भेत्वाधुनिकशल्यकोविदानां साहाय्यं ग्राह्यमेव।

२३. अन्यास्समस्याः—

सिराव्यधनस्यधूमपानांजनाश्चोतनतर्पणाद्यनेकोपक्रमा न क्रियन्त आयुर्वेदज्ञैस्स्वल्पं वा क्रियन्ते। तेषामत्र विवेचनं न कार्यं समयाभावे। तेष्वपि संशोधनमावश्यकम्।

अधुना विद्यापीठसंस्थायाः पुनरुद्धरार्थं य उपायाः कर्तव्यास्तेषां विवेचनं क्रियते।

द्वितीयोविभागः

विद्यापीठसंचालन आवश्यकसुधारणाः।

१. नियमानामनपवादेन परिपालनम्।

मातृस्थानस्थितायुर्वेदमहामण्डलप्रतिपादितविधानान्तर्गतनियमानामनपवादेन प्रतिपालनमित्येषा प्रथमा प्रधाना च सुधारणा स्वीकार्या। यदा हि विधानविषयकनियमानामुपबृंहणं परिवर्तनं परिवर्धनं वा क्रियते तदा तदन्तर्भावो महामण्डलस्य वा विद्यापीठस्य कार्यालये वर्तमानासु सर्वासु विधानप्रतिलिपिषु कार्य इति विद्यापीठप्रधानस्य मन्त्रिणो वाऽद्यं कर्तव्यम्। सत्वन्तर्भावस्तेषां नियमानां परिवर्तितांशटंकितप्रतिलिपीनां सर्वासु नियमावलिप्रतिषु तत्तत्पृष्ठे संसक्तीकरणेन कार्यः। एकापि प्रतिलिपिस्तद्विरहिता कार्यालयाद्बहिः कदापि न यायादित्यपि नियमः पालयितव्यः। एतदर्थं लघीयसी समितिरेका योजनीया। साद्योपलब्धविद्यापीठमहा-

मण्डलविधानयोर्नियमान्सूक्ष्मतयावलोक्य विद्यापीठविधाने केवलान्परीक्षाविषयकनियमानन्तर्भावीकृत्येतरान्सर्वानेव महामण्डलविधाने प्रसिद्धीकरणार्थं नियोजयेत्। सर्वमेतत्कार्यं विधानद्वयस्य सूक्ष्मनिरीक्षणमर्हति।

२. परीक्षाकार्यसंचालनम्।

परीक्षाकार्यसंचालननियुक्तपरीक्षकनिरीक्षककेन्द्राध्यक्षेभ्यो यावत्परीक्षाप्राप्तशुल्कादिंकचिद्द्रव्यांशो न वितीर्यते तावदनेक केन्द्रसम्पाद्यमानगर्हणीयाऽव्यवस्थापरिवर्तनं नापेक्षते। परीक्षार्थिनिरीक्षककेन्द्राध्यक्षाः कथंचिदनधिकृतलाभभाजो न भवेयुरिति योजनाङ्गीकर्तव्या। गुणाङ्कदानविषयकनियमाः परीक्षकैरवश्यमेव पालनीयाः। पृष्ठपत्रांकितसर्वकोष्टकानि यथानियमं पूरयित्वा निर्दिष्टसमये परीक्षणकार्यं समाप्योत्तरपुस्तकानि कार्यालये प्रेषयितव्यानि। शुल्कदानेनैव निरीक्षका यथासमयं परीक्षास्थल आगमिष्यन्तीत्यपेक्षा। परीक्षापावित्र्यं नियमितनिरीक्षणावलम्बि। एतदंगमपि परीक्षणकार्यस्य गम्भीरतया विचारणीयम्।

३. ग्रन्थनिर्माणम्।

संज्ञानिर्णयः—प्रतिवर्षविहितोच्चारणो विषयोऽसौ विद्यापीठाध्यक्षेण। पौराणिकोच्चारितवर्षतु सम्बन्धिखाद्यपदार्थविषयका नियमाः श्रोतृभिर्यथैकेन कर्णेन श्रूयन्तेऽन्येन तु विस्मियन्ते तथैवैतद्विषयः प्रतिवर्षीयविद्यापीठाध्यक्षेण वैखर्यां निर्दिश्यतेऽपितु तद्विषयकविचारकरणाय सम्मेलने समयो न प्राप्यतेऽनेकानेकतत्तत्प्रान्तीयप्रधानाधिकारिणां भाषणानामावश्यकसंयोजनत्वात्। अस्त्वेतत्। जटिलस्त्वयं विषयः। सोऽपि द्रव्यसहायमपेक्षते। लेखनं सरलगीर्वाण्यामेवावश्यकम्। संज्ञाश्च ग्रन्थचतुष्टयनिर्दिष्टविषयविज्ञाने समर्था एवांगीकर्तव्याः।

प्रतिवर्षमुपस्थापितेऽपि विषयेऽस्मिन्निर्णयसम्पादनेऽनेकानेका आपत्तयो निर्दिश्यन्ते। नासौ व्याधिः सुसाध्य इत्यभिमतं सर्वेषाम्। अपित्वत्रागतैस्सदस्यैस्सहस्रावधिमुद्रा व्ययीक्रियंते मार्गव्ययेऽन्यस्मिन्कार्येच। तदर्थं यद्येतादृशप्रश्नानामन्तिमो निर्णयो न स्वीक्रियते केवलं स्थाननिरीक्षणे भाषणश्रवणे च व्यर्थ एव समयो यात इति मन्तव्यम्। तन्निर्णयार्थं यानि तत्वानि निर्दिश्यन्ते प्रतिवर्षमध्यक्षीयभाषणेष्वन्यमासिकपत्रिकास्वपिच, तेषामालोडनं कार्यम्। मन्थनोद्भूतनिर्णयेन यथा सुश्रुतशारीरमध्यापयितुं समर्था भवेयुरध्यापकास्स एव स्वीकार्यः। अत्र तु व्यक्तिविषयको विचारो न कर्तव्यः। संज्ञानिर्णयमन्तरेण ग्रन्थलेखनकार्यं व्यर्थं भवेदतस्तद्विषयको निर्णयः प्रथमं सम्पादयितव्यः।

४. आयुर्वेदविद्यालयस्थापनम्।

पाठ्यक्रमानुसारं प्रतिवर्षमायुर्वेदविषयकपरीक्षासम्पादनमिति तु गौणं कार्यम्। आयुर्वेदविहिताष्टाङ्गानां प्रात्यक्षिकोपयुक्तसाधनसंपन्नानां रुग्णालयविशिष्टसंपदुपेतानामध्यापनमेव प्रधानं कार्यम्। तदर्थमायुर्वेदविद्यालयः स्थापयितव्यः। अन्यथा केवलं परीक्षाकार्यसम्पादनमुपहासविषयो भवेत्। अर्धशतकं यावत्संचालिता महामण्डलसंस्थाऽसमर्थाऽस्मिन्विषय इति तु नाभिनन्दनीयमपि तु निन्दनीयम्। प्रतिवर्षं कतिपयाचार्यविशारदपरीक्षोत्तीर्णानां संख्यावर्धनं केवलं ग्रन्थसीमितज्ञानप्राप्तय एव न तु व्यवहारोपयोगिप्रात्यक्षिकज्ञानवर्धनाय।

आयुर्वेदस्तु न न्यायसाँख्यवेदान्तवच्छास्त्रं येषु प्रात्यक्षिकं ज्ञानं नापेक्षितमपितुतत्तथैव-संभाव्यतेऽध्यापकैः। आधुनिकवैज्ञानिकयन्त्राणां रसायनशालानां महतां प्रासादानां वा समुदाया नावश्यका न वा केवलं ग्रन्थपठनपाठनमपि पर्याप्तम्। आयुर्वेदच्छात्रा औषधियोग-निर्माणं स्वयं कर्तुं समर्था भवेयुः। परदेशात्स्वदेशाद्वागतैराकर्षकसुन्दरपुटकेष्वधिष्ठितैरौषधैरेव चिकित्सितुं योग्या वैद्या न वांछिता अस्मिञ्छास्त्रे, अपि तु ग्रामप्राकारे स्वगृहेवोत्पद्यमानैरनेकविधैर्वनस्पतिभिरन्यैर्वाहारद्रव्यैश्चिकित्सां कर्तुं समर्थाः। यतः 'जगत्येवमनौषधम्। न किंचिद्विद्यतेद्रव्यं वशान्नानार्थयोगयोः॥' अ० हृ० सू० ६-१०

इत्यायुर्वेदप्रतिज्ञा। तुलसीशुंठीकणामरिचाद्यनेकद्रव्याण्यकष्टमेवोपलब्धान्यल्पव्यय-प्राप्तानि गुणवन्ति च। सत्यशुद्धायुर्वेदशास्त्रज्ञाताभावे पाश्चात्यशास्त्राध्यर्धशतकसम्पर्के च चिकित्सा बहुमूल्यसाध्यैव भवतीति तथाकथितास्मद्देशीयसुशिक्षितानामंधेननीयमानानामन्धानिव ग्रामीणजनानामपि विपरीतमतं संजातमिति दुर्भाग्यमस्यदेशस्य।

दक्षिणदेशे बंगलोरनगरस्थितराजकीयायुर्वेदचिकित्सालये प्रतिदिनं द्विसहस्ररुग्णाश्चिकित्स्यन्तेऽधिकांशेन वनस्पतिकषायैः, यैः प्रतिदिनं प्रातः रुग्णानीताः शतावधिकाचकूपिकाः पूर्यन्ते। अस्मन्महासम्मेलनाध्यक्षास्स्वनामधन्याः श्री पार्थनारायणशर्माणस्तस्य रुग्णालयस्य संचालकाः। चिकित्सा चात्यन्तसफलाऽल्पव्ययसाध्या केवलमर्धाणकेन प्रतिदिनं प्रतिरुग्णम्।

इत्येष शुद्धायुर्वेदः। एतादृशी शिक्षा दातव्यास्मदीयायुर्वेदविद्यालयेषु विश्वविद्यालयेऽपि यदा स स्थाप्यते। न कर्तव्यो बहुव्ययस्तत्कृते। शास्त्रसिद्धान्ता अध्येतव्या भिन्नपद्धत्यैव। ग्रामीणस्थलेषु वनोपवनेषु च स्वयमुत्पद्यमानैरनेकौषधीभिश्छात्राः परिचिताः कार्याः। वनस्पतीनांकषायस्वरसचूर्णफाण्टक्षारादिभिरेव चिकित्सा कर्तुं समर्थाश्छात्रा भवेयुर्लंघनस्नेहनस्वेदनवमनविरेचननस्याद्युपक्रमैः। सर्वेषु प्रधाननगरेषु बंगलोरवद्रुग्णालया दातव्यौषधालयाश्च स्थापयितव्याः शासकैर्यत्र धनवन्तो निर्धनाश्चैकप्रकारकोपक्रमैरेव चिकित्सितव्याः। एतादृशश्चिकित्सालयश्च सर्वप्रान्तीयशासकैरनुकरणीयो भवेत्।

५. आयुर्वेदीयप्रसूतितंत्रोक्तपद्धत्या प्रसूतिकर्मकरणं प्रसूतिकापरिचर्या कौमारभृत्यायुर्वेदविश्वविद्यालयस्थापनादयोऽनेके विषया विचारार्हाः परं समयाभावात्तोऽत्र न समालोच्यंते।

त्रिदोषसिद्धान्तविषयकस्त्रिवेन्द्राधिवेशनभाषणाविशिष्टः कश्चिदंशो विवेच्यते।

तृतीयोविभागः

त्रिदोषमीमांसा

१. मलभूतदोषधातुमलाः।

(१) त्रिवेन्द्राधिवेशने त्रिदोषसिद्धान्तविषयकं विवेचनमेव प्राधान्यतः कृतम्। आहारस्य सप्तधातुपरिणमनविषयकाणि कानिचिद्रासायनिकसमीकरणान्यप्युद्धृतानि चतुर्थप्रकरणे। परं तेषां विषदीकरणं समयाभावान्न कृतम्। अत्र तु तदेव क्रियते सुहृदामाग्रहाद्विशेषतस्तु दक्षिणदेशीयानाम्।

(२) यथास्वमग्निभिर्विपक्व आहार आहारप्रसादाख्ये रसे मलाख्ये किट्टे च परिणमति। रासायनिकक्रियायाः प्रधानाप्रधानद्रव्यद्वयमेतत्। यथा ताम्रगन्धकाम्लयो रासायनिकसंयोगे तुत्थहाइड्रोजनवायुसंज्ञके अपरे द्रव्ये उत्पद्येते तथैव तद्द्रव्यद्वयम्।

ताम्रम् + गन्धकाम्लम् = तुत्थः + हाइड्रोजनो वायुः। इति तद्रासायनिकक्रियानिदर्शकं समीकरणम्।

क्रियायामस्यां तुत्थं प्रधानं द्रव्यं हाइड्रोजनवायुसंज्ञकमप्रधानम्। नैतदप्रधानद्रव्यमनुपयोगित्वात्त्याज्यमपित्वन्यद्रव्येणापररासायनिकसंयोगात्पुनश्चतृतीयोपयोगिद्रव्ये परिणतिस्तस्य भवत्येव। अविरतमिदं चक्रं संचाल्यतेऽनेकोपयोगीनि द्रव्याण्युत्पाद्यन्ते च।

(३) तथैवाहारो यकृदग्न्याशयोदीरितपाचकपित्तसंज्ञकद्रव्ये मिश्रीभूतो जीवरासायनिक (bio-chemical) क्रियया परिणमति प्रधानद्रव्य आहाररसे तथा शकृन्मूत्रवायुसंज्ञके द्रव्यत्रयसंमिश्रणात्मकेऽप्रधानद्रव्ये। अप्रधानद्रव्यत्रयमेतन्न त्याज्यद्रव्यमापाततः। यतः कतिपयहोरान्पुष्णाति देहं स्वेस्वे मार्गे गच्छत्। तत्तन्मार्गस्यान्तिमविभागमागत एव तस्य मलभूतसंज्ञा।

(४) अतएव चरकाचार्याः।

शरीरगुणाः पुनर्द्विविधाः संग्रहेण-मलभूताः प्रसादभूताश्च। तत्र मलभूतास्ते ये शरीरस्याबाधकराः स्युः।

तद्यथा (१) शरीरच्छिद्रेषूपदेहाः पृथग्जन्मानो बहिर्मुखाः।
(२) परिपक्वाश्च धातवः।
(३) प्रकुपिताश्च वातपित्तश्लेष्माणः।
येचान्येऽपि केचिच्छरीरे तिष्ठन्तो भावाः शरीरस्योपघातायोपपद्यन्ते सर्वांस्तान्मले संचक्ष्महे।
इतरांस्तुप्रसादे। च० शा० ६—१७

शरीरच्छिद्रेषुसंचितद्रवाण्येवं न तावान्मलभूतानि भवन्ति यावच्छिद्रेभ्यो बहिर्गन्तुन्नोपस्थितानि। तावत्तु तेभ्यः शरीरोपकारकः कश्चित्पदार्थस्संशोष्यत एव।

अत एवाहतुश्चिकित्सास्थाने चरकवाग्भटौ

पुरीषं यत्नतो रक्षेच्छुष्यतो राजयक्ष्मणः।
सर्वधातुक्षयार्तस्य बलं तस्य हि विड्बलम्!
अ० हृ० चि० ५-७३
च० चि० ८-४२

२. आहारस्य द्विधापरिणमनम्।

(१) च. सू. २८-४ सूत्रे आहारपरिणमनं वर्णितमेवम्।

तत्राहारप्रसादाख्यो रसः किट्टं च मलाख्यमभिनिर्वर्तते।
किट्टात्स्वेदमूत्रपुरीषवातपित्तश्लेष्माणः......पुष्यन्ति।
अत्रजिज्ञास्यं किमेतत्किट्टसंज्ञकंद्रव्यमिति।

किट्टशब्द ... भाषार्थो गीर्वाणवाण्यां 'मलेनां'ग्लभाषायां 'ड्रासेति' (dross) शब्देन च त्याज्यद्रव्यनिर्देश ... तोऽवलोक्यते । किन्त्वायुर्वेदशास्त्रे न तथा तस्य प्रयोगः । अपि तु रासायनिकक्रियायामु ... प्रमानद्वितीयद्रव्य-(Secondary product) द्योतनार्थं कृतो दृश्यते । यदि किट्टं त्याज्यद्रव्यं भवेत्कथं तस्माद्वातपित्तकफसंज्ञकद्रव्याणि देहसंभवाद्यकारणान्युत्पद्यन्ते ? यत उक्तम्

वातपित्तश्लेष्माण एव देहसम्भवहेतवः । सु० सू० २१-३

(२) अत्र केचित् । भिन्नान्येतानि त्रिदोषद्रव्याणि किट्टादुत्पद्यमानेभ्यो वातपित्तश्लेष्मभ्यः । रजस्तमोभ्यां निर्मुक्तैराचार्यैर्भिन्नद्रव्येष्वेकैवसंज्ञानियोजितेति तु न तर्क्यते विनिगमनाभावात् । एवं कूटप्रश्नोऽसौ विचारार्हः ।

(३) त्रिवेन्द्रवक्तव्ये त्रीण्यपि दोषसंज्ञकद्रव्याण्येकाकीनीति निश्चितमेव । प्राणवायुपाचकपित्तक्लेदककफादिसंज्ञास्तु विशिष्टविशेषणयुक्ता नियोजितास्तेषां देहस्य विभिन्नाशयजन्यत्वात्तथा तत्तद्विशिष्टकार्यकरणत्वाच्च ।

मुखकुहरादारभ्य क्रमश उदीरितानां बोधककफक्लेदककफपाचकपित्तसंज्ञकानां पाँचभौनिकद्रव्याणामाहारसंयोगजन्यो जीवरासायनिकपरिणामो निर्दिष्टस्तस्मिन्नेव वक्तव्ये । तैर्विपक्व आहारस्तदनंतरमाहारप्रसादाख्ये रसे मलाख्ये किट्टे च विभज्यते पाचकपित्तेन ।

आहारः + पाचकपित्तम् = आहाररसः + शकृन्मूत्रे वायुश्चेति तत्परिणामननिर्देशकं समीकरणम् ।

अवलंबककफः

(४) मूत्रं वृक्कयोश्शकृद्वायू च बृहदन्त्रे निर्विलगीक्रियन्ते ।

तदनन्तरमाहाररसो रसायनीभिस्संशोष्यते नीयते च हृदयस्यदक्षिणालिन्दनिलययोस्ततः फुप्फुसयोः । तत्र स विष्णुपदामृत (oxygen)-पानानन्तरं प्रत्यागच्छति हृदयस्य वामालिंदनिलययोस्ततः संचरति सर्वशरीरे ।

आहाररसस्य रसधातौ परिणामनमेवमुपरिनिर्दिष्टा रसशुद्धिः । तदेव विष्णुपदामृतपानं समीकरणेनैवं दृश्यते ।

आहाररसः + रसाग्निः = रसधातुः + (अवलम्बकः) कफः

फुप्फुसयोराभ्यन्तरत्वगावरणे सूक्ष्मातिसूक्ष्मनलिकाभिरागतोऽन्नरसो बाह्यवायौ विद्यमानेन विष्णुपदामृतेन संसर्गं प्राप्तः परिणमते रसधातौ । अस्यां जीवरासायनिकक्रियायां फुंप्फुसयोराभ्यन्तरत्वगावरणान्निष्यन्दते किंचिद्घनीभूतं द्रवद्रव्यं यस्मिन्नवलंबककफ इति संज्ञा । स एवान्ते मलभूतोऽस्यैव तृतीयप्रकरणस्याद्यचतुर्थे प्रविभागे निर्दर्शितः । प्रकुपितश्लेष्मा मुखाद्बहिर्निःसार्यते भोजनानन्तरम् । तस्यैव विनाशाय स्वल्पप्रकोपावस्थायां ताम्बूलभक्षणं भोजनानन्तरं निर्दिष्टं दिनचर्यायाम् ।

रसाग्निस्तु न भिन्नं द्रव्यमपि तु पाचकपित्तस्यैवांश आहारपचनानन्तरमवशिष्ट आहाररसेन मिश्रीभूतस्तेनैवसार्धं फुप्फुसाभ्यन्तरावरणे नीतो विष्णुपदामृतसंयोगेन

रसधातुं शोधयति। एष एव रसधातुः प्रधानद्रव्यमस्या रसपरिणमनक्रियाया अवलंबककफस्तु द्वितीयं वाऽप्रधानं द्रव्यम्।

सत्ववलंबकः कफो नोत्पद्यत आहारपरिणमनस्यप्रारंभावस्थायां यदा स आहारो मुखकुहरादामाशये पक्वाशये वा प्रविशति। अपि तु तदनन्तरं तदा भुक्ताहारस्य पाचकपित्त-संयोगजन्या प्रथमविपाकरूपाहारावस्था समाप्यते, रक्तावस्थाप्राप्तये तस्य शुद्धिः फुप्फुसयोः क्रियते च। अत्रोत्पन्नोऽवलम्बककफोवस्तुतो मुखकुहरोत्पन्नाद्बोधककफादामाशयोदीरितात्क्लेद-ककफाच्च भिन्नं द्रव्यं भिन्नशारीरस्थानोद्भूतत्वात्। अपि तु तस्य कफ इति संज्ञा स्निग्ध-शीतगुरुमन्दश्लक्ष्णमृत्स्नस्थिरादिसर्वकफद्रव्यसामान्यगुणत्वादवलम्बकेतिसंज्ञा स्ववीर्यतस्त्रि-कस्यान्नवीर्याद्हृदयस्यास्वुकर्मणा शेषाणां कफधाम्नां चावलम्बनकर्तृत्वाद्भिन्नातु देहस्य विभिन्नाशयोद्भूतत्वाच्च।

एवं 'किट्टात् स्वेदमूत्रपुरीषवातपित्तश्लेष्माणः......पुष्यंती'ति सूत्रे कथिता श्लेष्मो-त्पत्तिः सार्था भवति।

रंजकं पित्तम्।

५. अधुना त्वत्रोक्ता पित्तोत्पत्तिः कथं क्व वा भवतीति विचार्यते।

फुप्फुसयोरेवं शुद्ध आहाररसे रसधातुरिति संज्ञा प्राप्यते। स रसः फुप्फुसाभ्यां हृदय-वामालिदनिलययोरागच्छति इति तु कथितपूर्वम्। ततस्तु सर्वशरीरे संचरति। शरीरसंचा-रारम्भे शाखात्रये तस्य विभजनम्। एका शाखा प्रविशति वृक्कयोर्यत्र रसस्य मूत्रसंज्ञितो द्रवांशो भिन्नीक्रियते ; अन्या प्रविशति यकृति तृतीया तु सकलशरीरे। यकृद्गतशाखाद्वारेण प्रविष्टो रसधातुस्तत्र रक्ताग्निसंस्काराद्रक्तधातौ परिणमति। परिणमनप्रकारस्त्वेवम्। यकृताद्रञ्जकपित्तसंज्ञितद्रव्यमुदीर्यतेऽत्रैव। तत्तत्रागतरसधातुमिश्रीभूतं रासायानिकसंयोगात्तं रसं रक्तधातौ परिणमयति। तत एव श्वेतवर्णात्मके रसधातौ रक्तवर्णप्राप्तिर्यथा मिश्रित-हरिद्रासुधाचूर्णयोर्द्रवीकृतयो रक्तवर्णप्रादुर्भावस्तथैव।

अतएव आचार्याः—

रंजितास्तेजसात्वापः शरीरस्थेन देहिनाम्।

अव्यापन्नाः प्रसन्नेन रक्तमित्यभिधीयते॥ सु० सू० १४-५।

क्रियानिर्देशकं समीकरणमेतत्।

रसधातुः + रक्ताग्नि = रक्तधातुः + (रंजकं) पित्तम्।

एवं रंजकपित्तं पाचकपित्ताद्भिन्नं रसस्य रक्तपरिणमनक्रियायामुत्पन्नमप्रधानद्रव्यम्।

३. अन्यस्थानीया दोषाः।

तर्पकः कफः।

६. पंचश्लेष्मसु बोधकक्लेदकावलम्बकानामुत्पत्तिर्निर्दशितैव। तर्पकस्तु मस्तिष्कावरण-गुहायां वर्तते सद्रवरूपः। तस्यविवरणमित्थम्।

शिरःसंस्थोऽक्षतर्पणात्तर्पकः। अ. हृ. सू. १२-१७।

(शेष पृष्ठ ४२ पर देखिए)

CHIEF GU

DELIV

VAIDYA

PANDIT SHIV

Ayurvedacharya, Ayurveda Briha

AT THE

SPECIAL SESSI

OF THE

ALL CEYLON AYURVED PRACTITIONERS' CONGRESS

HELD AT

COLOMBO (Ceylon)

ON NOVEMBER 20, 1955.

Friends,

I am thankful to you for the honour you have conferred on me by inviting me to meet you on this historic occasion when the Ayurvedic profession of Ceylon has assembled to take perhaps the most crucial decisions of its career on the shaping of the future of Ayurvedic education and medical relief in this country.

I am glad on more than one account for having come to Ceylon. Firstly, it is a great joy and experience in itself to meet your eminent scholars of the level of Acharya Pravara Shri G.P. Wickramarachchi and his associates. Secondly, the island kingdom of Ceylon is a very attractive country. The beauty and the charm of its people and its landscape cannot fail to make a person look forward with longing to a visit to this beautiful island. Thirdly, an international contact between scholars is always more conducive to the development of science than the countrywise seclusion of the scientific workers to which the continued struggle, subjugation and exploitation of our two countries, India and Ceylon, had subjected the Ayurvedic profession.

Main Purpose of Visit

But the main purpose of my visit to Ceylon is to bring to you the results of the various experiments conducted by the Central and the various State Governments of India (a) for the development of Ayurveda, (b) for the obstruction of Ayurvedic progress, and (c) for complete liquidation of Ayurveda, in accordance with the intelligence, the whims and the fancies of the various Governmental units; so that the Government and the people of Ceylon may benefit by India's experience. A correct understanding of the Governmental measures and their outcome, resulting from their

रसधातुं शोधयति। एष एव रसधातुः प्रधानद्रव्यमr
अवलंबककफस्तु द्वितीयं वाऽप्रधानं द्रव्यम् ।
सत्ववलंबकः कफो नोत्पद्यत आहारपरिण
मुखकुहरादामाशये पक्वाशये वा प्रविशति । अ
संयोगजन्या प्रथमविपाकरूपाहारावस्था सम
क्रियते च । अत्रोत्पन्नोऽवलम्बककफोवस्
ककफाच्च भिन्नं द्रव्यं भिन्नशारीर
शीतगुरुमन्दश्लक्ष्णमृत्स्नस्थिरादि
कस्यान्नवीर्याद्हृदयस्यास्वुकर्
विभिन्नाशयोद्भूतत्वाच्च
एवं 'किट्टात
त्पत्तिः सार्था भव
वा

...able you and your Govern... India and to benefit from ...n effort on the part of the ... rectify the blunders committed ...

...shya-Parampara

...for the establishment of the Ayurvedic ... persistent a little over 30 years ago, the ... teaching consisted of the disciple residing ... Guru more or less as a son or a member of the ...ss of teaching and training was not restricted to ... hours as such. Every moment spent with the Guru ...of academic and professional gain for the disciple. ... and prolonged contact with the preceptor resulted ...able unconscious learning along with the learning through conscious effort. Thus the *Guru-shishya-parampara* ... some remarkably eminent physicians even in the absence of ...nage from the foreign rulers of the land. The true giants of ... Ayurvedic world, *viz.*, Shri Lakshmiram Swami of Jaipur, Shri ...warkanath Sen, Shri Bijoy Ratna Sen, Shri Shyamadas Vachas-pati, Shri Jyotirmoya Sen, my father Vaidya Ratna Pandit Ram Prasad Sharma, at whose feet I learnt the science of Ayurveda, all were and are the products of the same ancient system of the teacher and the taught living together in close proximity to enable the Guru to redeem his debt to the great science by trying to hand over to his disciple the same greatness, scholarship and skill which he enjoyed himself.

Emergence of the Ayurvedic Colleges

When the Ayurvedic colleges were opened, this system continued side by side with the Ayurvedic colleges.* A number of well-meaning laymen and some of the Vaidyas thought that the best service they could render to Ayurveda and the country would be to produce Ayurvedic graduates who would be familiar with both the Ayurvedic and the allopathic systems of medicine. Most of the recognised Ayurvedic colleges therefore began with a curriculum which covered a period of 2|3 years during which the students were supposed to receive adequate training in what are called the pre-medical sciences, minor surgery, allopathic medicine and Ayurveda.

A Failure

The experiment proved a failure. The graduates of these institutions did not possess an adequate working knowledge of any of the above mentioned subjects. Since the disappointment caused

* The Guru-Shishya-Parampara was gradually discouraged and ultimately abolished, with the best of intentions, through suppressive and persecutory legislation.

by the results of these experi... mittees were formed from time... Provinces respectively, to improve... the produce of the Ayurvedic college...

...atient through allopathic gold and ...can be healed by Ayurvedic gold ...hat these Ayurvedic preparations ...tes of nephritis from the jaws ... disbelief, for the concept of ...t drugs is entirely unknown ...mpelling. There is not ...pound in therapeutic ...o eliminate once it ...ere are thousands ...ese metals which ... do not attack

A Major Trag...

At this juncture a major tragedy occu... authority on the Ayurvedic education passed... hands of some Indian allopaths who were also... medical departments. This group was already not... the competition it was receiving from the efficient... old school. Instead of building up and developing t... system, they launched a widespread and well-conducte... to sabotage Ayurveda in order to bring a bad name to it a... to demand its total abolition.

...able ...t... ...to the ...ion.

India Awake

However, at this stage some serious minded leaders of the country, amongst whom I may mention the President of India, Shri Rajendra Prasad, the Vice-President of India Dr. Radhakrishnan, the Speaker of the Parliament, Shri Mavalankar, the Chief Ministers of the leading States, Shri Morarji R. Desai, Pandit Ravi Shankar Shukla, Shri Sampurnananda, Central Cabinet Ministers like Shri Gulzarilal Nanda, great administrators and academicians like Sir C. P. Ramaswami Aiyar, Governors of the leading States, Shri Hare Krushna Mahtab, Shri K. M. Munshi, Dr. Sitaramayya, Shri R. R, Diwakar, industrialists, educationists and intellectuals like Shri Dharamsey M. Khatau and Shri Manu Subedar, lent their moral and administrative support to Ayurveda; and the atmosphere created by this support generated a new expectancy and a new hope in the Ayurvedic profession. Year after year the Ayurvedic Congress drew the attention of the authorities to the destructive machinations of a small group of allopths who had managed to take control of the Ayurvedic institutions all over the country and who were ruthlessly exploiting some laymen's admiration for western institutions in general and their suspicion of everything ancient in particular. The situation began to change for the better. Ayurveda turned the corner in comparatively more advanced and bigger States of India. Three decades of the most devastating allopathic opposition from without and the most devitalising sabotage by their followers from within failed in gaining the objective of doing away with Ayurveda altogether.

Major States Advance

It has been my privilege to witness this struggle for survival of Ayurveda at very close quarters. I have fought very hard to stem the rot started by the domination of allopathic subjects over the Ayurvedic curriculums. The Ayurvedic profession of India which

रसधातुं शोधयति। एष एव रसधातुः प्रधा ...ed and subjected to internal
...the struggle and has found its
अवलंबककफस्तु द्वितीयं वाऽप्रधानं द्रव्यम्। ...esh where the Ayurvedic decks
...d of the non-Ayurvedic and anti-
सत्ववलंबकः कफो नोत्पद्यत आहार ...her is the wealthiest and the most
मुखकुहरादामाशये पक्वाशये वा प्रविशति ...argest, State of India. In yet another
...r Pradesh, the reforms have begun and
संयोगजन्या प्रथमविपाकरूपाहारावस्थ ...ng, Banaras, is waking up to the necessity
क्रियते च। अत्रोत्पन्नोऽवलम्बकक ...da what legitimately belongs to it. Under
guidance of the brilliant academician and
ककफाच्च भिन्नं द्रव्यं भिन्न ...r, Dr. Sir C. P. Ramaswami Aiyar, Vicr-Chance-
शीतगुरुमन्दश्लक्ष्णमृत्स्न ...s Hindu University, Ayurveda is coming into its
...ghtened Governor of U. P., Shri K. M. Munshi is
कस्यान्नवीर्याद्हृदयस्य ...al interest in the restoration of Ayurveda to the so-
विभिन्नाशयोद्भव ...vedic colleges, and it is being realised by the well wishers
...eda all over the country that the only correct way to build
एवं ... names in Ayurveda, as were built up in the days gone by,
त्पत्तिः सा ...irst give the scholars an intensive training in Ayurveda so that
...ir grasp of Ayurvedic science and philosophy is completed before
...ey are subjected to any additional study of confusing and contradictory theories.

Benefit By India's Mistakes

The Ceylon Government is on the threshold of taking far reaching decisions on the future of this great science of Ayurveda. It is my desire that Ceylon should not begin where India began 30 years ago. Let it begin where we are beginning today after thirty years of a wild goose chase. Thus this island kingdom will keep in step with the measures adopted by the leading States of its bigger neighbour, India.

Beware of Pitfalls

There is always a danger of even the most intelligent laymen being swayed in their opinions by unsympathetic anti-Ayurvedic influences existing nearest to them. I will therefore detail below the common pitfalls in which the laity often falls if it is not properly informed on the subject.

Ayurveda Not Static

The first of the fallacies prevalent amongst insufficiently informed intellectuals is that Ayurveda is static and has remained so during the last 2,000 years*. There is no justification whatsoever for this baseless charge. The pharmacopoeia of Ayurveda was chiefly confined to herbal medicines during the time of Agnivesha and Susruta. Later, at the beginning of the Christian era, metals were pressed into therapeutic service and *Makaradhwaja, Brihad-*

*"Ayurvedic Medical Science has remained static, just exactly where it was 2,000 years age." Ceylon Government White paper on Ayurveda, page 7.

vatachintamani, Swarnasutash
moderns agape at their therape-atient through allopathic gold and
quent stage foreign drugs like *Par* can be healed by Ayurvedic gold
introduced and safe and efficienhat these Ayurvedic preparations
from them. As late as the 16th cents of nephritis from the jaws
had perpetrated inhuman and brutal - disbelief, for the concept of
Ceylon during the 16th and 17th cent drugs is entirely unknown
which we are still witnessing in the 20th mpelling. There is not
India, while the civilised western nations loo pound in therapeutic
among other calamities, the gift of syphilis to eliminate once it
time. It was the Indian physicians of that time ere are thousands
period of their landing on the West coast these metals which
as a new entity. Bhava Mishra of Kashi, in his do not attack
Bhavaprakasha, written during the 16th century, dev
chapter to syphilis under the heading *Phirangarogaa.*
the chapter on the Portuguese disease. He was the first table
mercury compounds for it, and a little later, Trimalla Bhatt
of the *Brihadyogatarangini*, first introduced effective arsenic to the
to combat this fell disease. It was nearly three centuries lon.
that Schaudin isolated the spirochete and Ehrlich prepared the d
mous arsenic compound, 606, to kill the organism. Lately, when people started falling prey to nervous and degenerative disorders such as insomnia, schizophrenia, high blood pressure, etc., it was the very much neglected and suppressed Ayurvedic profession of India which first utilised *Sarpagandha* for the benefit of the sufferers of the above mentioned diseases. Today the various extracts of *Sarpagandha* are receiving wild praise in the modern medical press and are being credited by various medical writers with having revolutionised the treatment of the mental diseases.

Other Side of The Picture

The allopathic research institutions in India have received a unilateral patronage of the Government during these centuries. But if the much maligned Ayurvedic profession put its introduction of arsenic in anti-syphilitic treatment and *Sarpagandha* in high blood pressure and nervous breakdowns in one scale, and the total result of 200 years of exclusive patronage of the allopathic researh work in India was put in the other, there will be no two opinions that the work of the suppressed and harassed Ayurvedic profession shall far outweigh in merit the work of the very much pampered and patronised allopathic system. It will therefore be a travesty of truth to say that Ayurveda is standing where it stood 2,000 years ago. Given a fraction of the patronage the allopaths receive, the Vaidyas will progress far more rapidly than their more favoured allopathic brethren have ever done.

Observation, Inference and Authority

The second mistake which the laymen make with regard to Ayurveda is the belief that because Ayurveda traces everything to God, it is invested with a character of sacredness and it is

रसधातुं शोधयति। एष एव रसधातुः प्र d on faith.*
अवलंबककफस्तु द्वितीयं वाऽप्रधानं द्रव्यम्। its origin to divine sources but
सत्ववलंबकः कफो नोत्पद्यत आहा interfere at any stage with its
ll questions. One has only to read
मुखकुहरादामाशये पक्वाशये वा प्रविशत् selves say on this question. Charaka
icine shall never be complete, that the
संयोगजन्या प्रथमविपाकरूपाहारावस् achers for the wise and enemies for the
क्रियते च। अत्रोत्पन्नोऽवलम्बक th that possesses utility should be accepted
emies. On the question of methodology of
ककफाच्च भिन्नं द्रव्यं भिन् ven importance to three main factors:
शीतगुरुमन्दश्लक्ष्णमृत्स्न ksha, or sense perception;
कस्यान्नवीर्याद्हृदय mana, or inference;
विभिन्नाशयोद्भ
gama, or the unimpeachable authority which may be
एवं that of the scriptures or of any other trustworthy source.
त्पत्तिः Thus the question of accepting the whole truth on mere faith
, not arise at all.

What is "Scientific"?

But the most tragic ignorance is exhibited by those laymen who insist that Ayurvedic theories, unless they conform to the allopathic theories, cannot be accepted as scientific. Extending the same fallacy to research it is again emphasised that it "has to be upto the standards acceptable to western science."

A person who takes up this attitude has to be re-educated on a number of issues. Firstly, the word scientific is not synonymous with the word allopathic. In fact, in many fields the two words become practically antonymous. For example, when a person reacts adversely to quinine, the Ayurvedic explanation, that the reactions, which are collectively called cinchonism, are a result of a similarity in the constitution of the drug and the individual (quinine being a *vatic* drug and the sufferer being a *vata-prakriti* individual). is far more scientific than the bland statement that the individual is allergic to quinine. Again, the Ayurvedic statement that a *Kaphaprakriti* individual can take very large doses of the *vatic* drug, quinine, due to his constitutional antagonism to *vatic* elements, is a far more intelligent explanation than that the individual happens to be particularly tolerant to this drug.

Similarly, the phenomena of natural immunity and natural susceptibility to various diseases are explained far more scientifically by the *tridosha siddhanta* than by the random and scientifically barren belief in the humans being accidentally immune or susceptible to various diseases.

Again, it will be impossible to convince an allopath that when

*"The theory of divine origin of this science...invested it with a character of sacredness and demanded that its teaching be accepted on faith"

he damages the kidney of a patient through allopathic gold and mercury preparations, the kidney can be healed by Ayurvedic gold and mercury compounds and that these Ayurvedic preparations have pulled out many advanced cases of nephritis from the jaws of death. He will be quite right in his disbelief, for the concept of catalytic or inert (i.e., non-assimilable) drugs is entirely unknown to allopathy. And yet this action is compelling. There is not a single allopathic gold and mercury compound in therapeutic use which the kidney is not called upon to eliminate once it has been administered to the patient. But there are thousands of Ayurvedic *bhasmas* and *rasas* containing these metals which do not enter the blood stream at all and therefore do not attack the kidney.

Ceylon Government Earnest, Sincere and Dependable

I have tried to correct some of the views expressed in the White Paper on Ayurveda issued by the Government of Ceylon. However, after reading it I am convinced that considerable hard work and observation has gone into the preparation of this document and nobody can fail to see how keen is the solicitude of your Government for the well-being of your nation and how deep its sincerity of purpose in putting forward the proposals contained in it. The Central Health Ministry of Ceylon is far ahead of the Central Health Ministry of India in offering to the Vaidyas of Ceylon of its own accord, what we, in India, have not been able to get from the Central Health Ministry in spite of a well organised and powerful agitation for many years, *viz.*, a Central Indigenous Medical Council of the country. When the authorities here are so keen to help their people and so sincere in helping the cause of the science, I am absolutely certain that a few adjustments, required to be made in their approach to the question to enable them to escape the mistakes which India once committed and is now rectifying, will be made promptly and gracefully.

Future of Allopathy

In the short span of this address, it will not be possible for me to give a complete picture of the theoretical and the scientific perfection of the Ayurvedic principles. I can only assure you that the minds of the pioneers of the modern medicine are greatly worried over the trends the modern allopathic treatment is exhibiting. Dr. Selye's work on 'Stress' and the development of the concept of psycho-somatic medicine are rapidly revealing to those possessing the requisite intelligence and vision that a wholesale turn in the preventive and curative allopathic medicine is imminent if this system is to survive. Very few people realise that the allopathic medicine is shining in the reflected glory of the spectacular progress of modern surgery, and that left to itself with its highly toxic and deadly remedies, it cannot ensure a hopeful future for the general well-being of the mankind. The Ayurvedic approach to health and disease may still be centuries ahead of the allopathic therapeutics,

since it subordinates the destruction of the disease to the construction of the tissues.

Safeguarding Ayurvedic Progress

I have already taken much time to convey to you the essentia aspects of the question of future re-organisation of the Ayurvedic education. I suggested that the Indigenous Medical Council so rightly and generously envisaged by the Ceylon Government should consist of Ayurvedic physicians exclusively. Any allopath required to contribute to the shapping of the future text books *must be chosen and invited by the Vaidyas* on the council and *his function should be limited to the completion of the task allotted to him by the Ayurvedic profession.* The Ayurvedic system should evolve from within, assmilating and digesting whatever is helpful and beneficial to its growth, avoiding confusion and contradiction through unsympathetic and unintelligent imposition from without in the name of science. In this task of national scientific reconstruction, if the Indian Ayurvedic Congress is required to help the Ceylon Government or the Ceylon Ayurvedic Congress, it shall be at their service. I will also repeat that the Ceylon Government, if it at all wishes to consult official authorities outside the frontiers of its country, will be well advised to consult those major and advanced units of India, such as Bombay and Madhya Pradesh, which have excelled in putting Ayurveda on the right track of steady and untrammelled progress, instead of seeking help from quarters where Ayurveda is still lagging behind and where an undisguised effort to obstruct and suppress the growth of Ayurveda is easily discernible.

The Ideal Curriculum

As it is not possible within the compass of this small address to give a complete curriculum of studies to turn out sound and efficient Vaidyas with mastery over Ayurveda and a fair knowledge of the major differences and trends among 'pathies' other than Ayurveda, I am presenting to you the curriculum which is the official publication of the Government of Madhya Predesh, India's largest State. As I stated before, this forms the course of studies of the Government Ayurvedic College at Raipur. I have designed this curriculum to meet the most fastidious demands from all schools of thought, ranging from the absolute Suddha Ayurvedists to the most incorrigible pro-allopathists. I hope the adoption of this course by the Ceylon Government will save much labour and much friction among the Government and the Ayurvedic ranks. However, I do not claim the sacredness of the scriptures for this course. It may be translated into Sinhalese and carefully studied. It may then be adopted either *in toto* or with such adjustments as are necessitated by local conditions. I will also leave with you some of my speeches, delivered in India, which deal at length with a number of apparently scientific but basically stupid and fallacious slogans coined from time to time to misrepresent

and damage Ayurveda. A Sinhalese translation of these documents released to the public will go a long way in dispelling a number of wrong notions regarding Ayurveda prevalent amongst some educated individuals.

Re-education of the Educated

The re-education of the educated is not an easy task. It is an irony that the tragedy of education should sometimes prove greater than the tragedy of ignorance. It is easier to make the unlearned learn what is right than to make the learned unlearn what is wrong. It is upto the great scholars like Acharya Pravara Pandit G. P. Wickramarachchi and others of his class to undertake the great and important task of re-education of the educated on the subject of Ayurveda in this country. With the God, the truth, genuine scholarship, and sincere and unrelenting effort behind you, you shall succeed. It is the petty opponents of Ayurveda whose voice shall be stilled in course of time. Ayurveda, with its eternal truths and basic integrity, assimilating all that is good for humanity, shall march from progress to progress, crossing the frontiers of India and Ceylon and shedding its blessings in distant parts of the world. As the western intellect matures the extravagant praise that it is lavishing on a simple Ayurvedic remedy like *Sarpagandha* today shall extend to the very basic principles of this great science, in adoption of which alone the future hope of physical, mental and spiritual regeneration of the world lies.

Future is Bright

It has been a great joy and a great privilege for me to have associated myself with your august efforts to resuscitate Ayurveda. Now that the blighting shadow of foreign exploitation and domination has passed and our two countries, once more enjoying the blessings of complete independence, are free to develop their national resources and sciences; unhampered by foreign interests and interference, Ayurveda and the Ayurvedic profession are bound to progress and play an increasingly dominant roll in the service of our nations.

I thank you for the very kind and patient hearing you have given me.

[पृष्ट ३२ का शेष]

शिरःस्थः स्नेहतर्पणाधिकृतत्वादिन्द्रियाणामात्मवीर्येणानुग्रहं करोति।

सु० सू० २१-१४।

शिरस्थश्चक्षुस्तदिन्द्रियतर्पणात्तर्पकः। अ० सं० सू० २०।

म० म०.गणनाथसेनमहोदयैस्तस्मिन्ब्रम्होदकमिति संज्ञाकृता वर्णितस्तु स तैः प्रत्यक्ष-शारीरस्य तृतीयखंडे ५३ पृष्ठे।

श्लेषकः कफः।

सर्वास्थिसंधिपरितस्तिष्ठत्यसौ। ईषद्द्रवं द्रव्यं तदति। सन्धिनिर्मापकास्थ्नोः परस्पर-संघर्षजन्यनाशं वारयितुमुत्पाद्यतेऽसौ। विवरणं तस्येदम्।

सन्धिसंश्लेषाच्छ्लेषकः सन्धिषु स्थितः। अ. हृ. १२-१८

संधिस्थस्तु श्लेष्मा सर्वसंधिसंश्लेषात्सर्वसंध्यनुग्रहं करोति। सु० सू० २१-१४।

पर्वस्थोऽस्थिसंश्लेषाच्छ्लेषकः। अ० सं० २०।

सचास्थिसंध्यावरणकोषेषु स्राव्यतेऽन्तस्त्वग्भिः। स्रावोऽसौ लसीकाश्लेष्मणोर्मिश्रणं द्रव्यमिति पाश्चात्याः।

भ्राजकं पित्तम्।

७. पंचपित्तेषु पाचकरंजकयोर्विवरणं कृतमेव। भ्राजकं त्वगधिष्ठितं सूक्ष्मं द्रव्यम्। तदेवं वर्णितं ग्रन्थेषु।

त्वक्स्थं भ्राजकं भ्राजनात्त्वचः। अ० हृ० सू० १२-१४

यत्तुत्वचि पित्तं तस्मिन्भ्राजकोऽग्निरितिसंज्ञा, सोऽभ्यंगपरिषेकावगाहलेपनादीनां क्रियाद्रव्याणां पक्ता छायानां च प्रकाशकः। सु० सू० २१-१०।

त्वक्स्थं त्वचो भ्राजनाद्भ्राजकं। तदभ्यङ्गपरिषेकलेपादीन्पाचयति छायाश्च प्रकाशयति। अ० सं० २०।

तस्य कार्यं अभ्यंगपरिषेकावगाहावलेपनादीनां शरीरे संशोषणं त्वक्छायाप्रकाशनंच। नेदं प्रत्यक्षद्रव्यम्। अनुमानेन तु तस्यास्तित्वं निश्चीयते। यतो मर्दितं तैलं संशोष्यते वात-जनितपीडा च शाम्यति रूक्षलघुशीतवातगुणानां स्निग्धगुरूष्णतैलगुणैर्विपरीतत्वात्।

आलोचकं पित्तम्।

इत्थं तन्निर्दिष्टं ग्रन्थेषु।

रूपालोचनतः स्मृतम्। दृक्स्थमालोचकम्। अ. हृ. सू. १२-१४।

यद्दृष्ट्यां पित्तं तस्मिन्नालोचकोऽग्निरिति संज्ञा। स रूपग्रहणाधिकृतः।

सु० सू० २१-१०।

दृष्टिस्थं रूपालोचनादालोचकम्। अ० सं० २०।

अनुमानज्ञेयमिदमपिद्रव्यम्। रूपग्राहकमिन्द्रियं चक्षुरतस्तेनैव भिन्नवर्णानामवबोधः। पित्तमुष्णवीर्यं द्रव्यमितरौ वातकफौ तु शीतवीर्यौ, अतो रूपग्राहकेन्द्रियस्य तत्कार्ये प्रवर्तकं

पित्तमेव भवेन्नतु वातकफौ । पित्तरूपयोर्नित्यसम्बन्ध । एवमालोचकपित्तस्य नेत्रेन्द्रियमेवाधिष्ठानं सम्भवति ।

साधकं पित्तम् ।

ग्रंथत्रये तदित्थं वर्णितम् ।

बुद्धिमेधाभिमानाद्यैरभिप्रेतार्थसाधनात् । साधकं हृद्गतं पित्तम् ।

अ० हृ० सू० १२-१३

यत्पित्तं हृदयसंस्थं तस्मिन्साधकोऽग्निरितिसंज्ञा सोऽभिप्रार्थितमनोरथसाधनकृदुक्तः ।

सु० सू० २१-१०

हृदयस्थं बुद्धिमेधाभिमानोत्साहैरभिप्रेतार्थसाधनात्साधकम् । अ० सं० २०

हृदयद्वयम् ।

आयुर्वेदशास्त्रेषु हृदयशब्दः शारीरावयवद्वयनिदर्शनार्थमुपयुज्यते । योगशास्त्रेत्वनाहतहृदयसंविद्हृदयेति विशेषणयुक्ते संज्ञे नियोजिते । अनाहतहृदयमाधुनिकैर्हार्टेति (Heart) संज्ञया संविद्हृदयं तु ब्रेनेति (Brain) नाम्ना च ज्ञायते ।

सूत्रस्थाने ३० अध्याये चरकाचार्यैरेवं वर्णितं संविद्हृदयम् ।

गोपानसीनामागारकर्णिकेवार्थचिन्तकैः ।
तस्योपघातान्मूर्छायं भेदान्मरणमृच्छति ॥ ५ ॥

तथाच ।

षडङ्गमंगविज्ञानमिन्द्रियाण्यर्थपंचकम् ।
आत्मा च सगुणश्चेतश्चिन्त्यंच हृदिसंस्थितम् ॥ ४ ॥

संविद्हृदय एव विज्ञानमिन्द्रियाण्यर्थपंचकंचेत इति सर्वे भावा अधिष्ठता नत्वनाहतहृदय इत्याधुनिकैरपि निश्चितम् । तथा संविद्हृदयापरपर्यायान्मस्तिष्कादेव (Brain) सुषुम्नाकांड (Spinal Column) मधः प्रसृतम् । कांडादस्मादुद्भूताः परितः स्थिता दीर्घा धमन्य (nerves) स्सूक्ष्मधूसरतन्तुमय्यश्शणसूत्रसमाकारास्समग्रे शरीरे प्रसर्पन्ति । अतएव काण्डस्य तस्यागारकर्णिकेति संज्ञा यस्यां गृहाच्छादनार्थं यथाऽन्यानि गृहाच्छादनाधारकाष्ठानि गोपानसीतिसंज्ञितानि युज्यन्ते तद्वदेतत्सुषुम्नाकाण्डमपि धमनीभिस्संयोजितम् ।

सिध्यत्येवं यदायुर्वेदज्ञा मस्तिष्कसुषुम्नाकाण्डधमन्यादिभिस्सर्वैर्धमनीचक्रावयवैः पूर्णतया परिचिता आसन् । चरकस्य सूत्रस्थानगतत्रिंशदध्यायस्य प्राथमिकाश्चतुर्दशश्लोकास्तेषां तद्विषयकज्ञानस्य परिचायकाः । तेऽग्रिमवर्षे सम्मेलनपत्रिकायां विशदीकार्याः ।

हृदयं चेतनास्थानमुक्तं सुश्रुत ! देहिनाम् ।
तमोऽभिभूतेतस्मिन्स्तु निद्राविशति देहिनम् ॥

सु० शा० ४-३४ ।

अत्रापि संविद्हृदयमेव निर्दिष्टम् ।

संविद्हृदयम् (brain) साधकपित्तस्य स्थानं नत्वनाहतम् (heart) नवा साधकपित्त स्थूलद्रव्यं पाचकरंजकवदपितु सूक्ष्ममालोचकभ्राजकवत् ।

८. पंचवायुषु प्राणापानौ विस्तारपूर्वकं 'त्रिवेन्द्रवैखर्या' वर्णितौ। कार्बनडायाक्साइड वायोरधिकांशस्यापाने विद्यमानत्वाद्धमनीचक्रोत्तेजनकार्यमपानस्येत्यपि तत्रैव दर्शितम्। व्यानोदानसमानानां कार्यं यदष्टांगसंग्रहाष्टांगहृदयसुश्रुतग्रंथेषु निर्दिष्टं तद्धमनीचक्रस्य विशिष्टसमुदायानां कार्यम् धमनीसंज्ञकशारीरावयवानां वायोश्चाश्रयाश्रयीभावः। वायुद्रव्यं धमनीभिस्संशोष्यते। धमन्यश्च तेनैव संशोषितेन वायुना स्वस्वकार्यसम्पादनार्थमुद्विज्यन्ते। अतएव सर्वा शारीरक्रिया वायुना धमनीचक्रसहायेन क्रियन्त इत्यायुर्वेदसिद्धान्तः।

अपेक्षितकालादधिकमवरुद्धाः भवन्तोऽतः क्षमध्वम्

सर्वेत्र सुखिनः संतु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु न कश्चिद्दुःखमाप्नुयात्॥

इतिसद्भावपूर्वकमन्तेगुरुचरणयोः प्रणामाः।

श्रीविष्णुभोटला रामकृष्णशास्त्रीणा द्रव्यगुणसम्भाषापरिषदे प्रदत्तं

अध्यक्षीयभाषणम्

आर्याः ! ननु वो विदितचरमेव यत् भिषजां द्रव्यगुणविज्ञानं सुतरामावश्यकमिति । आयुर्वेदस्य प्रथमप्रवर्तयिता कमलासनोऽपि अमुं शास्त्रविभागं अधिजगे इति अधोनिर्दिश्यमान चरकश्लोकेनैव विज्ञायते । "हेतुलिङ्गौषधस्कन्धं स्वस्थातुर परायणं । त्रिसूत्रं शाश्वतं बुबुधेयं पितामह ।" इति ।

हेतु-लक्षण-औषधाख्यैः त्रिभिः स्कन्धैः आयुर्वेदमहाकल्पतरुः समुज्जृम्भते । "रोगमादौ परीक्षेत ततोऽनन्तरमौषधं" इति वचनात् प्रथमं रोगस्य निदानं, पश्चात् तदनुकूल गुणशालिभिः द्रव्यविशेषैः धातुसाम्यता सम्पादनमेव वैद्यस्य करणीयमिति प्रसिद्धमेव । अन्तरा द्रव्यगुणविज्ञानं केवलनिदानज्ञानेन वैद्यता अपर्याप्तेति वाच्या । अतः औषधस्कन्धविज्ञानमत्यावश्यकमेवेति निर्णीयते ।

अत्रेदमाशंक्यते यत् पाश्चात्य वैज्ञानिकाः नवनवोन्मिषद्विज्ञानविलसितानि तन्त्राण्युपकरणीकृत्य द्रव्याणां गुणवीर्यप्रभावादि विशेषान् विवेचयंति । कथंनाम प्राचीनास्तन्त्रकाराः अविदित यन्त्रतन्त्रमर्यादाः द्रव्यगुणविवेचने पटीयांसःस्युरिति । अस्यतु समाधानं यथा प्राचीना स्तन्त्रकाराः योगबलेन आगमप्रामाण्यमवलम्ब्य च सर्वद्रव्याणां रसगुणवीर्यविपाकप्रभावविचित्रप्रत्ययारब्धतादि विषयेषु कृतविस्तरा इति—आगमस्तु शाश्वतः यदनुपलभ्यते प्रत्यक्षेणानुमानेन वा तत्सर्वं आगमादुपलभ्यते । यथाहि—"प्रत्यक्षेणानुमित्यावा यस्तूपायो न बुध्यते । एवं विदंति वेदेन तस्माद्वेदस्य वेदता ।" इति । अनङ्गीकृते चैतन्मते अन्योप्यवरोधः प्रसज्येत । नानाविध यन्त्रोपकरणसहिता अपि वैज्ञानिकाः एकस्यापि द्रव्यस्य विवेचने तदीय सारभाग (Alkaloid) विचये तद्गुणनिर्णयेव अनितरव्यापारं प्रयतेरंश्चेत् हायनद्वयाधिको काल आवश्यको भवतीति प्रसिद्धनामधेयै श्री आस्यन् छोप्रा महाशयैः स्वकीये ग्रन्थे 'Indigenous drugs af India' इति नाम्नि प्रकाशितमासीत् । स्थिते असंख्याकानां आयुर्वेद प्रतिपादितानां नानाविधानां द्रव्याणां गुणधर्मविनिर्णयाय कियान् काल आवश्यकः स्यात् ? तस्मात् युक्त्या आगमेन च इदमेव निर्धार्यते यत् प्राचीना स्तन्त्रकाराः योगबलेन आगमप्रामाण्याच्च द्रव्यतन्त्रमरीरचन्निति । अथवा महतां तावत् उपकरणैः ? क्रियासिद्धिः सत्वेभवति महतां नोपकरणे । इति हि अभियुक्तोक्तिः । "योगिनां बलमैश्वरम्" इति च वचनं योगस्य माहात्म्यं ज्ञापयति । नानाविधोपकरणवद्भिरपि आधुनिक वैज्ञानिकैः शरीरं प्रविष्टानां औषध द्रव्याणां गुणनिष्पादनं कथं कारं संभवतीति निश्चेतुं प्रायशो न पार्यत इति तदीयैरेव वचनैः विज्ञायते । "The exact mechanism of this selective action is however yet unknown"—Ghosh. एतावता न खलु तेषां विज्ञानकलङ्कशङ्का । अपितु विचारणीयस्य विषयस्य गम्भीरतैवाऽवगम्यते ।

प्राचीनवैद्यग्रन्थेषु द्रव्य-गुण-कर्म-सामान्य-विशेष-समवायाख्याः षट्पदार्थाः प्रदर्शिता :—

द्रव्यादीनां षण्णां विज्ञानेन परमस्य सुखस्य, दीर्घजीवितस्य च प्राप्तिरिति "सामान्यं च विशेषंच गुणान् द्रव्याणि कर्मच । समवायंच तद्ज्ञात्वा तन्त्रोक्तं विधिमास्थिताः । लोभिरे परमं शर्म जीवितंचाप्यनश्वरम्" । इति चरकवचनेन विज्ञायते ।

द्रव्यलक्षणम् :—"यत्राश्रिताः कर्मगुणाः कारणं समवायियत् तद्द्रव्यम्" अर्थात् यस्मिन् पदार्थे कर्मगुणाश्च समवायाधेयभावेन स्थिताः, यश्च स्वसमवेतं कार्यमुत्पादयति तद्द्रव्यम् । इति लक्षणं द्रव्यस्य, इदन्तु लक्षणं कारणद्रव्याणां कार्यद्रव्याणांच लक्षकं भवति। यत्तु वाग्भटेनाभिहितं "पञ्चभूतात्मकं तत्तु क्ष्मामधिष्ठाय जायते । अम्बुयोन्यग्निपवननभसां समवायतः । तन्निर्वृत्तिविशेषश्च प्रत्ययाः खादयस्त्रयः" इति लक्षणं तत् अभयामलकादि कार्यद्रव्याणां उत्पत्तिमुद्दिश्य निबद्धं । सर्वेषामपि द्रव्याणां पृथिवी आधार कारणं-मूर्तिहेतुश्च। आपस्तु जीवनहेतुत्वात् सर्वाण्यपि बीजानि जीवयितुं वर्धयितुं च आवश्यकम् । अग्निस्तु निपीयमानानां जलादीनां जीवनहेतुकानां भावानां पाचनाय, परिणमयित्वा स्वानुरूप पदार्थता प्रापणायच उपकरोति । वायुस्तु विभागहेतुः अवयवविभागमापाद्य पोषणानुकूल वृद्धिहेतु भवति । आकाशन्तु अवकाशप्रदानायोपयुज्य अणूनां परस्परं व्यवह्रितत्वं विदधाति । एतादृशं पांचभौतिकं बीजपोषणकरं कर्मैव आधुनिकानां मते यत् जीवाणु (Cell) वृद्धि तद्विभजनादि व्यापारः तत्समन्वयाय पार्यते ।

द्रव्य संख्या :—कारणद्रव्याणि नवैवेति तार्किकाः । तत्र पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशकालदिगात्ममनांसि नवैव इति हि तद्वचनम् । चरकेच तत्सदृशमेव वर्णितम्—'खादीन्यात्मा मनः कालो दिशश्च द्रव्यसंग्रहः ।" अर्थात् खादीनि पञ्च-आकाश-वायु-अग्नि-जल-भूमि-भेदेन, आत्मा-मनः-कालः-दिशः इति नवैव । एतेषां विभागशः गुणप्रकाशनं ग्रन्थगौरवायेति न लिख्यते ।

कार्यद्रव्याणि तु अभयामलकादीनि तु असंख्याकानि ।

उत्पत्ति भेदतः पञ्चविध द्रव्याणि पार्थिवानि, आप्यानि, तैजसानि वायव्यानि, नाभसानि चेति । "व्यपदेशस्तु भूयसे" ति वचनात् अधिकाधिकभूतांशसम्बन्धात् पार्थिवादि संज्ञा सिद्धिः । एतेषां तु लक्षणानि अग्रे वक्ष्यामि । इदन्तु विभागविधानं नानाविधौषधीनां कार्यकरणविधानसमन्वयाय उपयुज्यते । उत्पत्ति भेदत एव पुनः द्रव्याणि त्रिधा भिद्यन्ते। जंगमम्-औद्भिदम्-पार्थिवम् इति । जाङ्गमद्रव्याणि जङ्गमजन्तु प्रभवाणि-क्षीर घृतवसास्थिमज्जाकेशनखलोमादीनि (Animal Kingdom) औद्भिदं पुनः भुवमुद्भिद्य जायमानानि वृक्षलता गुल्मादीनि ।—(Vegetable Kingdom) पार्थिवानि आकरादुपलभ्यमानसुवर्ण रजतादिद्रव्याणि (Minerals) अयन्तु विभागः द्रव्याणां गुणादि वर्णनोपयोगितया वर्गीकरणाय ।

द्रव्याणां गुणधर्मादिप्रकाशकविभागविधानमपि दृश्यते । चरकः द्रव्याणि सेन्द्रियनिरिन्द्रिय-रूपेण द्विधाचकार । तत्र सेन्द्रियाणि (Organic) चेतनावन्ति, निरिन्द्रियाणि तु

(Inorganic) अचेतनानि । सेन्द्रियद्रव्येषु वृक्षादिद्रव्याणि परिगृह्यन्ते । वृक्षाश्च मूकाः प्राणिन इति व्याचक्षते । तेषां दोहदवशात् फलवत्तादिदर्शनवशात् रूपरसस्पर्शनादि विषयाणि संति । अतः अनुमानतः तेषां त्वक्नेत्ररसनादिमत्वम् ज्ञानसमुल्लसितत्वंच विभाव्यते । अतिप्राचीनेषु तन्त्रेष्वपि नव्यवैज्ञानिकविभागवत् (Organic and Inorganic division) सेन्द्रिय निरिंद्रियादि विभागः आश्चर्य हेतुः । तथाच एतद्ग्रन्थ प्रतिपादिताः वृक्षास्सेंद्रिया इत्यादि विषयाः किमु Sir जेसि. बोसु महाशयस्य वृक्षविषयक नव्याविष्करणकार्येषु मार्गदर्शकाः अभवन्नित्यपि शङ्कावकाशः विद्यते ।

शरीरांतस्संचारमार्गभेदेन द्रव्याणि पुनर्द्विधा विभक्तानि, ऊर्ध्वगानि अधोगानि चेति । तत्र अग्निपवनोत्कटानि द्रव्याणि शरीरे प्रायः ऊर्ध्वभागेषु संचरन्ति यथा वमन द्रव्याणि भूमितोय गुणाधिकानि, द्रव्याणितु प्रायः अधोगानि भवन्ति विरेचकद्रव्यवत् "द्रव्यमूर्ध्वगमं तत्र प्रायोग्निपवनोत्कटं । अधोगामि च भूयिष्ठं भूमितोयगुणाधिकं" इति ।

रसभेदत :—द्रव्याणि षट्विधानि । मधुरद्रव्याणि, अम्लद्रव्याणि, लवणद्रव्याणि, कटुद्रव्याणि, तिक्तद्रव्याणि, कषायद्रव्याणि चेति ।

रोगहरण शक्तितः :—द्रव्याणि बहुधा भिद्यन्ते । दीपन, पाचन, वमन, विरेचन, स्रंसन, लेखन, व्यवायि, विकासि, प्रमाधि, प्रभृतीनि । चरके च प्रजास्थापन, वयस्थापन, वेदनाहर, शूलहर, मूत्रविरजनीयादि भेदेन बहुधा वर्गीकृतानि द्रव्याणि संदृश्यन्ते । प्रत्यंगेषु स्वप्रभावदर्शनात् कानिचन द्रव्याणि हृद्यानि, नेत्र्याणि, मूत्रलानि, स्वेदजननानि, शुक्रलानि स्तन्यजनननानीति, वर्गीकृतानि ।

पुनश्च द्रव्याणि त्रिधा भिन्नानि । शमन, कोपन, स्वस्थहित भेदेन । "तथाच चरकः । किंचिद्दोषप्रशमनं किंचिद्धातुप्रदूषणम्, स्वस्थवृत्तै मतं किंचित् द्रव्यमेवं त्रिधा स्मृतं इति । उपरिप्रतिपादिताः नानाविधाः द्रव्यवर्गाः एतत्रिविध विभागं नाति वर्तन्ते ।

द्रव्यस्य प्राधान्यं । रसगुणवीर्यविपाकादीनामाश्रयत्वात् तदपेक्षया द्रव्यमेव प्रधानं । तथाहि द्रव्यमेव रसादीनांश्रेष्ठं तेहि तदाश्रयाः । इति वाग्भटः । सुश्रुतेऽपि पठ्यते यथा—

पाको नास्ति विना वीर्यात् वीर्यं नास्ति विना रसात् ।
रसो नास्ति विनाद्रव्यात् द्रव्यं श्रेष्ठतमं स्मृतं ॥
जन्मतुद्रव्यरसयोरन्योन्यापेक्षिकं स्मृतम् ।
अन्योन्यापेक्षिकं जन्म यथास्याद्देह देहिनोः ॥
वीर्यसंज्ञा गुणाह्यष्ठौ तेपि द्रव्याश्रयास्स्मृताः
रसेषु न भवन्त्येते निर्गुणास्तु गुणाः स्मृताः ॥
द्रव्ये द्रव्याणि यस्माद्धि विपच्यन्ते न षड्रसा
श्रेष्ठं द्रव्यमतोज्ञेयं शेषाभावास्तदाश्रयाः इति ।

पार्थिवादि द्रव्यलक्षणम् :—

१. पार्थिवद्रव्ये गुरु, स्थूल, स्थिर, गन्ध, गुणाः दृश्यन्ते । उपयोगेन चैतस्य गौरव, स्थैर्य, संघात, उपचय, प्राप्ति फलम् ।

२. आप्यद्रव्ये द्रव, शीत, मंद, सांद्र, गुरु, स्निग्ध, रसोल्वणत्वादयो दृश्यन्ते । स्नेहन, विष्यन्द, क्लेद, प्रह्लाद, बन्धनादिकं करोति ।

३. आग्नेयद्रव्ये रूक्ष, तीक्ष्ण, उष्ण, विशद, सूक्ष्मगुणाः विद्यन्ते । रूपगुणोल्वणंचे भवति । दाह, भा, वर्ण, प्रकाश, पचनादि व्यापारं करोति ।

४. वायव्य द्रव्येः—रूक्ष, लघु, विशद, स्पर्शगुणोल्बणत्वमुपलभ्यते रूक्षलाघव-वैशद्यविचारग्लानिकारकंचेदं द्रव्यम् ।

५. नांभसं द्रव्यं :—सूक्ष्म, विशद, लघु, शब्दगुणोल्बणं भवति । इदं सौषिय-लाघव-करं भवति ।

एवं जगति समुपलभ्यमानानां सर्वेषामपि द्रव्याणां पाञ्चभौतिकत्वात् सर्वाण्यपि द्रव्याणि औषधस्वरूपाण्येव । नातोभिन्नानि इति सिद्धान्तः जगत्येवमनौषधं । नकिंचिद्वि-द्यते द्रव्यम् वशान्नानार्थयोगयोः "इति वाग्भटात्" यत्रक्वापि सञ्चरतो वैद्यस्य स्वय-मसन्निहितौषधस्यापि कस्यचन जनस्य रोगप्रशमनाय हठादवसरप्राप्तौ तद्विषयाभिजातानां औषधीनां गुणपरिशीलनं विद्याय रोगचिकित्सासुकरी भवति । इत्यन्यदपि प्रयोजनं पाञ्च-भौतिकगुणसमालोचनेन द्रव्याणाम् ।

यथ गुणानिरूप्यन्ते—गुणाः कर्माणि च द्रव्ये समवायाधेयत्वेन वर्तन्त इति प्रागेवा-भिहितं । चरके गुणानां संख्यावायं समुपलभ्यते । सच गुर्वादि गुणान् द्रव्यगतान् परादि प्रयत्नान्तान् इच्छा, द्वेषादिकानात्मगुणांश्च पर्यगणयत्-वाग्भटस्तु वैद्योपयोगिनो गुणानेव समुपदिदेश । तत्र विंशतिः गुणाः द्रव्यनिष्ठाः शरीरोपचयापचयदोषप्रकोपोपशमनिमित्ताः-"गुरुमन्दहिमस्निग्धश्लक्ष्णसान्द्रमृदुस्थिराः गुणास्ससूक्ष्मविशदा विंशतिस्स विपर्ययाः ।" इति तेषां विशेषाः गुरु लघु, मन्द, तीक्ष्ण, हिम, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष, श्लक्ष्ण, खर, सांद्र, द्रव, मृदु, कठिन, स्थिर, चल, सूक्ष्म, स्थूल, विशद, पिच्छिलाश्चेति तेषां विंशतित्वं । गुणास्तावत् निर्गुणः निश्चेष्टाः समवायाधेय भाजः (समवायाश्रयिणः) कारणं च भवन्ति । द्रव्य-रसयोः समवायसम्बन्धवशात् यत् साहचर्यं तेन तयोः अनन्यत्वमिव स्वीक्रियते । अतएव च तथ्यतः द्रव्यनिष्ठा अपिगुणाः रसनिष्ठा इति व्यपदिश्यन्ते । "गुर्वादयो गुणाद्रव्ये पृथिव्यादौ रसाश्रये । रसेषु व्यपदिश्यन्ते साहचर्योपचारतः ॥" इति हि वचनं वाग्भटस्य । गुणान्तः पातिनोरसा अपि गुणवत् द्रव्याश्रया एव भवन्तीति नपुनर्वाच्यं ।

रस्यते आस्वाद्यत इति रसः । सच रसनामात्र ग्राह्यगुणः ।
"रसनार्थो रसस्तस्य द्रव्यमापः क्षितिस्तथा ।
उत्पत्तौच विशेषेच प्रत्ययाः खादयस्त्रयः ॥

इति वचनात् द्रव्यमिव रसोऽपि पांचभौतिकः जलंतस्य आधार कारणम् । ततोल्पतर प्रधान्येन भूमिश्च, तस्य आधारकारणं भवति रसविशेषबोधनर्थं खादयस्त्रयः हेतुभूता इति अप्क्षितीच मधुररसस्यकारणं भवतश्चेति विज्ञायते ।

रसानां संख्याविषये बहवो मतभेदाः प्रदर्शिता । परन्तु सिद्धान्तरूपेणषडेव रसाइति प्रत्यपादि । तत्र षड्ऋतुकत्वात् कालस्य षडेव रसा इति व्याहृतम् । अर्थात् कालस्य हेतुः सूर्यमरीचिः । कालश्च परिणामहेतुः । रसाः परिणामजाः । अतः सूर्यमरीचिः रसहेतुः तस्मात् षड्ऋतुकत्वात् षडेव रसाः । विसर्गकालांतर्गतेषु वर्षा, शरत्, हेमन्तऋतुषु यथाक्रमं अम्ल, लवण, मधुराणां रसानामुत्पत्तिः आदानकालांतर्गतेषु शिशिर, वसंत, ग्रीष्मेषु तिक्त, कषाय, कटु-रसास्समुत्पद्यन्ते ॥

तत्र मधुररसः क्ष्माम्भः प्रधानैः पञ्चभूतैः - अम्लरसः अग्निक्ष्मा प्रधानैः, लवणस्तु अग्निजलाधिकैः, तिक्तरसः खवायु प्रधानैः कटुस्तु वाय्वग्निप्रधानैः कषायरसः भूवायुप्रधानैः भूतैः पञ्चभिरुपजायन्ते ।

रसकार्याणि-शीतस्निग्धगुरुप्रीणनादिकरो मधुरसः प्रायः वातपित्ते शमयतिश्लेष्माणं च वर्धयति । अम्भरसःप उष्णस्निग्धलघुदीपनपाचनगुणः वातं शमयति कफपित्ते करोति ।

लवणरसः—उष्णस्निग्धगुरुगुणः वातं शमयति पित्तश्लेष्माणौ जनयति ।

तिक्तरसः—शीतरूक्षलघुः पित्तश्लेष्माणौ हृत्वा वातं वर्धयति ।

उष्णः—उष्णरूक्षलघुः श्लेष्माणं हृत्वा वातपित्तो वर्धयति ।

कषायरसः—शीतरूक्षगुरुः श्लेष्मपित्ते शमयित्वा वातं जनयति । उपरिप्रतिपादिता रसगुणाः कार्याणि च प्रायिका एव विचित्रप्रत्ययारब्धता हेतोः अमीषां अन्यथाभावोऽपि भवतीति अग्रे वक्ष्यामः ।

वीर्यम् "वीर्यं तत् । येन या क्रियते क्रिया । नावीर्यं कुरुते किञ्चित् सर्वा वीर्याकृताहि सा" । इत्युक्तत्वात् येन भावेन द्रव्यस्थितेन शरीरे गुणाः प्रदर्श्यन्ते तद्वीर्यमिति वाच्यम् निर्वीर्यंतु द्रव्यमकिंचित्करं खलु ।

अष्टौ वीर्याणीति केचन, तत्र गुरु लघु, स्निग्ध, रूक्ष, शीत, उष्ण, मृदु, तींक्ष्ण, भेदेन वीर्याणामष्टकं सुश्रुतः प्रतिपादयति । वाग्भटस्तु उष्ण शीतभेदेन द्वैविध्यमेवेच्छति । अपि च मन्यते इतरेषां वीर्याणां अत्रान्तर्भाव इति, अग्नीषोमयोः महाबलवत्त्वात् 'व्यक्ताव्यक्तं जगदिव नातिक्रामति जातुजित्' इत्यादि दृष्टांतपूर्वकं स्थापयति च स्वमतम् ।

उष्णवीर्यद्रिव्यम् :—भ्रम, तृष्णा, ग्लानि, स्वेद, दाहकरं आशुपाकिवातकफप्रशमनं भवति ।

शीतवीर्यद्रिव्यम् :—ह्लदनं स्तम्भनं अङ्गानां पुष्टिहेतुकं । रक्तपित्त प्रसादनं च भवति ।

विपाकः—भुक्तानां रसानां जाठराग्निसंयोगात् रसांतरत्व प्राप्तिः विपाक इत्यभिधीयते । "जाठरेणाग्निना योगात् यदुदेति रसांतरं । रसानां परिणामांते सविपाक इति स्मृतः" इति स्मरणात् । चरकोऽपि त्रयो विपाका इत्यकथयत् । सुश्रुतस्तु अम्लविपाकं निषेधयित्वा मधुर, कटुविपाकौ द्वावेव प्रत्यपादयत् । ततोऽनन्तरकालिकः वाग्भटस्तु चरकमतमेव अङ्गीचकार । तत्र प्रायशः मधुर, लवणायोः मधुर, विपाकः अम्लस्याम्लविपाकः शेषाणां

त्रयाणां कटुविपाक इति निर्णयः । विपाकसमुत्पन्नरसानां च कार्याणि रसनेंद्रियग्राह्यरसानां कार्यैः तुल्यानि भवंति । "रसौ रसौ तुल्यफलः इति हि वचनं ।

प्रभावः :—तुल्यरसवीर्यविपाकानि द्रव्याणि कदाचित् भिन्न गुण जनकानि भवन्ति। यथावै दन्तीचित्रकौ । उभावपितुल्य वीर्यविपाकौ तथापि दन्ती रेचयति चित्रको दीपन-पाचनगुणं प्रदर्शयति । अत्र किन्निदानमिति विमृश्य प्रभावाख्यः कोपि त्वतल्प्रत्ययगोचरो विशेषः द्रव्ये विद्यत इति तद्वशात् विशिष्टकर्मजनक धर्मः भवतीति च निरणायि । तदेवाभिहितं शास्त्रे, गुणादिसाम्येयत्कर्मविशिष्टं तत्प्रभावजं । दन्तीरसाद्यैस्तुल्यापि चित्रकस्य विरेचनी । इति-द्रव्याणि रसगुणवीर्यविपाकप्रभाववर्णनपूर्वकं विमृश्य अद्य तावत् निषेवितानां शरीरांतर्गतानां द्रव्याणां कथं कार्यनिष्पादनमित्यंशमुद्दिस्य विमृश्यते । कानिचन द्रव्यणि द्रव्यप्रभावात् कानिचन रसप्रभावात्, कानिचन गुणप्रभावात्, कानिचन वीर्यप्रभावात् कानिचन विपाकप्रभावात्, शरीरे कार्यमुत्पादयन्ति ।

"किंचिद्रसेन कुरुते कर्मपाकेन चापरं ।
गुणान्तरेण वीर्येण प्रभावेणैव किंचन ।।" इति वचनं ।

रसादीनां मध्ये यद्यत् बलवत् परिदृश्यते तदन्यान् अभिभाव्यकारणत्वं भजते । सर्वेषामपि समानबलवत्वेसति रसो विपाकेन, रसविपाकौ वीर्येण, तानि प्रभावेण तिरस्क्रियन्ते ।

'यद्यद्द्रव्ये रसादीनां बलवत्वे न वर्तते । अभिभूयेतरान् तां स्तान् कारणत्वं प्रपद्यते ।। विरुद्धगुणसंयोगे भूयसाल्पं हि जीयते । रसं विपाकस्तौ वीर्यं प्रभावस्ता नपोहति। वलसाम्ये रसादीनां इति नैसर्गिकं बलं ।।" इति वाग्भटीय वचनानि द्रव्याणि कथं कार्यमुत्पादयन्तीति विषयं ज्ञापयन्ति ।

द्रव्याणि तावत् समवाय कारणानीत्युक्तपूर्वमेव । अतः कार्योत्पादने शरीरांतः परिपाकमापन्नानां औषधद्रव्याणां केचन कार्यकारिणोंशाः स्वरूपेण कार्ये प्रतिष्ठिताभूत्वा तत् कार्यं जनयन्ति । इत्ययमंशोनुमातव्यो भवति । प्रत्यक्षेण निरूपयितु नात्रावकाशः । अत्र विषये रसस्य कारणत्वं अत्र च वीर्यस्येत्यादि निर्णयस्तु आगमेनैव ज्ञेयः । कथमौषधद्रव्याणि कार्यजनकानि भवन्ति शरीरे इत्यर्थे नव्यवैज्ञानिकग्रन्थेष्वयमेवाभिप्राय उपलभ्यते । यथा—

"It is not always easy to explain exactly how the different drugs produce their Pharmacological effects on the system, since the processes of life are governed by the chemical and physical changes in the constituence of the cells, it is possible that the different drugs produce their effects either (a) by acting on the surface of the cells (b) or by penetrating into the cells, or (c) by their action on the enzymes. —Ghosh.

कथंकारं औषधद्रव्याणि बहुविधानि शरीरं प्रविश्य स्वकार्यमुत्पादयन्तीति विषयस्य यथार्थनिर्णयो न सुकरः । शरीरारम्भकजीवाणूनां अवयवेषु अनुभवतां रासायनिक, भौतिक परिणामानां प्रभावेण जीवकार्याणां नियमितत्वात् । औषधद्रव्याणि तावत् शरीरं प्रविश्य (a) जीवाणूनामुपरि स्वप्रभावं दर्शयित्वावा (b) जीवाणूनां अभ्यन्तरं प्रविश्य वा, (c) अथवा शरीरस्याभ्यन्तरे विद्यमानानां परिणामहेतूनां रासायनिक पदार्थविशेषाणामुपरिवा स्वकार्यं प्रदर्शयित्वा गुणकराणि वभन्ति । इति घोषु महाशयस्य वचनानि । पश्यत ! अत्रापि

'इदमित्थ' मिति निर्णयो न विद्यते। अस्मिन् विषये प्राचीनतन्त्रकारवचनानि यानि प्रागेवभिहितानि तान्यपि एतादृशाभिप्राय सदृशानीति विज्ञायत एव।

विचित्रप्रत्ययारब्ध द्रव्याणि:—उत्पत्तिविशेषेण कानिचन द्रव्याणि स्वनिष्ठरसादि सदृशफलानि भवन्ति। कानिचन ततो भिन्नानि। यानिनाम सदृश फलप्रदानि तानि समान प्रत्ययारब्धानि, तद्विपरीतानितु विचित्रप्रत्ययारब्धानि चेति व्यवह्रियन्ते। समानप्रत्ययारब्धतानाम् द्रव्यारम्भकभूतानां रसारम्भकभूतानां च साम्यमिति। विचित्रप्रत्ययारब्धताविषये उभयेषां वैपरीत्यमिति अरुणदत्तोऽभिलषति एतादृश कल्पनायाः निर्मूलत्वात् चक्रपाणिदत्त अणुसन्निवेश विशेष एवात्र कारणमिति दर्शयामास। अतएवच कारणात् तुल्य रसयोः क्षीरमत्स्योः भिन्नवीर्यत्वं, तुल्यगुणयोः यव गोधूमयोः भिन्नकार्यत्वं, समानगुणयोः सिंहसूकर मांसयोः भिन्नविपाकित्वमित्यादीनि दर्शितानि।

अणुसन्निवेश विशेषेण गुणाभिद्यन्त इति विषये आधुनिक वैज्ञानिकानामपि मतं संकलयामः।

"The physiological action of a drug, very often, depends upon its chemical constituents, as is evident from the following :—

a. The molecular Arrangement in a compound sometimes determines the action of a drug. Thus isomerides have the same chemical composition and the same percentage of weight, but differ in properties on account of their different molecular arrangements. Resorcin and Pyrocatechin are isomers. The former is sweet and the latter is bitter. —Ghosh.

यस्य कस्यापि द्रव्यस्य स्वाभाविकागुणाः तद्द्रव्यारम्भकर सायनांशानुकूलः प्रायशो भवन्ति। इति विषयः अथोविलिख्यमानांशैः विज्ञायते। (a) द्रव्यांतर्गतः अणुसन्निवेश विशेषः द्रव्यकार्यनियमने प्रायशो हेतुर्भवति। यथा एसोमरैक्स इति पदार्थाः तुल्यरासायनिकोपादानं तुल्यभारशातं च विभ्रति। तथापि स्वनिष्ठाणुसन्निवेश विशेष भेदात् विभिन्न कार्यकारिणो भवन्ति। रिश्चरसिन्, इति, पैरोकाटचिन् इति द्वौ पदार्थौ तुल्यौ परन्तु तयोः प्रथम मधुरः द्वितीयस्तु तिक्त। 'Ghosh' नूनमेभिर्वचनैः प्रतिपाद्यते कोपि अति प्राचीनैः प्रतिपादितः विचित्र प्रत्ययारब्धतेति विषयः ज्ञायमाने कियानानन्दावकाशः।

अपिच छोप्रा महाशयेन स्वीयनिवेदिका ग्रन्थे प्रतिपादितानीमानि वाक्यानि च उपरितन विषयं द्रढयति।

"But recent advances in Science, particularly in atomic physics in respect of Isotopes' have shown that atoms of the same chemical properties may possess different masses and therefore have different effects. —Page 157.

केवल मूलिकानां गुणनिर्णयः प्रत्येक प्रयत्नसाध्यो भवति। संयुक्तद्रव्याणां गुणनिर्णयस्तु दुश्शक इति विषयः अस्मत्प्राचीनग्रन्थपर्यालोचनेन पर्यवस्यति। असौ च विषयः छोप्रा निवेदिकाग्रन्थे परिदृश्यते।

"Another difficulty that usually confronts the Pharmacologists is the problem of investigating the value of compound medicines which are more frequently used than single drugs. In the case of single, drugs, the time and labour to workout their composition is enormous................The investigation of the pharmacological properties and therapeutic value of the compound indigenous remedies will be a still more formidable task, especially in view of the fact that their therapeutic value is considered to be more in the particular combination than that of any one of the drugs taken separately. They therefore urge the need for an investigation into the combination as a whole. But for this, no modern methods are as yet available. (Page 156.)

द्रव्यगुणमीमांसकानामयमपर: कष्टविषय: यत् संयुक्तौषधानां गुणविनिश्चयो नाम। औषधानि तु एतादृशान्येव प्राय: उपयुज्यन्तेऽधिकतरं केवल मूलिका प्रयोगापेक्षया केवल मूलिकानां गुणनिर्णयाय महान्काल: परिश्रमश्च आवश्यकौसंयुक्तौषधानां गुणनिर्णय: रोगहरशक्तिनिरूपणं च पूर्वसमादपि कृच्छ्रतर। यत: संयोगांशभूतद्रव्याणां तत्पृथक्भावे ये नैसर्गिका गुणा: ते संयोगावस्थायां विभिद्य गुणोत्कर्षं आप्नुवन्ति। अत: संयुक्तौषधगुणनिर्णयाय त्वर्यन्ते वैज्ञानिका: परन्तु तद्दुष्करं अद्ययावत् तदुपकारकनवीनविधानानामनुपलम्भात् (Page 156)।

संयोगवशात् मूलद्रव्यापेक्षया गुणाभिद्यन्ते इति विषय: आयुर्वेदतन्त्रेषु बहुधा प्रतिपादित एवेतिं प्रागेव लिखितम्। अत: तादृशौषधानां अपिच केवल भेषजद्रव्याणां च कार्यक्रमान्वेषणाय प्रयत्नो व्यर्थं इति दुष्कर इति आगमैक बोध्य इति सुश्रुतवचनै: विज्ञायते यथा—अमीमांस्यान्यचिंत्यानि प्रसिद्धानि स्वभावत: आगमेनोपयोज्यानि भैषजानि विचक्षणै:। प्रत्यक्षलक्षणफला: प्रसिद्धाश्च स्वभावत:। औषधीर्हेतुभिर्विद्वान् परीक्षेत कदाचन। सहस्रेणापि हेतूनां नाम्बष्ठादि विरेचयेत्। तस्मात्तिष्ठेत्तु मतिमानागमेनच हेतुषु।

द्रव्याणा शक्त्युत्कर्षापकर्षापादनं कृत्रिम विधानैश्शक्यमिति अधोनिर्दिश्यमान वचनेन प्रतिपाद्यते। अल्पस्यापि महार्थत्वं प्रभूतस्याल्पकर्मतां। कुर्यात् संश्लेषविश्लेषकालसंस्कारयुक्तिभि:।" अद्यतन वैज्ञानिकानां वचनानि पश्यत कियता सादृश्येन वर्तन्ते इति—

"It is possible to modify the physiological action of a drug by artificially modifying its chemical constitution. Fraser crum Brown and others have shown that by introducing a methyl radicle into the molecules of strychnine, brucine, and thebaine- these compounds are formed into new compounds, which instead of acting as convulsants, are acting as paralysers of the perepheral terminations of the motor nerves. —Ghosh.

ग्रन्थविस्तरभयादनुवादाद्विरम्यते। एतादृशै: नव्यवैज्ञानिकवचनैर्विचार्यमाणे: प्रवर्धतेतरां अस्माकं आयुर्वेदशास्त्रविषयिणीयुक्ति:। अतिप्राचीनतया, नव्यसंस्कारमर्हहतीति ये केचन ब्रुवते ते साम्प्रतिकैर्वचनै: स्वाभिप्रायं तादृशं विसृज्य शास्त्रार्थावगाहनाय श्रद्धालवो भवेयु:।

अस्मिन् द्रव्यगुणशास्त्रे समुपदिश्यमानविषयेषु औषधप्रयोगादिषु च केचनविशेषास्समुपलभ्यन्ते।

औषधप्रयोग मार्गाः—औषधानितावत् मुख्यतया मुखमार्गादेव प्रयुज्यन्ते। विशेषावस्थासु तु नस्य, अंजन, शिरोलेप, कर्णपूरण, वस्ति, उतरवस्ति प्रलेपादि विधानैश्च औषधानि प्रयुज्यन्ते। अत्यन्त विषमस्थितौ ब्रह्मरन्ध्रे क्षुरेण छित्वा रक्ते औषधोपयोगो विहितः।

औषधद्रव्याणां गुणोत्कर्षप्रतिपादनाय, स्वानुरूपभेषजस्वरसादिभिः भावना, औषधयोगानां गुणवर्धनाय आवर्तित पाकादि विधानम् च शास्त्रे समुपदिश्यते।

औषधार्थं मूलिकाहरणे समन्त्रक प्रयोगः मूलिकामिमन्त्रणं यथा "अग्निवीर्यं महावीर्यमतिवीर्यं प्रणश्यतु। इहैवतिष्ट कल्याणममकार्यं रिष्यसि। ममकार्ये कृते पश्चात्स्वर्गलोकं गमिष्यसी "एतेनतात्वत् अभ्युपगन्तव्यम् यत् औषधीनां स्वाभाविक जीवशक्तिः यावता न प्रणस्यति तावता कालेनैव तस्योपयोग आवश्यक इति। अपि च मूलिकाग्रहणे कालस्य विशिष्टता प्रतिपादिता। नियमितनक्षत्रेषु नियमितवासरेषु च केषांचन द्रव्याणां उद्धरणमभिहितं। केषु च न विशिष्टकालेषु समुद्धृतानां ओषधीनां कीदृशं गुणलाभ इति निर्दिष्टं।

औषधार्थमुपयुन्यमानानां द्रव्याणां तदुपयोक्तृ शरीराणां च परस्परं देशसात्म्यमत्यावश्यकमिति महत्तरो विषयः प्रतिपादितः "यस्मिन्देशे हि यो जातः तज्जं तस्यौषधं हितम्" इति वचनम्।

विरुद्धद्रव्याणिः—पृथक्प्रयोगार्हाण्यपि द्रव्याणि कानिचन परस्परं मिलितानि चेत् प्रदूष्य विरुद्धत्वेन संभवंति। तादृश विरुद्धवस्तूनां उपयोगेन अति क्रूराणां रोगाणां समुद्भव इति निर्दिष्टं। विरुद्धद्रव्यलक्षणं यथा। "यत्किंचिद्दोषमुत्क्लेश्य न हरेत्तत्समासनः। विरुद्ध" इति। द्रव्याणां परस्पर विरोधः संयोगतः, संस्कारतः, देशकालमात्रादि भेदतः स्वभावतश्च सम्भवतीति चरकादीनां वचन प्रामाण्येनोन्मीयते।

आहारद्रव्याणां पाचनाय उपयोज्यमानवह्निभेदेन गुणभेदो भविष्यतीति विशेषांशः अत्र शास्त्रे प्रतिपादितः 'हारीतमांसं हारिद्र शूलक प्रोतपाचितं। हारिद्र वह्निना सद्यो व्यापादयति जीवितम्॥

अतिविशेषतः निर्दुष्ट इति विभाव्यमान कांस्यपात्रेषु च दोषोत्पादनशक्तिरस्तीति "कांस्ये दशाहमुषितं सर्पिः" इति वाक्येन ज्ञायते। अर्थात् कांस्यपात्रे दशाहपर्यन्त स्थापितं घृतं विषतुल्यं भवति।

घृत, तैल, वसा क्षौद्रपानीयानि द्विशास्त्रिशः।

एकत्र वा समांशानि विरुध्यन्ते परस्परम्॥ इति वचनात्॥

एतेषां नित्योपयोगिनां वस्तूनां मेलनेऽपिदोषः प्रदर्शितः एवमादीनि बहूनि सन्ति वक्तव्यानि। एतादृश विरुद्धवस्तु वर्णनादिकं आंग्लवैद्य ग्रन्थेषु च Antagonism, Incompatabilities इति नाम्ना प्रपंचितं।

रात्रिचरसत्वानां मज्जपूर्णान्यस्थीनि निशांध्यं हरन्तीति निशांध्ये माहिष यकृतः प्रयोग उचित इति आगन्तुक लिंगनाशे हेमघृष्ट्वा सर्पिषा संयोज्य नेत्रांजनं विधेयमिति एवमादीनि बहूनि विशिष्टद्रव्याणि प्रतिपादितानि।

चरके च दिव्यौषधीनां नारी, सोमलता, ब्रह्म सुवर्चलादीनां प्रभावा उपवर्णिताः ओषधीनां प्रभावस्तु सुकृतिभिः महर्षिभिरेव संह्यत इति असुकृतिभिः सामान्य मानवैः असह्य इति च कश्चनविशेषोऽत्र प्रतिपादितः। एतेन च दिव्यौषधीनां तावत् विद्युल्लतास्विव महाशक्तिर्विद्यत इति यथावा महाशक्तिः विद्युत् नशक्यते सोढुं तद्वत् अमूरोषद्यः अशक्यास्सोढुमल्पपुण्यैरिति च विज्ञायते। इतरेषां मनुजानां तावत् तत्तद्देशजातमूलिकाएव उपयोजयेत् इति चोपदिष्टं।

अनेक गम्भीर विषय भरितोय मायुरागमः। तं सम्यगुपास्य गुरुमुखतः अमूल्यानि विषयरत्नानि कंठे कृत्वा वैद्यवराः सभासु राजन्ते।

आधुनिकवैद्यप्रचारबलात् जनानांच तस्मिन्ननूनानुरागप्रदर्शनाच्च मुग्धा भूत्वा केचन आयुर्वेद भिषजः, तदीयान्यौषधान्येव शरण्यानि। तान्यन्तरेण न चिकित्सितुं प्रभवामः इत्यादिभिया स्वशास्त्रप्रतिपादितविषयालोडने अश्रद्धधानाः संदृश्यन्ते। तएते तादृशं विधानं विहाय "आयुर्वेदश्शाम्वतः" आयुर्वेदोऽमृतानां इत्यादिना विशिष्यमाणं आयुर्वेदशास्त्रमेव अधीत्य सम्यगभ्यस्य कृतार्थाः भवन्त्विति सर्वेषां आयुर्वेदभिषजांच सकलकल्याणलाभो भवेदितिच परमेश्वरं प्रार्थयन् विरमामि॥

भिषजां साधुवृत्तानां भद्रमागमशालिनां।
अभ्यस्त कर्मणांभद्रं भद्रं भद्राभिलाषिणां॥

अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन स्थायीसमिति एवं नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ कार्यकारिणी समिति का

सम्मिलिताधिवेशन

समय—ता० २८, २९ तथा ३० दिसम्बर १९५५।

स्थान—प्रतिनिधि निवास, ४१ वां अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन, कोलस् हाई-स्कूल, करनूल, आंध्र राज्य।

उपस्थिति—

सर्व श्री वैद्य, वाई० पार्थनारायण पण्डित (अध्यक्ष), भि० वि० डेग्वेकर (विद्यापीठाध्यक्ष), हरिदत्त शास्त्री, बम्बई, महेन्द्रकुमार शास्त्री, बम्बई, श्रीराम शर्मा, बम्बई, पं० शिवशर्मा, बम्बई, क० प्रतापसिंह, बनारस, श्री गोवर्धन शर्मा छांगाणी, नागपुर, बद्री-विशाल त्रिपाठी, कानपुर, गयाप्रसाद शास्त्री, हैदराबाद, मोहनलाल शास्त्री, देहली, नानक चन्द्र शास्त्री, देहली स्वामी चेतनानन्द, देहली, हरनाथ त्रिपाठी, कानपुर, वैद्यनाथ मिश्र, मुजफ्फरपुर, सी० के० दिवाकरण, हैदराबाद, रामेश्वरसिंह कंवर, जालन्धर, वेणिमाधव बा० जोशी, नागपुर, ब्रह्मदत्त शर्मा, भुसावल, जी० जी० वामनाचार्य, कोल्हापुर, शंकरदत्त गौड़, जबलपुर, श्री गुलराज शर्मा मिश्र, नागपुर, गंगाधरराव वझे, नागपुर, पां० शि० शेण्ड्ये, दमोह, चन्द्रशंकर रविशंकर वैद्य, राजकोट, माधवप्रसाद शास्त्री, रतलाम, दामोदर अनन्त हलसीकर, हुबली, यू० एस० मोहन, विजयवाड़ा, भुवनचन्द्र जोशी, देहली, केदारनाथ शर्मा, नागपुर, सीताराम मिश्र, बम्बई, कृष्णचन्द्र पंजाबी, बम्बई, रामस्वरूप चक्रवर्ती, देहली, जनार्दन शर्मा, रायगढ़, दीनदयालु तिवारी, नागपुर, शिवकरण शर्मा छांगाणी, नागपुर, विद्यानारायण शास्त्री, पटना, कृष्णगोपाल शर्मा, वारां, बाबा जयरामदास, वड़ा-गांव, आचार्य नित्यानंद, पिलानी, विरंचिलाल शर्मा वैद्य, इस्लामपुर, वी. बी. नटराज शास्त्री त्रिचनापल्ली, पुरुषोत्तमदेव मुलतानी, हैदराबाद, डा० ए० लक्ष्मीपति, मद्रास, कालीदास चट्टोपाध्याय, कलकत्ता, पं० एच० रामा शास्त्री, बंगलौर, ईश्वरीलाल शास्त्री, हैदराबाद, डी० रंगाचार्यालु, गन्तुर, देवराज शास्त्री, अमृतसर, क० वनमालीदास, कटक, एम. वेंकट शास्त्री, विजयवाड़ा, ज्वालाप्रसाद शर्मा शास्त्री, बोदवाड, रामानुज स्वामी, हैदराबाद, नागेश दत्त शुक्ल, जालना, पी० एस० राम शर्मा, करुर, वामनराव दीनानाथ वैद्य, बम्बई।

सम्मति-पत्र—

अधिवेशनार्थ निम्नलिखित महानुभावों के सम्मतिपत्र प्राप्त हुए:—

सर्वश्री वैद्य जीवराम कालीदास शास्त्री, गोंडल, काशीराम गणपतराम जोशी, देवास, एन० राम वर्मा, मदुरा, कृष्ण शास्त्री कवड़े, पूना, वैकुण्ठनाथदेव अधिकारी, गुहाटी,

लक्ष्मीकान्त दामोदर पुराणिक, नागपुर, सिद्धिशंकर शर्मा, कनेछन, रामचन्द्र राममूर्ति शर्मा, आगरा, बिहारीलाल, बदरुखां, भ्रमरदत्त मिश्र, केकड़ी, हरिदत्त शास्त्री, कानपुर, द्विवेदी एस. एस. शास्त्री, हेलंगादी, जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल, प्रयाग, प्रभाकर चटरजी, कलकत्ता।

कार्य-विवरण—

वैद्य श्री वाई. पार्थनारायण जी पण्डित की अध्यक्षता में ता० २८-१२-५५ रात्रि ८ बजे से कार्यवाही प्रारम्भ हुई। अधिवेशन ता० २९ तथा ३० दिसम्बर को भी रात्रि ९ बजे से हुए। सम्पूर्ण अधिवेशन का कार्य-विवरण निम्न प्रकार है :

१. अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन की स्थायी समिति एवं नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ की कार्यकारिणी समिति के बम्बई में ता० २९ अक्टूबर १९५५ को सम्पन्न हुये सम्मिलिताधिवेशन का कार्यविवरण पढ़ कर सुनाया गया और वह सर्वसम्मति से स्वीकार हुआ।

२. नवीन सदस्यताओं एवं संस्थाओं की सम्बद्धता की स्वीकृति का विषय उपस्थित हुआ एवं निम्नलिखित सदस्यतायें एवं सम्बद्धताएं स्वीकार हुईं।

(क) आश्रयदाता:—कविराज श्री अतुलबिहारीदत्त, कलकत्ता।

(ख) आजीवन सदस्य:—श्री प्रभुभाई एम. भक्त, सूरत।

श्री अयप्पन वैद्यन, मंजेरी, दक्षिण मालाबार।

श्री के. अच्युता वैद्यार, चौव्वा, कनानोर, द० मालाबार।

श्री त्रिपुराशंकर भवानीशंकर, डोरोली, अलवर, राजस्थान।

श्री मुनगप्पा छौना वीरप्पा मोदी वैद्यन, बेलगांव।

श्री श्रीनिवास शास्त्री, बंगलौर।

श्री सीताराम मिश्र, जयपुर। श्री डा. ए. राधवराव, टेपाकुलम्।

(ग) मान्य सदस्यता:—उन सभी महानुभावों की मान्य सदस्यता स्वीकार हुई जिनका शुल्क ३० अक्टूबर १९५५ से ३० दिसम्बर १९५५ तक कार्यालय द्वारा प्राप्त किया जा चुका है।

(घ) प्रादेशिक सम्बद्ध संस्था:—अखिल जम्मू व काश्मीर वैद्य सभा, जम्मू।

३. नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ से निम्नलिखित आयुर्वेद विद्यालयों की सम्बद्धता स्वीकार हुई:—

(१) श्री सरस्वती ब्रह्मचर्याश्रम आयुर्वेद विभाग, परमट, कानपुर।

(२) नवभारत महिला आयुर्वेदिक कालेज, होश्यारपुर।

४. सन् १९५६ वर्षीय विद्यापीठीय परीक्षाओं के प्रारम्भ के लिये १९ मार्च १९५६ की तिथि स्वीकार हुई।

५. अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन एवं नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ के सन् १९५४-५५ वर्षीय आय-व्यय एवं सन्तुलन पत्र सदस्यों की सेवा में उपस्थित किये गये तथा पढ़ कर सुनाये गये। आडिटर की रिपोर्ट का अनुवाद भी पढ़कर सुनाया गया।

विशेषः—उक्त संतुलन एवं आय-व्यय पत्र आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका के दिसम्बर मासीय अंक में प्रकाशित किये जा चुके हैं। आडिटर की अंग्रेजी रिपोर्ट हिन्दी अनुवाद सहित इसी कार्यविवरण के अन्त में परिशिष्ट रूप में प्रकाशित है।

आडिटर की रिपोर्ट पर विचार हुआ। इस पर सदस्यों ने विभिन्न प्रश्न किये जिनके उत्तर दिये गये। तदुपरान्त निश्चय हुआ कि कार्यालय सम्बन्धित व्यक्तियों से पूछ-ताछ करके इन सभी विषयों पर आवश्यक कार्यवाही करे।

तदुपरान्त महासम्मेलन एवं विद्यापीठ के सन् १९५४-५५ वर्षीय आयव्यय पत्र एवं सन्तुलन पत्र सर्वसम्मति से स्वीकार किये गये।

६. अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन एवं नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ के सन् १९५५-५६ वर्षीय आनुमानिक आय-व्यय पत्रों के निर्माण का विषय उपस्थित हुआ। निश्चय हुआ कि इन पत्रों के निर्माण का कार्य निम्नलिखित महानुभावों द्वारा निर्मित समिति को सौंपा जाय :—

१. श्री बद्री विशाल त्रिपाठी, कानपुर (संयोजक)।
२. श्री ब्रह्मदत्त शर्मा, भुसावल।
३. श्री पुरुषोत्तम देव मुलतानी, हैदराबाद।
४. श्री हरनाथ त्रिपाठी, कानपुर।
५. श्री महासम्मेलन प्रधानमन्त्री।
६. श्री महासम्मेलनाध्यक्ष।

निश्चय हुआ कि उक्त समिति दोनों आय-व्यय पत्रों (बजटस्) को तैयार करके विषय निर्वाचिनी समिति के अधिवेशन में उपस्थित करे।

७. रजिस्ट्रार ऑफ सोसाइटीज के पत्र नं० ८७९६ ता० २१-११-५५ पर विचार हुआ तथा निम्नलिखित प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार हुआ :—

"निश्चय हुआ कि ३९ वें अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन, कोट्टकल (दक्षिण मालाबार) द्वारा अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के जो लक्ष्य एवं उद्देश्य निश्चित एवं स्वीकार किये गये हैं उन्हें स्वीकार एवं पुष्ट किया जाय।" (सर्व सम्मति से स्वीकृत)

८. अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन एवं नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ की नियमावलियों में संशोधनों, परिवर्तनों एवं परिवर्द्धनों आदि पर विचार उपस्थित हुआ। निश्चय हुआ कि तत्सम्बन्धी प्रस्तावों पर विचार करने का कार्य भी उपर्युक्त समिति (विषयांक ६ के अन्तर्गत निर्मित समिति) को सौंपा जाय। उक्त समिति अपने सुझाव विषय निर्वाचिनी समिति के समक्ष प्रस्तुत करे।

९. ४१ वें अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन एवं तदन्तर्गत आयुर्वेद शिक्षा सम्मेलन के लिये प्राप्त हुए प्रस्ताव उपस्थित किये गये। निश्चय हुआ कि उक्त प्रस्तावों के एकीकरण तथा अनावश्यक प्रस्तावों की छटनी का कार्य भी उपर्युक्त समिति (विषयांक

६ के अन्तर्गत निर्मित समिति) को सौंपा जाय। उक्त समिति प्रस्ताव विषय निर्वाचिनी समिति के समक्ष प्रस्तुत करे, ऐसा निश्चय हुआ।

१०. विद्यापीठ परीक्षा नियमावली में आवश्यक संशोधनों, परिवर्तनों एवं परिवर्द्धनों के विषय पर आवश्यक सुझाव देने का कार्य भी उपर्युक्त समिति (विषयांक ६ के अन्तर्गत निर्मित समिति) को सौंपा गया।

११. श्री पं० श्रीदत्त शर्मा द्वारा ता० २८ अगस्त १९५५ को मारवाड़ी औषधालय, किनारी बाजार, देहली, में आयोजित मीटिंग की दुःखद एवं लज्जास्पद घटनाओं, उस सभा में जिन अनमन्त्रित सदस्यों ने उपस्थित होकर वह स्थिति उत्पन्न की, उनके आचरण तथा उनके विरुद्ध अनुशासन की कार्यवाही करने एवं ऐसी घटनाओं की पुनरावृत्ति न हो ऐसे उपायों पर विचार का विषय उपस्थित हुआ। २८ अगस्त १९५५ की मीटिंग का एजण्डा निकालने के विषय पर श्री पं० श्रीदत्त शर्मा तथा कार्यालयमन्त्री का जो लम्बा पत्र व्यवहार हुआ उसे भी पढ़ कर सुनाया गया। विद्यापीठाध्यक्ष श्री भि० वि० डेग्वेकर जी से भी सदस्यों ने कुछ प्रश्न पूछे, जिनका उन्होंने संक्षेप में उत्तर दिया। बहुत से सदस्यों ने उन घटनाओं पर खेद प्रकट किया। कई सदस्यों ने देहली के कुछ वैद्यों के संस्था के प्रति ऐसे निरन्तर व्यवहार को निन्दनीय बताया और इस बात पर जोर दिया कि ऐसे सदस्यों का संस्था की रक्षार्थ बहिष्कार किया ही जाना चाहिये।

श्री प्रधानमन्त्री जी, श्री पं० शिवशर्मा जी तथा कुछ अन्य सदस्यों ने क्षमाभाव के लिये अपील की। श्री पं० शिवशर्मा जी ने कहा कि अभी तो इन लोगों के विरुद्ध कोई कार्यवाही न की जाय परन्तु भविष्य के लिये संस्था के विधान में ऐसी धारायें जोड़ दी जायं जिनसे ऐसी घटनाओं एवं ऐसे व्यवहार की रोक-थाम हो सके।

तत्पश्चात् निश्चय हुआ कि सम्पूर्ण स्थिति पर विचार करके आवश्यक प्रस्ताव बनाये जायं और उन्हें विषय निर्वाचिनी समिति के समक्ष प्रस्तुत किया जाय।

१२. आयुर्वेदाचार्य क्रमांक १०२ की परीक्षा उत्तर पुस्तकों के सम्बन्ध में श्री पं०श्रीदत्त जी शर्मा के कार्य एवं उपक्रम पर विचार का विषय उपस्थित हुआ। विद्यापीठाध्यक्ष श्री भि. वि. डेग्वेकर जी ने इस विषय में श्री पं०श्रीदत्त शर्मा के कार्य का संक्षेप में विवरण उपस्थित किया। कई सदस्यों ने कहा कि श्री पं० श्रीदत्त शर्मा के विरुद्ध एवं आयुर्वेदाचार्य क्रमांक १०२ के विरुद्ध आवश्यक कानूनी कार्यवाही की जाय ताकि भविष्य में इस प्रकार का कार्य करने का किसी को साहस न हो सके। पर्याप्त विचार विमर्श के अनन्तर निश्चय हुआ कि क्योंकि सभा का दृष्टिकोण क्षमाभाव की ओर ही झुका हुआ है तथा क्योंकि आयुर्वेदाचार्य क्रमांक १०२ पहिले ही अनुत्तीर्ण है, अतएव इस विषय में अभी तक और कोई कार्यवाही न की जाय।

१३. श्री पं० श्रीदत्त शर्मा के विद्यापीठमन्त्रित्व से त्यागपत्र देने का विषय उपस्थित हुआ। निश्चय हुआ कि १. क्योंकि श्री पं० श्रीदत्त शर्मा के त्यागपत्र पर श्री

पद्य २०१२

प्रधाममन्त्री जी ने जो कार्यवाही की है उसे गताधिवेशन द्वारा स्वीकार एवं पुष्ट किया जा चुका है, २. क्योंकि त्यागपत्र हस्ताक्षरों के कृत्रिम होने का जो आरोप था उस पर तथा विवाद सम्बन्धी अन्य विषयों पर श्री पं० श्रीदत्त शर्मा ने राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष श्री यू० एन० ढेबर की मध्यस्थता को स्वीकार नहीं किया, ३. क्योंकि उनके हस्ताक्षरों के कृत्रिम होने के विषय पर जो सुविधा गताधिवेशन के प्रस्ताव द्वारा प्रस्तुत की गई थी उसका दूसरे पक्ष ने न लाभ उठाया और न ही उस प्रस्ताव को स्वीकार किया तथा ४. क्योंकि वर्तमान पदाधिकारियों का कार्यकाल वैसे ही समाप्त होकर नया चुनाव हो रहा है, अतएव, उक्त त्यागपत्र की स्वीकृति अस्वीकृति का अब कोई महत्व अथवा अर्थ ही नहीं रह जाता, इसलिये इस विषय को समाप्त समझा जाय। यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार हुआ।

१४. पटियाला, रामगढ़ तथा नागपुर परीक्षा केन्द्रों की व्यवस्था के विषय म गताधिवेशन द्वारा निर्मित समिति की दोनों रिपोर्टस् पर विचार हुआ तथा निश्चय हुआ कि १. पटियाला परीक्षा केन्द्र का अध्यक्ष बदल दिया जाय तथा आयुर्वेदाचार्य क्रमांक १०२ को अनुत्तीर्ण ही घोषित किया जाय। २. रामगढ़ केन्द्र बन्द कर दिया जाय और उक्त केन्द्र में परीक्षा देने के लिये जो प्रार्थनापत्र आये हों उन परीक्षार्थियों को पूछ कर उनका केन्द्र सीकर अथवा जहां वे चाहें कर दिया जाय तथा वैद्याचार्य क्रमांक १०९ को पूर्ववत् अनुत्तीर्ण ही घोषित किया जाय। तथा ३. क्योंकि नागपुर केन्द्र के परीक्षार्थी आयुर्वेदाचार्य क्रमांक ८९ तथा ९३ द्वारा उनकी उत्तर पुस्तकों में साम्यता को देखते हुए नकल करना सिद्ध हुआ है, अतएव उन्हें कायचिकित्सा एवं रोगविज्ञान के दो विषयों में अनुत्तीर्ण घोषित किया जाय।

१५. मिश्रित विषयः—

(क) श्री बनवारीलाल आयुर्वेद विद्यालय, देहली, को विद्यापीठ के आधीन लेने का विषय उपस्थित हुआ। उक्त विद्यालय के मंत्री से इस विषय में जो पत्र व्यवहार हुआ उसे पढ़कर सुनाया गया। सम्पूर्ण स्थिति पर पर्याप्त विचार के अनन्तर निश्चय हुआ कि उक्त विद्यालय को विद्यापीठ के आधीन न लिया जाय।

(ख) आयुर्वेद परिषद्, रानीखेत, के पत्र पर विचार हुआ। वैद्यरत्न कविराज श्री प्रतापसिंह जी, बनारस, ने उक्त परिषद् के कार्य पर प्रकाश डाला। वैद्य श्री गोवर्द्धन शर्मा छांगाणी, नागपुर, ने भी उक्त परिषद् के कार्य की सराहना की। परन्तु क्योंकि अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के विधान में वैद्य सभाओं एवं प्रादेशिक सम्मेलनों के अतिरिक्त अन्य संगठनों को अपने से सम्बद्ध करने की व्यवस्था विद्यमान नहीं है अतएव पर्याप्त विचार विमर्श के अनन्तर निश्चय हुआ कि :—

अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन की स्थायी समिति का यह अधिवेशन आयुर्वेद परिषद्, रानीखेत, द्वारा जो आयुर्वेदोत्थान एवं वनस्पति विज्ञान की उन्नत्यर्थ कार्य किया जा

रहा है उसकी सराहना करता है तथा परिषद् की कार्य सफलता के लिये अपनी शुभकामनायें भेजता है।

यह भी निश्चय हुआ कि परिषद् का कार्य बढ़ने पर यदि महासम्मेलन उसकी किसी प्रकार सहायता कर सके तो उस पर यथा-समय विचार किया जाय।

(ग) आयुर्वेद विशारद परीक्षार्थी श्री गिरधारी लाल, जो सन् १९२४ तथा १९२५ में उक्त परीक्षा में शल्य एवं अगद के दो विषयों को छोड़कर शेष में उत्तीर्ण हो चुका है, के प्रार्थनापत्र पर विचार हुआ तथा निश्चय हुआ कि उसे उपर्युक्त दो अवशिष्ट विषयों में परीक्षा देने की स्वीकृति दी जाय।

(घ) निश्चय हुआ कि करनूल, जूनागढ़, तथा सूरत में विद्यापीठीय परीक्षा केन्द्रों की स्थापना का विषय परीक्षा समिति के विचारार्थ एवं निश्चयार्थ उक्त समिति को सौंप दिया जाय।

(ङ) वैद्य श्री बालकृष्ण जी, मन्त्री, सौराष्ट्र वैद्य सभा, के विद्यापीठ में उत्पन्न विवाद पर दोनों पत्र उपस्थित किये गये। पत्रों को सुनाये जाने के अनन्तर निश्चय हुआ कि तत्सम्बन्धी सम्पूर्ण स्थिति अब तक वैद्य श्री बालकृष्ण जी को स्पष्ट हो गई होगी और उनकी शंकाओं का स्वतः समाधान हो गया होगा। इस पर भी उनकी कोई और जिज्ञासा हो तो श्री प्रधानमन्त्री जी उनका समाधान करें।

(च) बंगाल प्रान्तीय आयुर्वेदमहामण्डल के विषय पर उभयपक्ष के पत्रों पर विचार विमर्श के अनन्तर निश्चय हुआ कि सम्पूर्ण स्थिति पर विचार करने के लिये निम्नलिखित महानुभावों की एक समिति का निर्माण किया जाय :—

(१) कविराज श्री जोगेन्द्रनाथ दर्शन शास्त्री, कलकत्ता।

(२) कविराज श्री राखालदास सेन, कलकत्ता।

(३) कविराज श्री प्रभाकर चटर्जी, कलकत्ता।

(४) कविराज श्री विजयकाली भट्टाचार्य, कलकत्ता।

(५) वैद्यराज श्री हरिवक्ष जोशी, कलकत्ता।

(६) कविराज श्री जादवेश्वर भट्टाचार्य, कलकत्ता।

उक्त समिति एक मेज पर बैठ कर उक्त मण्डल के संगठन एवं भविष्य के कार्य संचालनार्थ तथा विवाद को मिटाने के लिये एक सर्वसम्मत योजना तैयार करे और अपना निश्चय महासम्मेलन के समक्ष प्रस्तुत करे और महासम्मेलन उस निश्चय को कार्यरूप में परिणित करे।

(छ) श्री तिलकराम शर्मा, कार्यालय मन्त्री, का वेतन वृद्ध्यर्थ प्रार्थनापत्र उपस्थित हुआ। बहुत से सदस्यों ने संस्था में उसके कार्य की प्रशंसा की। श्री प्रधानमन्त्री जी

ने भी उसकी योग्यता एवं कार्यकुशलता पर कुछ शब्द कहे। कुछ सदस्यों ने कहा कि बड़ी बड़ी विकट परिस्थिति में उसने संस्था की सेवा की है और अपने कटु कर्तव्य को निभाया है। पर्याप्त चर्चा के अनन्तर श्री पं० शिवशर्मा जी ने कहा कि हम सभी उसके कार्य के प्रशंसक हैं और वेतन-वृद्धि का वह सर्वथा अधिकारी है, परन्तु संस्था की आर्थिक स्थिति बलवान नहीं है अतएव उसके कार्य की सराहना स्वरूप अभी तक उसकी केवल एक रुपया मासिक सांकेतिक वेतनवृद्धि token increment. की जाय और निश्चय किया जाय कि ज्यों ही संस्था की आर्थिक स्थिति अच्छी हो जाय तो उसे उपयुक्त वेतन-वृद्धि दी जाय। वह भी इसे सहर्ष स्वीकार करेगा, ऐसा मुझे विश्वास है। सभी सदस्यों ने प्रसन्नतापूर्वक इस प्रस्ताव को स्वीकार किया।

(ज) श्री अशोक वर्द्धन कौशिक का वेतन-वृद्धि के विषय पर प्रार्थनापत्र पढ़कर सुनाया गया। उसके विषय में स्थिति यह थी कि यदि उसके वेतनक्रम के अनुसार उसे ५ रुपये मासिक वेतन-वृद्धि दे कर उसका वेतन १०५ रुपया कर दिया जाय तो प्रचलित नियमों के अनुसार वेतन के १०० रुपये से ऊपर हो जाने के कारण उसे ३५ प्रतिशत महंगाई भत्ता न मिलकर १५ प्रतिशत महंगाई भत्ता मिलेगा, जिसके फलस्वरूप उसके वेतन में वास्तव में १४ रु० ४ आने मासिक कम हो जाते हैं। इस स्थिति पर विभिन्न सुझाव सदस्यों की ओर से प्रस्तुत किये गये। अन्त में निश्चय हुआ कि उसे ५ रुपये मासिक वेतन-वृद्धि तो दी जाय परन्तु उसे महंगाई भत्ते सहित १३५ रुपये मासिक तब तक मिलते रहें जब तक प्रतिवर्ष की वेतन-वृद्धि प्राप्त करके उसका कुल वेतन महंगाई भत्ते सहित १३५ रुपया मासिक से ऊपर न हो जाय।

(झ) विद्यापीठ विभाग के लेखक श्री जयभगवान शर्मा के प्रार्थनापत्र पर विचार के अनन्तर निश्चय हुआ कि उसे ५ रुपया मासिक वेतन-वृद्धि दी जाय।

उपर्युक्त प्रकार अधिवेशन का कार्य समाप्त हुआ और तदुपरान्त विषय निर्वाचिनी समिति का अधिवेशन प्रारम्भ हुआ।

नानकचन्द्रः
विद्यापीठ मन्त्री।

वामनराव दी० वैद्य
प्रधान मन्त्री,
अ० भा० आयुर्वेदमहासम्मेलन।

परिशिष्ट

जे० सी० माथुर एण्ड कम्पनी, चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट्स, चांदनी चौक, देहली, लेखा-निरीक्षक (आडीटर्स) अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन-विद्यापीठ के सन् १९५४-५५ वर्षीय आय-व्यय के सम्बन्ध में प्रस्तुत रिपोर्ट्स दिनांक २२-१२-५५ का हिन्दी अनुवाद ।

रिपोर्ट्स

महासम्मेलन

मान्यमहानुभावा:,

हमने सम्मेलन के ३१ अक्टूबर १९५५ को समाप्त होने वाले वर्ष के हिसाब का निरीक्षण किया है । हमारा कथन है कि—

१. डिपाजिट्स—नाथ बैंक दिवालिया से २००२-०-० तथा ८००-१५-३ रुपये की रकमों की वसूली का प्रयत्न किया जाय ।

२. २७-५-५५—९९-०-३ रुपये के पत्रिका के सहायक सम्पादक के यात्रा बिल पर स्वीकृति नहीं है ।

विद्यापीठ

मान्यमहानुभावा:,

हमने विद्यापीठ के हिसाब का हिसाब की पुस्तकों तथा वाउचर्ज के अनुसार निरीक्षण किया है । हमारा कथन है कि—

१. (अ) श्री शंकरदा जी शास्त्री पदे स्मारक कोष व्यय रु० ८४९-१०-०
   (ब) विश्वविद्यालय व्यय रु० ५१९७- ८-३

इन व्ययों का बहुत समय से जमा-खर्च नहीं हुआ। हमारे विचार में इनका अविलंब जमा-खर्च किया जाना चाहिये ।

२. श्री बाबा कालीकमलीवाला पंचायत के पास जमा ७७०० रुपये की रकम घट कर इस वर्ष में १५०० रुपये रह गई है। इस अवशिष्ट रकम की पुष्टि कार्यसमिति द्वारा की जानी चाहिये ।

३. यात्रा-व्यय—यह पाया गया है कि मन्त्री के यात्रा बिलों पर न तो प्रधान की और न ही कार्यसमिति की स्वीकृति है । हम यह निवेदन करेंगे कि मन्त्री के बिलों को प्रधान या कार्यसमिति द्वारा स्वीकृत किया जाना चाहिये ।

४. वाउचर नं० J 68 ता० ७-६-१९५५ जिसके अनुसार ९५० रुपये की धनराशि वकील को देने के लिये मन्त्री को दी गई । इस धनराशि की प्राप्ति की वकील की कोई रसीद नहीं है । इसके अतिरिक्त जिस वकील को यह धन दिया गया उसका नाम भी वाउचर में नहीं दिया गया। अतः यह व्यय अप्रमाणित है ।

सधन्यवाद तथा आपको अपनी सर्वोत्तम सेवाओं का विश्वास दिलाते हुए—

भवदीय
ह० जे० सी० माथुर एण्ड कं०
चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट्स

AUDITORS' REPORTS

Dated 22-12-1955

Auditors Report to the Members of the All India Ayurvedic Congress,

Gentlemen,

We have audited the accounts of the Congress for the year ending 31st October 1955, and have to observe as follows :—

(1) *Deposits*—Steps should be taken to make recoveries of the deposits of Rs. 2,002|- and of Rs. 800|15|3 from Nath Bank (under liquidation).

(2) 27-5-1955. Rs. 99-0-3 T. A. bill of Assistant Editor Patrika. There is no sanction.

Auditors Report to the Members of the All India Ayurvedic Vidypeeth.

Gentlemen,

We have audited the accounts of the Vidyapeeth with the books of Accounts and Vouchers and have to observe as follows :—

(a) Shri Shankar Dajee Shastri Pade Memorial Fund Expenses..............Rs. 849-10-0

(b) Vishwa Vidyalaya Expenses.........................,, 5, 197-8-3

These expenses are lying unadjusted since long. We are of the opinion that these expenses should be adjusted without delay.

2. Deposits with Shri Baba Kali Kamliwala Panchayat have been reduced from Rs. 7,700|- to Rs. 1,500|- during the year under audit. Balance of Rs. 1500|- should be confirmed by the Managing Committee.

3. *Travelling Expenses:* It has been noted that the T. A. bills of the Secretary have not been sanctioned by the President or by the Managing Committee. We would request that all the bills of the Secretary should be sanctioned by the President or by the Managing Committee.

4. Voucher No. J-68 dated 7-6-1955 for Rs. 950|- paid to the Secretary for making payment to the lawyer. There is no receipt from the lawyer. Besides name of the lawyer to whom payment has been made is also not given in the voucher. The payment, therefore, remains unverified.

Thanking you and assuring you of our best attention,

Yours faithfully,
Sd/- J. C. MATHUR & Co.,
Chartered Accountants.

मेरे कार्य का विवरण

अगस्त १९५२ की जिस विकट परिस्थिति में मुझे महासम्मेलन के कार्यसंचालन का भार सम्भालना पड़ा था उससे बहुत से विज्ञ वैद्य-बन्धु परिचित हैं। तत्कालीन कार्याध्यक्ष वैद्यरत्न श्री पं० शिवशर्मा जी ने मुझे तत्काल देहली पहुँच कर महासम्मेलन के कार्य का चार्ज लेने तथा नियमावली के विषय पर अखिल भारतीय मतसंग्रह की व्यवस्था कराने का आदेश दिया था। परन्तु उस समय या तो मैं भी संयुक्तमन्त्रित्व से त्यागपत्र दे कर पृथक् हो जाता और उन लोगों के लिये मार्ग साफ कर देता जो येन केन प्रकारेण इस महती संस्था को हस्तगत करने पर उतारू हुए हुए थे अथवा उस अग्नि में हाथ डालता। मैंने कर्त्तव्यपथ को ग्रहण किया और तुरन्त देहली चला गया। वहां जा कर मैं सहज ही यह समझ गया कि कुछ इने गिने व्यक्ति आवश्यकता एवं परिस्थिति के अनुसार पंजाबी, गैर पंजाबी, देहली वाला, बाहरवाला, शरणार्थी, अशरणार्थी, ब्राह्मण, अब्राह्मण, आर्य-समाजी, सनातनी, आदि २ के नारे लगा कर बिना किसी सिद्धान्त को आगे रक्खे एक गुट्टबन्दी में व्यस्त हैं और एक ऐसी नीति को अपना रहे हैं जिससे यह संस्था स्थायी रूप से उनके हाथ में फंस जाय। जिन प्रधानमन्त्री ने त्यागपत्र दे रक्खा था और जिन्होंने अपना चार्ज उस योजना में अपने दाहिने हाथ तथा महासम्मेलन के एक सहायक मन्त्री को देने की योजना बना रक्खी थी उन्होंने मुझे चार्ज देने से इन्कार किया और वे एकदम अपना त्यागपत्र स्थगित करने की बात कहने लगे। मुझे कोई आग्रह था ही नहीं। मैं बिना चार्ज लिये वापिस लौटने ही वाला था कि इधर समझौते की बात चल रही थी और उधर नोटिस समन्स निकालने का कार्य हो रहा था, और शाम को ५ बजे हमको अदालत का नोटिस मिल गया। जिस काम के लिये मैं गया था उसे करना तो एक ओर रहा, अदालतों की पेशियां भुगतने का कार्य गले पड़ गया। उस अभियोग में एक विचित्रता यह भी थी कि संस्था को हस्तगत करने वालों ने अपने ही लोगों द्वारा वह अभियोग अपने ऊपर ही दायर करवाया और हम लोगों को भी साथ में रक्खा अर्थात् उन्होंने ऐसा आयोजन किया कि मुद्दई तो उनके लोग थे ही परन्तु मुद्दालयों में वे स्वयं हमारे साथी बने ताकि उनको मुकदमा जीतने में सहायता मिले। वे प्रधानमन्त्री जी मुद्दालय बने जबकि उनके अपने सुपुत्र मुद्दई के साथ थे। यह भी एक विचित्रता उस विवाद में पाई गई।

यह दावा तो चल ही रहा था कि एक असाधारण सभा की मांग भी उन लोगों ने कार्याध्यक्ष जी से की। श्री कार्याध्यक्ष जी ने नियमों के विरुद्ध होने के कारण उस मांग को रद्द कर दिया। तब उन लोगों ने सितम्बर १९५२ में स्थायी समिति की, अनधिकृत एवं अनियमित मीटिंग का नोटिस निकाला और विचित्र विचित्र विषय विचारार्थ प्रस्तुत किये। उस परिस्थिति में संस्था की रक्षार्थ हमें भी आवश्यक कानूनी पग उठाना अनिवार्य

प्रतीत पड़ा और उन लोगों पर विपरीत दावा करना पड़ा जो सफल हुआ। इस परिस्थिति में मैंने महासम्मेलन का प्रधानमन्त्रित्व सम्भाला था।

उन्हीं लोगों के मकान में किराये पर महासम्मेलन विद्यापीठ का कार्यालय उस समय कनाट सर्कस में स्थित था। उन्होंने एक दम स्थान खाली करने की मांग की। यहां तक कि कार्यालय का सामान बाहर फेंक देने की धमकी दी गई। देहली में स्थान प्राप्ति की समस्या बहुत ही कठिन थी। बहुत प्रयत्न करने पर एक स्थान सदर बाजार में एक गली में श्री ओंकार प्रसाद जी की सहायता से मकान लिया गया। उस समय आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका का प्रकाशन भी बन्द था क्योंकि उन्हीं लोगों ने पत्रिका के प्रधान सम्पादक जी की जानकारी के बिना कुछ छाप दिया था जिसके विरोध में प्रधान सम्पादक ने देहली के डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट को अपना प्रकाशन का डेक्लेरेशन एक दम बन्द करने के लिये लिख दिया था।

साथ ही इन्हीं महानुभावों द्वारा संचालित एक अंग्रेजी की पत्रिका जनरल आफ आयुर्वेद, भी महासम्मेलन के गले में डाली जा चुकी थी। उस पत्र के प्रकाशक तो वे महानुभाव थे, उन्हीं की नीति और योजनाओं का उस पत्रिका द्वारा प्रचार होता था परन्तु उस पत्रिका का सहस्रों रुपये का वार्षिक व्यय महासम्मेलन को उठाना पड़ रहा था। बहुत कठिनाई से उस अंग्रेजी पत्रिका का प्रकाशन मुझे रुकवाना पड़ा।

बहुत प्रयत्न से ३८ वें अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन, इन्दौर, के एक सप्ताह पूर्व श्री पं० नानकचन्द्र जी शास्त्री के प्रधान सम्पादकत्व में आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका का पुनर्जन्म हुआ।

तत्पश्चात् वैद्यरत्न श्री पं० शिवशर्मा जी की अध्यक्षता में इन्दौर नगर में अक्टूबर मास के अन्तिम सप्ताह में महासम्मेलन का ३८ वां अधिवेशन सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। वहां पर सभी प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार हुए। वैद्य महानुभावों की पर्याप्त संख्या की ओर से वहां पर माँग थी कि जिन लोगों ने महासम्मेलन को इतनी हानि पहुँचाई है उनके विरुद्ध अनुशासन की कार्यवाही की जावे परन्तु सहनशीलता को आगे रखते हुए इस प्रकार का कोई पग हमने उठाना उचित नहीं समझा और बड़े अच्छे वातावरण में वह महासम्मेलन विसर्जित हुआ।

उस महासम्मेलन के अध्यक्ष वैद्यरत्न श्री पं० शिवशर्मा जी ने प्रधानमन्त्रित्व का कार्य मुझे सम्भालने की इच्छा प्रकट की। मैंने उन्हें कहा कि राग-द्वेष का बोल बाला है, मैं इस व्यर्थ के झगड़े में फंसना नहीं चाहता हूँ, यहाँ प्रत्यक्षतः सकाम सेवा और निष्काम सेवा में सदस्यगण बहुत कम अन्तर देखते हैं और अन्ततोगत्वा बदनामी होती है। परन्तु श्री अध्यक्ष जी ने मुझे आग्रह करके वह कार्य सम्भाल दिया। मैंने केवल तीन मास के लिये यह सेवा कार्य स्वीकार किया और श्री अध्यक्ष जी से कहा कि तत्पश्चात् किसी अन्य उपयुक्त व्यक्ति को अपना प्रधानमन्त्री चुन लें और मुझे मुक्त करें, जो उन्होंने स्वीकार किया।

इन्दौर महासम्मेलन पर श्री पं० श्रीदत्त जी भी पधारे हुऐ थे। उनसे बात चीत के फलस्वरूप वहाँ पर यह निश्चय हुआ कि श्री बाबा काली कमली वाला पंचायत क्षेत्र एवं आयुर्वेद सेवा समिति, ऋषिकेश के सहयोग से ऋषिकेश में आयुर्वेद विश्वविद्यालय स्थापित किया जाय। श्री पं० श्रीदत्त जी पर विश्वास करते हुए सभी ने तत्सम्वन्धी प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार किया।

जैसा कि मैं ऊपर लिख आया हूँ श्री प्रधान जी से अपने निश्चय के अनुसार मैंने तीन मास के पश्चात् जनवरी १९५३ में अपना त्यागपत्र श्री प्रधान जी के पास भेज दिया। उन्होंने मुझे कहा कि अब बीच में पदाधिकारिगण में अदला बदली संस्था के लिये हितकारक सिद्ध न होगी और कठिनाई से ठीक किया हुआ कार्य पुनः बिगड़ जायगा और मुझ से त्यागपत्र वापिस लेने का आग्रह किया और कहा कि ३९ वें महासम्मेलन पर वे इस कार्य-भार से मुझे मुक्त कराने का यत्न करेंगे। परिस्थितिवश मैंने उनकी आज्ञा मान ली और त्यागपत्र वापिस ले लिया।

अप्रैल १९५३ में आयुर्वेद विश्वविद्यालय के इन्दौर के प्रस्ताव को अग्रसर करने के लिये विद्यापीठ कार्यकारिणी एवं स्थायी समिति का एक सम्मिलिताधिवेशन बंगलौर में सम्पन्न हुआ। वहां पर श्री पं० श्रीदत्त जी ने आयुर्वेद विश्वविद्यालय की एक बृहत् योजना प्रस्तुत की जो स्वीकार हुई। उनका आग्रह था कि आयुर्वेद विद्यापीठ का कार्यालय तुरन्त ऋषिकेश को परिवर्तित कर दिया जाय। हमने उनको समझाया कि आप अभी श्री बाबा काली कमली वाला पंचायत क्षेत्र तथा आयुर्वेद सेवा समिति द्वारा नियमित प्रस्ताव पास करवायें तदनन्तर कार्यालय ऋषिकेश ले जाने में किसी को कोई आपत्ति न होगी। हम सभी उनके कार्य में अधिकाधिक सहयोग देने के इच्छुक थे, तदर्थ तत्पर थे, उत्सुक थे।

श्री पं० श्रीदत्त जी की इच्छानुसार मई १९५३ में हम ने काली कमली पंचायत क्षेत्र के पास १०,०००) दस हजार रुपये भी जमा करवा दिये ताकि उन्हें पूरा विश्वास हो जाय कि हम वास्तव में आयुर्वेद विश्वविद्यालय ऋषिकेश में स्थापित करने के लिये पूरी तरह तैयार हैं।

अगस्त-सितम्बर १९५३ में श्री बाबा काली कमली पंचायत क्षेत्र ने अपनी कलकत्ता की दो सभाओं में हमारे बंगलौर के प्रस्ताव को स्वीकार किया। किस प्रकार और किस वातावरण में यह प्रस्ताव स्वीकार हुआ यह विदित नहीं हो सका क्योंकि थोड़े ही समय पश्चात् काली कमली पंचायत क्षेत्र ने अपने उस प्रस्ताव को कार्यान्वित करने से एक प्रकार से इन्कार ही कर दिया। परन्तु श्री पं० श्रीदत्त जी ने प्रायः हम सभी को वस्तुस्थिति से अपरिचित रक्खा।

नवम्बर १९५३ में महासम्मेलन स्थायी समिति एवं विद्यापीठ कार्यकारिणी समिति का एक सम्मिलिताधिवेशन देहली में सम्पन्न हुआ। उसमें श्री पं० श्रीदत्त जी ने निम्नलिखित प्रस्ताव पास करवाया "आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्वीकृत योजना को श्री बाबा काली कमली वाला पंचायत क्षेत्र समिति तथा आयुर्वेद सेवा समिति, ऋषिकेश, ने स्वीकार

किया है, तदर्थ उक्त दोनों सभायें भारत के वैद्यसमाज की ओर से धन्यवादार्ह हैं। निश्चय हुआ कि उक्त दोनों सभाओं को कार्यालय की ओर से धन्यवाद सूचक पत्र भेज दिये जायें।" प्रस्ताव सं० १४।

परन्तु वैद्यसमाज अब यह जानकर चकित रह जायगा कि तब तक आयुर्वेद सेवा समिति ने हमारी विश्वविद्यालय योजना को न स्वीकार किया था और न ही तत्सम्बन्धी कोई नियमित प्रस्ताव ही किया था, जब कि यहां पर धन्यवाद के प्रस्ताव भी पास कराये जा चुके हैं।

मेरे प्रधानमन्त्रित्व में स्थायी समिति का पहला अधिवेशन दिसम्बर १९५२ में देहली में सम्पन्न हुआ था। उसमें वही गुट्टबन्दी के ढङ्ग पाये गये। सभा का कार्य आगे न चलने देना, बात-बात पर व्यर्थ के प्रश्न करना। क्षण-क्षण भर के पश्चात् "सभा का मत लिया जाय" इस प्रकार की मांग करना और स्थिति बनाना और अन्य प्रकार से हुल्लड़ मचाना यही मैंने देहली के कथित नेताओं का लक्ष्य पाया।

मेरे प्रधानमन्त्रित्व में स्थायी समिति की एक और सभा नवम्बर १९५३ में देहली में हुई। उस अधिवेशन में भी सर्वथा उपर्युक्त प्रकार का ही वातावरण पाया गया।

इसी बीच में विद्यापीठ कार्यालय में एक दुःखद वाद विवाद खड़ा हो गया था उसके मूल में भी हमारे देहली के दो वैद्य महानुभाव थे, उनके आरोप के विरुद्ध श्री पं० श्रीदत्त जी ने एक ७२ पृष्ठ की रिपोर्ट लिखी थी जो झगड़े को समाप्त करने के ध्येय से ही मैंने अधिक प्रकाशित होने से रोक दी थी। उस काण्ड से भी पर्याप्त उत्तेजना हुई थी।

तत्पश्चात् मार्च १९५४ में कोट्टकल, दक्षिण मालाबार, में अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का ३९ वां अधिवेशन सम्पन्न हुआ। श्री पं० श्रीदत्त जी ने आयुर्वेद विश्वविद्यालय योजना पर विभिन्न प्रकार के बहुत से प्रस्ताव स्वीकार कराये। एक प्रस्ताव यह भी था कि विद्यापीठ कार्यालय तुरन्त देहली से ऋषिकेश को परिवर्तित कर दिया जाय। महासम्मेलन के मंच पर मैंने तथा अन्य कुछ सदस्य महानुभावों ने यह विचार प्रकट किया था कि जब तक बाबा काली कमली वाला पंचायत क्षेत्र तथा आयुर्वेद सेवा समिति से लिखित रूप में इकरारनामे न हो जायं तब तक विद्यापीठ कार्यालय ऋषिकेश को परिवर्तित न किया जाय। इस पर सभा के मंच पर ही श्री पं० श्रीदत्त जी ने बहुत आवेश में आकर कहा कि मैं अभी मन्त्रित्व छोड़ता हूं। उन्होंने तथा श्री स्वामी दयानिधि जी महाराज ने यह भी कहा कि यदि वहां विद्यापीठ कार्यालय जाकर विश्वविद्यालय न बन सके तो जितना व्यय अथवा हर्जा-खर्चा विद्यापीठ को होगा उसको वे दोनों भर देंगे। हम ने श्री पं० श्रीदत्त जी से यह भी कहा कि वे अपनी योजना की पूर्ति के लिए ऋषिकेश में क्लर्क रख लें परन्तु वे तो कार्यालय को ही वहां ले जाना चाहते थे। हम प्रायः सभी लोग एक छोटे से विषय पर मतभेद खड़ा करके विश्वविद्यालय की महान् योजना को समाप्त अथवा स्थगित किया नहीं चाहते थे अतएव हमने वह सब स्वीकार किया और श्री पं० श्रीदत्त जी को भरसक सहयोग और बल देने का निश्चय ही नहीं किया अपितु उन्हें ऐसा

वचन भी दिया। विश्वविद्यालय के लिये एक लाख रुपया संस्था के कोष से निकालना भी स्वीकार किया। इस प्रकार आयुर्वेद महासम्मेलन तथा इसके अधिकारी वर्ग की ओर से श्री पं० श्रीदत्त जी को पूर्ण सहयोग दिया गया।

३९ वें महासम्मेलन के शीघ्र पश्चात् ही अप्रैल १९५४ में विद्यापीठ कार्यालय ऋषिकेश को परिवर्तित कर दिया गया। राजर्षि श्री पुरुषोत्तमदास जी टण्डन के प्रयास के फलस्वरूप श्री राष्ट्रपति जी ने आयुर्वेद विश्वविद्यालय का शिलान्यास करना भी स्वीकार किया।

उधर ऋषिकेश में विद्यापीठ के कार्यालय पहुंचने से पूर्व ही काली कमली वाला पंचायत क्षेत्र के अधिकारी वर्ग का श्री पं० श्रीदत्त जी से पर्याप्त मतभेद खड़ा हो चुका था। अप्रैल १९५४ में काली कमली क्षेत्र की कार्यकारिणी समिति ने ऐसा प्रस्ताव पास किया कि जब तक इस योजना में सहयोग देने वाली सभी संस्थाओं में पारस्परिक ऐग्रीमेन्ट न हो जाय तब तक विश्वविद्यालय सम्बन्धी कार्य में अग्रसर न हुआ जाय। परन्तु श्री पं० श्रीदत्त जी ने अपना पक्ष समझा कर क्षेत्र वालों को जीतने का प्रयत्न नहीं किया उल्टा उनसे लड़ाई और मुकदमेबाजी करने का प्रयत्न करते रहे। श्री राष्ट्रपति जी ऋषिकेश पधारे परन्तु उन्हें शिलान्यास किये बिना वहां से लौटना पड़ा। इससे आयुर्वेद महासम्मेलन तथा विद्यापीठ के मान को भारी धक्का पहुंचा और वैद्य समाज को भी लज्जित होना पड़ा।

जून १९५४ में वैद्यरत्न श्री पं० शिवशर्मा जी काली कमली क्षेत्र कमेटी का रुख देखने के लिये कलकत्ता गये और उन्होंने श्री पं० श्रीदत्त जी को बहुत से पत्रों द्वारा समझाया कि इस परिस्थिति में विश्वविद्यालय स्थापना जैसा महान् कार्य सफल होना सम्भव नहीं। परन्तु श्री पं० श्रीदत्त जी ने उनकी एक भी नहीं सुनी। वैद्य समाज को तो वास्तविक स्थिति बताई ही नहीं गई। इस पर भी हम ने उनको इस योजना को थोड़ा सा भी आगे बढ़ाने के लिये पूर्ण अवसर और समय दिया। अन्त में उन्होंने सुझाव दिया कि वे अवश्य सफल हो जायेंगे यदि उनके कहने के अनुसार ही उन्हें सहयोग दिया जाता रहा और यह सहयोग यह था कि वे काली कमली क्षेत्र पर मुकदमा करने की स्वीकृति एवं तदर्थ दस हजार रुपया की व्यय की स्वीकृति चाहते थे। उनके इस प्रस्ताव में मैंने तथा श्री पं० शिवशर्मा जी ने सहयोग नहीं दिया, यही श्री पं० श्रीदत्त जी के प्रति हमारी ज्यादती है यही हमारा एक अपराध है। श्री पं० श्रीदत्त जी और स्वामी दयानिधि जी के भरी सभा में आश्वासन पर ही विद्यापीठ का लगभग पांच हजार रुपया इस योजना पर व्यय हो चुका है और एक हजार पांच सौ रुपया अभी काली कमली क्षेत्र के पास फंसा हुआ है। इस प्रकार छः हजार के ऊपर रुपयों की हानि संस्था को हुई है। इस पर वैद्य बन्धुओं ने विचार करना है।

अन्ततोगत्वा ४० वें महासम्मेलन पर विश्वविद्यालय योजना को ऋषिकेश में स्थगित करने और वहाँ से विद्यापीठ कार्यालय को देहली परिवर्तित करने के प्रस्तावों को स्वीकार

किया गया। ये प्रस्ताव एक मात्र संस्था एवं श्री पं० श्रीदत्त जी के हित और मान के रक्षार्थ पास किये गये थे। इसके भिन्न हमारा कोई ध्येय नहीं था परन्तु अपने ही ढंग से इन प्रस्तावों को भी निरर्थक बनाने का श्री पं० श्रीदत्त जी ने प्रयत्न किया। विद्यापीठ कार्यालय को येन केन प्रकारेण अनिश्चित काल तक ऋषिकेश में रोकना चाहा। और इन प्रस्तावों के कारण ही हमें अपना विरोधी समझा। उस विरोध का बदला लेने के लिये उन्होंने देहली के पुराने दुखी हुए दो गुटों की शरण ली अथवा इन गुटों ने इन्हें भड़काया और उन्हें टिकने नहीं दिया। कुछ भी हो इस प्रकार संगठित एक त्रिदिक मण्डली ने मिलकर विगत चार मास में इस महती संस्था के प्रति क्या क्या व्यवहार किया है इससे भी कुछ वैद्य बन्धु परिचित हैं।

महासम्मेलन पदाधिकारी वर्ग ने इस सम्पूर्ण स्थिति का बहुत सहिष्णुता से सामना किया और केवल संस्था की रक्षार्थ न्यूनतम आवश्यक पग उठाये। इन लोगों ने ३० अक्टूबर १९५५ को एक मीटिंग दिल्ली में की। उक्त मीटिंग का एजण्डा कैसे निकाला यह भी एक कहानी है परन्तु उसे मैं यहां इसलिये लिखना नहीं चाहता कि सम्भव है वे लोग महासम्मेलन को पुनः मुकदमेबाजी में धकेलें। अतएव ३० अक्टूबर की मीटिंग का एजण्डा प्रकाशित करने सम्बन्धी कहानी अदालत के लिये ही सुरक्षित रख रहा हूं।

उक्त मीटिंग में उन लोगों ने बिहार के कुछ अवसरवादियों से मिलकर यह निश्चय किया कि महासम्मेलन विद्यापीठ कार्यालय पर आरोपों की जांच की जाय परन्तु आरोप क्या हैं यह बताया नहीं। उन लोगों ने निश्चय किया कि महासम्मेलन के अध्यक्ष, विद्यापीठ के अध्यक्ष, प्रधानमन्त्री, स्थानापन्न विद्यापीठमन्त्री, तथा कार्यालय मन्त्री को पदच्युत किया जाय और तब कार्यालय की जांच की जाय, वैसे नहीं। उन लोगों ने निश्चय किया कि महासम्मेलन विद्यापीठ के सभी बैंक अकाऊन्टस् का संचालन रोक दिया जाय और बैंकों को भी वैसे ही लिख दिया। बैंक वाले झगड़े से स्वाभाविक रूप से डरते हैं और अब अधिकतर बैंक अकाऊन्ट जिन में २५०००) पच्चीस हजार के लगभग रुपया है रुके पड़े हैं। संस्था के चैक इसी बीच में अमान्य हुए हैं। जिससे संस्था का अपमान हुआ है। इस प्रकार इन लोगों ने संस्था के मर्म पर चोट की है।

इसी बीच एक परीक्षार्थी विशेष के लिये कुछ विशेष सहायता विचित्र रूप से देने का कार्य हमारे भूतपूर्व विद्यापीठ मन्त्री जी ने किया। जब कार्यालय के सहयोग से श्री विद्यापीठाध्यक्ष जी ने वह कार्य सफल न होने दिया तो श्री पं० श्रीदत्त जी ने अपने ही बल पर वह विषय एजण्डा पर रख कर विद्यापीठ की कार्यकारिणी सभा का आयोजन किया। वह सभा उन्होंने २८ अगस्त, १९५५ को अपने एक सहयोगी के स्थान पर देहली में की। उस सभा में ६० के लगभग ऐसे व्यक्ति उपस्थिति कराये गये जो विद्यापीठ कार्यकारिणी समिति के सदस्य नहीं थे। जो सज्जन उस सभा में उपस्थित हुए थे उस सभा की घटनाओं को चिर काल तक स्मरण रक्खेंगे। उस सभा में कार्यालय मन्त्री को पीटने का यत्न किया

गया। संस्था का रिकार्ड तथा फाइलें छीनने के प्रयत्न में उपस्थित सज्जनों के सिरों के ऊपर फाइलें और कागज सम्पूर्ण भवन में इधर से उधर नाचे, परन्तु सौभाग्य की बात है कि वह रिकार्ड जिसे छीनने का प्रयत्न था वह बच गया। कुछ रिकार्ड, रजिस्टर तथा रसीद की किताबें उन लोगों के हाथों में चले गये जो प्रार्थना करने पर आज तक भी वापिस नहीं मिले हैं। प्रधान जी के सभा भंग करने पर, बाद में श्री नित्यानन्द जी सारस्वत की अध्यक्षता में मीटिंग हुई जिस में भी हास्यास्पद प्रस्ताव पास किये गये और कार्यालय मन्त्री के विरुद्ध इसलिये आरोपपत्र तैयार किया गया क्योंकि देहली के दो गुट उसे अपना शत्रु समझते हैं। उस आरोप पत्र का उत्तर आप बम्बई के गताधिवेशन के कार्यविवरण के अन्तर्गत आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका के नवम्बर मासीय अङ्क में पढ़ चुके होंगे।

तत्पश्चात् श्री पं० श्रीदत्त जी ने त्यागपत्र दे दिया परन्तु शीघ्र ही पश्चात् वे कहने लगे कि यह त्यागपत्र उनका नहीं है। जब उन्हें कहा गया कि आप उसे वापिस ले लें तब वे उसे वापिस लेने के लिये भी तैयार नहीं हुए। कोई भी सदस्य आकर उनके त्यागपत्र को देख सकता है तथा बैंकों के अकाऊन्टस् पर, जिन पर वे हस्ताक्षर करते थे उनसे मिलान कर सकता है।

अस्तु, इस पूर्ण स्थिति का निष्पक्ष निश्चय कराने के लिये राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष ढेबरभाई की मध्यस्थता का प्रस्ताव रक्खा गया। श्री पं० श्रीदत्त जी, श्री कान्तिनारायण जी मिश्र तथा श्री नित्यानन्द जी सारस्वत ने इस मध्यस्थता को अस्वीकार किया।

मध्यस्थता की उस दल की ओर से स्वीकृति न मिलने पर श्री पं० श्रीदत्त जी के त्यागपत्र के विषय पर गताधिवेशन द्वारा एक प्रस्ताव पास किया गया। पत्र लिखने पर भी इस प्रस्ताव की भी आज तक कोई स्वीकृति नहीं मिल सकी।

उपर्युक्त तथ्यों को विचार में रखकर निष्पक्ष वैद्य बन्धु स्वयं विचार करें कि क्या यह विग्रह किसी लक्ष्य एवं सिद्धान्त को समक्ष रख कर चल रहा है अथवा किन्हीं अन्य कारणों से।

ऊपर तो मैंने साधारण वर्तमान स्थिति का दिग्दर्शन कराया है। जो कुछ मैंने ऊपर संक्षेप से लिखा है तत्सम्बन्धी सूचनायें एवं विवरण समय-समय पर पत्रिका में प्रकाशित होते रहे हैं। अब में महासम्मेलन के कार्यों पर कुछ निवेदन करना अपना कर्तव्य समझता हूं और तदर्थ निम्न लिखित सुझाव देता हूं—

१. अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन एवं तदन्तर्गत विद्यापीठ एक बहुत बड़ी संस्था है परन्तु हम वैद्य ही उसका स्वरूप भूले हुए हैं। मेरा दृढ़ मत है कि इस संस्था के स्वरूप को समझने, उसे शक्तिशाली बनाने और ऊंचा उठाने से वैद्य समाज स्वयं ऊपर उठ जायगा। अतएव प्रत्येक वैद्य बन्धु का कर्तव्य है कि इस प्रयास में अपनी सामर्थ्यानुसार सहयोग दें और ग्राम अथवा तहसील वैद्य सभाओं से लेकर अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के स्तर तक संस्था का ऐसा विधान बनाया जाय जिससे वैद्य समाज में जागृति,

स्फूर्ति और शक्ति का संचार हो, सभी अपनी स्थिति और सामर्थ्यानुसार इसमें सहयोग दे सकें और सभी इससे लाभान्वित हो सकें। इस विधान निर्माण में इस बात का ध्यान रक्खा जाय कि अवसरवादी तत्वों से संस्था सुरक्षित रहे और रचनात्मक कार्यकर्ता संस्था से उदासीन न हो सकें।

२. संस्था के प्रधान कार्यालय के लिये एक भवन अवश्य बनाया जाय अन्यथा प्रति दो तीन वर्ष के बाद संस्था का कार्य अस्त व्यस्त हो जाता है और संस्था को विभिन्न प्रकार की हानि उठानी पड़ती है।

३. हमारा प्रादेशिक संगठन जितना दृढ़ होना चाहिये उतना दृढ़ नहीं है। इस समय भारत के २३ प्रादेशिक वैद्य सम्मेलन महासम्मेलन से सम्बद्ध हैं। सभी प्रादेशिक सम्मेलन निर्विघ्नरूप कार्य कर रहे हों ऐसा नहीं है। बंगाल में तथा बिहार में पारस्परिक झगड़े विद्यमान हैं। आल केरल आयुर्वेदिक कांग्रेस पर भी कुछ पत्रक उंगली उठा रहे हैं। पैप्सु का वैद्य सम्मेलन निर्जीव सा है। इन्द्रप्रस्थीय वैद्यसभा सुसुप्तावस्था में है। उत्तर प्रादेशिक वैद्य सम्मेलन अभी तक अपने धुरे पर स्थित नहीं हो सका। अतएव इन संगठनों से सम्बन्ध रखने वाले सदस्यगणों को चाहिये कि वे वहां कहां की स्थिति को ठीक करें, यह मुख्यतः उन्हीं का कर्तव्य है।

देहली के वैद्य बन्धुओं को मैं विशेषतया आवाहन करूंगा। वहां उंगलियों पर गिने जाने वाले कुछ वैद्यों के कारण ही वहां का वैद्य समाज विगत पांच वर्ष से समस्त भारत वर्ष में बदनाम हो रहा है। उन्हें यह कलंक मिटाना चाहिए। उन्हें अपना घर ठीक करना चाहिये, न कि आयुर्वेद महासम्मेलन-विद्यापीठ कार्यालय, जहां पर आयुर्वेद का थोड़ा बहुत कार्य हो रहा है, उसे भी बिगाड़ने में कुछ अन्य लोगों को सहयोग देना चाहिये। देहली में बहुत बहुत सुयोग्य, सज्जन एवं विद्वान् वैद्य हैं। क्योंकि वे राग-द्वेष से भयभीत हैं, और अपनी सम्मान रक्षा के लिये उदासीन रहते हैं अतएव वे आगे नहीं बढ़ते। उन्हें आगे बढ़-कर देहली के नेत्रत्व को सम्भालना चाहिये, ऐसी मेरी उनसे सानुरोध प्रार्थना है।

४. आयुर्वेद महासम्मेलन का कार्य पर्याप्त मात्रा में विद्यापीठ की सहायता से चलता है। हमें ऐसे उपाय सोचने चाहियें जिससे महासम्मेलन की आय बढ़ सके और संस्था के कार्य में अधिक प्राप्ति हो सके। महासम्मेलन के ५००० से कम सदस्य होंगे तो प्रतिवर्ष घाटा ही होता रहेगा। महासम्मेलन के प्रत्येक सदस्य का कर्तव्य है कि महासम्मेलन के अधिकाधिक सदस्य बनाने का प्रयत्न करे।

५. परिवर्तित स्थिति में नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ का भी कुछ पुनर्गठन करना अनिवार्य प्रतीत पड़ रहा है। इस ओर भी सदस्यगण ध्यान दें।

६. क्रमशः भारत में आयुर्वेद उन्नति और मान्यता की ओर बढ़ रहा है। बम्बई में आयुर्वेद की बहुत सीमा तक विजय हो चुकी है। सौराष्ट्र और मध्यप्रदेश भी बम्बई के पथ पर आ गये हैं। शनैःशनैः इस विजय-क्षेत्र को बढ़ाते रहना चाहिये। केन्द्र में आयुर्वेदिक कौंसिल की स्थापना के लिए भरसक प्रयत्न करना चाहिये।

७. अन्त में मेरा यही निवेदन है कि श्री पं० श्रीदत्त जी तथा देहली के कुछ वैद्यों द्वारा बनाई गई स्थिति से संस्था को हानि न हो सके उन उपायों का निश्चय करना चाहिए। इस विषय पर मेरा यह तुच्छ सुझाव है कि अभी तक के उनके कार्यों को क्षमा भाव से देखते हुये उन्हें अपने व्यवहार सुधार का एक और अवसर दिया जाय और किसी प्रकार की अनुशासन की कार्यवाही अभी तक उनके विरुद्ध न की जाय, वे हमारे भाई हैं, हम आशा रखते हैं कि वे सब ठीक मार्ग पर आ जायेंगे।

मेरे इस कार्यकाल में देहली के कुछ वैद्यों को छोड़ कर मुझे सभी ओर से मनवांच्छित सहयोग मिला है। इसके लिए मैं सभी का कृतज्ञ हूँ।

आपका विनम्र सेवक
वामनराव दीनानाथ वैद्य
प्रधानमन्त्री
अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन

प्रस्ताव

निश्चय हुआ कि श्री प्रधानमन्त्री जी के कार्य की सराहना करते हुये उनका वक्तव्य स्वीकार किया जाय और इसे सर्व साधारण की जानकारी के लिये आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका में प्रकाशित करा दिया जाय।

प्रस्तावक—श्री सीताराम मिश्र, जयपुर,
अनुमोदक—श्री बद्रीविशाल त्रिपाठी, कानपुर,
,, श्री चन्द्रमणिप्रसाद, रीवां,
,, श्री पां० शि० शण्डेय, दमोह।

सर्वसम्मति से स्वीकृत

———

(पृष्ठ ८ का शेष)

ऐलोपैथी है, को एक दम बन्द कर उसके स्थान में एकमात्र आयुर्वेद को अपनाना सम्भव नहीं। दोनों चिकित्सा पद्धतियों को एक साथ आगे बढ़ना है। मैं स्वयं ही मधुमेह का रोगी हूँ। मैंने हर प्रकार की चिकित्सा का प्रयोग किया है किन्तु स्थायीलाभ किसी से नहीं हुआ। फिर भी एक ऐलोपैथिक औषधि के सहारे ही आज में जीवित हूँ। एक वैद्य जी ने मुझे एक औषधि लिख कर दी, देखने पर पता चला कि वह कोई आयुर्वेदिक औषधि न हो कर ऐलोपैथिक औषधि थी। इस प्रकार आयुर्वेद की उन्नति कैसे होगी ?

आगे आपने कहा कि आन्ध्र एक छोटा सा राज्य है, इसके साधन भी सीमित हैं। राज्य की वर्तमान आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए हम आयुर्वेदोन्नति के लिये अधिक से अधिक प्रोत्साहन देना चाहते हैं। आयुर्वेद का एक कालेज खोलने की भी हमारी इच्छा है। यह किस प्रकार का हो, इसका पाठ्यक्रम क्या हो आदि विषयों में मुझे आपके सहयोग एवं परामर्श की अपेक्षा है। राजकीय आयुर्वेद समिति ने जो सिफारिश आयुर्वेद के विकास के लिये की हैं उनको हम यथासम्भव शीघ्र कार्यान्वित करेंगे। वैद्यों का रजिस्ट्रेशन भी शीघ्र किया जायगा। किन्तु जो वैद्य रजिस्ट्रेशन नियमों के आधीन रजिस्टर्ड न किये जा सकेंगे उन्हें चिकित्सा करने दिया जाय या नहीं, इस विषय में मैं आपकी सलाह चाहूंगा।

स्वास्थ्यमन्त्री के भाषण के अनन्तर श्री डा० लक्ष्मीपति ने श्री पं० शिवशर्मा जी से दो शब्दों में स्वास्थ्यमन्त्री के भाषण का उत्तर देने की प्रार्थना की। तत्पश्चात् पण्डित जी ने बहुत संक्षेप में मिश्रित शिक्षा प्रणाली, डाक्टरों के आधीन राजकीय आयुर्वेद विभागों तथा आयुर्वेद विरोधी अधिकारियों की आयुर्वेद विध्वंसक कृतियों की कड़ी आलोचना की। आपने स्वास्थ्यमन्त्री का ध्यान बम्बई, मध्यप्रदेश आदि राज्यों की ओर दिलाया तथा आयुर्वेद शिक्षा की दिशा में उनका अनुसरण करने की सलाह दी। आपने विश्वास दिलाया कि स्वास्थ्यमन्त्री यदि चाहेंगे तो वे इस विषय में उनकी सहर्ष सहायता करेंगे।

पण्डित जी के भाषण के उपरान्त विद्यापीठाध्यक्ष वैद्यराज श्री भि० वि० डेग्वेकर जी का विद्वत्तापूर्ण अध्यक्षीय भाषण प्रारम्भ हुआ किन्तु प्रकाश की अव्यवस्था के कारण उसे बीच में ही रोकना पड़ा। आपका सम्पूर्ण भाषण इसी पत्रिका में आगे प्रकाशित है।

रात्रि के ९ बजे महासम्मेलन स्थायी समिति तथा विद्यापीठ कार्यकारिणी का अधिवेशन पुनः प्रारम्भ हुआ। नागपुर केन्द्र के विषय पर प्रथम कुछ वाद-विवाद हुआ किन्तु पश्चात् श्री शिवकरण जी छांगाणी ने जांचसमिति की रिपोर्ट को स्वीकार कर स्थिति को सुगम बना दिया।

तत्पश्चात् उसी स्थान में विषय निर्वाचिनी का अधिवेशन प्रारम्भ हुआ। सभा ने सभी प्रस्तावों पर सजीवता एवं रुचि के साथ विचार किया तथा लगभग सभी प्रस्ताव महासम्मेलन के खुले अधिवेशन में उपस्थित करने के लिये स्वीकार हुए। समय अधिक हो जाने के कारण कुछ प्रस्तावों पर विचार नहीं किया जा सका। अतः विषय-निर्वाचिनी का

अधिवेशन ता० ३१-१२-५५ को अधिवेशन मण्डप में मध्यान्होत्तर दो बजे पुनः करने का निश्चय कर सभा विसर्जित हुई ।

३१-१२-५५

आज प्रातःकाल स्वास्थ्य रक्षा सम्भाषा परिषद् का अधिवेशन हुआ जिसमें श्री वेणी माधवशास्त्री जी का विशेष भाषण हुआ। मध्यान्होत्तर दो बजे विषय निर्वाचिनी का अधिवेशन महासम्मेलन मण्डप में प्रारम्भ हुआ। अवशिष्ठ प्रस्ताव विचारार्थ उपस्थित किये गये तथा स्वीकृत हुए।

तदनन्तर उसी सभा को खुला अधिवेशन घोषित कर दिया गया। अध्यक्ष जी की ओर से पण्डित शिवशर्मा जी ने सभा से यह प्रार्थना की कि क्योंकि विषय निर्वाचिनी समिति के अधिवेशन में प्रायः वे सभी सदस्य उपस्थित थे जो इस समय खुले अधिवेशन में उपस्थित हैं अतः विषय निर्वाचिनी द्वारा स्वीकृत सभी प्रस्तावों को पुनः उपस्थित न किया जाकर यदि सभा की आज्ञा हो तो, स्वीकृत समझा जाय। ऐसा करने से समय की बचत होगी। सभा ने इसे सर्वसम्मति से स्वीकार किया। अब खुले अधिवेशन के लिये केवल पदाधिकारी आदि के चुनाव तथा आगामी ४२ वें अधिवेशन के लिये निमन्त्रण पत्रों के विषय ही शेष रह गये थे। प्रथम निमन्त्रणपत्रों का विषय उपस्थित किया गया। उड़ीसा, कर्णाटक, विहार, बंगाल, विन्ध्यप्रदेश, मध्यप्रदेश प्रादेशिक सम्मेलनों तथा शहाजहानपुर जिला वैद्य सभा (उत्तर प्रदेश) की ओर से उनके प्रतिनिधियों द्वारा निमंत्रण उपस्थित किये गये। सभी ने मनोरंजक भाषणों द्वारा सभा को अपने अपने पक्ष में करने का प्रयत्न किया। प्रतिनिधियों में से भी अनेक ने पक्ष विपक्ष में अपने विचार प्रकट किये। सभा विशेषतया उडीसा तथा कर्णाटक के पक्ष में थी। उड़ीसा के पक्ष में श्री जगन्नाथपुरी के दर्शन का आकर्षण था, कर्णाटक के पक्ष में उनकी यह घोषणा थी कि वे चालू वर्ष में ४००० सदस्य बना कर देंगे। अन्त में उड़ीसा प्रादेशिक सम्मेलन के प्रधानमन्त्री श्री वनमालीदास ने सभा से यह आश्वासन लेकर कि आगामी वर्ष सभा उनके निमन्त्रण के पक्ष में अपना मत देगी, अपना निमन्त्रण वापिस ले लिया। इस प्रकार आगामी ४२ वें अधिवेशन के लिये कर्णाटक प्रान्त का निमन्त्रण सर्वसम्मति से स्वीकार हो कर इस मनोरंजक वाद विवाद का अन्त हुआ।

तदनन्तर महासम्मेलन विद्यापीठ पदाधिकारियों के चुनाव का विषय लिया गया। विभिन्न पदों के लिये नाम उपस्थित हुए, अनुमोदन हुआ और बिना किसी मतविभाजन के चुनाव सर्वसम्मति से सम्पन्न हो गया। इसी प्रकार स्थायी समिति, कार्यकारिणी समिति आदि समितियों का चुनाव भी सर्वसम्मति से हुआ।

तदनन्तर महासम्मेलन प्रधानमन्त्री श्री वामनराव दीनानाथ जी ने अपने कार्यकाल का विवरण पढ़कर सुनाना प्रारम्भ किया। विवरण लम्बा था अतः श्री प्रधानमन्त्री जी के कार्य एवं कर्तव्यपरायणता की सराहना का प्रस्ताव स्वीकार करते हुए यह निश्चय हुआ कि सम्पूर्ण कार्य-विवरण पत्रिका में प्रकाशित कर दिया जाय।

अन्त में श्री पं० शिवशर्मा तथा दोनों अध्यक्ष महोदयों ने संक्षिप्त भाषणों द्वारा

स्वागत समिति तथा उपस्थित प्रतिनिधियों का आभार-प्रदर्शन किया तथा यह आशा प्रकट की कि महासम्मेलन और विद्यापीठ के संगठन को दृढ़ से दृढ़तर बनाने में सभी वैद्य अपना पूर्ण सहयोग देंगे। महासम्मेलनाध्यक्ष वैद्यवर श्री वाई० पार्थनारायण पंडित ने अपने भाषण द्वारा यह मनोकामना प्रकट की कि वे वह दिन शीघ्र ही देखना चाहते हैं जब कि आयुर्वेद की ध्वजा को विदेश में फहराने के लिये पं० शिवशर्मा जी पाश्चात्य देशों के मंचों पर अपने प्रभावशाली भाषणों द्वारा आयुर्वेद को गौरवान्वित करेंगे। अन्त में धन्वन्तरि वन्दना तथा राष्ट्रीय गायन के पश्चात् अधिवेशन समाप्त हुआ।

अधिवेशन के अवसर पर एक छोटी सी प्रदर्शनी का आयोजन भी किया गया था जिसमें दक्षिण भारत व उत्तर भारत की कुछ औषध निर्माणशालाओं ने भाग लिया। राज्य के एग्रीकल्चरल विभाग की ओर से विभिन्न वनस्पतियों का प्रदर्शन भी किया गया था जिसमें प्रतिनिधियों ने विशेष रुचि दिखलाई।

यद्यपि स्वागत समिति के प्रवन्ध की शिथिलता के कारण उत्तरी भारत के वैद्यों को भोजनादि की असुविधा रही तथापि प्रतिनिधियों की संख्या तथा जिस प्रेम और सहयोगपूर्ण वातावरण में अधिवेशन का सम्पूर्ण कार्यक्रम सम्पन्न हुआ उसे देखते हुए अधिवेशन पूर्णतया सफल रहा।

४१वें अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन कुरनूल द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव

प्रस्ताव सं० १

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का यह अधिवेशन कविराज नलिनी रंजन सेन, कलकत्ता, वैद्य श्री वाई. श्रीनिवासाचार्युलु, नैल्लौर, राजवैद्य वंशीधर जी मिश्र, फतेहपुर, जगन्नाथराव माने, नागपुर, श्री केलकर शास्त्री, नासिक, श्री ज्ञानेन्द्रनाथ सेन, हरद्वार, श्री भालचन्द्र गणेश नवाथे, सागर, कविराज डा० शिवदत्त, अमृतसर, श्री सी. वी. सुब्रह्मण्य शास्त्री गारु, श्री डा० सी. सत्यनारायण शास्त्री, एल्लौर, प्रतिवादी भयंकर श्री कृष्णमाचार्युलु, बेजवाड़ा, राजवैद्य श्री रामनारायण जी घनश्याम, बड़ौदा आदि आयुर्वेद विद्वानों के असामयिक निधन पर शोक सहानुभूति प्रकट करता हुआ भगवान श्री धन्वन्तरि से प्रार्थना करता है कि उनकी दिवंगत आत्माओं को सद्गति एवं उनके शोकाकुल परिवार को शान्ति प्रदान करे।

सभा ने खड़े होकर तथा मौन रहकर यह प्रस्ताव स्वीकार किया।

प्रस्ताव सं० २

भारतीय संसद् ने सेन्ट्रल ड्रग एक्साइज एक्ट में संशोधन कर अरिष्ट और आसव रसौषधों को भी मद्य की श्रेणी में रखने का निश्चय किया है। यह अधिवेशन इस एक्ट को आयुर्वेद के लिये हानिकारक तथा वैद्य समाज के लिये घातक समझता है तथा केन्द्रीय सरकार से अनुरोध करता है कि इस एक्ट को अविलम्ब रद्द करे।

प्रस्तावक—कवि० विद्यानारायण शास्त्री, पटना
समर्थक—श्री के. वी. विष्णुवर्द्धन राव, विजयवाड़ा।

प्रस्ताव सं० ३

महासम्मेलन के त्रिवेन्द्रम अधिवेशन के प्रस्तावानुसार आयुर्वेद योजना समिति ने जो पंचवर्षीय योजना बनाकर भारत सरकार के योजना आयोग के समक्ष प्रस्तुत की हैं, यह महासम्मेलन आशा करता है कि केन्द्रीय व प्रान्तीय सरकारें द्वितीय पंचवर्षीय योजना में उन्हें क्रियात्मक स्वरूप देंगी।

प्रस्तावक—श्री पुरुषोत्तमदेव मुलतानी, हैदराबाद
अनुमोदक—श्री रामनिवास शर्मा, हैदराबाद
समर्थक—श्री राजाराम शर्मा, हैदराबाद

प्रस्ताव सं० ४

बम्बई व मध्यप्रदेश की सरकारों ने जो त्रिवर्षीय आयुर्वेद पाठ्यक्रम निश्चित किये हैं यह महासम्मेलन उनका स्वागत करता है तथा अन्य प्रान्तीय सरकारों से उनके अनुकरण की सिफ़ारिश करता है।

प्रस्तावक—श्री ईश्वरीलाल शास्त्री, हैदराबाद
अनुमोदक—श्री पं० राधाकृष्ण द्विवेदी, हैदराबाद

प्रस्ताव सं० ५

महासम्मेलन सभी प्रान्तीय सरकारों से आग्रहपूर्वक निवेदन करता है कि वे भारत के किसी भी एक प्रान्त में रजिस्टर्ड वैद्यों को अपने प्रान्त में चिकित्सा करने की सुविधा दें। यह सम्मेलन सभी प्रान्तीय सरकारों से यह भी आग्रह करता है कि वे अपने यहां नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ की पांचों परीक्षाओं को रजिस्ट्रेशन के लिये स्थायी रूप से मान्य करें।

प्रस्तावक—श्री श्रीराम शर्मा, बम्बई।
अनुमोदक—श्री महेन्द्रकुमार शास्त्री, बम्बई।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

प्रस्ताव सं० ६

यह सम्मेलन सभी प्रान्तीय सरकारों से आग्रह-पूर्वक निवेदन करता है कि वे १. सरकार द्वारा संचालित आयुर्वेद विद्यालयों अथवा कालेजों के वर्तमान पाठ्यक्रमों में इस प्रकार का परिवर्तन शीघ्र करें जिससे उनमें केवल आयुर्वेद की शिक्षा दी जाय। २. अपने राज्यों में शीघ्र ही पृथक् आयुर्वेद विभाग "डायरेक्टोरेट" की स्थापना करें तथा ३. आयुर्वेद सम्बन्धी वर्तमान या भविष्य में स्थापित होने वाली समितियों या उपसमितियों आदि पर वैद्येतर किसी भी व्यक्ति को न रखें।

प्रस्तावक—श्री श्रीराम शर्मा, बम्बई।
अनुमोदक—श्री कृष्णचन्द्र पंजाबी, बम्बई।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

प्रस्ताव सं० ७

अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन का यह अधिवेशन केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों से अनुरोध करता है कि बम्बई सरकार की भांति सरकारी बीमा योजना (एम्पलायीज स्टेट इंश्योरेंस स्कीम) के अन्तर्गत श्रमिक वर्ग के लिये उनकी कठिनाइयों का तथा देशी चिकित्सा में उनके श्रद्धा और विश्वास का आदर करते हुए देशी चिकित्सार्थ वैद्यों की नियुक्ति करे।

प्रस्तावक—श्री कंवर रामेश्वरसिंह, जालन्धर।
अनुमोदक—श्री भुवनचन्द्र जोशी, देहली।
समर्थक—श्री चन्द्रशंकर रविशंकर, राजकोट।
श्री नानकचन्द शास्त्री, देहली।
श्री भूपेन्द्रनाथ गुप्त, शिमला।

सर्वसम्मति से स्वीकृति।

प्रस्ताव सं० ८

गत वर्ष कई प्रादेशिक सरकारों ने अपने अपने प्रदेश में स्वतंत्र आयुर्वेद विभाग विद्वान वैद्यों के संचालकत्व में स्थापित किये हैं। किन्तु हैदराबाद और अन्य कुछ राज्यों में अभी तक इस दिशा में कोई पग नहीं उठाया गया। यह सम्मेलन हैदराबाद और अन्य राज्य सरकारों का इस ओर ध्यान आकर्षित करता है तथा आशा करता है कि हैदराबाद और अन्य सरकारें शीघ्र ही राज्य में आयुर्वेदिक डायरेक्टोरेट स्थापित करेंगी तथा उसका संचालक डायरेक्टर किसी विद्वान् वैद्य को ही नियुक्त करेंगी।

प्रस्तावक—श्री रामानुज स्वामी, हैदराबाद।
अनुमोदक—श्री ईश्वरीलाल शास्त्री, हैदराबाद।
समर्थक—श्री अयोध्यानाथ, शाहजहांपुर।

सर्वसम्मति से स्वीकृत

प्रस्ताव सं० ९

यह सम्मेलन भारत सरकार एवं श्री गुलाबकुंवर बा आयुर्वेद सोसाइटी, जामनगर, से आग्रहपूर्वक निवेदन करता है कि वे जामनगर में प्रारम्भ होने वाले स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम में केवल आयुर्वेदीय स्नातकों को ही प्रवेश दें।

प्रस्तावक—श्री महेन्द्रकुमार शास्त्री, बम्बई।
अनुमोदक—श्री श्रीराम शर्मा, बम्बई।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

प्रस्ताव सं० १०

यह सम्मेलन केन्द्रीय एवं प्रान्तीय सरकारों से निवेदन करता है कि वे अपने यहां किये जाने वाले सभी आयुर्वेद सम्बन्धी अनुसन्धान कार्यों में केवल उच्च कोटि के वैद्यों को ही नियुक्त करें तथा किसी भी वैद्येतर व्यक्ति को इस कार्य पर नियुक्त न करें। साथ ही इस बात का भी पूर्ण ध्यान रखें कि आयुर्वेद सम्बन्धी सभी अनुसन्धान कार्य केवल आयुर्वेदीय सिद्धान्तों के अनुसार आयुर्वेद के लिये किये जायं।

प्रस्तावक—श्री विरंचिलाल शर्मा, इस्लामपुर।
अनुमोदक—श्री नित्यानन्द सारस्वत, पिलानी।
समर्थक—श्री श्रीराम शर्मा, बम्बई।

प्रस्ताव सं० ११

यह महासम्मेलन निश्चय करता है कि एक संसदीय आयुर्वेदिक कक्षा का समारम्भ किया जाय। उक्त कक्षा के संचालन के लिए योजना-निर्माण का कार्य निम्नलिखित महानुभावों द्वारा संगठित एक समिति को सौंपा गया:—

१. श्री महासम्मेलनाध्यक्ष ।
२. श्री महासम्मेलन प्रधानमन्त्री ।
३. श्री पं० शिवशर्मा जी ।
४. श्री स्वामी चेतनानन्द जी ।

प्रस्तावक—श्री देवराज मिश्र, अमृतसर ।
अनुमोदक—श्री ए. पी. पौराणिक, मैसूर ।
समर्थक—श्री हेमचन्द्र शुक्ल, नागपुर ।

प्रस्ताव सं० १२

महासम्मेलनमेतत् आन्ध्रशासकीयाधिकारिणः प्रार्थ्यन्ते आन्ध्र देशे सर्वाङ्गलक्षणा आयुर्वेद कलाशाला शीघ्रम् प्रचालया यस्यां आन्ध्रसंस्कृतभाषयोः द्वयोरपि शिक्षा देया ।

सम्मेलनमेतत् आन्ध्रशासकीयाधिकारिणः प्रार्थ्यन्ते तदस्मिन् आन्ध्रे केन्द्रप्रदेशे सर्वलक्षणयुक्तः आयुर्वेदीयातुरालयः शीघ्रम् संस्थाप्य तत्रसर्वेष्वंकेसु ये निपुणासन्ति तांस्तान् तस्मिन् तस्मिन् नियुज्य प्रत्येकशः प्रजासु आयुर्वेदीय चिकित्सा प्रचारे नेया ।

प्रस्तावक—श्री प्रकाशचन्द्र शतपथी ।
अनुमोदक—श्री कोन्नल वेमन रेड्डि ।

RESOLUTION No. 13

This Session of the All India Ayurvedic Congress view with deep concern the disruptive role played by the Keralaya Vaidya Mandal in organising a branch of it in Malabar where the All Kerala Ayurvedic Congress has been functioning for the last eight years, and thus forging dis-content and disruption among the Vaidyas.

This Session lays down as a policy that wherever a branch or affiliated body function in a territorial basis, any other branch should refrain themselves from infringing into that territory either by forming branches or any other activities.

In the light of the above-mentioned view, this Session further request the Keralaya Vaidya Mandal to dissolve forthwith the branch they have formed in Malabar and report to that effect to the President without delay.

Proposed by : Shri K. T. Madhavan Vaidyar, Kozhikode, Kerala.
Seconded by : Shri P. Raman Kutty Varier, Kottakal, Kerala.
Passed unanimously

RESOLUTION No. 14

This Conference recommends to Central Government that instead of wasting lakhs on Research without proper foundations, they should take up the existing already proved practically efficacious well tried hereditory treatments which are well known to the profession and public alike, and prove them scientifically with modern nomenclatures thereby saving lot of time, money and energy and save millions of sufferers and show to the world that AYURVED is very much advanced already in the treatment of not only ordinary diseases but also so-called incurable diseases in which the Western so called modern system has failed miserably.

This Conference recommends to Central Government to immediately start big Hospitals side by side with the above institution and acquire the existing Ayurvedic specialists in the various diseases for the various departments to record the success and compare with that of such hospitals running on Western lines.

Proposed by : Shri K. Vemana Reddi
Seconded by : Shri P. C. Satapatty.
Passed unanimously.

प्रस्ताव सं० १५

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का यह अधिवेशन विभिन्न प्रदेशों में आयुर्वेदिक संगठन को दृढ़ करने के लिए तथा विभिन्न प्रदेशों में झगड़ों और उनकी समस्याओं का स्थायी समाधान करने के ध्येय से निश्चित करता है कि श्री महासम्मेलनाध्यक्ष जी द्वारा अपने भाषण में सुझाये गए विचारों को ध्यान में रखते हुए अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन की नियमावलि से सामन्जस्य रखते हुए प्रादेशिक आयुर्वेद सम्मेलनों एवं तदन्तर्गत जिला वैद्य सभाओं के संगठन एवं कार्यसंचालन के लिए एक आदर्श नियमावलि का निर्माण कराया जाय।

यह सम्मेलन उक्त कार्य निम्नलिखित महानुभावों द्वारा निर्मित एक समिति को सौंपता है।

१. आचार्य श्री बद्रीविशाल त्रिपाठी, कानपुर। संयोजक
२. वैद्य श्री ब्रह्मदत्त शर्मा, भुसावल।
३. वैद्य श्री पुरुषोत्तमदेव मुल्तानी, हैदराबाद।
४. श्री स्वामी चेतनानन्द जी, देहली।
५. श्री शिवकरण शर्मा छांगाणी, नागपुर।
६. श्री वनमाली दास, कटक।
७. श्री हरनाथ त्रिपाठी, कानपुर।

उक्त समिति ३० अप्रैल १९५६ तक ऐसी नियमावलि तैयार करे तथा अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन की स्थायी समिति की स्वीकृति के अनन्तर उसे चालू करने के लिए प्रादेशिक आयुर्वेद सम्मेलनों को सिफारिश की जाय।

प्रस्तावक—श्री केदारनाथ शर्मा, नागपुर।
अनुमोदक—श्री दीनदयाल तिवारी, नागपुर।
समर्थक—श्री कृष्णगोपाल, बारां (कोटा)।
सर्वसम्मति से स्वीकृत।

RESOLUTION No. 16

This 41st Plenary Session of the All India Ayurvedic Congress hereby approves and confirms the Objects Clause (Memorandum of Association) of the All India Ayurvedic Congress as amended and consequently adopted at the 39th All India Ayurvedic Congress held at Kottakal (South Malabar) in March, 1954.

Moved by : Shri Kishan Chandra Punjabi, Bombay.
Seconded by : Shri Shankar Dutt Gaur, Jabalpur.
Passed unanimously.

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन नियमावलि संशोधन सम्बन्धी प्रस्ताव

प्रस्ताव सं० १७

अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन की आर्थिक स्थिति एवं प्रतिवर्ष के घाटे को विचार में रखते हुए यह महासम्मेलन निश्चय करता है कि अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के संरक्षक, आश्रयदाता, आजीवन एवं विशिष्ट सदस्यों से दो रुपया प्रतिवर्ष पत्रिका शुल्क के रूप में लिया जाय।

प्रस्तावक—श्री गुलराज शर्मा, नागपुर।
अनुमोदक—श्री विरंचिलाल शर्मा, इस्लामपुर।
समर्थक—श्री अयोध्यानाथ शर्मा, शाहजहांपुर।
श्री केदारनाथ शर्मा, नागपुर।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

प्रस्ताव सं० १८

यदि कोई सदस्य अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन अथवा उसकी अंगभूत तथा आधीन संस्थाओं एवं उनके पदाधिकारियों के विरुद्ध किसी न्यायालय में अभियोग उपस्थित कर दे तो ऐसा सदस्य तत्क्षण महासम्मेलन तथा उसकी अंगभूत एवं आधीन संस्थाओं की सदस्यता से स्वयमेव वंचित हो जायगा।

प्रस्तावक—श्री वैद्यनाथ शर्मा, मुजफ्फरपुर।
अनुमोदक—श्री नागेशदत्त शुक्ल, जालना।
समर्थक—श्री ज्वालाप्रसाद, बोदवड।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

प्रस्ताव सं० १९

यदि कोई सदस्य अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन तथा विद्यापीठ एवं उनके पदाधिकारियों तथा अन्य सदस्यों के विरुद्ध दुर्भावना से समाचार पत्रों अथवा विरोधवर्धक अन्य साहित्य द्वारा प्रचार करेगा तो भली प्रकार जांच करने पर दोषी सिद्ध होने पर महासम्मेलन के वार्षिक अधिवेशन अथवा उसके द्वारा नियुक्त समिति को अधिकार होगा कि उसे सदस्यता से च्युत कर दे।

प्रस्तावक—श्री रामानुज स्वामी, हैद्राबाद।
अनुमोदक—श्री नाथूराम, बुरहानपुर।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

प्रस्ताव सं० २०

जो सदस्य अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन तथा विद्यापीठ की किसी सभा को बलपूर्वक भंग करने अथवा उसमें गड़बड़ी उत्पन्न करने की चेष्टा करे अथवा कराये, उसे दोषी प्रमाणित हो जाने पर महासम्मेलन की सदस्यता से पृथक् किया जायगा तथा उन सभाओं के सभापतियों को अधिकार होगा कि वे ऐसे सदस्यों को तत्काल सभा से बहिष्कृत करदें।

प्रस्तावक—श्री प्रह्लादत्त शर्मा, भुसावल।
अनुमोदक—श्री लक्ष्मणाचार्य, सिकन्दराबाद।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

प्रस्ताव सं० २१

जो पदाधिकारी पद पर रहते हुए भी महासम्मेलन अथवा विद्यापीठ के नियमों का उल्लंघन करे अथवा महासम्मेलन-विद्यापीठ अथवा अन्य पदाधिकारियों के विरुद्ध कोई कार्यवाही करे तो उसे अपने पद से स्वयमेव त्याग पत्र दे देना चाहिए। यदि कोई पदाधिकारी ऐसा करते हुए भी त्यागपत्र न दे तो प्रधान अथवा प्रधानमन्त्री यथाशक्य एक दूसरे से परामर्श करके, ऐसे पदाधिकारी को पदच्युत कर सकता है तथा स्थायी समिति द्वारा भली भांति जांच के पश्चात् ऐसे पदाधिकारी को उस पद से पृथक् किया जा सकेगा।

प्रस्तावक—श्री जी. वामनाचार्य, कोल्हापुर।
अनुमोदक—श्री बिहारीलाल, हैदराबाद।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

प्रस्ताव सं० २२

निश्चय हुआ कि स्थायी समिति के न्यूनातिन्यून अष्टमांश सदस्य प्रार्थना पत्र देकर स्थायी समिति के असाधारण अधिवेशन की मांग कर सकेंगे।

प्रस्तावक—श्री गयाप्रसाद शास्त्री, हैदराबाद।
अनुमोदक—श्री वैद्यनाथ मिश्र, मुजफ्फरपुर।
समर्थक—श्री दीनदयाल तिवारी, नागपुर।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

प्रस्ताव सं० २३

निश्चय हुआ कि स्थायी समिति के अधिवेशन के कार्यसंचालन के लिये २१ उपस्थित सदस्यों की कार्यनिर्वाहक संख्या होगी।

प्रस्तावक—श्री शिवकरण शर्मा, नागपुर।
अनुमोदक—श्री जनार्दन शर्मा, रायगढ़।
समर्थक—श्री हरनाथ त्रिपाठी, कानपुर।
श्री नागेश्वर शुक्ल, जालना।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

प्रस्ताव सं० २४

(क) निश्चय हुआ कि अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन की प्रचलित नियमावलि का नियम सं० १७ "उपनियमों का निर्माण एवं परिवर्तन" हटा दिया जाय और "उपनियमों" को 'नियम" ही माना जाय।

(ख) निश्चय हुआ कि स्थायी समिति को अधिकार दिया जाय कि अपने तथा अधीनस्थ समितियों के कार्यसंचालन के लिये संस्था के नियमों के अवरोधी उपनियम बना सके।

(ग) निश्चय हुआ कि प्रचलित नियमावलि के नियम सं० २०-घ-४ को हटा दिया जाय।

(घ) निश्चय हुआ कि महासम्मेलन के पदाधिकारी वर्ग में "प्रचारमंत्री" का एक और पद बढ़ा दिया जाय। प्रचारमंत्री का कार्य स्वीकृत योजना के अनुसार संस्था के प्रचार कार्य को अग्रसर करना होगा।

प्रस्तावक—श्री रामनिवास शर्मा, हैदराबाद।
अनुमोदक—श्री भूपेन्द्रनाथ गुप्ता, शिमला।
समर्थक—श्री रामेश्वरलाल शर्मा, जमशेदपुर।
श्री रामधन शर्मा, आगरा।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

प्रस्ताव सं० २५

संस्था के प्रधान कार्यालय का स्थान

अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन का यह प्रयत्न रहना चाहिये कि संस्था का कार्यालय एक स्थायी स्थान पर रहे और उसका निजी निवास-स्थान हो। परन्तु यदि किसी परिस्थितिवश संस्था के हित में कार्यालय का परिवर्तन उचित समझा जाय तो अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के खुले अधिवेशन के निश्चयानुसार संस्था का प्रधान कार्यालय भारत के किसी भी स्थान को परिवर्तित करके वहां स्थित किया जा सकेगा, किन्तु कार्यालय परिवर्तन सम्बन्धी किसी प्रस्ताव पर मत देने का उन दो प्रान्तों के प्रतिनिधियों को अधिकार न होगा जहां से तथा जहां को कार्यालय के परिवर्तन का प्रस्ताव विचाराधीन होगा तथा शेष मतदाताओं के न्यूनातिन्यून दो तिहाई के बहुमत से ऐसा प्रस्ताव स्वीकृत हो सकेगा।

प्रस्तावक—श्री श्रीराम शर्मा, बम्बई।
अनुमोदक—श्री जनार्दन शर्मा, रायगढ़।
समर्थक—श्री रामदेव शास्त्री, हैदराबाद।
श्री के. एन. चन्दु, बंगलौर।
श्री रामस्वरूप चक्रवर्ती, देहली।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ परीक्षा नियमावलि संशोधन सम्बन्धी प्रस्ताव

प्रस्ताव सं० २६

निश्चय हुआ कि निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ की परीक्षा नियमावलि में निम्न संशोधन परिवर्तन तथा परिवर्द्धन कर दिये जायं।

(क) परीक्षा आवेदनपत्र केवल परीक्षा शुल्क की प्राप्ति पर ही कार्यालय से भेजे जावें, दो आने के मूल्य से आवेदनपत्र लेने का नियम हटा दिया जाय।

(ख) परीक्षा आवेदन पत्र केवल उसी वर्ष के छपे हुए प्रयुक्त किये जायं। विगत वर्षों के आवेदनपत्र स्वीकार न किये जायं ।

(ग) परीक्षा तथा अन्य शुल्कों की कार्यालय में प्राप्ति की तिथि निश्चित होनी चाहिये न कि शुल्क भेजने की। डाकखाने की असावधानी या किसी अन्य कारण से यदि शुल्क निश्चित तिथि तक कार्यालय में नहीं पहुँचता तो उसके लिये कोई छूट परीक्षार्थियों को न दी जाय और न ही उसका कोई उत्तरदायित्व कार्यालय पर हो ।

(घ) चैक तथा पोस्टल आर्डर स्वीकार न किये जायं ।

(ङ) परिशिष्ट परीक्षा के लिये सितम्बर मास के अन्तिम सोमवार की तिथि निश्चित की जाय ।

(च) प्रादेशिक भाषाओं का तात्पर्य निम्नलिखित भाषाओं से ही होगा। बंगला कन्नड़, मलयालम, तेलगू, तामिल, उड़िया, गुजराती, मराठी, सिन्धी व हिन्दी ।

(छ) आवेदनपत्रों के साथ प्रसारित आवश्यक सूचना में यह स्पष्टतया उल्लेख कर देना चाहिये कि परीक्षार्थी आवेदनपत्र की पूर्ति करके उसे अपने अध्यापक द्वारा रजि-स्टर्ड डाक से नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ कार्यालय में भेजें अन्यथा डाक में गुम हो जाने की आशंका रहेगी। शुल्क तथा आवेदनपत्र किसी व्यक्तिगत नाम पर नहीं भेजे जाने चाहियें। यह भी स्पष्ट कर देना चाहिये कि रोल नं० १० मार्च तक कार्यालय से अध्यापक के पते पर भेजा जायगा और १५ मार्च से पूर्व तत्सम्बन्धी किसी पत्र का उत्तर नहीं दिया जायेगा ।

(ज) प्रमाणपत्र दिसम्बर मास की बजाय मार्च मास में प्रेषित किये जायें, ऐसा नियम में परिवर्तन किया जाय। अप्रैल मास से पूर्वतत् विषयक पत्र-व्यवहार का कोई उत्तर न दिया जावे। किन्तु आवश्यकतानुसार २ रुपये शुल्क भेजकर उप-प्रमाणपत्र मंगवाया जा सकेगा ।

(झ) परीक्षा का समय प्रतिदिन प्रातः १० बजे से १ बजे मध्यान्ह तक रखा जावे और उत्तर पुस्तकें उसी दिन डाक पार्सल द्वारा रजिस्ट्री कराई जावें ।

(ञ) परीक्षाओं के परिणाम घोषणा की तिथि जून मास का द्वितीय सोमवार निश्चित की जाय ।

(ट) विद्यापीठ के प्रधान, मंत्री, तथा आयुर्वेद के विभिन्न स्थानीय अन्य ५ विद्वानों द्वारा संगठित एक परीक्षोपसमिति बनाई जानी चाहियें जो परीक्षा सम्बन्धी सम्पूर्ण व्यवस्था करे तथा परीक्षकों, सहायक परीक्षकों, केन्द्राध्यक्षों, सहायक, केन्द्राध्यक्षों तथा निरीक्षकों आदि की नियुक्ति करे। प्रश्नपत्रों के छपने के पूर्व देख कर निश्चय करे कि प्रश्नपत्र पाठ्यक्रम के अन्तर्गत ही बनाये गये हैं। प्रश्नपत्रों की छपाई का समुचित प्रबन्ध तथा वितरण का कार्य भी इसी समिति द्वारा होना चाहिए। इस समिति के कार्य निर्वाह में सदस्यों के यात्रा आदि जो व्यय हों वह विद्यापीठ के कोष से चुकाये जायं ।

(ठ) महासम्मेलन विद्यापीठ के सभी पदाधिकारियों तथा परीक्षा समिति के सदस्यों को चुनाव के तुरन्त पश्चात् तथा कर्मचारियों, केन्द्राध्यक्षों, परीक्षकों, निरीक्षकों आदि को यथासमय एक शपथ लिखित रूप में लेनी चाहिये कि वे आयुर्वेद और आयुर्वेद-महासम्मेलन-विद्यापीठ के मान और गौरव की रक्षा करेंगे, इनके विधान एवं नियमों का दृढ़ता से पालन करेंगे तथा किसी परीक्षार्थी की अनुचित एवं अनियमित सहायता न करेंगे और न इसमें सहायक, सहयोगी अथवा मूकद्रष्टा बनेंगे ।

प्रस्तावक—नियमावलि संशोधक समिति ।

सर्वसम्मति से स्वीकृत ।

प्रस्ताव सं० २७

निश्चय हुआ कि नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ नियमावलि में सम्मानित संस्थाओं की सूची में निम्नलिखित संशोधन कर दिये जायं ।

१. सम्मानित संस्था २५ ज्वालापुर स्थित गुरुकुल महाविद्यालय की "आयुर्वेद भास्कर" परीक्षा केवल १९५५ तक ही मान्य की जाय ।

२. सम्मानित संस्थाओं की सूची में आयुर्वेद एण्ड यूनानी तिब्बिया कालेज, देहली की "भिषगाचार्य धन्वन्तरि" परीक्षा का नाम जोड़ दिया जाय ।

प्रस्तावक—श्री बदरीविशाल त्रिपाठी, कानपुर ।

अनुमोदक—श्री हरनाथ त्रिपाठी, कानपुर ।

सर्वसम्मति से स्वीकृत ।

प्रस्ताव सं० २८

यह अधिवेशन निश्चय करता है कि नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ का संगठन सम्बन्धी विधान-नियमादि एवं विद्यापीठ पदाधिकारियों के कर्तव्य आदि भी महासम्मेलन नियमावलि के अन्तर्गत प्रकाशित किये जावें, तथा विद्यापीठ की पाठ्यक्रम एवं परीक्षा नियमावलि ही स्वतंत्र रूप से पृथक् प्रकाशित की जाय । संगठन तथा परीक्षा नियमावलि में वे सब संशोधन समावेश कर दिये जायं जो आज तक विभिन्न सभाओं द्वारा स्वीकार किये गये हैं ।

प्रस्तावक—श्री श्रीराम शर्मा, बम्बई ।

अनुमोदक—श्री ब्रह्मदत्त, भुसावल ।

समर्थक—श्री हरनाथ त्रिपाठी, कानपुर ।

सर्वसम्मति से स्वीकृत ।

प्रस्ताव सं० २९

(क) निश्चय हुआ कि अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन एवं नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ की नियमावलियों में तदर्थ समिति द्वारा स्वीकृत सभी भाषा संशोधन एवं नियमों में सभी संशोधन, परिवर्तन, परिवर्द्धन एवं परिवर्जन स्वीकार एवं लागू किये जायं ।

(ख) निश्चय हुआ कि महासम्मेलन-विद्यापीठ की नियमावलियों के शेष नियम अथवा उनका कोई अंश यदि उपर्युक्त संशोधनों के प्रतिकूल हो तो उन्हें ऐसा संशोधित किया जाय कि वे इन संशोधनों के अनुकूल बैठें ।

प्रस्तावक—श्री आचार्य बदरीविशाल त्रिपाठी, कानपुर ।
अनुमोदक—श्री पुरुषोत्तमदेव मुलतानी, हैदराबाद ।
सर्वसम्मति से स्वीकृत ।

प्रस्ताव सं० ३०

क—अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का यह ४१ वां वृहत् अधिवेशन कुछ सदस्यों द्वारा देहली में ३० अक्टूबर १९५५ को की गई सभा को अनियमित, अनधिकृत, अप्रमाणित एवं अमान्य घोषित करता है तथा जिन सदस्यों ने इस सभा का आयोजन किया उनके प्रति असन्तोष एवं उनके इस अवैधानिक कार्य पर खेद प्रकट करता है ।

ख—उक्त सभा के अनियमित एवं अनधिकृत निश्चयों के आधार पर देहली के एक वैद्य श्री बालकृष्ण शर्मा ने अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन एवं निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ के बैंक अकाउण्ट्स का सन्चालन बन्द कराने के लिये क्रमशः युनाइटेड कर्माशियल बैंक तथा पंजाब नेशनल बैंक को जो पत्र लिखकर लेन-देन बन्द करवाया उनके इस कार्य को यह अधिवेशन निन्दनीय समझता हुआ उन्हें इस अपराध के लिये ३ वर्ष के लिए अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन की सदस्यता से पृथक् करता है ।

ग—उपर्युक्त प्रकार कुछ सदस्यों ने अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन को कठिनाई में डालने एवं हानि पहुंचाने का यत्न किया है, परन्तु इस पर भी यह अधिवेशन उनके विरुद्ध क्षमा-भाव से कोई कार्यवाही न करने का इस आशा से निश्चय करता है कि भविष्य में वे संस्था के प्रति अपने व्यवहार को ठीक रखेंगे । किन्तु इस पर भी यदि कोई एक या अधिक व्यक्ति अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन अथवा नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ अथवा इनके अधिकारियों पर अभियोग करके या किसी अन्य प्रकार उन्हें कठिनाई में डालें और संस्था के कार्य संचालन में बाधा डालें तो यह अधिवेशन प्रधानमन्त्री को पूर्ण अधिकार देता है कि संस्था के हित और संगठन की रक्षा के लिये वह कोई आवश्यक कार्यवाही जिसे वह उयुक्त एवं उचित समझें, करें ।

प्रस्तावक—श्री ए० वी० गदग, बेलगांव ।
अनुमोदक—श्री हरनाथ त्रिपाठी, कानपुर ।
समर्थक—श्री ईश्वरीलाल शास्त्री, हैदराबाद ।
श्री अयोध्यानाथ, शाहजहांपुर ।
श्री महेन्द्रकुमार शास्त्री, बम्बई ।
श्री देवराज शास्त्री, अमृतसर ।
सर्वसम्मति से स्वीकृत ।

प्रस्ताव सं० ३१

अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के इस ४१ वें वृहत् अधिवेशन ने युनाइटेड कमर्शियल बैंक, देहली, के पत्र सं० शून्य ता० २२। २५-११-५५ पर विचार किया है। इस सम्बन्ध में यह अधिवेशन उक्त बैंक को सूचित कर देना चाहता है कि ३० अक्टूबर ५५ को कुछ सदस्यों द्वारा कथित स्थायी समिति की जो सभा देहली में की गई थी, उसे यह अधिवेशन अनियमित, अनधिकृत, अप्रमाणित एवं अमान्य घोषित कर चुका है और अकाउण्ट संचालन में कोई बाधा उक्त बैंक द्वारा डाले जाने को भी अनियमित समझता है और घोषित करता है।

यह निश्चय हुआ कि प्रधानमन्त्री शीघ्र ही इस प्रस्ताव की कापी युनाइटेड कमर्शियल बैंक, देहली, में भिजवा कर अकाउण्ट का पुनः संचालन प्रारम्भ करें।

प्रस्तावक—श्री रामेश्वर सिंह कंवर, जालन्धर।

अनुमोदक—श्री डी० रंगाचार्युलु, गण्टूर।

प्रस्ताव सं० ३२

अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के इस ४१ वें वृहत् अधिवेशन ने पंजाब नेशनल बैंक फाउन्टेन, देहली, के पत्र सं०-५३६७-एस-एफ, ता० १०-१२-५५ पर विचार किया है। इस सम्बन्ध में यह अधिवेशन उक्त बैंक को सूचित कर देना चाहता है कि ३० अक्टूबर १९५५ को कुछ सदस्यों द्वारा कथित स्थायी समिति की जो सभा देहली में की गई थी उसे यह अधिवेशन अनियमित, अनधिकृत, अप्रमाणित एवं अमान्य घोषित कर चुका और अकाउण्ट्स संचालन में कोई बाधा उक्त बैंक द्वारा डाले जाने को भी अनियमित समझता है और घोषित करता है।

निश्चय हुआ कि प्रधानमन्त्री शीघ्र ही इस प्रस्ताव की कापी पंजाब नेशनल बैंक फाउण्टेन, देहली, में भिजवा कर अकाउण्ट्स का पुनः संचालन प्रारम्भ करें।

प्रस्तावक—श्री सीताराम मिश्र, जयपुर।

अनुमोदक—श्री बद्रीविशाल त्रिपाठी, कानपुर।

प्रस्ताव सं० ३३

निश्चय हुआ कि अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के ४२ वें वार्षिक अधिवेशन के लिये कर्नाटक आयुर्वेद मण्डल का निमन्त्रण स्वीकार किया जाय और दिसम्बर १९५६ में ४२ वां अधिवेशन कर्नाटक में सम्पन्न किया जाय।

प्रस्तावक—श्री के० एस० चन्दुर, बंगलौर।

अनुमोदक—श्री आर० शेशन, बंगलौर।

समर्थक—श्री ए० वी० गदग, बेलगाम।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

प्रस्ताव सं० ३४

निश्चय हुआ कि अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन एवं नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ के सन् १९५४-५५ वर्षीय आय-व्यय एवं सन्तुलन पत्रों को स्वीकार किया जाय।

प्रस्तावक—श्री चन्द्रशंकर रविशंकर, राजकोट।
अनुमोदक—श्री माधव प्रसाद शास्त्री, रतलाम।

प्रस्ताव सं० ३५

निश्चय हुआ कि अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन एवं निखिल भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठ के सन् १९५५-५६ के लिये निम्नलिखित आनुमानिक आय-व्यय पत्रों को स्वीकार किया जाय।

क—अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का १९५५-५६ वर्षीय आनुमानिक आय-व्यय पत्र।

व्यय		आय	
वेतन	३००० ० ०	संरक्षक सदस्यताशुल्क	२०० ० ०
मुद्रण तथा लेखन सामग्री	१५०० ० ०	आश्रयदाता सदस्यताशुल्क	२०० ० ०
डाक तथा तार व्यय	१००० ० ०	आजीवन सदस्यताशुल्क	१२०० ० ०
यातायात व्यय	७५ ० ०	मान्य सदस्यता शुल्क	१०,००० ० ०
यात्रा व्यय	१००० ० ०	मूल सदस्यता शुल्क	२०० ० ०
कार्यालय किराया	९०० ० ०	संस्था सम्बद्धता शुल्क	६५० ० ०
आडिट व्यय	५० ० ०	विविध आय	१० ० ०
मिश्रित व्यय	१०० ० ०	व्याज	२५०० ० ०
वैंक व्यय	५० ० ०	पुस्तक तथा पत्रिका व्यय	२४० ० ०
विद्युत व्यय	२५ ० ०	पत्रिका विज्ञापन	३००० ० ०
वट्टा खाता	२०० ० ०	प्रतिनिधि शुल्क	२०० ० ०
उपकरण पर घटती	१०० ० ०		१८४०० ० ०
पत्रिका कागज व्यय	२५०० ० ०		
पत्रिक मुद्रण व्यय	४५०० ० ०		
पत्रिका वेतन व्यय	२००० ० ०		
पत्रिका यात्रा व्यय	१०० ० ०		
पत्रिका यातायात व्यय	२५ ० ०		
पत्रिका डाक व्यय	१००० ० ०		
पत्रिका मुद्रण तथा लेखन	७५ ० ०		
कर्मचारी रक्षा कोष	२०० ० ०		
	१८४०० ० ०		१८४०० ० ०

प्रस्तावक—श्री वेणीमाधव शास्त्री, नागपुर।
अनुमोदक—श्री पाण्डुरंग शिवराम गोण्डुये, दमोह।
सर्वसम्मति से स्वीकृत।

ख—निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ का १९५५-५६ वर्षीय आनुमानिक आय-व्ययपत्र

व्यय		आय	
वेतन	१०,००० ० ०	आयुर्वेदाचार्य परीक्षा शुल्क	४५०० ० ०
मुद्रण तथा लेखन सामग्री	१५०० ० ०	वैद्याचार्य "	२००० ० ०
डाक तथा तार व्यय	१५०० ० ०	आयुर्वेद विशारद "	४५०० ० ०
केन्द्र तथा परीक्षण	२५०० ० ०	वैद्य विशारद "	२५०० ० ०
यात्रा व्यय	१००० ० ०	आयुर्वेद भिषक् "	८००० ० ०
आडिट व्यय	१०० ० ०	विलम्ब शुल्क	१५०० ० ०
रेलवे पार्सल	२०० ० ०	गुणांक तथा पुनः संशोधन	७०० ० ०
यातायात	१२५ ० ०	रजिस्ट्रेशन शुल्क	२००० ० ०
बैंक व्यय	२५ ० ०	संस्था सम्बद्धता	३७५ ० ०
कर्मचारी रक्षा कोष	३०० ० ०	उपप्रमाण पत्र तथा प्रमाणपत्र प्रति०	२५० ० ०
उपकरण पर घटती	२५० ० ०	विद्यापीठीय प्रकाशनों की बिक्री से आय	१००० ० ०
मिश्रित व्यय	१०० ० ०	व्याज	३५० ० ०
कार्यालय किराया	९०० ० ०	मिश्रित	१५० ० ०
आय की व्यय से अधिकता	९३२५ ० ०		
	२७८२५ ० ०		२७८२५ ० ०

विशेष—आयुर्वेद विद्यापीठ कार्यालय के लिये एक गौडरेज आयरन सेफ खरीदने के लिये ३५० रुपये तक स्वीकृति किये गये।

प्रस्तावक—श्री हरनाथ त्रिपाठी, कानपुर।
अनुमोदक—श्री चन्द्रमणिप्रसाद, रीवां।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

प्रस्ताव सं० ३६

निश्चय हुआ कि आगामी ५ वर्ष के लिये अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन की निधि समिति की सदस्यता के लिये निम्नलिखित ६ महानुभावों को निर्वाचित किया जाय :—

१. श्री गंगाधर विष्णु शास्त्री पुराणिक, पनवेल।
२. श्री जीवराम कालिदास शास्त्री, गौण्डल।
३. श्री जयरामदास स्वामी, जयपुर।
४. श्री हरिरञ्जन मजुमदार, बनारस।
५. श्री ठाकुरदत्त शर्मा, देहरादून।
६. श्री शिवनाथ शर्मा, देहली।

प्रस्तावक—श्री रामेश्वरसिंह कंवर, जालन्धर।
अनुमोदक—श्री ब्रह्मदत्त शर्मा, भुसावल।
समर्थक—श्री हरनाथ त्रिपाठी, कानपुर।
श्री रामस्वरूप चक्रवर्ती, देहली।
श्री देवराज शास्त्री, अमृतसर।
श्री चन्द्रमणि प्रसाद, रीवाँ।

सर्वसम्मति से स्वीकृत

प्रस्ताव सं० ३७

४१ वें अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन द्वारा निर्वाचित पदाधिकारियों की सूची।

(क) अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन :—

१. अध्यक्ष—श्री वाई. पार्थनारायण पण्डित, बेंगलौर।
२. उपाध्यक्ष—१. श्री बद्रीविशाल त्रिपाठी, कानपुर।
२. अध्यक्ष जी को नियुक्ति का अधिकार दिया गया।
३. प्रधानमन्त्री—श्री वामनराव दीनानाथ वैद्य, बम्बई।
४. संयुक्त मन्त्री—क० श्री केशवप्रसाद आत्रेय, देहली।
५. सहायक मन्त्री—१. श्री शान्तिप्रसाद जैन, देहली।
२. श्री वैद्यनाथ मिश्र, मुजफ्फरपुर।
३. श्री रामा शास्त्री, बंगलौर।
४. श्री किशनचन्द्र जी पंजाबी, बम्बई।
६. प्रचारमन्त्री—श्री प्रधानजी को नियुक्ति का अधिकार दिया गया।
७. कोषाध्यक्ष—श्री शिवनाथ शर्मा, देहली।
८. प्रधानसम्पादक—श्री स्वामी चेतनानन्द जी, देहली।
९. सहसम्पादक—श्री प्रधान सम्पादक को नियुक्ति का अधिकार दिया गया।
१०. संस्कृत विभाग सम्पादक—कविराज श्री उपेन्द्रनाथ दास, देहली।

(ख) निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ :—

१. अध्यक्ष—श्री भिकाजी विनायक डेग्वेकर, जबलपुर।
२. उपाध्यक्ष—१. श्री वी. बी. नटराज शास्त्री, त्रिचनापल्ली।
२. श्री मोहनलाल शास्त्री, देहली।
३. मन्त्री—श्री पं० नानकचन्दजी शास्त्री, देहली।
४. उपमन्त्री—१. श्री शंकरदत्त गौड, जबलपुर।
२. श्री पं० सीताराम मिश्र, जयपुर।
५. कोषाध्यक्ष—श्री शिवनाथ शर्मा, देहली।

प्रस्तावक—श्री शिवकरण शर्मा छांगाणी, नागपुर।
अनुमोदक—श्री विरंचिलाल शर्मा, इस्लामपुर।
समर्थक—श्री दीनदयाल तिवारी, नागपुर।
" श्री अयोध्यानाथ शाहजहांपुर।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

प्रस्ताव सं० ३८

अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन का यह अधिवेशन निश्चय करता है कि १. अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन, २. नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ तथा तदन्तर्गत सभी बैंक अकाउण्ट्स

१. महासम्मेलन प्रधानमन्त्री, श्री वामनराव दीनानाथ जी।
२. विद्यापीठ मन्त्री, श्री पं० नानकचन्द्र जी।
३. विद्यापीठ उपाध्यक्ष, श्री मोहनलाल शर्मा, तथा
४. कोषाध्यक्ष, श्री शिवनाथ शर्मा,

में से कोई दो व्यक्ति एक साथ हस्ताक्षर करके चलायेंगे।

प्रस्तावक—श्री गुलराज शर्मा, नागपुर।
अनुमोदक—श्री गयाप्रसाद शास्त्री, हैदराबाद।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

प्रस्तात सं० ३९

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन मान्य सदस्यों में से निर्वाचित स्थायी समिति के ५० सदस्य

१. श्री बैकुण्ठनाथ देव अधिकारी, गुहाटी। २. श्री एम० वेंकट शास्त्री, विजयवाड़ा। ३. श्री पी० वी० एस० शर्मा, कर्नूल। ४. श्री जी० सुब्रह्मण्यम शास्त्री, काकीनाड़ा। ५. श्री एम० डोडयाचार्युलु, रेनीगुण्टा। ६. श्री पूर्णचन्द्र रथ, पुरी। ७. श्री विश्वेश्वरदयाल शास्त्री, कटक। ८. श्री अयोध्यानाथ द्विवेदी, शाहजहांपुर। ९. श्री राधाकृष्ण, कानपुर। १०. श्री अमरनाथ औदीच्य, देहरादून। ११. श्री रोशनलाल शास्त्री, जम्मू। १२. श्री जानकीनाथ धार, श्रीनगर। १३. श्री भुवनचन्द्र जोशी, देहली। १४ श्री मनोहरलाल, देहली। १५. श्री घनानन्द पन्त, देहली। १६. श्री काशीनाथ शर्मा, नगीना। १७. श्री गौरीदत्त, अमृतसर। १८. श्री देवदत्त, पठानकोट। १९. श्री ऋषिराम शर्मा, होश्यारपुर। २०. श्री वी० वी० शास्त्री, नाभा। २१. श्री जगदीशप्रसाद शर्मा, महेन्द्रगढ़। २२. श्री प्यारेलाल शर्मा, बम्बई। २३. श्री सोमेश्वर मयाशंकर भट्ट, बम्बई। २४. श्री दत्तात्रेय शास्त्री जलूकर, नसीराबाद। २५. श्री धनजी भाई के० ठाकुर, बम्बई। २६. श्रीमति लक्ष्मीबाई बोरवणकर, बम्बई। २७. श्री माधव गणेश जोशी, पूना। २८. श्री कालीदास चटोपाध्याय, कलकत्ता। २९. श्री मनोरंजन वेदान्ततीर्थ, कलकत्ता। ३०, श्री वैद्यनाथ उपाध्याय, साईन। ३१. श्री सरयूकांत झा, धरहरा। ३२. श्री रामोदार मिश्र, मुजफ्फरपुर। ३३. श्री गिरजाशंकर प्रसाद, बरौनी। ३४. श्री केदारनाथ शर्मा, नागपुर। ३५. श्री छगन

लाल शर्मा, रायपुर। ३६. श्री नारायण रामचन्द्र शुक्ल, वर्धा। ३७. श्रीलक्ष्मीनारायण शर्मा, सेलू। ३८. श्री वेणीमाधव जोशी, नागपुर। ३९. श्री रामगोपाल शर्मा, किन्हीराजा। ४०. श्री केसरीलाल व्यास, उज्जैन। ४१. श्री ग० न० ओखदे, ग्वालियर। ४२. श्री वी० बी० नटराज शास्त्री, त्रिचनापली। ४३. श्री आई० वी० शर्मा, मद्रास। ४४. श्री के० एन० चन्दू, बंगलौर। ४५. श्री ए० वी० गदग, बेलगांव। ४६. श्री पद्मनाभ शास्त्री, बीकानेर। ४७. श्री ओंकारदत्त, नवलगढ़। ४८. श्री रामानुज स्वामी, हैदराबाद। ४९. श्री गयाप्रसाद शास्त्री, हैदराबाद। ५० श्री राधाकृष्ण द्विवेदी, हैदराबाद।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

प्रस्ताव सं० ४०

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन कार्यकारिणी समिति के ५० निर्वाचित सदस्य

१. श्री उदयचन्द्र भट्टारक, जोधपुर। २. श्री कृष्णकान्त नागर, मथुरा। ३ श्री ख्यालीराम द्विवेदी, इन्दौर। ४. श्री गंगाधर विष्णु शास्त्री पौराणिक, पनवेल। ५. श्री ठाकुरदत्त शर्मा, देहरादून। ६. श्री नारायणदत्त, हैदराबाद। ७. श्री प्रभाकर चटर्जी, कलकत्ता। ८. श्री प्रतापसिंह वैद्यरत्न, बनारस। ९. श्री बांकेलाल गुप्त, विजयगढ़। १०. श्री यादव जी त्रिक्रम जी आचार्य, बम्बई। ११. श्री रामदयालु जोशी, पटना। १२. श्री हरिरंजन मजुदार, बनारस। १३. श्री के० परमेश्वरम पिल्ले, त्रिवेन्द्रम। १४. श्री डी० रंगाचार्युलु, गंटूर। १५. श्री ब्रह्मदत्त शर्मा, भुसावल। १६. श्री माधव प्रसाद, रतलाम। १७ श्री वासुदेव शास्त्री, उज्जैन। १८. श्री वी० सुब्रह्मण्यम, श्रीरंगम। १९. श्री वैद्यनाथ मिश्र, मुजफ्फरपुर। २०. श्री शंकरदत्त गौड, जबलपुर। २१. श्री शिवशर्मा, बम्बई। २२. श्री अम्बालाल शास्त्री, अजमेर। २३. श्री नोरीराम शास्त्री, विजयवाड़ा। २४. श्री गोविन्द प्रसाद, डिबरूगढ़। २५. श्री गणेशदत्त शास्त्री, मेरठ। २६. श्री नन्दकिशोर पाठक, मथुरा। २७. श्री विश्वनाथ, जम्मू। २८. श्री उपेन्द्रनाथ दास, देहली। २९. श्री केशव प्रसाद आत्रेय, देहली। ३०. श्री कैलाशचन्द्र अग्रवाल, देहली। ३१. श्री रामस्वरूप चक्रवर्ती, देहली। ३२. श्री भुवनचन्द्र जोशी, देहली। ३३. श्री रामेश्वरसिंह कंवर, जालंधर। ३४. श्री रामप्रसाद वैद्यरत्न, पटियाला। ३५. श्री कृष्णशास्त्री कवड़े, पूना। ३६. श्री हरिदत्त शास्त्री, बम्बई। ३७. श्री श्रीराम शर्मा, बम्बई। ३८. श्री डी० ए० हल्सीकर, हुबली। ३९, श्री गुलराज शर्मा, नागपुर। ४०. श्री शिवकरण शर्मा छांगाणी, नागपुर। ४१. श्री पी० कुट्टीरमण वारियार, कोट्टकल। ४२. श्री एन० एस० मूस, कोट्टायम। ४३. श्री आर० शेशन, बंगलोर। ४४. श्री हरिशंकर प्रसाद पाठक, बरौनी। ४५. श्री जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल, प्रयाग। ४६. श्री विजयकाली भट्टाचार्य, कलकत्ता। ४७. श्री सीताराम मिश्र, जयपुर। ४८. श्री जयरामदास स्वामी, जयपुर। ४९. श्री रामानुज स्वामी, हैदराबाद। ५०. श्री राधाकृष्ण, हैदराबाद।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

प्रस्ताव सं० ४१

निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ कार्यकारिणी समिति के ५० निर्वाचित सदस्य।

१. श्री एम० वेंकटशास्त्री, विजयवाड़ा। २. श्री पी० वी० एस० शर्मा, करनूल। ३. श्री जगदीश्वर शर्मा, गोहाटी। ४. श्री वैकुण्ठनाथदेव अधिकारी, गौहाटी। ५. श्री गोविन्द चन्द्र रथ, बरगढ़। ६. श्री बनमालीदास, कटक। ७. श्री बदरीविशाल त्रिपाठी, कानपुर। ८. श्री रामधन शर्मा, आगरा। ९. श्री बाबूराम शर्मा, हापुड़। १०. श्री अमरनाथ औदीच्य, देहरादून। ११. श्री गणेशदत्त शास्त्री, मेरठ। १२. श्री विश्ववाथ शर्मा, जम्मू। १३. श्री जानकीनाथ धर, श्रीनगर। १४. श्री उपेन्द्रनाथ दास, देहली। १५. श्री घनानन्द पन्त, देहली। १६. श्री केशवप्रसाद आत्रेय, देहली। १७. श्री कैलाशचन्द्र अग्रवाल, देहली। १८. श्री परमानन्द वैद्यरत्न, देहली। १९, श्री प्रेमचन्द शास्त्री, देहली। २०. श्री रामस्वरूप चक्रवर्ती, देहली। २१. श्री स्वामी चेतनानन्द, देहली। २२. श्री भूवनचन्द्र जोशी, देहली। २३. श्री रामचन्द्र त्रिपाठी, देहली। २४. श्री रामेश्वरसिंह कंवर, देहली। २५ श्री प्रकाशनाथ तिवाड़ी, जालन्धर। २६. श्री देवराज मिश्र, अमृतसर। २७. श्री कुन्दनलाल, लुधियाना। २८. श्री मुन्शीराम शर्मा, भटिण्डा। २९. श्री वी० वी० शास्त्री, नाभा। ३०. श्री हरिदत्त शास्त्री, बम्बई। ३१. श्री श्रीराम शर्मा, बम्बई। ३२. श्री ज्वालाप्रसाद शर्मा, बोदबड। ३३. श्री लक्ष्मीशंकर रामकृष्ण शास्त्री, अहमदाबाद। ३४. श्री एम. विश्वेश्वर शास्त्री, मद्रास, ३५ श्री पी. कुट्टीरमन वारियार, कोट्टकल। ३६. श्री दामोदर अनन्त हलसीकर, हुबली। ३७. श्री पी. डी. मुले, अमरावती। ३८. श्री जनार्दन शर्मा, रायगढ़। ३९. श्री गुलराज शर्मा, नागपुर। ४०. श्री दीनयाल त्रिपाठी, नागपुर। ४१. श्री नारायणदत्त त्रिपाठी, इन्दौर। ४२. श्री कालूशंकर चतुर्वेदी, इन्दौर। ४३. श्रीमणिराम शर्मा, रतनगढ़। ४४. श्री नित्यानन्द सारस्वत, पिलानी। ४५. श्री जयराम दास, स्वामी, जयपुर। ४६. श्री विरंचिलाल शर्मा, इस्लामपुर। ४७. श्री रामदेव ओझा, मुजफ्फरपुर। ४८. श्री हरि नारायण चतुर्वेदी, पटना। ४९. श्री विजयकाली भट्टाचार्य, कलकत्ता। ५०. श्री कालीदास चट्टोपाध्याय, कलकत्ता।

सर्वसम्मति से स्वीकृत।

PROCEEDINGS OF THE GENERAL BODY MEETING.

A meeting of the General Body of the All India Ayurvedic Congress was held in the Hall of Coles High School, Andhra State, on the 29th of December, 1955, at 9 p.m., to consider letter No. 8796 dated 21st November, 1955, of the Registrar of Companies, Punjab, in which he had suggested that the changes made in the objects' clause of the All India Ayurvedic Congress by the 39th All India Ayurvedic Congress, Kottakal, South Malabar, in March, 1954, be

confirmed again by General Body meeting of the Association. Shri Dr. Y. Parthanarayana Pandit, President of the All India Ayurvedic Congress, presided over the General Body meeting.

After due deliberations, the following Resolution was passed unanimously :

"This General Body meeting of the All India Ayurvedic Congress hereby approves and confirms the Objects' Clause of the All India Ayurvedic Congress as amended and consequently adopted at the 39th All India Ayurvedic Congress held at Kottakal, South Malabar, in March, 1954".

Moved dy the Chair and passed unanimously.

It was further resolved that the aforesaid Resolution be finally moved for adoption in the open Session of the 41st All India Ayurvedic Congress to be held at Osmania College Buildings, Kurnool, from the 29th to 31st December, 1955.

After a vote of thanks to the Chair and the members attending, the meeting was adjourned late in the night.

VAMANRAO D. VAIDYA,
General Secretary,
All India Ayurvedic Congress.

Delhi, January 10, 1956.

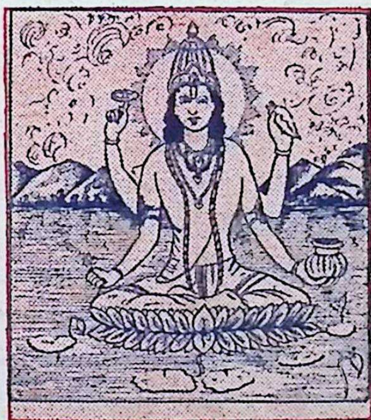
Editor-in-Chief Swami Chetnanand.

अ०भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के लिए कविराज स्वामी चेतनानन्द द्वारा प्रकाशित,

आयुर्वेद

महासम्मेलन पत्रिका

यथा खरश्चन्दनभारवाही भारस्य वेत्ता न तु चन्दनस्य ।
तथा हि शास्त्राणि बहून्यधीत्य चार्थेषु मूढाः खरवद्वहन्ति ॥
—सुश्रुत



मार्च १९५६

फाल्गुन २०१२

प्रधान सम्पादक :
कविराज स्वामी चेतनानन्द चिदाकाशी आयुर्वेदालंकार

शुद्ध बंसलोचन



बंसलोचन अपने प्रभावकारी गुणों के कारण आयुर्वेद जगत में विशेष प्रचलित है तथा वृद्ध, बाल, युवा, स्त्री-पुरुष प्रायः इसका सेवन करते हैं। जावा, सुमात्रा के सघन जंगलों में बड़े कष्ट से बांस से निकाली जाने वाली यह औषधि तबासीर अथवा बांस कपूर के नाम से भी प्रसिद्ध है। इसमें कैलशियम प्रचुर मात्रा में होती है। स्त्रियों में गर्भावस्था के कारण बहुधा कैलशियम की कमी होकर रक्त संचार धीमा पड़ जाता है जिससे रक्ताल्पता, मुखपर पीलापन, आलस्य, किसी कार्य में मन न लगना तथा क्षय आदि भयकर रोग हो जाते हैं—ऐसी अवस्था में बंसलोचन का सेवन अनिवार्य रूप से करना चाहिये। यह कैलशियम की कमी का पूरक तथा बलवर्धक भी है। प्रसवके पश्चात् माता और शिशु दोनों स्वस्थ और सुगठित रहते हैं।

बंसलोचन दूध अथवा मधु के साथ देने से बच्चों की अस्थियों को पुष्टि तथा बढ़ाव को प्रोत्साहन देता है। युवकों के लिये अति पौष्टिक वीर्यवर्धक है और वृद्धों को भी विशेष शक्ति प्रदान करता है। प्रकृति की मानव को यह अदभुत व अमूल्य देन है। किन्तु दुख का विषय है कि आज बाजार में विशुद्ध बंसलोचन का मिलना असम्भव ही हो गया है—सोडा सिलीकेट (जिससे साबुन बनता है) तथा सल्फेट आफ अमोनिया जैसी अखाद्य एवं हानिकर वस्तुओं से बनाया नकली बंसलोचन ही प्रायः मिल रहा है। ऐसी नकली वस्तुओं के प्रचलन से ही आयुर्वेद कलंकित होता है।

हमें जनता का पूर्ण विश्वास, रुचि व आयुर्वेद के प्रति प्रेम मिल सकता है यदि हमारे देश के वैद्य एवं औषधि निर्माण शालायें अपने कर्त्तव्य को समझें और लोभ का त्यागकर पूर्ण विशुद्धता की ओर ध्यान दें। इसी दृष्टिकोण को लेकर हमने बाँस से निकला हुआ बाँस के जंगल मार्का असली वंसलोचन सील बन्द डिब्बों में बेचना प्रारम्भ कर दिया है जिससे जनता अखाद्य तथा हानिकारक नकली बंसलोचन से बच सके। जनता, वैद्य तथा निर्माण संस्थाओं से हमारा अनुरोध है कि वे अपनी औषधियों के लिये लखपतराय सम्पत राय साध कलकत्ते वालों का बाँस मार्का असली बंसलोचन ही दुकानदारों से माँगे। पाव आध पाव के पैकिंग में सर्वत्र प्राप्य है। जनता के हितार्थ सं० १८८७ से निरन्तर सेवारत एकमात्र असली वंसलोचन का कारखाना

लखपतराय सम्पतराय साध, कलकत्ता—७

॥ धन्वन्तरये नमः ॥

यत्प्रभापटलोद्भासि भासतेऽद्यापि भारतम् ।
आयुर्वेदात्मकं ज्योतिः शाश्वतं नः प्रकाशताम् ॥

आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका

(अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन का मासिक मुख-पत्र)

प्रधान सम्पादक—कविराज स्वामी चेतनानन्द चिदाकाशी आयुर्वेदालंकार

पत्रिका कार्यालय—महालक्ष्मी मार्केट, चांदनी चौक, देहली ।

तार का पता "आयुर्वेद" दिल्ली

वर्ष ४४ अंक ३ | दिल्ली, फाल्गुन २०१२, मार्च १९५६ | वार्षिक ५) एकप्रति ।।)



वैद्य समाज का अपमान

इन्द्रप्रस्थीय वैद्यसभा तथा देशी रजिस्टर्ड चिकित्सक मण्डल दिल्ली ने दिल्ली के रजिस्ट्रेशन बोर्ड द्वारा वैद्यसमाज के साथ जो अन्याय तथा अपमानजनक व्यवहार किया जा रहा है उसका डट कर मुकाबिला करने की पत्रों द्वारा प्रेरणा दी है। दिल्ली राज्य सरकार ने वैद्यों पर प्रतिवर्ष १०) रजिस्ट्रेशन नवीकरण शुल्क के रूप में देने का टैक्स लगाया हुआ है। वैद्यों को यह नोटिस दिया गया था कि यह नवीकरण शुल्क २९-२-५६ तक जमा करायें अन्यथा उनका नाम रजिस्टर से काट दिया जायगा।

इस अन्यायपूर्ण परिस्थिति को सुलझाने के ध्येय से इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा का एक प्रतिनिधि मंडल दिल्ली राज्य के स्वास्थ्य मंत्री डाक्टर युद्धवीर सिंह से मिला तथा उनके सामने यह मांग रखी कि यह नवीकरण शुल्क जब कि डाक्टरों से नहीं लिया जाता तो फिर वैद्यों से ही क्यों लिया जाता है। यह दिल्ली के वैद्यों के साथ अन्याय तथा उनका अपमान है। अतः इस प्रतिबंध को हटा देना चाहिए। किन्तु इसका कुछ परिणाम नहीं निकला। डाक्टर साहब के कान पर जूं तक भी न रेंगी और उन्होंने कह दिया कि यह नवीकरण शुल्क तो देना ही पड़ेगा।

डाक्टर साहब जब दिल्ली राज्य के मंत्री बने थे उस समय इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा के प्रतिनिधि मण्डल को यह विश्वास दिलाया था कि वे सितम्बर १९५५ के बजट में आयुर्वेद और यूनानी को कुछ रकम दिला देंगे। बड़ी रकम १९५६ के बजट में स्वीकार करा दी जायेगी। किन्तु जान पड़ता है कि केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय का कुछ प्रभाव डाक्टर

साहब पर भी पड़ गया है। मंत्री बनने से पूर्व उनमें आयुर्वेदिक पद्धति से काफी सहानुभूति तथा सहयोग की भावना थी किन्तु मंत्री पद सम्भालते ही एक दम कायापलट हो गया। डाक्टर साहेब में यह परिवर्तन स्वयं डाक्टर जी ले आये हों ऐसा नहीं दीखता—यह गद्दी का प्रभाव है। डाक्टर साहब स्वयं विदेशी चिकित्सक नहीं हैं। देशी चिकित्सा के महत्व से भली प्रकार परिचित हैं। उसमें उनकी आस्था भी है। वे यह भी जानते हैं कि उनकी गद्दी अमर गद्दी नहीं है। अपने देश के हित एवं जन-कल्याण का ध्यान उन्हें अवश्य रखना चाहियें। अपने जीवन में जनहित का उन्हें अनुभव भी बहुत है। जनता जनार्दन की सेवा के लिए जलवायु के अनुकूल आयुर्वेद तथा यूनानी पद्धतियों का सम्मान उन्हें करना चाहिए। राज्य सरकार इन बातों में स्वतन्त्र है। उसको अपनी स्वदेशी चिकित्सा को अपना कर राष्ट्र पिता महात्मा गांधी जी के आदर्शों को पूरा करना चाहिए।

यह प्रसन्नता की बात है कि देहली बोर्ड के सदस्यों तथा वैद्य समाज ने अभी तक नवीकरण शुल्क नहीं दिया है। इस साहस पूर्ण कदम के लिए हम उन्हें बधाई देते हैं। हमें विश्वास है कि वह दृढ़तापूर्वक अपने प्रति किये जाने वाले इस अन्याय का डटकर मुकाबला करेंगे।

केन्द्रीय स्वास्थ्य मन्त्रिणी जी को पीलिया से परेशानी

पाठकों को स्मरण होगा कि कुछ दिन पूर्व स्वास्थ्य मन्त्रिणी जी ने लोकसभा में सदस्यों के इस आरोप का कि देहली में पीलिया रोग दूषित जल के कारण फैला है, प्रतिवाद करते हुए कहा था कि दूषित जल के कारण नहीं बल्कि आलू, कचालू, चाट, चटनी, छोले, छलियां, मिर्च, मसाले आदि के कारण यह रोग फैला है। हम ने कई बार जनता से अपील की; लेकिन जनता ने हमारा साथ नहीं दिया। लोकसभा के सदस्य तथा राष्ट्र की जनता इस असत्य भाषण पर बड़ी ही क्षुब्ध हुई। उपर्युक्त खान-पान की वस्तुओं को हम परम्परा से खाते आये हैं तब तो हम को कुछ नहीं हुआ। अब कैसे इतने उग्र रूप में हम पर इस रोग का आक्रमण हुआ? मुझे स्वयं अच्छे पढ़े लिखे समाज ने यही बताया कि उन्हें स्वास्थ्य मन्त्रिणी जी के इस कथन पर विश्वास नहीं आया, और स्वास्थ्य मन्त्रिणी जी ने अपने कार्यालय के डाक्टरों की ओर से बनाकर दिए हुए वक्तव्य को ही वहां पर दोहरा दिया है जिससे काफी इन्हें भुगतना पड़ेगा। वही अब सबने देख लिया कि उस असत्य भाषण का यह असर हुआ।

भला हो पीलिया आयोग का, जिसने अपनी रिपोर्ट में वास्तविकता का उद्घाटन कर स्वास्थ्य मन्त्रिणी के नाक में दम कर दिया है। उनके पैर उखड़ गये हैं। अपने लिए कहीं शरण-स्थल न पाकर दुःखी मन से क्षमा मांगते हुए उन्होंने कहा कि मुझे इस पीलिया ने जितना परेशान और दुःखी किया उतना किसी ने नहीं किया। हमें तो दुःख इस बात का है कि स्वास्थ्य मन्त्रिणी जी असत्य भाषण करने में इतनी प्रवीण होती जा रही हैं कि अब उनका मन किसी वास्तविक सचाई को नहीं देख सकता। मानो पीलिया ने उन्हीं को पीलिया कर दिया हो। बार-बार सदन में कहती रहीं कि ७००० सात हजार और कई सौ पीलिया रोग से ग्रसित हुए जबकि सदस्यों ने कई बार कहा कि

यह संख्या ठीक नहीं। उत्तर में आपने कहा कि जो रोगी हमारे यहाँ आते हैं हम उन्हीं की गणना करते हैं। अब जबकि माननीय मोहनलाल सक्सेना ने मुँह पर मारते हुए यह शब्द कहे कि ७००० सात हजार न होकर ४०००० चालीस हजार से ऊपर लोगों को पीलिया का शिकार होना पड़ा तो वे सकपका गई।

हमें तो यही कहना है कि श्री स्वास्थ्य मन्त्रिणी जी की यह परेशानी स्वयं उन्हीं की पैदा की हुई है और वे स्वयं ही उससे परेशान हो रही हैं। परन्तु क्या कहें ?

"घर के चिराग ही ने घर को जला के मारा।"

स्वास्थ्य मंत्रिणी द्वारा राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति की अवहेलना

पाठक महोदय इस ताजे समाचार को अभी न भूले होंगे कि श्री स्वास्थ्यमंत्रिणी राजकुमारी जी ने 'आल इण्डिया इंस्टिट्यूट आफ मेडिकल साइंसिज बिल' नामक बिल को स्वीकार कराया है। जिस घृणित रूप और शीघ्रता से यह पास कराया यह भी सबको ज्ञात है। सभासदों में इसमें बड़ी धांधली फैली और विवश होकर उनकी इस चाल का डटकर विरोध किया गया और उनसे कहा गया कि आपने इस बिल में आयुर्वेद आदि देशी चिकित्सा पद्धतियों को स्थान क्यों नहीं दिया। आपके इससे इतना द्वेष करने का क्या कारण है ? मन्त्रिणीजी ने सदा की भांति उत्तर दिया कि आयुर्वेद के प्रति हमारा कोई द्वेष नहीं। एक सदस्य के कहने पर कि आयुर्वेद की शिक्षा जर्मनी तथा अन्य विदेशों में भी दी जाती है।" सदन के अनेक सदस्यों ने सिंहनाद करते हुए कहा "पर भारत में नहीं"। फिर सदस्यों के उत्तर में मन्त्रिणी जी बोलीं कि इस बिल में केवल आधुनिक विज्ञानको ही स्थान मिलेगा। जिसको हम वैज्ञानिक मानते हैं। अर्थात् यह शाला केवल ऐलोपैथी की ही होगी। आयुर्वेद यूनानी या होम्योपैथी आधुनिक विज्ञान न होने के कारण उनका इसमें स्थान नहीं होगा। इस उत्तर से सभा सदस्य बहुत क्षुब्ध हुए और उनमें अपने देश के लिए सम्मान और इस विधेयक के प्रति विरोध जागृत हो उठा तथा सदन के वयोवृद्ध प्रतिष्ठित और पुराने कांग्रेसी सदस्य पं० ठाकुरदास भार्गव ने स्वास्थ्य मन्त्रिणी पर दुखित मन से आयुर्वेद के प्रति सौतेला व्यवहार करने का आरोप लगाते हुए कहा "वे बिना हया या शर्म के कहती हैं कि आयुर्वेद विज्ञान नहीं है, यह हमारी राष्ट्रीय बेइज्जती है।"

भूतपूर्व पुनर्वासमन्त्री श्री मोहनलाल सक्सेना ने पूछा कि जामनगर अनुसंधान शाला वगैरह के लिए जो ४७ लाख सरकार ने स्वीकृत किये थे उसमें से केवल १० लाख खर्च करके बाकी धनराशि क्यों बचाई गई है।

स्वास्थ्य मन्त्रिणी ने उत्तर दिया कि वैद्य लोग कोई योजना हमारे पास बनाकर नहीं भेजते। इस पर लोक सभा के अनेक सदस्य गण बोल उठे "नहीं नहीं", "यह सत्य नहीं"।

मुझे आशा है कि स्वास्थ्य मन्त्रिणी जी के इस असत्य उत्तर की निर्भीक प्रवीणता में सिद्धि प्राप्ति की योग्यता पर कोई भी विश्वविद्यालय नई उपाधि स्वीकार कराकर इन्हें अवश्य सम्मानित करेगा।

अब हमें कोई बताये कि जान-बूझकर सोने वाले मन मचले को कोई जगा सकता है ? आयुर्वेद की बड़ी-बड़ी योजनायें आयुर्वेद संसार के महारथियों द्वारा बार-बार पेश की गई हैं। बिचारे वैद्य लोग स्वास्थ्य मंत्रालय के चक्कर काट-काट कर निराश हो चले हैं और यह कहती हैं कि वहां कोई योजना पहुंची ही नहीं है।

कहना तो स्पष्ट यह चाहिये था कि इस धन को लूटने वाले जितने मुझे मेरे समर्थक डाक्टर मिल गये उतने पर मैंने यह खर्च करा दिया अधिक मेरे आदर्श के अनुसार न मिलने के कारण यह धनराशि रह गई है।

महामहोपाध्याय रसायनाचार्य जी का स्वर्गवास

आयुर्वेद समाज के प्रसिद्ध वैद्य रसायनाचार्य तथा वनौषधि विज्ञान के विशेषज्ञ ज्ञाता श्री पंडित भागीरथ स्वामी का देहावसान ता० २० फरवरी को प्रातः ४ बजे पंडित रामनारायण शर्मा वैद्य, झांसी, के निवास स्थान पर हुआ। शरीर त्याग के समय स्वामी जी की आयु ८० साल के लगभग थी।

आपके शरीर को आन्त्रवृद्धि रोग से सुदीर्घ समय से कष्ट था अन्त में उसी कष्ट से ही शरीर का साथ आपने त्याग दिया। स्वामी जी महाराज का व्यक्तिशः घनिष्ठ सम्बन्ध मेरा २८ वर्ष से था। उनकी प्रखर बुद्धि तथा अनुशीलन शक्ति को देख कर अच्छे-अच्छे आचार्य लोग भी स्तब्ध रह जाते थे। संदिग्ध वनौषधियों के निर्णय में आप एकमात्र तथा अद्वितीय थे। आपने वनौषधि पर कई ग्रन्थ भी लिखे हैं। आपकी एकमात्र सन्तान श्री कन्हैयालाल स्वामी भी अन्तिम समय आपके पास थे। उनके इस निधन से आयुर्वेद संसार के वनस्पति तथा रसायन में विशेषज्ञों की कमर टूट गई है।

स्वामी जी महाराज के निर्णय इस विषय में सिद्ध प्रमाण माने जाते थे। मुझे स्मरण है कि सन् ३० में स्वयं मेरे शरीर की अच्छे-अच्छे योग्य आयुर्वेद के विद्वानों द्वारा चिकित्सा करने पर भी ऐसी अवस्था आई जिससे प्रतीत होता था कि शरीर केवल एक दो दिन का ही महमान है परन्तु इनके निजी प्रयोग जड़ी बूटी से निर्मित कल्पतरु वटी के सेवन कराने से फिर से जीवन की आशा हो गई। आज यह जीवन उन्हीं की कृपा का प्रसादी मात्र है। आप बड़े धर्मिष्ट, कर्मयोगी तथा परम परोपकारी महान् पुरुष थे। भगवान् आपकी आत्मा को अपने चरणों में निवास दे और आपके सन्तप्त परिवार को उनके गुणों के ग्रहण द्वारा परहित में साफल्य प्राप्त करने की शक्ति दे। हम उनके परिवार से सम्वेदना प्रकट करते हैं।

महान शोक !!

आयुर्वेद शास्त्र के प्रकाण्ड पंडित तथा महारथी आदरणीय श्री यादव जी त्रिकम जी आचार्य के अकस्मात् स्वर्गवास का समाचार सुनकर मन स्तब्ध रह गया। गत वर्ष ही हमने उनकी पिचहत्तर वीं वर्ष गांठ तथा हीरक जयन्ती बीकानेर में मनाई थी। अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन द्वारा विशेषाधिवेशन बुलाकर उनका सम्मान किया गया था। सभी ने अपनी-अपनी श्रद्धा के प्रसून उन्हें भेंट किये थे और उनकी चिरायु की कामना की थी। किन्तु कौन जानता था कि जिस महर्षि

की वर्षगांठ हम बड़े प्रेम और उत्साहपूर्वक मना रहे हैं उसे एक वर्ष पश्चात् ही निष्ठुर काल हम से छीन कर हमें शोक सागर में डुबो देगा। आचार्य प्रवर जैसे महान् विद्वानों के कारण ही आज आयुर्वेद का नाम संसार में जीवित है। उनके शास्त्र ज्ञान, बुद्धि कौशल तथा विशाल अनुभव की आज हमें अति आवश्यकता थी। शोक ! वैद्य समाज अब उनसे सर्वदा के लिये वंचित हो गया है। आचार्य जी ने आयुर्वेद जगत् में नवीन युग का सूत्रपात किया था। अपनी विद्वता के कारण ही आपने महासम्मेलन की तीन बार अध्यक्षता की। वास्तव में महासम्मेलन की स्थापना में आपका प्रमुख हाथ था। आयुर्वेद की आप सर्वदा निस्वार्थ भाव से सेवा करते रहे। यद्यपि आचार्य आज हमारे बीच में नहीं रहे तथापि आयुर्वेद तथा वैद्य समाज को साहित्य के रूप में उनकी जो अमर देन है उसके कारण उनका नाम भी सदा अमर रहेगा।

भगवान् उनको आत्मा को शान्ति तथा मुक्ति प्रदान करें। श्री आचार्य जी के परिवार से सम्वेदना सहानुभूति प्रकट करते हुए हम प्रभुचरणों में यही प्रार्थना करते हैं कि वह उन्हें इस वियोग को सहने की सामर्थ्य दें। प्रकृति का नियम अटल है जिसके सामने सबको नत मस्तक होना पड़ता है।

—स्वामी चेतनानन्द

लोक सभा में

अमृतकौर की आयुर्वेद विरोधी नीति का कड़ा विरोध

गत १८ फरवरी को राजकुमारी अमृतकौर द्वारा लोक सभा में अखिल भारतीय चिकित्सा विधेयक विचारार्थ उपस्थित किया गया था। विधेयक को उपस्थित करते हुए राजकुमारी ने अपने भाषण में यह घोषणा की कि इस चिकित्सा विज्ञान शाला में केवल "आधुनिक चिकित्सा पद्धति" अर्थात् ऐलोपैथी की ही उच्च शिक्षा, अनुसंधान प्रसार आदि का प्रबन्ध होगा तथा आयुर्वेद यूनानी आदि चिकित्सा पद्धतियों को जो आधुनिक विज्ञान नहीं, इसमें स्थान नहीं मिलेगा। इस पर लोक सभा के बहुत से सदस्यों ने इस बिल का बहुत ही उत्तेजनापूर्ण विरोध किया। श्री मोहनलाल सक्सेना ने इसका विरोध करते हुए कहा "मैं जानता हूँ कि केन्द्र तथा राज्यों में जो सत्तासीन व्यक्ति हैं वे ऐलोपैथ ही हैं जो आयुर्वेद के विषय में कुछ भी नहीं जानते। इस पर भी वे अपने आपको इस योग्य समझते हैं कि आयुवद को अवैज्ञानिक कह सकें।

"आयुर्वेद को वैज्ञानिक चिकित्सा पद्धति स्वीकार न करना एक अत्यन्त ही दयनीय और लज्जापूर्ण कार्य है, विशेषकर उस समय जब अन्य देशों में विचारधारा आयुर्वेद के पक्ष में होती जा रही है।

"आयुर्वेद के बिना यह एक ऐसा ही कार्य होगा जैसे कि प्रिंस आफ डेनमार्क के बिना हेमलेट का अभिनीत करना। अगर हम आयुर्वेद को चिकित्सा विज्ञान स्वीकार नहीं करते तो यह सब निरर्थक है।

"यह राष्ट्रीय महत्व की संस्था है किन्तु इसके पीछे कोई राष्ट्रीय नीति नहीं है यह सर्वथा अराष्ट्रीय है। ऐसी कोई भी नीति जो कि इस देश की चिकित्सा पद्धति को चिकित्सा विज्ञान स्वीकार नहीं करती वह अराष्ट्रीय है और लोक-सभा से बाहर फेंक दी जानी चाहिये।

"...जामनगर में स्थापित संस्था की बात की जाती है। इस संस्था के लिये योजना में काफी रुपया रखा गया था किन्तु उसमें से १० लाख रुपया ही व्यय किया गया है। शेष सब बेकार पड़ा है। इस पर स्वास्थ्य मंत्रिणी कहती हैं कि धन का अभाव है, किन्तु यहां तो वह बेकार पड़ा है और वे इसका उपयोग नहीं कर सकीं। तिब्बिया कालेज को ही लीजिये...धन के अभाव में यह संस्था हानि उठा रही है। क्या सरकार इतनी ही सहानुभूति रखती है ? आयुर्वेद को चिकित्सा विज्ञान नहीं स्वीकार किया जाता, यह जले पर नमक छिड़कने के समान है। मैं इस बिल का तब तक विरोध करूँगा जब तक की चिकित्सा विज्ञानों में आयुर्वेद को नहीं मान लिया जाता।"

सदन के वयोवृद्ध एवं पुराने कांग्रेसी सदस्य श्री पं० ठाकुर दास जी भार्गव ने भी आयुर्वेद को आधुनिक चिकित्सा विज्ञान न स्वीकार किये जाने का बहुत कड़ा विरोध किया। आपने कहा, "आयुर्वेद यूनानी 'मार्डन सिस्टम्ज आफ मेडिसिन नहीं हैं यह सुनकर मुझे बड़ा आश्चर्य होता है। मैं समझता हूं कि हमारी मिनिस्टर साहिबा जब यह कहती हैं तो उन्हें कुछ शर्म आनी चाहिये, कुछ हया आनी चाहिये। मैंने सैकड़ों ऐसे केस देखे हैं जिनमें ऐलोपैथिक चिकित्सा सर्वथा विफल रही तथा आयुर्वेदिक चिकित्सा सफल रही। बम्बई में पं० शिवशर्मा के पास दूसरे देशों से लोग चिकित्सार्थ आते हैं। इस सौतेले व्यवहार को मैं सहन नहीं कर सकता। मैं ऐसे बिल को जो केवल ऐलोपैथी को ही "माडर्न सिस्टम" कहे कभी वोट देने को तैयार नहीं।...कहा गया है कि ग्रामीण क्षेत्र की अवस्था में इससे सुधार होगा। आज भी ग्रामों के अन्दर लोग वैद्यों के पास चिकित्सा के लिये बड़ी संख्या में जाते हैं और उनको थोड़े पैसे देकर चिकित्सा सुविधायें प्राप्त हो जाती हैं।

"हमारे देश के लोगों को कोई लाभ होगा, उनको चिकित्सा सुविधायें मिलेंगी उनका स्वास्थ्य अच्छा होगा तो वह ऐलोपैथी से नहीं जो कि बहुत महंगी है बल्कि इस देश की अपनी चिकित्सा पद्धतियों से। हो सकता है कि इस पद्धति (ऐलोपैथी) से दिल्ली के कुछ बड़े अफसरों, मन्त्रियों और हम सदस्यों को लाभ पहुंचे। किन्तु यह कहना कि इससे ग्रामीण क्षेत्रों को लाभ पहुंचेगा सर्वथा असत्य और धोखे की बातें हैं। मैं कहूंगा कि यह ऐसा बिल है जिसे पास नहीं किया जाना चाहिये।

"ऐलोपैथी के लिए आज ५ करोड़ रुपये रखे गए हैं। मुझे देखना है कि आयुर्वेद और यूनानी के लिये वे कब कोई रकम रखती है। मैं जानता हूं कि वे कदापि कोई रकम नहीं देंगी क्योंकि उनके दिमाग में यह बात ही नहीं है कि देशी चिकित्सा पद्धतियों को बढ़ावा दिया जाय।

"देशी चिकित्सा पद्धतियों के साथ जिस प्रकार सौतेला व्यवहार किया जा रहा है उससे हमारा सर लज्जा से झुक जाता है आयुर्वेद को चिकित्सा विज्ञान न कहना हमारी राष्ट्रीय बेइज्जती है।"

स्मरण रहे कि उक्त विधेयक पर वाद-विवाद के लिए केवल एक घन्टे का समय ही रखा गया था किन्तु सदन का बहुमत इसके सर्वथा विरुद्ध था। ऐसे महत्वपूर्ण बिल को जिसके अनुसार केवल एक ही चिकित्सा पद्धति पर इतना अधिक खर्च किया जाने वाला हो केवल एक ही घन्टे का समय दिया जाय। विवश होकर लोक सभा के माननीय अध्यक्ष को २० व २१ फरवरी को भी कई कई घन्टे इस पर बहस के लिए देने पड़े। श्री मोहनलाल सक्सेना ने इस बिल को प्रवर समिति के सुपुर्द करने की मांग की थी किन्तु स्वास्थ्य मंत्रिणी ने इसे अस्वीकार कर दिया। हमारी मंत्रिणी ने जिस घृणित एवं अशोभनीय शीघ्रता के साथ इस बिल को पास करवाने का प्रयत्न किया वह सर्वथा अप्रजातंत्रात्मक एवं निन्दनीय है।

महासम्मेलन द्वारा संसदीय आयुर्वेदिक कक्षा का आयोजन

भारतीय संसद् में सबल आयुर्वेदिक पक्ष के निर्माण के लिए बहुत समय से यह आवश्यक समझा जा रहा था कि संसद् सदस्यों में आयुर्वेद के प्रचार तथा समुचित ज्ञान के प्रसार के लिए एक प्रभावशाली योजना का निर्माण किया जाये। आयुर्वेद के पृष्ठ-पोषक कुछ संसद सदस्यों से इस सम्बन्ध में बात चीत करने पर उन्होंने एक संसदीय आयुर्वेदिक कक्षा प्रारम्भ करने का सुझाव दिया था। यह विषय गत ४१ वें महासम्मेलन, कुरनूल, में विचारार्थ रखा गया था तथा विचार के अनन्तर यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया था कि संसदीय आयुर्वेदिक कक्षा का समारम्भ किया जाय।

उक्त प्रस्ताव को कार्यान्वित करने के लिए कुछ संसद् सदस्यों के हस्ताक्षरों से एक पत्र संसद् सदस्यों के पास महासम्मेलनाध्यक्ष की ओर से भेजा जा रहा है। ज्ञात हुआ है कि अधिकांश सदस्य उक्त आयुर्वेदीय भाषण माला में सम्मिलित होने के लिए सहमत हैं। आशा की जाती है कि आगामी अप्रैल मास में यह कार्य प्रारम्भ हो जायगा। प्रथम भाषण में आयुर्वेद के प्रमुख विद्वान् वैद्य श्री पार्थनारायण जी पंडित, वैद्यरत्न श्री पं० शिवशर्मा जा तथा अन्य विद्वानों के भाषणों की व्यवस्था की जा रही है।

विषय-सूची

पारद संस्कार परीक्षण

(लेखक—श्री वेणीमाधव शास्त्री जोशी, प्रवाचक (रीडर), विश्वविद्यालय, नागपुर)

पारद संस्कार परीक्षण

इण्डियन फार्मेसिस्ट एसोसिएशन ने नागपुर विश्वविद्यालय को प्रतिमाह ९०० रुपया ५ साल तक दान देने का आश्वासन दिया है। पारद और लोह ये दो विषय संशोधन के लिये सूचित किये जो विश्वविद्यालय ने मान्य कर निश्चित किये। मध्यप्रदेश शासन ने तृणज्योत यह विषय सूचित किया है।

सर्वप्रथम पारद यही विषय हाथ में लिया है। पारद पर अष्टसंस्कार करना शुरू किया। ई. मर्क का डबलडिस्टिल और हिंगुलोत्थ पारद पर अष्टसंकार हो चुके हैं।

संस्करण फल परीक्षण

स्वेदन संस्कार से पारद के मल शिथिल हो जाते हैं। 'पाचन स्वेदनाख्यं स्यान् मल शैथिल्यकारकम्'। पारदस्थ मल स्वेदन संस्कार से शिथिल हुए या नहीं यह समझना कठिन है। आधुनिक साधन से यह हम जान सकते हैं। मल शिथिल हुआ इसका अर्थ मुझे यह प्रतीत होता है कि स्वेदन से पूर्व पारे के अणु के साथ पारे में स्थित मलरूप द्रव्य के (उदा: सीसा) अणु का संयोग जितना दृढ़ रहता है उतना स्वेदन के उपरांत नहीं होता, शिथिल हो जाता है। इन दो अणु के सान्निध्य में पहिले की अपेक्षा दूसरी अवस्था (स्वेदनोत्तर) में अधिक अन्तर होना चाहिये, यह हम 'एक्सरे डिफ्रेक्शन्स' नामक अपरेटस से समझ सकते हैं।

शुद्ध पारा तेजस्वी रहता है। अशुद्ध व शुद्ध पारे की तेजस्विता में भिन्नता रहती है। वह आंखों से स्थूलतया समझ में आती है। परन्तु मापन अकों में कह नहीं सकते। यह तेजस्विता की भिन्नता 'रिफ्लेक्टोमिस' से नाप सकत हैं। अंकों में नमूने कर सकते हैं।

नियमन संस्कार करने पर पारा स्थिर होता है। उसका चंचलत्व कम होता है। सूतो (पारा) नियमान स्थिरता व्रजेत्। चपलत्वं निवृत्तयं। क्रियतं पारदं स्वेदः प्रोक्त, नियमन हि तत्? चंचलत्व काफी कम हुआ तो वह आँखों से दिखेगा किंतु यदि थोड़ा कम हुआ तो दिखाई नहीं देगा। मतभेद दिखाई देंगे। यही बात हमें 'विस्कामिटर' से नियमन संस्कार के पूर्व व बाद की स्थिति में भिन्नता से स्पष्ट दिखाई देगी।

उदाहरण के लिए उपर्युक्त प्रकार लिखे हैं। ऐसी सैकड़ों बातें हैं कि जिनमें आधुनिक शास्त्रों की अनेक शाखाओं का ज्ञान, साधन, दवा आदि का उपयोग किया जाना संभव है।

इस तरह का परीक्षण यहां हो नहीं सकता। कहां हो सकता है, इसके लिये क्या करना होगा इत्यादि विचार चल रहा है। हमारे लिए उपलब्ध साधनों से हम पारद का प्रतिशत और विशिष्ट घनत्व देखकर पारद कुछ है या नहीं, शुद्ध हुआ या नहीं,

संस्कार से कुछ अशुद्धि तो नहीं आई है यह देख सकते हैं।

बाजारू पारद

बाजारू पारद का स्वरूप मलिन था, ऊपर कलई जमी हुई मालूम होती थी। पारद का प्रतिशत तीन बार लिया गया (१) ९८.८% (२) ९८.६% (३) ९८.-७७% इससे मालूम होता है कि १.२३ से १.४ तक अन्य द्रव्य पारद में निश्चित है। औसत ९८.७२% पारद और अन्य द्रव्य १.२८०% है। ऐसा प्रतीत होता है कि विश्लेषण से जो टेस्ट मालूम हुआ वह नाग का ही था यह कह नहीं सकते। दुबारा टेस्ट करने से नाग नहीं मिला। दूसरी क्या अशुद्धि है यह भी कह नहीं सकते। इसमें ही हमको यह आशंका पैदा हुई कि हमारी साधन सामग्री इस विश्लेषण के लिए पर्याप्त है भी या नहीं।

पारद में अशुद्धता है परन्तु उपरोक्त विधि से विश्लेषण करने से टेस्ट नहीं आता। धातुएं अति सूक्ष्म प्रमाण में शायद मिली हों। रसायन की पुस्तक 'तत्व तथा उनके यौगिक' Elements and their compounds (ले० एन्० व्ही. सिजव्हिक) पृष्ट २८२ में दी हुई धातुओं का पारद के साथ द्रव रूप में अमलगम बनाने में उनके परिणाम की तालिका के अनुसार इस बात की पुष्टि होती है। २०० से० ताप पर धातु का पारद सपृक्त घोल जो बनता है (द्रव रूप में) उसमें नाग का परिमाण १.२% वंगका. ६२% जसद का २.१५%ही केवल रह सकता है। अतएव सूक्ष्म विश्लेषण के बिना इन धातुओं का पता नहीं लग सकता।

आये हुए ऊपर के परिणामों में +.४% प्रायोगिक दोष (+.4%experimental errors) भी शामिल है।

विशिष्ट घनत्व—प्रयोगों का औसत १३.२ ग्राम प्रति सी. सी. हुआ। इससे भी पारद शुद्ध नहीं है यह मालूम हुआ। क्योंकि शुद्ध पारद का उसी ताप पर व दबाव पर विशिष्ट घनत्व १३.५९६ ग्राम प्रति सी. सी. आना चाहिए ऐसा रसायन शास्त्र में लिखा है।

पारद शुद्धि

पट सारण—चार तह के कपड़े में से बाजारू पारद छानकर लिया गया, प्रथम दो बार तथा फिर ६ बार छाना गया।

प्रतिशत—दो बार छाना हुआ (१) ९९.६७४% (२) ९९.% छः बार छाना हुआ (१) १००.% (२) ९९.९%

विशिष्ट घनत्व—दो बार छाना हुआ. १३.४३ ग्राम प्रति सी. सी.। छः बार छाना हुआ १३.५५ ग्राम प्रति सी. सी.।

निर्णयः—अशुद्धि घन (सालिड) स्वरूप होगी तो ही पट सारण से निकलेगी, द्रव (लिक्विड) होगी तो नहीं निकलेगी।

बाजारू पारद—स्पिरिट से शुद्धि—डीनेचर्ड स्पिरिट में पारद हिलाकर विश्लेषण किया वह ९९.२९% पारद आया। और विशिष्ट घनत्व १३.३३५ ग्राम प्रति सी. सी. आया। वही कपड़े से छान कर विश्लेषण किया १००.०%पारद आया। और विशिष्ट घनत्व ३०.५१५% प्रति सी. सी. आया।

निर्णय—स्पिरिट में हिलाकर केवल शुद्धि नहीं होती। पट सारण से शुद्धि होती है।

और एक प्रयोग—पारद ९४.५ + नाग ५.५ प्रमाण में मिलाकर वह मिश्रण अब-स्युल्यूट अलकोहल में डालकर हिलाया । इन तीनों का मिश्रण हिलाने से काले रंग का हो जाता है । पहिले पारद और नाग का अमलगम था वह अब नहीं है । स्पिरिट से नागका यौगिक बनकर पारद और वह यौगिक मिश्रण रूप से एक दूसरे के साथ रहते हैं । फिल्टर पेपर से छानने से अलकोहल निकल आता है और पारद व नागका यौगिक मिश्रण रूप से पेपर के ऊपर रह जाते हैं । कपड़े से छानने से वह यौगिक कपड़े के ऊपर रह जाता है और पारद अलग होकर या वैसे ही आता है । पानी डालकर निथा-रने से निथारने में नाग का यौगिक तैरता है । पारद भारी होने से नहीं आने पाता । निथारने में नाग का टेस्ट आता है, पारद का नहीं आता । फ़िल्टर पेपर से छानकर आये हुए फिल्टरेट में भी नाग का टेस्ट नहीं आता ।

निर्णय—स्पिरिट से नाग का यौगिक बनकर पटसारण से नाग से पारद पृथक् होता है । शुद्ध होता है ।

नाइट्रिक एसिड से शुद्धि—५% नाइट्रिक एसिड लेकर उसमें नाग मिश्रित पारद डाला । ५ % नाइट्रिक एसिड का पारद पर कोई प्रभाव नहीं होगा । नाग एसिड में घुल जाता है नाइट्रिक एसिड में नाग का घुलनशील नाइट्रेट रूप से यौगिक बन कर पारद से पृथक् हो जाता है ।

एसिटिक एसिड से पारद शुद्धि—ससि-टिक एसिड में नाग मिश्रित पारद गर्म करने पर नाग का लेड एसिटेट बनकर पारद से पृथक् होता है फिर पारद में नहीं मिलता ।

गरम पानी से पारद शुद्धि—तप्त खरल में नाग मिश्र पारद और पानी डालकर खरल किया तो नाग पृथक् होता है । परन्तु पानी में घुलता नहीं, नाग का आक्साईड बनता होगा ।

केवल हवा से पारद शुद्धि—शुद्ध पारद १००·१३ प्रतिशत, पारद ९४·५ प्रतिशत +नाग ५·५ प्रतिशत यह मिश्रण ६ दिन तक हवा में रखा । उसके ऊपर वाली सतह बनी पारद कपड़े में छानकर विश्लेषण किया । (१) ९७·६ प्रतिशत पारद, २·४ प्रतिशत नाग (२) ९७·३ प्रतिशत पारद, २·७ प्रतिशत । नाग और प्रयोग से इसकी पुष्टि की जायगी ।

निर्णय—ऊपर लिखे हुए दो प्रयोगों से यह बात स्पष्ट होती है कि नाग आक्सिजन पाकर अघुलनशील आक्साइड बना लेता है तथा वह पारद से अलग हो जाता है और कपड़े से छानने पर पारद कपड़े में से निकल आता है पर आक्साइड नहीं ।

लहसुन का रस और सैंधव से शुद्धि—बाजारू पारद ५० तोला, सेंधा नमक ३ तोला ७½ माशे (१/१६) और लहसुन का रस १५ तोला लोहे के खरल में डालकर, खरल के नीचे की भट्टी में कोयला और लकड़ी का भूसा जलाया । खरल हर रोज ६ घंटे होता था । हर रोज १ से ११ सेर लहसुन का २१ से २३ तोले तक रस रगड़ने के लिये लगता था । दो माह तक खरल चालू था । शेष ४३ तोला ६ माशे पारद रहा । साढ़े छः तोला धोने से कम हुआ । डेढ़-डेढ़ मासा दो बार परीक्षण के लिये दिया गया, सवा छः तोला ही कम हुआ । पारद विश्लेषण (१) १००·०% (२) ९९.९८ प्रतिशत

शुद्ध विशिष्ट कारण १३·९८ ग्राम प्रति सी. सी.। लहसुन का रस निकालने में कष्ट है। अग्नि अच्छा लगा ८०% से ९०% तक तो शुद्धि जल्दी होती है ऐसा देखने में आया है।

बिना सैंधव लहसुन के रस में शुद्धि का प्रयोग—शुद्ध पारद जिसका रासायनिक विश्लेषण १००·१३% था प्रयोग के लिये लिया, इस पारद में नाग मिलाया। नाग मिलाने के बाद पारद ९४·५% और नाग ५·५% प्रमाण में थे। केवल लहसुन के रस में नाग का टेस्ट नहीं मिला। लहसुन के रस में नाग मिश्रित पारद डालकर रस को गरम कर तप्त खरल में घोटा. दो-दो घंटे दो दिन खरल कर देखा। नाग का टेस्ट लहसुन के रस में मिलता है। पारद ९७·९ प्रतिशत नाग २ प्रतिशत रहा लहसुन के रस में पारद का टेस्ट भी मिलता है।

निगुंडी के रस में शुद्धि

बाजारू पारद निगुंडी के रस में तप्त-खरल में खरलकर शुद्धि की। उष्णता मान ८० से ९० तक रखा गया। पारद प्रमाण १२ तोला था। १० दिन में शुद्धि हुई। शेष ११ तोला ७ माशा, रासायनिक विश्लेषण १०० प्रतिशत (२) १०० प्रतिशत। विशिष्ट गुरुत्व १३·५५ ग्राम प्रति सी. सी.।

नागयुक्त पारद शुद्धि प्रयोग

शुद्ध पारद विश्लेषण १००·१३ प्रतिशत पारद। नाग मिलाने के बाद ९४·५ प्रतिशत पारद, नाग ६·५ प्रतिशत। केवल निगुंडी के रस का परीक्षण में नाग टेस्ट नहीं आया। तप्त खरल में खरल करने के बाद छाने हुए रस में पारद नहीं मिला।

निगुण्डी के रसमें शुद्ध करने की कल्पना

पारद का दोष निगुण्डी के रस से निकलेगा यह कल्पना शास्त्र के अलग प्रयोग से ही आयी। स्वर्णमाक्षिक का सत्वपातन नाग मिलाकर करने का शास्त्र में बताया गया है और उस सत्व में से मिश्रित नाग को निकालने की विधि बतायी है। उसमें निर्गुण्डी रस का उपयोग कहा है "सप्तबारं परिद्राव्यं क्षिप्तं निर्गुण्डिका रसे। माक्षिकसत्वसम्मिश्रं नागं नश्यति निश्चितम्"। इस वचन से पारदस्थ नाग भी निकलेगा ऐसा लगा। और अनुभव यथार्थ मिला।

लहसुन बिना पैसा के मिलना असंभव है। निगुंडी कहीं भी और चाहे जितनी मिल सकती है। एक पैसे का भी खर्च नहीं। लहसुन लेकर रस निकालने तक श्रम भी बहुत करने होते है। निर्गुण्डी का रस निकालने के लिये काम इतने नहीं लगते। लहसुन की अपेक्षा निगुंडी के रस से नाग निकालने के लिये काल भी कम लगता है।

पीछे बताया जा चुका है कि पारद में लिक्विड (द्रव) अमलगम के रूप में नाग १·२ प्रतिशत रहता है, उससे ज्यादा प्रमाण हुआ तो नाग और पारद का दृढ़ सालिड अमलगम बनता है। उपर्युक्त पारद शुद्धि के जो प्रयोग किये गये हैं उन सब में पारद और नाग का अनुमान १०० ग्राम पारद में १·२ ग्राम नाग से अधिक ही रहा है। याने ५·० प्रतिशत या २·० प्रतिशत आदि। पारद में १·२ प्रतिशत से अधिक प्रमाण में नाग रहने से दृढ़ अमलगम बनता है जो कि पारद से कम वजन का होने के कारण पतली फिलम के [कंचुका] रूप में पारद के ऊपर तैरता रहता है तथा केवल शामाय लेदर (Chamoy Lather) या कपड़े से छानने से ही वह निकाला जा सकता है।

जो लिक्विड स्वरूप में रहता है वह कैसा निकलता है इसका उत्तर नहीं मिलता

है। जैसा नाइट्रिक एसिड से नाइट्रेट, हवा से आक्साइड बनकर अलग होता है परन्तु लहसुन विगुंडी मे नाग का क्या बनता है इस का उत्तर हमें अभी तक नहीं मिला। नाग का आक्साइड बनाने में न केवल उक्त द्रव्य ही पर वायुमंडल की आक्सीजन व द्रव में घुली हुई आक्सीजन भी सहायक है।

अष्ट संस्कार

ई. मर्क कम्पनी का डबल डिस्टिल्ड पारद और हिंगुलोत्थ पारद सौ सौ तोला लेकर अष्टसंस्कार किये गये। 'आयुर्वेद प्रकाश' ग्रंथ के प्रणाली के अनुसार संस्कार किये हैं। यह प्रबन्ध पढ़ने के लिये बहुत कम समय दिया गया इसलिये संस्कारों का विवरण अलग लेख द्वारा प्रसिद्ध किया जायगा। हर एक संस्कार के बाद पारद का रासायनिक परीक्षण और विशिष्ट गुरुत्व आपके सामने रखता हूं। पारद पर प्रत्येक संस्कार होने के बाद क्या अन्तर आया यह सूक्ष्म परीक्षण से ही मायक्रो अनालेसिस से ही जाना जा सकता है। स्थूल परीक्षण से कोई अन्तर दिखाई नहीं देता आंखों की तेजस्विता अधिक बढ़ी है ऐसा मालूम होता है।

हिंगुल पराश्रष्ट

रासायनिक परीक्षण—कोई धातु नहीं मिली, परिमाण परीक्षण वि. घ. १३.८, प्रतिशत (१) ९५% (२) ९५.१% दूसरी अशुद्धि की कल्पना आती है। वास्तव में अशुद्धि नहीं है। शायद कुछ पारद उड़ जाता होगा क्योंकि लवणाम्ल में शोराम्ल मिलने पर काफी गर्मी पैदा होती है व क्लोरिन गैस निकलती है क्लोरिन गैस के साथ कुछ पारद उड़ जाता है। यह बात The Chemical Methods of Analysis of orco इस पुस्तक के आधार पर भी सत्य ठहरती है।

पारद परीक्षण

(१) ई. मर्क का डबल डिस्टिल पारद
- (१) रासायनिक विश्लेषण (२) विशिष्ट धातु

(२) हिंगुलोत्थ पारद
- (१) रासायनिक विश्लेषण (२) विशिष्ट घनत्व

१ मूल	(१) ९९.९४%	१३.६२	(१) ९९.८ %	
	(२) १००.१%	१३.८४	(२) ९९.८ %	
२ सैंधव जल स्वेदित...			(१) ९९.१२ %	
			(२) ९९.१५ %	१३.४२५
३ स्वेदन संस्कार के पश्चात्	(१) १००.१०६%	१३.८४	(१) १००.०३%	१३.७५५
	(२) १००.१० %		(२) १००.०४%	
४ मर्दन के पश्चात्	(१) ९९.९६४ %	१३.६१५	(१) ९९.९८ %	१३.६७२
	(२) १००.०३ %		(२) ९९.६५ %	
५ मूर्च्छन			९९.४७ %	१३.६५
६ ऊर्ध्वपतन के बाद	(१) ९९.९ % (२)	१३.५८	९९.५९ %	१३.५८
७ ऊर्ध्वपातन के बाद	१००.१ %	१३.५	९९.९० %	१३.७२
८ तिर्क्पातन के बाद	९८.३३ %	१३.३३	९९.३१ %	१३.३३
९ बोधन	१००.१ %	१३ ७६५	९९.९८ %	१३ ५७
१० नियमन	१००.३ %	१३.६५३	९९.९९ %	१३.५९
११ संदीपन	१००.३ %	१३.७६	९९.९८ %	१३.६०

ऊपर के प्रतिशत अंकों में ९९·६ से ऊपर शुद्ध और ९९·६ से कम अशुद्ध समझना चाहिए। आये हुए ऊपर के परिणामों में +४% प्रायोगिक दोष (+4 per. Experimental Errors) भी शामिल है शुद्ध पारद और सर्व संस्कारों के पारद के प्रतिशत अंकों में जहां १०० से ज्यादा दशमलव के आगे अंक लिखे हैं वे स्थूलत: प्रायोगिक परीक्षण का दोष है, सूक्ष्म परीक्षण में शुद्ध। पारद का विश्लेषण कभी १०० से ज्यादा नहीं आता। और आया तो गलती ही है यह निश्चित समझना चाहिए। परन्तु हमारी तलाशी में जो उत्तर आया वह यहां लिखा है। आधुनिक रसायन शास्त्रज्ञ ऐसा लिखना गलत समझते हैं। इसी तरह की गलती विशिष्टघनत्व के बारे में जाहिर है।

पाठकों की सेवा में नम्र प्रार्थना

गलतियां व त्रुटियां बताइए, नयी सूचनाएं कीजिए, अनुभव मालूम कर दीजिए जो हमें भविष्य में मार्गदर्शक हों।

---

* सर्पगन्धा-एक चमत्कारी जड़ी *

श्री रामेश बेदी, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार

नाम

संस्कृत-सर्पगन्धा।

हिन्दी—छोटी चांद, चांद मरवा, धन मरवा, धवल वरूआ, सर्पगन्धा।

बंगाली—चांदड़।

मराठी—अडकई, करकई।

लैटिन—रॉवुल्फिया सर्पेण्टाइना Rauwolfia serpentina)।

सोलहवीं शती के जर्मन चिकित्सक और पर्यटक रॉवुल्फ के नाम पर इस पौदे का यह नाम पड़ा है।

परिचय

सर्पगन्धा का बहुवर्षी क्षुप झाड़ीदार छः से अठारह इंच तक ऊँचा होता है। कहीं कहीं दो से तीन फीट तक ऊँचा देखने में आता है। इसका काण्ड स्वाश्रयी है।

पत्ते तीन से सात इंच लम्बे, चमकीले देखने में चांदनी फूल के पत्तों के समान। शाखा पर एक ही स्थान पर तीन पत्ते गोलाई में लगते हैं। लाल रंग के पुष्प दण्डों पर सफेद फूल खिलते हैं। धीरे-धीरे फूलों का रंग लाल हो जाता है। दो-दो फल इकट्ठे जुड़े हुए। पकने पर चमकीले, काले रंग में परिणत हो जाते हैं। फल ¼ इंच डायमीटर का। फल के अन्दर एक या दो बीज।

प्राप्ति-स्थान

हिमालय की तलहटी में चार हजार फीट की ऊंचाई तक सर्पगन्धा का क्षुप मिलता है। पंजाब में यह हिमालय की तलहटी में सतलज के मैदान से लेकर यमुना तक गरम और नम स्थानों में पाया जाता है। उत्तर प्रदेश में देहरादून से लेकर गोरखपुर तक ठण्डे और छायादार स्थानों में, विशेषकर साल के जंगलों में तथा देहरादून, शिवालिक पर्वत श्रेणी और रोहेलखण्ड के सब हिमालयन मार्गों में उगता है। इन स्थानों में यह चार हजार फीट की ऊंचाई तक पहुंच गया है। पटना तथा भागलपुर इसके प्राप्ति स्थान कहे जाते हैं। परन्तु, प्रतीत होता है कि नेपाल की तराई से यह जड़ी इन स्थानों में आती थी। सर्पगन्धा की जड़ों की ये मण्डियां थीं और यहां से यह हमारे देश में फैल जाती थीं। इसी से व्यापार में इसका स्रोत पटना और भागलपुर समझे जाते रहे। उड़ीसा में यह पौधा पुरी में पाया गया है। बिलासपुर में कहीं-कहीं मिला है। बंगाल के उत्तरीय भाग में जड़ें इकट्ठी की गई हैं। आसाम में यह कामरूप, नौगांव, उत्तरी कछार, गोला पाड़ा, खासी तथा जयन्तिया पार्वत्य अंचल में और गारो पहाड़ में पाया गया है। पेगू और लेनास्सेरिम में ४००० फीट की ऊँचाई तक मिलता है। मद्रास में पश्चिमी घाट के प्रायः सारे जिलों में और आन्ध्र राज्य में जहां छाया और नमी है यह पौंधा तीन हजार फीट तक पाया जाता है। बम्बई में कोंकण, दक्षिण महाराष्ट्र और कनारा के नमी वाले जंगलों में पाया जाता है। भारत के बाहर अण्डेमन, लंका, ब्रह्मदेश, स्याम, थाइलैण्ड और जावा तथा मलय प्रायद्वीप तक इस पौधे का विस्तार है।

इतने व्यापक क्षेत्र में फैला हुआ होने के बावजूद भी यह पौधा कहीं भी साधारण नहीं है, पौधा केवल sporadically उगता है। इसी से इसकी उत्पत्ति बहुत कम है। किसी भी स्थान से यह इतने परिमाण में नहीं मिलता कि व्यापारियों की मांग की पूर्ति हो सके।

खेती

स्थान— सर्पगन्धा की खेती के लिए नमीदार गरम स्थान अच्छा है। उत्तर भारत में हिमालय की तलहटी में और दक्षिण में नमी वाले गरम प्रदेशों में यह क्षुप अच्छा पनप सकता है।

भूमि—मूली के लिए जिस तरह भूमि तय्यार की जाती है उसी प्रकार इसकी खेती के लिए भूमि बनानी चाहिए।

बीज बोना—सिंचाई का अच्छा प्रबन्ध है तो मार्च में बीज बो देने चाहिए। सिंचाई की सन्तोषजनक व्यवस्था न होने पर बरसात की पहली बारिश पड़ने पर ही नरसरियों में बीज डाल देने चाहिएं। पन्द्रह दिन में बीज उग आते हैं। एक एकड़ के लिए चार पौण्ड बीजों की आवश्यकता होती है। सभी बीज उग आयें तो चार पौण्ड में अड़तीस हज़ार चार सौ पौदे निकल आयेंगे।

पुनरारोपण—बीस दिन में पौदों पर चार-चार पत्ते निकल आते हैं। स्थानान्तरित करने का ठीक समय यही है। पौदे लगने से पहले अच्छी तरह जुताई कर के खेती की मिट्टी भुरभुरी बना लेनी चाहिए।

कतनों से उत्पत्ति —शाखाओं की कतनों से भी यह पौदा उग आता है। ताज़ी जड़ों के दो-तीन इन्च लम्बे टुकड़े कर के बो देने से भी पौदे जम जाते हैं। इसलिए, यदि बीज सुलभ न हों तो जड़ों और शाखाओं से उत्पत्ति की जा सकती है।

बन्नों पर बोयें या समतल पर ?— वन अनुसन्धान शाला, देहरादून के गौण-वनसम्पत्ति-उद्यान में पौदों को बन्नों पर और समतल भूमि में उगा कर देखा गया। परीक्षणात्मक खेती में दो साल के बाद पौदों को खोद लिया गया। श्री एस० बी० पुणताम्बेकर (१०. ५. ५०) ने इनके विभिन्न भागों के तोल में अन्तर इस प्रकार पाया है :—

पौदे के भागों की उपज (ग्राम में भार)

	पत्ते	मुख्यतना	शाखाएं	जड़ें	योग
बन्ने पर उगाया हुआ पौदा	४·५	३·५	३·२	९·०	२०·२
समतल जमीन में उगाया पौदा	३·५	३·७	१·५	१४·०	२२·७

इस परीक्षण में यह देखा गया कि समतल जमीन पर उगाये गये पौदे की जड़ की अपेक्षा बन्ने पर लगाये पौदे की जड़ पचास प्रतिशत अधिक बैठी; यद्यपि पौदे का कुल भार दोनों उदाहरणों में लगभग एक समान है। चिकित्सा की दृष्टि से क्योंकि जड़ का विशेष महत्त्व है इसलिए अधिक उपज करने के लिए हमारी सम्मति में बन्नों पर बोना अधिक अच्छा रहेगा। अधिक बारिश वाले प्रदेशों में ज़ोर की बारिशें बन्ने की मिट्टी को बहा कर भूमि को समतल कर देती हैं और जड़ें नंगी कर देती हैं। पौदे को हानि से बचाने के लिए मिट्टी को बारबार जड़ों के चारों ओर चढ़ा देना चाहिए। हमारी सम्मति में, पैदावार अधिक उन्नत और प्रचुर प्राप्त करने के लिए इस्तेमाल किये गये खेती के विविध तरीकों का बहुत महत्त्व है। इसलिये बन्ने पर और समतल

पर बोने के परीक्षणों को अधिक बड़े पैमाने पर किया जाना चाहिए।

निलाई, सिंचाई—पौदे लगाने के बाद खेत को सींचना चाहिए। पहले साल वर्षा ऋतु में तीन निलाइयों की आवश्यकता होगी। दूसरे बरस पौदे सम्भल जाते हैं और निलाई तथा सिंचाई की अधिक जरूरत नहीं पड़ती। सूखी मौसम में सींचना अत्यावश्यक होता है।

पैदावार लेना—जमीन अच्छी हो और सार-सम्भाल ठीक हो तो दो वर्ष में जड़ें खोदने योग्य हो जाती हैं। बरसात की समाप्ति पर खोदना अच्छा रहता है। सर-दियों की सूखी मौसम आने से पूर्व भूमि में जब तक वारिशों की नमी विद्यमान हो तभी जड़ें खोद लेनी चाहिएं क्योंकि तब नरम जमीन को खोदना आसान होता है।

बाजार में यद्यपि मोटी जड़ों की मांग है परन्तु बारीक जड़ों को भी इकट्ठा कर लेना चाहिए क्योंकि उनमें भी क्रियाशील तत्व विद्यमान होते हैं।

वन-अनुसन्धानशाला में किए गए बाद के परीक्षण बताते हैं कि पत्रों में तथा पौदे की डण्डियों में भी क्रियाशील तत्व विद्यमान हैं। इसलिए खेती में भी सम्भावनाएं हैं कि जड़ें खोदने के बजाय पत्ते और टहनियों को समय-समय पर औषध प्रयोजन के लिए काट लिया जाय। इस तरह सम्भवत: अधिक पैदावार प्राप्त की जा सके।

लाभदायक धन्धा—अनुमान है कि एक एकड़ भूमि में दो हजार पौंड जड़ें प्राप्त की जा सकती हैं। प्रति पौंड तीन रुपए के हिसाब से इस उपज का दाम छह हजार रुपये बैठता है। किसानों और बाग-बगीचे वालों के लिए सर्पगन्धा की खेती बहुत लाभदायक धन्धा सिद्ध होगा। अमेरिका तथा दूसरे देशों में इसकी बढ़ती हुई मांग को देख कर कहा जा सकता है कि अभी बीसियों बरसों तक चाहे जितनी पैदावार होगी वह सब अच्छे दामों में खपती रहेगी। उत्पादकों को अपनी उपज को बेचने के लिये मण्डियों को तलाश करने में जरा भी कठिनाई नहीं होगी।

पहिचान

बाजार में मिलने वाली सर्पगन्धा की जड़ें दो से छह इंच लम्बी और प्राय: एक इंच मोटी होती हैं। रंग मटमैला पीला सा भूरा। ऊपर की छाल कार्क की तरह नरम होती है जिस पर लम्बाई के रुख सीधी दरारें पड़ी रहती हैं। तोड़ने से जड़ छोटे-छोटे टुकड़ों में टूटती है। अंदर की सफेद लकड़ी में स्पंज की तरह बहुत छिद्र दीखते हैं। गन्ध कोई नहीं होती। स्वाद खूब कड़वा है।

इतिहास

चिकित्सा की भारतीय पद्धति के ग्रन्थों में सम्भवत: केवल सुश्रुत संहिता में एक स्थान पर सर्पगन्धा का उल्लेख मिलता है। अमानुषोपसर्गाध्याय में मानसिक रोगों को दूर करने वाले अपराजितगण में सुश्रुत ने इसे पढ़ा है। बनारस, बिहार और बंगाल के साधारण लोग प्राचीन काल से उन्माद और अनिद्रा में यद्यपि इसका उपयोग करते रहे हैं परन्तु प्रतीत होता है कि आयुर्वेद के विद्वान् लेखकों का ध्यान इसने नहीं खींचा क्योंकि चिकित्सा-साहित्य में यह प्रवेश नहीं पा सकी।

विषैले सरीसृपों के दंश और कीड़ों के डङ्क में, ज्वर, पेचिश और आंतों के दूसरे

वेदनामय रोगों में भी सर्पगन्धा का भारत और मलय प्रायद्वीप में प्राचीन समय से बहुत उपयोग हो रहा है। १५६३ में गार्सिया द ऑर्टा ने इसे भारत की अग्रणी और प्रशंसनीय औषध लिखा था। दीपक रूप में वह इसकी सिफ़ारिश करता है। वह बताता है कि सर्पदंश में यह विशेष उपयोगी है और इस प्रयोजन के लिए यह यूरोप को ले जाई जाती है।

सर्पदंश में प्रयुक्त होने वाली जड़ियों में सर्पगन्धा यद्यपि भारत की पुरानी जड़ी है और इसके अतिरिक्त भी यह अनेक रोगों में इस्तेमाल की जाती थी परन्तु प्रतीत होता है कि पुर्तगालियों के व्यापार में यह यूरोप नहीं पहुँची थी; हालांकि वे इसे उन बहुत से स्थानों से प्राप्त कर सकते थे जहां उनका व्यापार था। बाद में, डच लोग इसे मलक्का ले गये और यह रूम्फ़ की (मस्तिलो की जड़ी) बन गई। रूम्फ़ कहता है कि उसके समय में यह भारत और जावा में प्रत्येक प्रकार के विष के विरुद्ध दी जाती थी। अन्तः और बाह्य दोनों तरह से इसका प्रयोग होता था। जड़ का काढ़ा बना कर भीतरी प्रयोग में और जड़ का तथा ताज़े पत्तों का लेप बना कर बाहरी प्रयोगों में पैरों के तलवों पर लगाया जाता था। वह कहता है कि सांपों के विषों के लिये यह उपयोगी है और यहां तक कि फनियर के दंश को भी यह आश्चर्यजनक जड़ी पिलाने से, विष रहित कर देती है। उसने कहा था कि ज्वरों में, हैजे और पेचिश में इस दवा का व्यापी रूप से अन्तः प्रयोग किया जाता है। फूले की औषध के रूप में पत्तों का रस आंखों में डाला जाता था।

बर्मन ने अपने थिज़ोरस जिलैनिकस (Thesaurus zeylanicus) में गार्सिपा द ऑर्टा ने भी सर्पगन्धा का जिक्र किया है। दे बौन्द (De Bondt) बताता है कि यह बुखारों को उतारती है।

पागलपन की गोपनीय जड़ी

सोलहवीं-सत्रहवीं शती के युरोपियनों ने सर्पदंश में इसकी जो ख्याति सुनी थी वह धीरे-धीरे लुप्त हो गई। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में भी यद्यपि हमारे देश के वैद्य इसका उपयोग जानते थे परन्तु सर्वथा भिन्न रूप में। 'पागल की जड़ी' के नाम से इसने उनमें अच्छी प्रसिद्धि पा ली थी और उन्माद में इसका प्रयोग जो जान गये थे उन्होंने इसे गोपनीय औषध बनाया हुआ था। बिहार और उत्तर प्रदेश में यह 'पागल की दवा' के नाम से बिकती थी और पन्सारियों तथा देशी चिकित्सकों में इसका व्यवहार साधारण बात थी। १६३१ में इण्डियन मेडिकल वर्ल्ड (जुलाई, जिल्द २, अंक ५) में कलकत्ते के प्रसिद्ध आयुर्वेदिक चिकित्सक डा० गणनाथ सेन और डा० कार्तिक चन्द्र बोस के नाम से एक लेख छपा था जिसमें डा० सेन ने इस रहस्यपूर्ण जड़ी के बारे में अनेक महत्वपूर्ण बातों का उद्घाटन करते हुए बताया था कि कठिनाई से उन्होंने इसका रहस्य जाना था। यह जड़ जिस पौदे से प्राप्त की जाती थी उसे उन्होंने कई वर्ष पूर्व ठीक-ठीक पहचान लिया था। तभी से वे इसे अपने रोगियों पर उल्लेखनीय सफलता के साथ खूब प्रयोग करते रहे। अत्यन्त कड़वी होने से इसे गोली या टिकिया की शक्ल में देते थे। इसका नाम उन्होंने महेश्वर चक्रिका रखा हुआ था। रक्त दबाव की इस मूल्यवान और सुरक्षित दवा को ढूंढ़ने में मालूम होता है कि डा० सेन को सबसे पहले

सफलता मिली है। यह ध्यान देने योग्य है कि पूर्व या पश्चिम की किसी भी दवा से इस रोग में लाभ नहीं होता। डा० सेन के निर्देशों पर डा० बोस ने अपने सहयोगियों के साथ इस दवा के भेषजीय कार्यों का अध्ययन शुरू किया। इस प्रकार पाश्चात्य चिकित्सा में सर्पगन्धा को समाविष्ट करने का श्रेय डा० गणनाथ सेन और डा० कार्तिक चन्द्र बोस को मिलता है। बाद में कर्नल रामनाथ चोपड़ा, डाक्टर मुकर्जी आदि ने भी इस पर गवेषणा की और सभी ने जड़ को रक्त के उच्च दबाव के लिए उपयोगी स्वीकार किया।

उपयोगी भाग

चिकित्सा में मुख्यतया मूल काम आती है। परन्तु पत्ते तथा शाखाएं भी काम में लायी जा सकती हैं।

मात्रा

मूल—रक्त का दबाव कम करने के लिये दो से पांच रत्ती, नींद लाने के लिए आठ से पन्द्रह रत्ती, पागलपन के लिए डेढ़ से तीन माशा।

पत्ते और शाखाओं में क्रियाशील तत्व जड़ों की तुलना में लगभग आधे परिमाण में होता है। इसलिए, इन्हें जड़ से दुगने परिमाण में देना चाहिए।

रासायनिक संघटन

आशुतोषदत्त, जे० सी० गुप्त, सुधामयी घोष और बी० एस० कोहली (इण्डि. जर्न, फार्म., जि. ९, अंक २, १९४७, पृष्ठ ५४-५७) ने कलकत्ता के स्कूल आफ ट्रापिकल मेडिसिन में की गई परीक्षाओं के आधार पर विश्लेषण के तुलनात्मक अध्ययन में दिखाया है कि आसाम से प्राप्त सर्पगन्धा में सुषव (एल्कोहल) में विलेप निस्सार (एक्स्ट्रैक्ट्स) उच्चतम थे और बंगाल के नमूने में निम्नतम। सुषवीय निस्सारों एल्कोहलिक एक्स्ट्रैक्ट्स) के जलीय विलेय निस्सरितों (एक्स्ट्रैक्टिव्स) में सब क्षाराभ (एल्कलायड्स) विद्यमान थे और जलीय अविलेप भाग में तैलोद्यास (ओलियोरेजिन्स) थे। जलीय निस्सरण में से क्षाराभ (एल्कलायड्स) और उद्यास (रेजिन्स) पृथक् लिये जाने पर यह औषधीय गुणों से शून्य हो जाता है। तैलोद्यासों (ओलियोरेजिन्स) को फिर मृत्तैल दक्षु (पेट्रोलियम ईथर) की सहायता से उद्यासमय (रेज़िनस) और तैलीय खण्डों में अलग किया गया। तैलीय खण्ड में कुछ क्षोभक गुण देखे गए जब कि उद्यास (रेज़िन) खण्ड में औषध का अपना प्रारूपिक (टिपिकल) शामक और निद्राजनक कार्य दिखाया। उद्यास (रेज़िन) खण्ड फिर दो खण्डों में विभक्त किया गया।

सिद्दीकी और सिद्दीकी (जर्नल० इण्डि० केमि० सोसा० १९३१ जि० ८, पृ० ६६७) ने रासायनिक विश्लेषण से सूखी जड़ में पांच स्फटिकमय क्षाराभ (एल्कलॉयड्स) प्राप्त किए जिन्हें दो समूहों में श्रेणीकरण किया। इन अन्वेषकों ने इनको विशिष्ट नाम भी दे दिए।

पहला अजमलीन समूह है जिसमें तीन सफेद स्फटिकमय निर्बल पीठ (bases) थे इस समूह के तीन क्षाराभों के भौतिक गुण इस प्रकार हैं:

१. अजमलीन—१५८-६०° पर पिघलता है। यह ०·१ प्रतिशतक पाया गया।

२. अजमलिनीन—१८०-८१° पर पिघलता है। ०·०५ प्रतिशतक पाया गया।

३. अजमलिसीन—इसका पिंघलाव बिन्दु २५०-५२° है। यह ०.०२ प्रतिशतक मिला।

दूसरा सर्पेण्टाइन समूह है जिसमें दो चमकीले पीले स्फटिकमय तीव्रतर पीठ थे। इनके भौतिक गुण ये हैं:

१. सर्पेण्टाइन—१५३-५४° पर पिघलता है। ०.०८ प्रतिशतक प्राप्त किया गया।

२. सर्पेण्टाइनीन—२६३-२६५° पर पिंघलता है और विबद्ध (decompose) हो जाता है। यह भी ०.०८ प्रतिशतक मिला।

इनके साथ ही निम्नलिखित संघटक भी मालूम किये गये—(क) एक तरु सान्द्रव (phytorterol), (ख) अक्षिक अम्ल (Oleic acid)।

कर्नल रा० ना० चोपड़ा के अनुसार क्षाराभों (एल्कलॉयड्स) के अतिरिक्त जड़ में उद्यास (रेज़िन) का काफी परिमाण और निशास्ता होते हैं। राख लगभग आठ प्रतिशतक प्राप्त होती है जिसके मुख्य घटक दहातु प्रांगारीय (Potassium carbonate) भास्वीय (Phosphates), सैकटीयन (silicate) और अत्यल्प लोह तथा लोहक (Maganese) है।

बाद में अन्वेषकों ने बताया कि अजमलीन और सर्पेण्टाइन समूहों में उपर्युक्त क्षाराभों के अतिरिक्त कुछ और भी क्षाराभ विद्यमान हैं। अमेरिका तथा दुनियां की अनेक प्रयोगशालाओं में अभी बड़े परिमाण में शोध कार्य हो रहा है।

रिसर्पीन—हजार गुणा अधिक क्रियाशील

स्विस प्रयोगशाला में १९४७ से १९५२ तक जड़ पर शोध करते हुए डाक्टर इ० एम० श्लिटलर और उनके सहयोगियों ने रिसर्पीन नाम का एक नया क्षाराम पृथक् प्राप्त कर लिया है। यह स्फटिकमय है। इसका विश्लेषण एक पेचीदा प्रक्रिया है। प्राप्त दवा जड़ की अपेक्षा एक हजार गुणा अधिक क्रियाशील है। एक दबाव को नीचे लाने में रिसर्पीन का प्रभाव यद्यपि मन्द है परन्तु इसका कोई विषैला प्रभाव नहीं होता।

क्षाराभों की प्रतिशतकता

सिद्दीकी और सिद्दीकी (जर्नल ऑफ इण्डि० केमि० सोसा० ८, १९३१) ने सूखी जड़ों में क्षाराभों (एल्कलॉयड्स) का कुल परिमाण ०.५ प्रतिशत प्राप्त किया था।

दत्त और दूसरे (इण्डि ज० ऑफ फार्मेसी, जि. ६. १९४७, पृ० ५५) के अनुसार १.२१ से १.३६ प्रतिशतक तक भिन्न भिन्न होता है। बम्बई (१९४८-४९)[1] में 'औषध के क्षाराभों पर कार्य किया गया। अलग-अलग किये गये तीन परीक्षणों में क्षाराभों का कुल परिमाण १.४५ प्रतिशत, १.५ प्रतिशत और १.४ प्रतिशतक पाया गया।' 'बिहार से प्राप्त जड़ों में क्षाराभों का कुल परिमाण १.४ से १.५ प्रतिशतक पाया गया और देहरादून से प्राप्त जड़ों में परिमाण १.९ प्रतिशतक का' (सम्पूर्ण जड़ की अपेक्षा जड़ की छाल में क्षाराभ (एल्कलॉयड) सामान्यतया आठ से १० गुणा अधिक होता है।'[1]

विश्लेषणों की इन रिर्पोटों में जड़ों का जो प्राप्ति स्थान दिया है वह सम्भवतः उनके

१ एनुअल रिपोर्ट ऑन फौरेस्ट यूटिलाईज़ेशन एक्टीविटीज ऐण्ड इकौनोमिक रिसर्च इन दि प्राविंस ऑफ बौम्बे १९४८-४९

व्यापारिक स्रोत का सूचक है और उससे यह ज्ञात नहीं होता कि परीक्ष्य जड़ें किस स्थान पर उगे हुए पौदों से ली गई थीं। सम्भव है कि स्थान भेद से क्षाराभों (एल्कलॉयड्स) की प्रतिशतकता में अन्तर पड़ जाय। देहरादून की वन-अनुसन्धानशाला (१९५०) ने अपनी वाटिका में उगाई दो वर्ष आयु की जड़ों को सुखाकर विश्लेषण किया था जिसमें क्षाराभों (एल्कलॉयड्स) का कुल परिमाण ०.३६ प्रतिशत ही निकला था। प्रतिशतकता में इस कमी का कारण सम्भवतः यह था कि ये जड़ें बहुत पतली थीं—व्यास में केवल १/८ इन्च, जब कि बाजार में सामान्यतया एक इन्च व्यास की मिलती हैं।

कार्य तथा प्रभाव—प्रयोग शालाओं के परीक्षण

दवा के क्रियाशील पदार्थों के भेषजीय कार्य अब तक सन्तोषजनक रूप से नहीं जाने जा सके हैं। सिद्दीकी और सिद्दीकी के अनुसार जड़ों से पृथक् प्राप्त किये गये सफ़ेद और पीले क्रियाशील तत्त्वों के शरीर पर कार्य करने की दृष्टि से दो भिन्न-भिन्न समूह बनते हैं। पहला अजमलीन समूह हृदय, श्वसन और चेताओं पर सामान्य अवसादक का कार्य करता है। दूसरा सर्पेण्टाइन समूह श्वसन को स्तम्भ (पैरा लाइज़) करता है और चेताओं को अवसन्न करता है परन्तु हृदय को उद्दीप्त करता है। ये पर्यवेक्षण मेंढकों पर हुए परीक्षणों से प्राप्त किये गये हैं और इस लिए उच्चतर प्राणियों पर ये परिणाम उसी रूप में पूर्णतया लागू नहीं हो सकते। सर्पेण्टाइन समूह के क्षाराभों (एल्कलॉयड्स) की घातक मात्रा वही पाई गई जो अजमलीन समूह की थी। यह मात्रा मेंढ़क के प्रति सहस्रधान्य (किलोग्राम) भार के लिए ·५ धान्य (ग्राम) थीं। चूहों के लिए घातक मात्रा चार गुणा अधिक थी। सेन और बोस (इण्डि. मेडि. वर्ल्ड, १९३१, जि. २,पृ.१९४) ने दवा का भेषजीय कार्य बिल्ली जैसे बड़े प्राणियों पर अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि सम्पूर्ण औषध का जलीय निस्सार जब प्राणियों की शिरा के अन्दर सूई द्वारा डाला गया तो कोई विशेष प्रभाव पैदा नहीं हुआ। उद्यासों (रेजिन्स) को भी अकेले दिया गया परन्तु गर्भाशय की मांसपेशियों को हलका सा उद्दीपन देने के अलावा इसका कोई विशेष प्रभाव नहीं देखा गया। उनके द्वारा पृथक् किये क्षाराभों ने बहुत सुनिश्चित परिणाम दिखाये। रक्त दबाव जरा सा गिर गया और श्वसन ज़रा सा तेज़ हो गया। हृदय की मांसपेशी अवसन्न हो गई थीं और छोटी आंतों की तथा गर्भाशय की मांसपेशियों जैसी सादी मांसपेशियां शिथिल हो गई थीं। मुख द्वारा लेने पर या अन्तस्त्वक् और अन्तर्मांस सूचिवेधों द्वारा, शरीर में डालने पर दवा क्षोभक नहीं है। रॉय (पटना ज. ऑफ़ मेडि.१९३१ अक्टू०) ने पाया कि दवा की साधारण मात्राओं से प्रतिक्षेपों (रिफ्लेकसेज़) पर और वेदना की अनुभूति पर कोई प्रभाव नहीं होता। यदि मात्रा बड़ी है तो इससे गहरी नींद आती है, प्रतिक्षेपों तथा वेदना की अनुभूति कम हो जाती है और श्वास केन्द्र के स्तम्भ के कारण श्वासावरोध से मृत्यु हो जाती है। श्वसन के बन्द होने के बाद भी कुछ समय तक हृदय धड़कता रहता है।[1]

---

१. चोपड़ा, गुप्ता और मुकर्जी; इण्डि. ज. ऑफ़. मेडि. रिस. १९३३, जि. २१, पृष्ठ २६१।

अजमलीन, सर्पेण्टीन और सर्पेण्टाइन क्षाराभों के भैषजिकीय कार्य का तुलनात्मक अध्ययन चोपड़ा और घोष ने किया। इनके द्वारा प्राप्त हुए परिणाम बहुत कायल कराने वाले थे। रासायनिक रचना में अजमलीन जैसे सर्पेण्टाइन से सादृश्य रखती है, भेषजिकीय कार्य में भी वैसी ही है। केन्द्रीय चेता-संहति पर दोनों का अवसादक कार्य होता है और ये रक्त दबाव को गिराते हैं; जबकि सर्पेण्टिनाइन बढ़ाता है। विशेष रूप से बनाये गये एक प्रदोल लिख (ओसिलोग्राफ़) से किये गये परीक्षण दिखाते हैं कि चेता की प्रेरणा की बारंबारता के निर्मोचन को अजमलीन कम करती है।

बिल्लियों को खिलाने के परीक्षण दिखाते हैं कि पृथक्-पृथक् किसी एक क्षाराभ की अपेक्षा संकलित क्षाराभों का निद्राकर असर अधिक स्पष्ट है।

नींद लाने वाली दवा

उन्माद-रक्त दबाव और वहम की दवा के रूप में इस पौदे ने महत्व प्राप्त कर लिया है। उन्माद की रामबाण दवा के रूप में जन साधारण में इसकी लोकप्रियता यह बताती है कि इसमें शामक गुण पर्याप्त हैं। प्रतीत होता है कि बिहार के लोगों को इस दवा का निद्राकर प्रभाव ज्ञात था। कहते हैं कि शिशुओं को नींद लाने के लिये इस दवा को देने की पृथा अब भी उस प्रदेश में कई स्थानों पर है। अमेरिका में जहाँ रक्त का उच्च दबाव किसी भी देश की तुलना में अधिक है वहां सर्पगन्धा का प्रयोग अत्यन्त लाभदायक पाया गया है।

रक्त के उच्च दबाव में

तीव्र मतिविभ्रम लक्षणों के उन्माद और उच्च दबाव के रोगियों पर सेन और बोस ने इसकी परीक्षा की। जड़ के चूर्ण की बीस से तीस ग्रेन की मात्राएं दिन में दो बार देने से न केवल शामक प्रभाव देखा गया परन्तु रक्त-दबाव भी घट गया था। एक सप्ताह में ही रोगी की संज्ञाएं फिर पहले की तरह साधारण अवस्था में आ जाती हैं; यद्यपि किसी-किसी उदाहरण में चिकित्सा अधिक दीर्घ काल तक करनी होती है। उच्च दबाव के रोगियों में इस दवा को सेन और बोस ने बहुत सन्तोषजनक पाया और उनका कहना है कि इसके प्रयोग में वाहिनियों के अन्दर दीवारों के स्थूल होने जैसे परिवर्तन भी नहीं देखे गये।

चिकित्सा सम्बन्धी गुणों में सर्पगन्धा की प्रतिनिधि सर्पीना टिकियें डाक्टर आर. डब्ल्यू. विल्केन्स और डॉ. डब्ल्यू. ई. जडसन ने उद्य तनाव के सौ से अधिक रोगियों को खिलाईं। इनकी रिपोर्ट आठ जनवरी १९५३ के न्यू इग्लैण्ड जर्नर ऑफ मेडिसन में प्रकाशित हुई है। रिपोर्ट सूचित करती है कि टिकियें शमन पैदा करती हैं और नींद को सुखद बनाती हैं। यह देखा गया है कि इनके प्रयोग में कभी-कभी दुःस्वप्न हो जाते हैं। प्रतीत होता है कि टिकियें सुचारु रूप से सहन हो जाती हैं। दवा के स्थायी प्रभाव छह सप्ताह से कम समय में पूर्णतया नहीं प्रकट होते। प्रकट रूप में यह ऐसी दवा नहीं है कि इसके सेवन की आदत पड़ जाय। उद्य तनाव की अधिक शक्तिशाली दवाओं के सहायक के रूप में भी इसे दे सकते हैं। इसके सेवन काल में अन्य किसी प्रकार के भी गम्भीर प्रभाव उत्पन्न होते हुए रिपोर्ट नहीं किये गये; यद्यपि इन अन्वेषकों ने पाया कि यह हृदय की धड़कन को कम करती है और नाक में अधिक रक्तता

(congestion) पैदा कर देती है, भार बढ़ाती है और आंतों का कार्य जरा सा बढ़ा देती है।[1]

पागलपन के कैसे रोगियों को दें ?

उन्माद के सब रोगियों को सर्पगन्धा से लाभ नहीं होता। खूब उत्तेजित और बलवान् रोगी पर इसका प्रयोग करना चाहिये। दुर्बल, निस्तेज और मनोवसादग्रस्त (melancoly) रोगी पर सावधानी से इसका प्रयोग करना चाहिए। इन रोगियों के रक्त के दवाव की परीक्षा पहले करनी चाहिए। दवाव यदि अधिक हो तभी सर्पगन्धा देनी चाहिए। जिन उन्माद रोगियों का रक्त दवाव कम हो उनको इससे लाभ नहीं होता।

अब तक प्राप्त विवरणों के आधार पर कहा जा सकता है कि उन्माद में और केन्द्रीय वात संस्थान की विक्षुब्ध अवस्थाओं में दिये जाने वाली शामक दवाओं की सूची में यह मूल्यवान वृद्धि होगी। दवा की उपयोगिता को पूर्णतया स्थापित करने से पूर्व इसका भेषजिकीय तथा प्रयोगशाला सम्बन्धी अध्ययन बड़े परिमाण में करना आवश्यक है।

बुखार, गर्भाशय के रोग

ज्वरहर के रूप में यह बहुत से स्थानों पर दी जाती है। बुखार और पैत्रिक विकारों में पानी के साथ दी जाती है। प्रवल ज्वर में देने से बेचैनी और मोह दूर होते हैं, अच्छी नींद आती है, प्रलाप दूर होता है, आँखों का वर्ण स्वाभाविक होता है और साथ ही ज्वर का वेग भी कम होता है।

यह भी वहां जाता है कि गर्भाशयिक संकोचों को बढ़ाती है और गर्भ को निकालने में सहायता करती है। बुखारों में और प्रसवोत्तर कालीन अवस्थाओं में इसकी उपयोगिता के दावों की पूर्णतया पुष्टि नहीं हुई। इस दवा को और अधिक बड़े पैमाने पर परीक्षा करना उपयोगी होगा (पोयजनस प्लाण्ट्स ऑफ इन्डिया)।

लैंगिक कष्टों में

अकारण लिंगोत्थान से जिनकी नींद उचट जाती हो और सिरदर्द रहता हो उन्हें इसके सेवन से लाभ होता है। सुज़ाक के परिणाम स्वरूप अत्यन्त ध्वजोच्छ्राय से जिन का शिश्न टेढ़ा होता है उन्हें यह देनी चाहिए।

पेट के रोग

जावा में यह पुलेपन्दक के नाम से बेची जाती है। वहां पर इसे पान में रख कर पेट के दर्द और अन्य कष्टों में चबाते हैं। यह उदर कृमिहर समझी जाती है।

विषों में

पैमल (ए मैनुअल ऑफ़ पॉयज़नस प्लाण्ट्स १९११) ने मत्स्य-विष के लिए इस पौदे के प्रयोग का उल्लेख किया है, परन्तु चोपड़ा और दूसरे लेखकों (१९४९) में भारत में इस औषध को इस प्रयोजन के लिए व्यवहार करते हुए नहीं पाया।

कहते हैं कि सर्पगन्धा को खाकर नेवला अपने को सांप से युद्ध में प्रतिरक्षित बना लेता है।

त्वचा के रोगों में यह अनेक तरह से बरती जाती है।

---

१. जर्नल अमेरिकन फार्मास्युटिकल एसोसिएशन, जिल्द १४, अङ्क २, फरवरी १९५३, पृ. ७०।

सहायक साहित्य

१. वाट, जार्ज — ए डिक्शनरी ऑफ दि इकौनोमिक प्रॉडक्ट्स ऑफ इण्डिया।

२. सेन, गणनाथ और १९३१ बोस कार्तिक चन्द्र — इण्डियन मेडिकल वर्ल्ड, जुलाई, जिल्द २ अंक ५।

३. चोपड़ा, रा० ना० १९३३ — इण्डिजिनस ड्रग्स ऑफ इण्डिया।

४. बर्किल, आई० एच०, १९३५ — ए डिक्शनरी ऑफ दि इकौनोमिक प्रॉडक्ट्स ऑफ मलय पेनिन्सुला, जिल्द २।

५. चोपड़ा, रा० ना०, बधवार, १९४९ र० ला० और घोष, सुधामयी — पॉयजनस प्लाण्ट्स आफ इण्डिया।

६. यादव जी त्रीकम जी २००७ संवत् — द्रव्य गुण विज्ञान

इत्यादि, इत्यादि।

चरक संहिता का इतिहास

लेखक—आचार्य श्री पं० रघुवीर शरण शर्मा, वैद्य, बुलन्दशहर

(गताङ्क से आगे)

आत्रेय पुनर्वसु

आत्रेय पुनर्वसु के पिता का नाम ऋषि-अत्रि और माता का नाम चन्द्रभागा था। इसी आधार पर पुनर्वसु को आत्रेय [1] और चान्द्रभागी तथा चान्द्रभाग भी कहते थे। चरक संहिता में पुनर्वसु को चान्द्रभागी कहा है "यथा प्रश्नं भगवता व्याहृतं चान्द्रभागिना" (च- सू- १३।१००) चरक टीकाकार चक्रपाणि ने चान्द्रभागी का अर्थ अग्निवेश किया है "चान्द्रभागी अग्नि-वेशः" यह ठीक नहीं हैं। चरक के दूसरे टीकाकार गंगाधर ने पुनर्वसु किया है "भग-वता चन्द्रभागा पुत्रेण पुनर्वसु आत्रेयेण" यह ठीक है यह इन का मातृद्योतक नाम है। भेड संहिता में पुनर्वसु को चान्द्रभाग कहा है "चान्द्रभागं पुनर्वसुम्" "चान्द्रभागमुवाच ह" पुनर्वसु ने वेद, वेदाङ्ग और आयुर्वेद का अध्य-यन अपने पिता ऋषि अत्रि [2] से किया था। और अत्रि ने आयुर्वेद का अध्ययन देवराज इन्द्र से किया था। जैसा कि काश्यप संहिता और चरक संहिता से स्पष्ट है। "इन्द्र ऋषि-भ्यश्चतुर्भ्यः कश्यपवसिष्ठात्रिभृगुभ्यः ते पुत्रेभ्यः शिष्येभ्यश्च प्रददुः।" (काश्यप संहिता पृ० ४२) अर्थात् ऋषि कश्यप, वसिष्ठ, भृगु और अत्रिने आयुर्वेद का अध्ययन देव राज इन्द्र से किया। अध्ययन के बाद अपने अपने पुत्रों और शिष्यों को पढ़ाया था। किन्तु उपरोक्त अत्रि, कश्यप, वसिष्ठ और भृगु आदि ऋषियों ने अरण्यवासी जीवन का परित्याग कर के ग्राम्य जीवन अपना लिया था। इस का दुष्परिणाम यह हुआ कि वे आयुर्वेद को भूल गये। साथ ही साथ उन की प्रभा, उन का तेज भी नष्ट होगया। तब पुनः वे सचेत हुए और सचेष्ट हुए पुनः आयुर्वेद के अध्ययन के लिये। तब पूर्वोक्त कश्यप, वशिष्ठ, भृगु और अत्रि गौतमादि ऋषि पुनः इन्द्र के समीप देवलोक में आयुर्वेद अध्ययन के लिये गये थे।[3] तब इन्द्र ने इनका स्वागत किया और आयुर्वेद का उपदेश भी किया किन्तु स्पष्ट शब्दों में यह चेतावनी भी दी थी कि "भवन्तो मत्तः श्रोतुमर्हंताथोप-धारयितुं प्रकाशयितुं च प्रजानुग्रहार्थम्। (च० चि- १।४।४) अर्थात् आपलोग मुझ से आयुर्वेद सुने, पढ़ें किन्तु इस का धारण करें और शिष्यों के द्वारा इस का प्रकाश करें ताकि जनता का कल्याण हो। मालूम होता है कि इन्द्र की चेतावनी पर ऋषियों ने ध्यान दिया, आयुर्वेद को पुनः भुलाया नहीं

---

१. गोपवन आत्रेय, वसुश्रुत आत्रेय, पुरु आत्रेय, गय आत्रेय, इष आत्रेय, विश्वसामा आत्रेयादि जो कि ऋग्वेद के मंत्रों के ऋषि हैं वे इन से भिन्न थे।

२. श्रीराम के समकालीन चित्रकूटा-श्रम निवासी अत्रि इन से भिन्न थे। उनकी स्त्री का नाम अनसूया था।

३ चरक संहिता चि० स्था० १।४।३।

जिस को परिमार्जित करने के लिये समय २ पर वे विवादों में भाग भी लेते रहे। प्रमाण स्वरूप भृगु, पुलस्त्य, अस्तित और गौतमादि एक बार पुनर्वसु आत्रेय के पास भी फलवस्ति का निर्णय करने गये थे जिस का उल्लेख चरक संहिता सिद्धिस्थान अ०११ में है। अस्तु प्रसङ्गवश में यह भी कह दूं कि— कश्यप, वसिष्ठ, अत्रि, पुलस्त्य और भृगु आदि नाम वाले अनेक ऋषि हुए हैं उन सबको एक ही मान लेना भारी भूल है। उदाहरणार्थ-आद्य-त्रेता युगीन पुलस्त्य रावण के पितामह थे। भृगु सैकड़ों वैदिकसूत्रों के ऋषि थे संजीवनी विद्या के ज्ञाता थे। इनकी स्त्री दिव्या जो कि हिरण्यकशिपु की पुत्री थी उससे दैत्य गुरु शुक्राचार्य थे। दूसरी स्त्री पौलौमी पुलोमा दानव की पुत्री से ऋषि च्यवन थे। कश्यप प्रजापति थे, देव, दैत्य, दानव, और मानवों के वे जनक थे, स्वयं इन्द्र कश्यप के पुत्र थे। अत्रि के चन्द्रमा पुत्र थे वे चन्द्र-वंश प्रवर्तक थे। भला वे इस द्वापर और कलियुग की सन्धितक लाखों वर्ष कैसे रह सकते थे। अस्तु, कुछ लोगों का विचार है कि पुनर्वसु का आत्रेय नाम अत्रि पुत्र के कारण नहीं बल्कि अत्रि वंशज होने के कारण है यह उनकी भूल है। चरक संहिता में ही एक नहीं अनेक स्थान पर स्पष्ट शब्दों में पुनर्वसु को अत्रि का पुत्र स्वीकार किया है। "इहात्रिजः सिद्धतमानुवाच। (च. सू. ३।३०) "शारीराण्यत्रिसूनुना ।" (च. सू. ३।५३) चात्रिसुतो ऽब्रवीदिदम्।" (च. सि. ११।१०) विज्ञानसमृद्धमत्रिजम्।" (च. सि.११।३) ज्ञानप्रशमतपोभिः ख्यातोऽत्रिसुतो जगद्धितेऽभिरतः। च.चि २२।३। मुनीन्द्रमत्र्यात्मजमग्निवेशः। (च॰ चि॰ १२।३)

सहस्रेद्वे निजगादात्रिनन्दनः। (वाग्भट शा॰ ११।१०) इस के अतिरिक्त हमारे कथन की पुष्टि ईसा की प्रथम शताब्दि में होने वाले बौद्धाचार्य अश्वघोष ने भी की है। चिकित्सितं यच्च चकार नात्रिः पश्चात्तदात्रेय ऋषिर्जगाद। (बुद्धचरित सर्ग १ श्लो॰ ४३)

अर्थात् जिस चिकित्सा शास्त्र का सृजन अत्रि ऋषि ने नहीं किया उसका उसके पुत्र ने किया था।

आत्रेय और कृष्णात्रेय

कुछ विद्वान् आत्रेय और कृष्णात्रेय को भिन्न-भिन्न व्यक्ति मानते हैं। यह विचार भी सत्य नहीं हैं। चरक संहिता में ही आत्रेय और कृष्णात्रेय को एक व्यक्ति अर्थात् पुनर्वसु स्वीकार किया है।

१ कृष्णात्रेयजितात्मानमग्निवेशोऽनुपृष्टवान्। च० चि० ३०।३।

२ त्रित्वेनाष्टौ समुद्दिष्टाः कृष्णात्रेयेण धीमता। च० सू११।६५।

३ अग्निवेशाय गुरुणा कृष्णात्रेयेण भाषितम्। च०चि२८।१५७

४ कृष्णात्रेयेण गुरुणा भाषितं वैद्यपूजितम्। च० चि० २८।१६४।

अशीतिकं नरं विद्यात् कृष्णात्रेयवचो यथा (भेलसंहिता) आदि आदि।

अग्निवेश

अग्निवेश ऋषि अग्नि [1] के पुत्र थे। वेद वेदाङ्ग, अष्टाङ्ग आयुर्वेद, धनुर्वेद, तथा दिव्यास्त्रों के पूर्ण ज्ञाता थे। अग्निवेश ने अध्यात्म विद्या का अध्ययन ऋषि गार्ग्य

---

१. अग्नि ऋग्वेद १०। १५४। १ का ऋषि था।

अग्नि यजुर्वेद अ० १३ और अ० २७ के अनेक मंत्रों का ऋषि है।

से किया था। और ऋषि गौतम ने ब्रह्म-विद्या का अध्ययन ऋषि अग्निवेश से किया था जिसका उल्लेख वृहदारण्यकोपनिषद् में है—"गौतमः अग्निवेश्यात् अग्निवेश्यो गार्ग्यात्।" (वृ० आ० उ० ४।६। १—२।

अग्निवेश ने कृष्णयजुर्वेदीय अग्निवेश संहिता, अग्निवेश कल्प, अग्निवेश गृह्य सूत्र[1] और अग्निवेश तंत्र (आयुर्वेद) जिसको चरक संहिता कहते हैं की रचना की थी। अग्निवेश ने वेद, वेदाङ्ग की शिक्षा और आग्नेयास्त्र ऋषि भरद्वाज से, धनुर्वेद की शिक्षा ऋषि अगस्त्य[2] से प्राप्त की थी और आयुर्वेद का ऋषि पुनर्वसु से अध्ययन किया था। अध्ययन करने के बाद हरद्वार के आस पास ही हिमालय पर कहीं आश्रम बना कर रहने लगे थे। आश्रम में किन-किन को और किस-किस विषय की इन्होंने शिक्षा दी यह बताना हमारे लिये कठिन है। इस समय हम केवल इतना बता सकते हैं कि पाञ्चाल राजा द्रुपद (द्रौपदी के पिता) और ऋषि भरद्वाज के पुत्र द्रोणाचार्य ने अग्निवेश से धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की थी और द्रोणाचार्य को अग्निवेश ने द्रोणाचार्य के पिता से सीखा हुआ आग्नेयास्त्र भी दिया था।

अध्यगीष्ट च वेदांश्च वेदाङ्गानि च सर्वशः
अग्निवेशं महाभागं भरद्वाजः प्रतापवान्।
अग्नेस्तु जातः स मुनिस्ततो भरतसत्तम।
भारद्वाजात्तदाग्नेयं महास्त्रं प्रत्यपादयत्।
म॰ भा आ॰ प॰ १३१।

अग्नि ऋषि के पुत्र अग्निवेशने ऋषि भरद्वाज से वेद, और वेदांग की शिक्षा पाई और इन्हीं से आग्नेयास्त्र प्राप्त किया था।

पाण्डव अर्जुन ने अङ्गारपर्ण गन्धर्व को इस आग्नेयास्त्र का इतिहास इस प्रकार बताया था।

पुरास्त्रमिदमाग्नेयं प्रादात् किल बृहस्पतिः।
भरद्वाजाय गन्धर्वगुरुर्मान्यः शतक्रतोः॥२८।

भरद्वाजादग्निवेश्यः अग्निवेश्याद् गुरुर्मम।

साध्विदं मह्यमददद् द्रोणो ब्राह्मण-सत्तमः। म॰ भा॰आ.प. १७२।

इस आग्नेयास्त्र को इन्द्र के गुरु वृहस्पति ने भरद्वाज को, भरद्वाज ने अग्निवेश को, अग्निवेश ने द्रोण को, द्रोण ने मुझ को दिया था और मैं आज तुझ को देरहा हूं।

राजा द्रुपद और द्रोण की शिक्षा

राजा द्रुपद और द्रोणाचार्य ने सर्वप्रथम वेद और धनुर्वेद की शिक्षा ऋषि भरद्वाज से प्राप्त की थी।

स नित्यमाश्रमं गत्वा द्रोणेन सह पार्षतः।
चिक्रीडाध्ययनं चैव चकार क्षत्रियर्षभः।

ऋषि भरद्वाज का आश्रम गंगा द्वार हरद्वार था[1]। ये अविवाहित थे। दैव संयोग से एक बार घृताची नाम की अप्सरा से समागम हुआ उसी से द्रोण का जन्म हुआ था और वह भी वृद्धावस्था में[2]। भरद्वाज वेद, वेदाङ्ग, अष्टाङ्ग आयुर्वेद और धनुर्वेद के

१. अग्निवेश गृह्य सूत्र मिलता है।

२. ये अगस्त्य आयुर्वेद प्रवर्तक थे। इन्हों ने आयुर्वेद की शिक्षा अत्रि, वशिष्ठ और कश्यपादि ऋषियों के साथ देवराज इन्द्र से प्राप्त की थी। च. चि. १।४।३—४।

१. गङ्गाद्वारं प्रतिमहान् बभूव भगवानृषिः।
भरद्वाज इति ख्यातः सततं संशितव्रतः।
म॰भा॰आ॰प॰१३१।

२. द्रोण का जन्म महाभारत से लगभग १०० वर्ष पूर्व का है।

ज्ञाता थे। पुनर्वसु के वैद्य सम्मेलन और अन्य विवादास्पद विषयों में भाग लेने देवलोक जाया करते थे किन्तु धनुर्वेद इन का प्रधान विषय था। धनुर्वेद के अद्वितीय पंडित थे जैसे कि शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म ने कहा है "गान्धर्वं नारदोवेद भरद्वाजो धनुर्ग्रहम्।" म. भा. शा. प.।२१०।२१।

अगस्त्यस्य धनुर्वेदे शिष्यो मम गुरुः पुरा।
अग्निवेश इति ख्यातस्तस्य शिष्योस्मि भारत।६।
तपसा यन्मयाप्राप्तममोघमशनिप्रभम्।
अस्त्रं ब्रह्मशिरो नाम यद् दहेत् पृथिवीमपि।१०।
ददता गुरुणा चोक्तं न मनुष्ये त्वयाऽनघ।
भारद्वाज विमोक्तव्यमल्पवीर्येष्वपि प्रभो।
म० भा० आ० प० १४१

द्रोणाचार्य पाण्डव अर्जुन से कहते हैं कि अग्निवेशने धनुर्वेद ऋषि अगस्त्य[1] से सीखा और मैंने अग्निवेश से सीखा था। मैंने बड़े परिश्रम से ब्रह्मशिर नामक अस्त्र अग्निवेश से प्राप्त किया है। इसके प्रयोग से पृथिवी भी जल उठती है और का तो कहना ही क्या। मुझे बताते समय मेरे गुरु अग्निवेश ने यह आदेश दिया था कि इसका प्रयोग कभी दुर्बल मनुष्यों पर मत करना।

राजा द्रुपद और द्रोण का अग्निवेश से शिक्षा पाना

महर्षेरग्निवेशस्य सकाशमहमच्युत।
शस्त्रार्थमगमं पूर्वं धनुर्वेदचिकीर्षया। २६
ब्रह्मचारी विनीतात्मा जटिलो बहुलाःसमाः।
अवसं सुचिरं तत्र गुरुशुश्रूषणे रतः। २७
पाञ्चालो राजपुत्रश्च यज्ञसेनो महाबलः।
इष्वस्त्रहेतोर्न्यवसत्तस्मिन्नेव गुरौ प्रभुः। २८
स मे तत्र सखा चासीदुपकारी प्रियश्च मे।
म० भा० आ० प० १३२।

द्रोणाचार्य भीष्म से कहते हैं कि मैं अग्निवेश ऋषि के पास धनुर्वेद सीखने गया था। मैं अग्निवेश के पास ब्रह्मचारी, जटाधारी रहकर बहुत वर्षों तक रहा हूँ। उन्हीं के पास पांचाल राज यज्ञसेन (द्रुपद) भी धनुर्वेद सीखा करता था। वहीं पर एक साथ रहने के कारण मेरी और द्रुपद की मित्रता हो गई थी।

वक्तव्य—इस प्रकार आचार्य द्रोण और राजा द्रुपद ऋषि भरद्वाज और ऋषि अग्निवेश दोनों के धनुर्वेद में शिष्य थे। ऋषि भरद्वाज जब तक जीवित रहे तब तक भरद्वाज से और भरद्वाज के दिवंगत होने पर अग्निवेश के समीप चले गये। ऋषि भरद्वाज की मृत्यु के समय द्रोण बालक थे इसी कारण भरद्वाज द्रोण को आग्नेयास्त्र नहीं दे सके। इसकी पूर्ति ऋषि अग्निवेश से की।

अग्निवेश संहिता निर्माण का समय

अग्निवेश तंत्र की रचना के सम्बन्ध में मेरा निश्चित मत है कि महाभारत से पूव द्वापर युग में हुई थी जिसके निम्नलिखित आधार हैं।

---

१. भगवान् श्रीराम के समकालीन अगस्त्य इनसे भिन्न थे। इनका आश्रम दण्डकारण्य में था। इन की स्त्री राजकुमारी-वैदर्भी लोपामुद्रा थी। ये भी धनुर्वेद के पंडित थे इल्वल और वातापि असुरों को इन्होंने ही मारा था और जब श्रीराम दण्डकारण्य में गये थे तब ऋषि अगस्त्यने हेम, रत्न विभूषित वैष्ण धनुष और और अमोघ शर राम के अर्पण किये थे। वाल्मीकि अरण्यकांड।

फाल्गुन २०१२

(१) अबूरैहां अलबेरूनी जो कि भारत आक्रान्ता शाहबुद्दीनगौरी के साथ ११ वीं शताब्दि में भारत में आया था। उसने अपनी भारत यात्रा के विवरण में लिखा है कि चरक द्वापर युग का एक ऋषि था। उस समय उसका नाम अग्निवेश था परन्तु पीछे से—"आयुर्वेद विज्ञान की व्याख्या की तो उसका नाम चरक हो गया।" अलबेरूनी का भारत भाग २ पृ: ७०।

अलबेरूनी ने भारतीयों से जैसा सुना वैसा लिखा हालांकि उसकी विदेशी होने के कारण शब्द रचना सुन्दर नहीं है किन्तु इससे यह अवश्य सिद्ध होता कि ११ वीं शती तक भी भारती यह जानते थे कि अग्निवेश संहिता का निर्माण द्वापर युग का है।

(२) युद्ध भूमि कुरुक्षेत्र में शरशय्यापर पड़े हुए भीष्म ने आयुर्वेद प्रवर्तक आत्रेय की चर्चा की है "देवर्षिचरितं गार्ग्यः कृष्णात्रेय-चिकित्सितम्" म० भा० शा० प० २१०।२१।

(३) द्रोणाचार्य ऋषि अग्निवेश के शिष्य थे। अनुमानतः २० वर्ष की आयु तक शिक्षा पाई थी। यह समय भारत युद्ध से ७० वर्ष पूर्व का है क्योंकि भारत युद्ध में शस्त्रपंडित द्रोण की आयु ९० वर्ष की थी[1]। १० वर्ष यदि शिक्षा काल मान लेते हैं जैसा कि द्रोण ने स्वयं "बहुलाः समाः" कहा है तो यह समय भारत युद्ध से ८० वर्ष पूर्व का होता है। तव पूर्ण साहस के साथ कहा जा सकता है कि निश्चय ही अग्निवेश संहिता का निर्माण इससे पूर्व कर चुके थे क्योंकि विद्या समाप्ति के बाद तंत्र रचना मुख्य कार्य था। और विद्या समाप्ति भारत युद्ध से १२५ वर्ष पुर्व हो चुकी थी ऐसा हमारा अनुमान है।

(४) अग्निवेश के सहपाठी ऋषि पराशर थे ये ऋग्वेद के सूक्त के ऋषि थे[1]। स्पष्ट लिखा है "पराशरः शाक्त्यः" अर्थात् शक्ति का पुत्र पराशर। वशिष्ठ के पौत्र और व्यास के पिता थे। भारत युद्ध के समय व्यास की आयु १५५ वर्ष की थी अतः कम से कम पराशर की १७५ की अवश्य थी। और इनका विद्याध्ययन समाप्ति काल ५० वर्ष भी मान लिया जाय तो भारत युद्ध से १२५ वर्ष पूर्व का समय होता है।

जतूकर्ण—जतूकर्ण भी अग्निवेश के सहपाठी तथा पुनर्वसु के शिष्य थे। जतुकर्ण के जतूकर्ण, नातूकर्ण और जातूकर्ण्य नाम मिलते हैं।[2] जतूकर्ण को वायु पुराण में ऋषि वशिष्ठ का पौत्र कहा है।[3] अतः जतूकर्ण और पराशर भाई भाई थे। जतूकर्ण और पराशर ने ऋग्वेद का अध्ययन ऋषि बाष्कल से किया था। जतूकर्ण ने पुराण और इतिहास अपने भ्राता पराशर से

---

१. आकर्ण पलितश्या वो पञ्चाशीति ...कः। म० भा० द्रो० प० १९३।४३।

१. ऋ० १।६५।१। ऋषिः पराशरः शाक्त्यः।

२. वेदव्यासस्तथा जज्ञे जतूकर्ण पुरः सरः मत्स्य० पु० ४७।२४६।

(अ) तथा च- जातूकर्णवचः। च०चि० ३।६३।जेज्जट।

(आ) अत्र- जतुकर्णेन। च० चि० ३। १३८।जेज्जट।

(इ) जतूकर्णेप्युक्तम्। च० चि० ३। १९७ चक्रपाणि।

३. तन्नप्त्रे चातियशसे जातूकर्ण्याय चर्षये। वा० पु० १।१०।

सीखा था । और ब्रह्मविद्या ऋषि आसुरायण तथा यास्क से प्राप्त की थी । और व्यास ने ब्रह्मविद्या जातूकर्ण्य से सीखी थी । पाराशर्यो जातूकर्ण्याज्जातूकर्ण्य आसुरायणाच्च यास्काच्च । बृहदारण्यकोपनिषद् ४।६।३। और आयुर्वेद जातूकर्ण्य ने अपने भ्राता पराशर के साथ पुनर्वसु आत्रेय से प्राप्त किया था। जतूकर्ण पराशर से आयु में छोटे थे या बड़े यह नहीं कहा जा सकता फिर भी इनका समय भी लगभग वही भारत युद्ध से पूर्व १७५ (एक सौ पिचहत्तर) वर्ष होता है।

(५) निमिविदेह, भीष्म, वशिष्ठ, अत्रि, पुलस्त्य, दुर्मुखपाञ्चाल, और नग्नजित् गांधार आदि के समकालीन था । यह वेद, आयुर्वेद, वेदान्त और धर्मशास्त्र का पंडित था। व्यास ने अपने पुत्र शुकदेव को वेदान्त सीखने के लिए जब निमि के पास भेजा था तो यह कहा था कि "स धर्मकुशलो राजा मोक्षशास्त्र-विशारदः।" (म० भा०शा० प० ३५३।११) अर्थात् वैदेह निमि धर्म शास्त्र और वेदान्त का अद्वितीय पंडित है अतः तुम उनके पास जाकर वेदान्त का अध्ययन करो । इसी वैदेह-निमि के यहां पर ब्रह्मवादिनी गार्गी और याज्ञवल्क्य जैसे ब्रह्मवादियों का जमघट रहता था । याज्ञवल्क्य निमि का सखा और गुरु था। याज्ञवल्क्य के उपदेशों पर ही निमि ने अपने पुत्र कराल को राज्य देकर सन्यास ग्रहण किया था। यह सन्यास ग्रहण करने का समय भारत युद्ध से लगभग १०५ वर्ष पूर्व का है ।

युधिष्ठिर की राज्य सभा प्रवेश के समय वैदेह निमि और उसका पुत्र कराल दोनों दिवंगत हो चुके थे। इनके अभाव में कृतक्षण नाम का विदेह उपस्थित था। "वैदेहोऽक्ष कृतक्षणः।" (सभापर्व) इसी सभा में दिवंगत किन्तु प्रसिद्ध राजाओं की चर्चा हुई थी उसमें निमि का भी नाम था[1]। कराल जनक भी आयुर्वेद और वेदान्त का पण्डित था । कराल शालाक्यतंत्रकार था जिसके उद्धरण टीकाओं में आज भी मिलते हैं। कराल ने आयुर्वेद का अध्ययन अपने पिता निमि से किया था जिसको उसने स्वयं वशिष्ठ से कहा है । किन्तु खेद है कि कराल की मृत्यु विलासिता के कारण हुई । कराल एक ब्राह्मण कन्या पर आसक्त हो गया था । यही आसक्ति उसकी मृत्यु का कारण बनी जिसका उल्लेख आचार्य कौटिल्य और महन्त अश्वघोष ने किया है [2]। भारत युद्ध के समय शरशय्या पर पड़े हुए जो कराल जनक और वशिष्ठ का संवाद कहा है उसको पुरातन इतिहास नाम दिया है । अत्र ते वर्तयिष्यामि इतिहासं पुरातनम् । वशिष्ठस्य च संवादं करालजनकस्य च । म. भा. शा. प. ३०२।७।

पुरातन इतिहास का अभिप्राय लगभग १०० वर्ष का भी मानते हैं तो यह संवाद का समय भारत युद्ध से १०० वर्ष पूर्व होता है।

(६) गान्धारराज नग्नजित् जिसका दूसरा नाम दारुवाह भी था जो कि ऋषि कश्यप और पुर्नवसु का शिष्य था वह न केवल उसका पुत्र सुबल भी भारत युद्ध से पूर्व ही दिवंगत हो चुका था । हां, भारत युद्ध से लगभग ३५ वर्ष पूर्व युधिष्ठिर की सभा प्रवेश

---

१. अरिष्टनेमिः सिद्धश्च कृतवेगः कृति-
निमिः । सभापर्व ८।८

२. कामाद् ब्राह्मणकन्यामभिमन्यमान
विननाश करालश्च वैदेहः । कौ० अ०
शा० पृ० ३

(क) कराल जनकश्चैव हृत्वा ब्राह्मण
कन्यकाम् । अवाप भ्रंशमप्येवं न
सेजे न मन्मथम् । बुद्ध चरित ४।८

के समय सुबल उपस्थित था। उपरोक्त प्रमाणों के आधार पर मेरा निश्चित मत है कि न केवल अग्निवेश संहिता अपितु कश्यप संहिता की भी रचना भारत युद्ध के १०० वर्ष पूर्व अवश्य हो चुकी थी।

भारत युद्ध का समय

भारत युद्ध के सम्बन्ध में ३ हज़ार से ६ हज़ार वर्ष तक समय बीता है ऐसे भारतीय तथा विदेशी विद्वानों के विभिन्न मत हैं।

अतः मैं इस विवाद में न पड़ कर केवल स्कन्दपुराण को एक प्रमाण उपस्थित करके लेख समाप्त कर रहा हूँ।

ततस्त्रिषु सहस्रेषु दशाधिकशतत्रये।
भविष्यं नन्दराज्यं च चाणक्यो यान् हनिष्यति।

स्कन्द' पु' माहेश्वरी खंड कौमारी खण्ड म्र. ४०

अर्थात् कलियुग के ३ सहस्र ३ सौ १० वर्ष वीतने पर नन्दवंश का राज्य होगा। १०० वर्ष नन्दों का, राज्य रहा तब यह संख्या ३ हजार ४ सौ १० हो गई। इसके बाद चन्द्रगुप्त मौर्य का राज्यारोहण काल ई० सन् से २७० वर्ष पूर्व हुआ। २७० में १९५५ वर्ष जोड़ने से दो हजार दो सौ २५ वर्ष हुए। २२२५ को ३४१० में जोड़ने से ५ हजार ६ सौ ३५ वर्ष हुए। यह समय गत कलि का हुआ। भारत युद्ध से ३६ वर्ष तक द्वापर रहा है। द्वापर के अन्त तक और कलि के प्रथम दिन ही युधिष्ठिर ने राज्य त्याग दिया है अतः ५६३५ में ३६ वर्ष जोड़ने से ५ हजार ६ सौ ७१ वर्ष होते हैं' भारत युद्ध के समय के। और अग्निवेश संहिता भारत युद्ध से सौ वर्ष पूर्व बन चुकी थी। अतः ५६७१ वर्ष में १०० वर्ष जोड़ने से ५ हजार ७ सौ ७१ वर्ष होते हैं अग्निवेश संहिता के निर्माण को।

बौद्धकालीन पुनर्वसु

इतना स्पष्ट हो जाने के बाद पुनर्वसु बौद्ध कालीन थे, वे तक्षशिला में आचार्य थे। अजातशत्रु का योग्य पुत्र जीवक उनका शिष्य था आदि बातों पर विचार करना अनावश्यक है।

—:०:—

निखिल भारतवर्षीयायुर्वेदमहामण्डलरूप एकचत्वारिंशत्तमे अधिवेशने संभाषापरिषदि पठितो वैज्ञानिकनिबन्धः

ज्वरस्य स्वतन्त्रतापादकं स्वरूपम्

आयुर्वेदशिरोमणि, आयुर्वेदवाचस्पति, सी० के० दिवाकरन्, एम० ए०, राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालयम्, हैदराबाद (द०)

इह खलु ज्वरो नाम सकलधातुक्षयापादको दारुणो रोगः संतापलक्षणः। प्राणिमात्रसाधारणं नानोपद्रवञ्चैनं प्रथमं प्रधानञ्चामयानामामनन्ति परमर्षयः। ज्वरसंज्ञाप्रवृत्तिनिमित्तसमालोचनेन स्फुटमवगम्यते ज्वरोऽसौ संतापसंवेद्य इति। अत एव आधुनिक वैद्यकनये ज्वरः केवलं लिंगमेवेति प्रतिपादितम्। परन्तु ज्वरविषये किञ्चित् विलक्षणं दर्शनं प्राचीनानामित्याकलयामः।

"यथा स्वजन्मोपशयाः स्वतन्त्राः स्पष्टलक्षणाः" इतिरीत्या आयुर्वेदे ज्वरः स्वतन्त्ररोगकोटिमधिरोहतीति ज्वरमीमांसकाः। यद्यत्र ज्वरस्वतन्त्रः तर्हि, किं तावदस्य स्वतन्त्रतापादकं स्वकीयं रूपमिति विवेचनीयं भवति। आयुर्वेदसम्मतस्य ज्वरस्य आन्तरिकं स्वरूपं उपशयश्च आयुर्वेदशाणकषणेनैव यथा विशदीभवति तथा निरूपयामः।

प्रथममेव ज्वरस्य स्वतन्त्रताख्यापिकां संप्राप्तिमेव विवेचयामः। संसृष्टाः सन्निपतिताः पृथग् वा कुपिताः दोषाः आमाशयं प्रविश्याममनुगम्य रसवहादि स्रोतांस्यवरुद्ध्य पाचकाग्नि स्वाधिष्ठानात् बहिर्विक्षिप्य गात्रमतिमात्रं तपन्ति। इति संप्राप्तिविदः। तथा च वाग्भट :

"....१ मलास्तत्र स्वैः स्वैर्दुष्टाः प्रदूषणैः २ आमाशयं प्रविश्याममनुगम्य पिधाय च, ३ स्रोतांसि, पक्तिस्थानाच्च निरस्य ज्वलनं बहिः ४ सह तेनाभिसर्पतस्तपन्तः सकलं वपुः ५ कुर्वन्तो गात्रमत्युष्णं ज्वरं निर्वर्त्तयन्ति ते" वा. नि. अ. २—

अत्रेदमवधेयम्

(१) ज्वरारंभकैः कुपिता दोषाः आमाशयं प्रविशन्ति एतेनैतदुक्तं भवति। आमाशयो इतरकोष्ठाङ्गानि वा रोगाधिष्ठानमिति।

(२) आमाशयः प्रागेव आमसंदूषितः अतःएव तत्र दोषप्रवेश इति।

(३) आमानुगमनेन दोषाः रसवहादीनि स्रोतांस्यवरुन्धन्ति।

(४) कायाग्निः स्वाधिष्ठाने अतीव मन्दतामेति, भूयसा शाखापरिक्षिप्तश्च भवतीति।

(५) एवं च यद्यपि ज्वरः संतापलक्षणः, ज्वराधिष्ठानं पुनरामसंचयात् स्रोतोमुखावरोधान् कायाग्नेः स्थानभ्रंशाच्चातीव शीतलं संजायते इति ज्ञायते। ननु शीतस्थानप्रभवोयं ज्वरः कथंकारं संतापतामुपेतु प्रभवति कथं वा शीतस्वभाव आमदोषः संतापलक्षणं ज्वरमभिनिर्वर्त्तयति, आमदोषदूषिताश्च दोषाः कथं वा आमोन्मूलनायैव ज्वरमुदीरयन्तीतिचेत् उच्यते।

आमसंचयादेव आमाशये दोषाणां प्रवेशः अत एव आमाशयो ज्वराधिष्ठानमित्यत्र न

कापि विप्रतिपत्तिः। शीतस्वभाव आमदोषः संतापात्मकं ज्वरमुत्पादयितुं न प्रभवतीति च समीचीनं वचः। परन्तु शरीरेऽस्माकं निग्रहानुग्रहक्षमो रोगनिवारणनिराकरणपरायणो वर्त्तते कश्चन शक्तिविशेषः शास्त्रे बलम् ओज इति वा व्यपदिश्यमानः। तेनैवोजसा प्रेरिता: दोषाः आमोन्मूलनाय आमाशयं प्रविशन्तीत्याकलनीयम्। स्थाने चैतत्, आमसमुद्भवस्य सर्वधातुक्षयापादकस्य ज्वरस्य आजोशनत्वात्। आमाशयप्रविष्टाश्च दोषाः आममपहृत्य कोष्ठांगानां प्रकृतिस्थापनाय ज्वरोष्माणंमुदीरयन्तीति विदितवेदितव्याः। तथा च संतापात्मकतयाभ्युपगतो ज्वरः न तावत् पारमार्थिकं रोगस्वरूपमपि तु रोगनिर्हरणक्षमो शारीरिकव्यापार एवेति मनोरमः पक्षः। ज्वरशब्दवाच्यस्य रोगस्य पुनः किं वास्तविकं रूपमिति ज्वराधिष्ठान एव अन्वेष्यं भवति। दोषदूष्ययोः परस्परमाश्रयाश्रयिभावात् दोषप्रदूषकाः धातुदूषकाश्च भवन्तीति शास्त्राभिमतमेतत्। अत एव ज्वरे दोषप्रदूषकैरेव पूर्वमामाशये आमस्य संभव इति च संगच्छते। आमशब्देन चेह न केवलमामरसस्य अपि तु अपरिणतिमापद्यमानस्य शरीरघटकमात्रस्य ग्रहणं भवति। "पिधाय च स्रोतांसि" इति वचनात् अवगम्यते, ज्वरे आमाशयान्तरीयकलागतानां क्लेदककफावहानां स्रोतसां मुखान्यप्यवरुद्धानि भवन्तीति। एवं च क्लेदककफः आमाशयान्तरीयश्लेष्मकलान्तः आममामुपैतीत्यत्र न विसंवादावकाशः, स च आमाशयान्तरीयकलायाः प्रदाहाय च प्रकल्पते। अत एव ज्वरे धातुवैषम्य समुद्भवे आमसंचयान् शीतलो आमाशयः स्रोतोमुखावरोधात् पाचकाग्न्यपचयाच्च एकान्तशीतलः निर्व्यापारश्च संपद्यते इति संप्रतिपद्यामहे। ज्वरस्यामाशयसमुद्भवत्वेपि दोषानुसारेण इतराण्यपि पच्यमानपक्वाशयादीनि कोष्ठांगानि ज्वरे विकृतिमापद्यन्ते इत्यनुवतसिद्ध मेतत्। एतच्च ज्वरशब्दवाच्यस्य रोगस्य स्वकीयं आन्तरिकं च रूपमिति ज्वरमीमांसकाः।

"भेत्ताहि भेद्यमन्यथा भिनत्तीति" रीत्या अभिप्रायवशात् ज्वरो बहुविधविकल्पनै र्विकल्पितः संहितासु। ज्वरः कारणभेदेन अष्टविधः स्मृतः। दोषभेदेन सप्त आगन्तुकश्चैक इति। "पुनः पंचविधो दृष्टः दोषकालबलाबलात्" इति विशिष्टस्वभावस्य ज्वरपंचकस्य च पृथक् वर्णनमप्युपलभ्यते। पंचविधज्वराणां अष्टविधज्वरान्तर्गते आगन्तुकज्वरे कथंचित् समावेशे कार्येपि "दोषकालबलाबला" दिति वचनभंग्या स्पष्टमवगम्यते अष्टविधज्वरात् पंचविधज्वरः विजातीय एवेति।" प्रायशो सन्निपातेन—भूयसा तूपदिश्यते" इति वाग्भटवचनमपि उक्तमेवार्थं समर्थयति। किं तावदत्र ज्वरपंचकस्य इतरभेदख्यापकं स्वकीयं रूपमिति काचिदत्र विचारसरणिराखन्यते।

ज्वराः दोषधातुवैषम्यशंभूताः निजा इति आगन्तुहेतुजा आगन्तव इति खलु व्यपदिश्यन्ते। पंचविधज्वराः निजागन्तुकोभयस्वभावाः इति मन्यामहे। दोषकालबलादिति कण्ठरवेणोक्तत्वात् निजागन्तुकानां च लक्षणानां तत्र दर्शनाच्च। कालजाः दोषसंचयप्रकोपप्रसरादयः कालबलमन्तरापि आहारादिवशात् क्वचित् सद्योपि समुत्पद्यन्ते इत्यायुर्वेदसमयः। अत एव वाग्भट:

इतिकालस्वभावोयं आहारादिवशात् पुनः
चयादीन् यान्ति सद्योपि दोषा :.....

वा. सू. अ. १२-२८

एतेनैतदुक्तं भवति। कालस्वभावसमुद्भवाः सन्ततादिज्वराः कालबलमन्तरेणापि कालस्वभावाधानकैः आहारजातैः सद्योपि समुत्पद्यन्ते इति। अत एव कालजज्वराः प्रायः कालबलेन कदाचित् दोषबलेन क्वचित् दोषकालोभयबलेन, कुत्रचित् दोषकालयो रन्यतरस्य हीनबलेन।

अधिकबलेन वा प्रादुर्भवन्ति इति परमर्षयः। तथा च कालजज्वरः निजागन्तुकोभयस्वभावा इति स्थितिः। किंच, ज्वराः कोष्ठगताः शाखागताश्चेति मार्गद्वयाधिष्ठानाः, तत्र निजज्वराः कोष्ठाधिष्ठाना इति पूर्वमेव प्रतिपादितम्। आगन्तवः पुनः शाखासु वर्तन्ते। निजागन्तुकाः संततादिज्वराः प्रायः कोष्ठशाखोभयाधिष्ठानाः इति ज्वरकोविदाः। तथा च कालजज्वराणां विच्छिन्नसंतापिनां मुक्तानुबन्धित्वे दोषाणां पर्यायेण कोष्ठशाखागमनमेव नियामकमिति च संगच्छते।

अथ किमसौ संततज्वरो विच्छिन्नसंतापी अविच्छिन्नसंतापिनां सततादीनां वर्गे प्रथमं पठितः इति चेत् सत्यम्। सन्निपातनिमित्तो संततज्वरः न केवलमामाशयाश्रयीअपि तु रसरक्तवहानि स्रोतांसि मूत्रपुरीषवहस्रोतांसि व आश्रित्यावतिष्ठते। एवंच संततज्वरे आमाशयपच्यमानाशयपक्वाशयात्मकं कोष्ठमात्रं ज्वराधिष्ठानं संपद्यतेति तत्वम्। तथा च वाग्भट :

धातुमूत्रशकृद्वाहिस्रोतसां व्यापिनो मलाः।
व्यापयन्तस्तनुं सर्वां तुल्यदूष्यादिवर्धिताः॥
बलिनो गुरवः स्तब्धाः विशेषेण रसाश्रिताः।
सन्ततं निष्प्रतिद्वन्दं ज्वरं कुर्युः सुदुस्सहम्॥
वा. नि. २ : ५८, ५९

"व्यापिनो मलाः" इति वचनसामर्थ्यात् अवगम्यते कफादीना दोषाणां क्रमेण मूलस्थानभतमामाशयं पच्यमानाशयं पक्वाशयं चान्तरा सन्ततज्वरे कफस्य निवेशस्थानापन्नयोः फुप्फुसयोः पित्तस्य निवेशस्थानभूतयोः यकृतप्लीहयोः वातस्थाने नाडीसंस्थाने च यथायथं दोषभिव्याप्ति र्भवतीति। तथा च अत्र प्रकोपमापन्नानां त्रयाणामपि दोषाणां मूलस्थानानि निवेशस्थानानि च ज्वराधिष्ठानमिति तुल्यदूष्यमूर्च्छनावशात् दोषाः अत्यन्तं बलिनः संपद्यन्ते।

संततज्वरोयं वातोल्वणः पित्तोल्वण. कफोल्वण श्चेतित्रिधा विकल्पनमर्हति। कफोल्वण सन्तते दोषकालवशात् आमाशयमन्तरेण फुप्फुसयोश्च सुतरां दोषव्याप्तिर्भवति अत एवास्मिन् ज्वरे कफज्वर लिङ्गादृते फुप्फुसच्छद कलाप्रदाहः क्वचित् तत्कलान्तः तोयसंचयो वा प्रादुर्भवति। आधुनिकवैद्यके Pneumonia इति प्रसिद्धो नव्यैरायुर्वेदज्ञैः श्वसनक इतिकृतसंज्ञको जीवाणुविषसमुद्भवो ज्वरः प्राचां कफोल्वणसन्निपातजो संततज्वर एवेति वयमाकलयामः। पित्तोल्वणसंन्निपातजे सन्तते पित्तद्रवाणां क्रियाक्षेत्रभूते पच्यमानाशये क्षुद्रान्तसहिते नितरां विकृतिरुत्पद्यते इति न्याय्यमेतत् अतस्तत्र क्षुद्रान्ते व्रणशोथ क्षतो रक्तस्रावो वा संभवति। तथा च आधुनिकवैद्यके Typhoid इति नव्यायुर्वेदे आन्त्रिक इति च व्यपदिश्यमानो ज्वरः प्राचां पित्तोल्वणसंतत एवेति प्रतिभाति।

ननु "विषमो विषमारंभक्रियाकालानुषंगवान्" इतिनियमात् विषमज्वरान्तर्गतः संततः कथं संततो भवतीति चेदुच्यते।

ज्वरसंप्राप्तिपर्यालोचनेन स्पष्टमवगम्यते आमाशयः कोष्ठांगानि वा ज्वररोगाधिष्ठानमिति। निजज्वरे आहारादिवशात् आमाशये आमदूषिते सति दोषाणां तत्र प्रवेश इति प्रागभिहितम्। एवं च रोगस्थानं

रोगारंभकदोषस्थानं च तुल्यमिति स्थितिः। निजज्वरे दोषाः एतादृशं स्थानबलमवाप्य निरन्तरमेव ज्वरमुदीरयन्ति। विषमज्वरे तु दोषाः यथायथं रसरक्तयोः मांसे अस्थिसन्धिषु वा अवतिष्ठन्ते। ज्वरारंभकदोषाणां ज्वरस्य च भिन्नाधिष्ठानत्वमिति विभावनीयम् ज्वरस्य ज्वरारंभकदोषाणां च विभिन्नाधिष्ठानत्वमेव विषमज्वराणां वैषम्ये अथवा मुक्तानुबन्धित्वे नियामकं भवति। शाखागताश्च दोषाः ज्वरवेगोदीरणाय न प्रभवन्ते स्थानबलाभावात्। तथापि ते ज्वरारंभककारणैः प्रदूषिता इति सर्वथा ज्वराधिष्ठानं कोष्ठं प्रवेष्टुं प्रयत्नशीला वर्तन्ते। शाखालीनाः हेतुप्रतीक्षिणश्च दोषाः कोष्ठे काले चानुगुणे अवाप्तबलाः कोष्ठप्रवेशप्रयत्ने सफलाः भवन्ति। काले चाननुगुणे कोष्ठे च विपरिणामं गते तत्रावस्थातुमक्षमाः दोषाः पुनः शाखासु विलीना भवन्ति। दोषस्थानसंशुद्धिपर्यन्तं ज्वरः पुनः पुनरावर्तते चेति विषमज्वराणां मुक्तानुबन्धित्वमित्यलं पल्लवितेन।

संततज्वरे दोषाः भूयसा रसाधिष्ठिताः वर्तन्ते। रसवहस्रोतोमुखानि रसग्रहणाय सदा कोष्ठोन्मुखानि वर्तन्ते। अत एव संततज्वरारंभकाः दोषाः साकल्येन रसलीनाः भवितुमसमर्थाः निरन्तरं ज्वरं निर्वर्तयन्ति। दोषस्थानज्वरस्थानयोः निकटसंबंधात् संततज्वरो विच्छिन्नसंतापी भवतीत्यायुर्वेदीयं दर्शनम्। संततः कालबलप्रवृत्तः संततसंतापी चेति तस्य कालजज्वरेषु प्रथमं पाठः।

अथ विश्लेषणविनोदिनां विदूषां विनोदाय आयुर्वेदप्रोक्तान् ज्वरान् शास्त्रानुमतया रीत्या विकल्पयामः।

ज्वरोः प्रथमतः द्विधा विभागमर्हति स्वतन्त्रपरतन्त्रश्चेति स्वतन्त्रः पुनः निजागन्तु भेदेन द्विधा स्मृतः। निजज्वरः एकदोषजद्विदोषज सान्निपातिकभेदेन सप्तसंख्यामधिगच्छति। सन्निपातज्वरवर्णनावसरे च दाहादिः शीतादिरिति सन्निपातज्वरस्य प्रकारः प्रदर्शितः। तत्र पित्तस्य पृथग् अवस्थानात् सः अयुतसन्निपात इति अपरः युतसन्निपात इति च संज्ञामर्हति संहितासु त्रयोदशविधस्य सन्निपातज्वरस्य उल्लेखात् ग्रन्थान्तरेषु नामतो लक्षणतश्च सन्धिकादिसन्निपातज्वराणां वर्णनात् च युत सण्निपातः त्रयोदशविद्यः इति अभ्युपेयमेव। तथा च संहितासु सप्तधा विकल्पितो निजज्वरः एकविंशतिभेदान् अधिगच्छति इत्यत्र न कापि विप्रतिपत्तिः।

अथ आगन्तुज्वरः अभिघाताभिषंगाभिशापाभिचरभेदेन चतुर्विधः प्रोक्तः। अभिघातजो क्षतभंगजः दाहजः श्रमजः इति त्रिधा विभक्तः। अभिषंगजज्वरेषु ओषधिगन्धनिमित्ताः शारीरिकानां कामक्रोधादिजानां मानसिकानां ज्वरानां समावेशात् अभिषंगजः शारीरो मानसश्चेति द्विधा विभागमर्हति। संततादिज्वरपंचकं शारीरे अभिषंगजे ज्वरे अन्तर्भाव्यम्। तथा च शारीराभिषंगजः ज्वरः कालजः द्रव्यजश्चेति विकल्पनीयः। द्रव्यजः पुनः औषधीगन्धज विषजश्चेति द्विविधो भवतिसंततादि ज्वरेषु संततो अविच्छिन्नसंतापी सततादयः अविच्छिन्नसंतापिन इति कालजज्वरस्यापि द्वैविध्यं विद्यते। मानसिकोभिषंगजज्वरः ग्रहावेशजः मनोविकारजश्चेति पुनः द्विविधः। वैकारिकश्च, क्रोधजभयजकामजभेदात् चतुर्विधः। शापाभिचारजयोः न विकल्पः प्रदर्शितः। एवं च आगन्तुज्वरः सप्तदश इति निजागन्तुविकल्पनै विकल्पिताः अष्टत्रिंशत् ज्वराः दृष्टा परमर्षिभिः।

अन्ते च ज्वरस्य स्वतन्त्रां चिकित्सा-युक्तिं च संक्षेपेण प्रदर्शयामः। ज्वरे दोषविजृंभितः कायाग्निसंतापः आमदोषपाचनेन रसवहस्रोतोमार्गविशोधनेन च कोष्ठांगानां स्वस्य च प्रकृतिस्थापनाय प्रकल्पते इति सूक्ष्मदृशः। ज्वरोष्मणः एतादृशशरीरोपकारकव्यापारे अवश्यमेव भिषजा साहाय्येन भवितव्यम्। ज्वरादौ आहारैरौषधैर्वा आमाशयस्य विश्रमभंगो ज्वरोष्मणः उपरोधो वा नेष्टः। अत एव पूर्वरूपकाल एव ज्वरे उपवासमेवमुपदिशन्ति महर्षयः। तथा च वाग्भटः......तस्मात् कुर्वीत लंघनम्

प्राग्रूपेषु ज्वरादौ वा बलं यत्नेन पालयन्
बलाधिष्ठानमारोग्यमारोग्यार्थः क्रिया-क्रमः। वा. चि. १.२.

उपवासोपचारे च शरीरबलोपरि परं ध्यानं आधेयमिति चानुस्मारयन्ति आचार्याः बलाधानस्य समस्तरोगे चिकित्सितत्वात्।

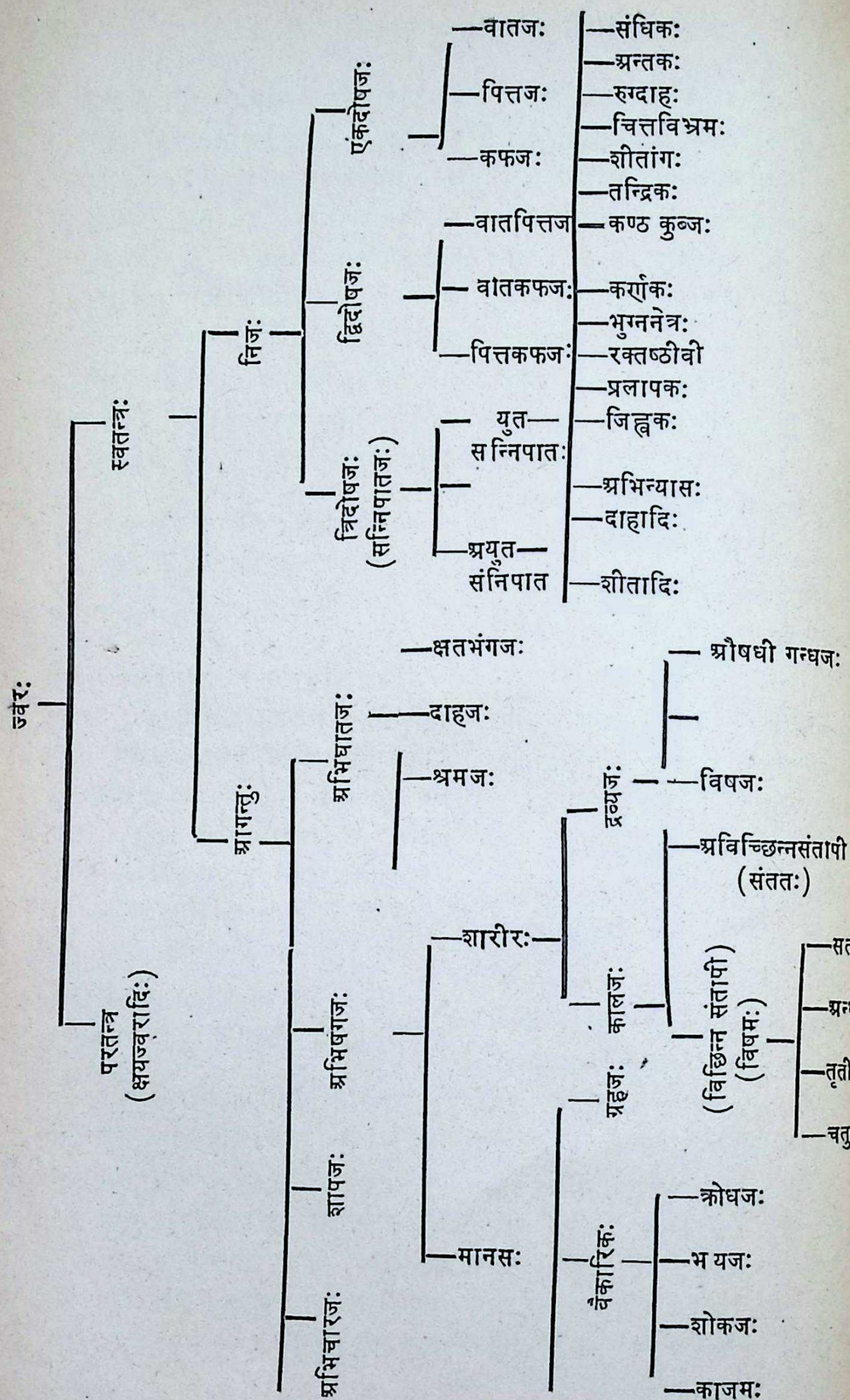
शुद्धवातक्षयागन्तु ज्वरेषु लंघनं
नेष्यते, तेषु तु हितं शमनं यन्न कर्शनम्
वा. चि. १. २.

अथ लंघनोद्दिष्टाम् षडहचिकित्सां निर्दिशन्ति "लंघनं स्वेदनं कालो यवागु तिक्तको रसः इति। आमदूषितानां कोष्ठांगानां विश्रमाय उपवासः, स्रोतोमार्गविशोधनाय स्वेदः, अग्नि संधुक्षणाय पेयाक्रमः, सर्वोपरि दोषपाकाय कालमर्यादा चेति षडहचिकित्साक्रमीकृतेत्यवसेयम्। यदि ज्वरः केवलहेत्वाश्रयी स्यात् तर्हि षडहचिकित्सयैव ज्वरोपशान्तिर्भवति। यदि ज्वरः स्थानसंश्रयेणाधिकं दूष्यसंमूर्च्छितः स्यात् तर्हि ज्वरस्यानुवर्तनं सहजमेव। धातुदूषणेन आमदोषस्य प्रकारान्तरेण अभिव्याप्तेः। अतः आमशेषस्य पाचनाय ज्वरस्य शमनाय कफस्य क्षपणाय रसप्रधानैः ज्वरहरैश्च द्रव्यैः कषायपानं चाचरेत्। यथावत् प्रयुक्तया च दशाहचिकित्सया निजज्वराणामुपशान्तिमभिलषन्ति चिकित्सकाः। यदि शरीरबलस्य ज्वराधिष्ठानस्य वा बलक्षयात् जीर्णज्वररूपेण ज्वरस्यानुवर्तनं भवति, तर्हि बलाधानयुक्त्या सर्पिषः प्रयोगो विधीयते।

कषायपानपथ्यान्नैर्दशाह इति लंघिते
सर्पिर्दद्यात् कफे मन्दे वातपित्तोत्तरे ज्वरे
वा. चि. अ

दशाहचिकित्सानन्तरप्यनुवर्तमाने ज्वरे चैतादृशी दोषावस्था। एतेनैतदुक्तं भवति दशाहचिकित्सानन्तरं कफे क्षपिते ज्वरे वातपित्तप्रधाने संजाते घृतसेवनमुत्तमम् अन्यथा दशाहान्तरमपि तद् विषायते इति। घृतसेवनानन्तरमपि कदाचित् पक्वः विलन्नो वा दोषशेषः कोष्ठात् बहिर्निर्गन्तुमक्षमो ज्वरानुबन्धं करोति। तत्र शरीरबलानुसारेण मृदुशोधनेन कामं क्षीरपानेनैन वा दोषनिर्हरणमाचरेत् इत्यलमकाण्डे विस्तरख्यापनेन।

एवं च निजज्वराणां विलक्षणदोषेतिकर्तव्यतया विजातीयदोषदूष्यसमूर्च्छनया तदनुसारेण क्रमीकृतया आमपाचनस्रोतोशोधन कफप्रतिसारण अग्निसंधुक्षण बलाधानपरया स्वतन्त्रया चिकित्सासरण्या च आयुर्वेदसंमतस्य ज्वरस्य स्वतन्त्रतापादकं स्वरूपं स्फुटं भवति।


ज्वरः
स्वतन्त्रः
परतन्त्र (क्षयज्वरादिः)
निजः
आगन्तुः
एकदोषजः
द्विदोषजः
त्रिदोषजः (सन्निपातजः)
वातजः
पित्तजः
कफजः
वातपित्तज
वातकफजः
पित्तकफजः
युत— सन्निपातः
अयुत— संनिपात
संधिकः
अन्तकः
रुग्दाहः
चित्तविभ्रमः
शीतांगः
तन्द्रिकः
कण्ठ कुब्जः
कर्णकः
भुग्ननेत्रः
रक्तष्ठीवी
प्रलापकः
जिह्वकः
अभिन्यासः
दाहादिः
शीतादिः
अभिघातजः
क्षतभंगजः
दाहजः
श्रमजः
अभिषंगजः
शापजः
अभिचारजः
शारीरः
मानसः
द्रव्यजः
कालजः
ग्रहजः
वैकारिकः
औषधी गन्धजः
विषजः
अविच्छिन्नसंतापी (संततः)
(विछिन्न संतापी) (विषमः)
सततः
अन्येद्युः
तृतीयकः
चतुर्थकः
क्रोधजः
भयजः
शोकजः
काजमः

मानस-विज्ञानम्

लेखक—डॉ० बलदेव शर्मा शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य, आयुर्वेद बृहस्पति, D. S. c. A.
मनोविज्ञानविशेषज्ञ, B. A. M. N. M. S. (Berlin)

३—सत्त्वावजयः

(१) शारीरमपि सुखं सत्त्वाधीनमेव।

यथोक्तं चरके :—
"सत्त्वमित्युच्यते मनः, तच्छरीरस्य तन्त्रकम्"
"शारीरमपि सत्त्वमनुसरति" इत्यपि च।

सत्त्वावजयाद्धि चित्तविक्षेपनिग्रहः, मानस-सुखसंप्राप्तिश्च। मनोऽर्थानाञ्च बुद्ध्या सह समयोगात्, मानसं शारीरमपि सुखम्। यादृशाश्च मनोऽर्थास्तादृशमेव शारीरम्। विक्षेप-बहुले मनसि न शरीरस्य प्रकृतिस्थत्वम्। नापि क्लिष्टे मनसि दैन्योपेतायाञ्च धृतौ बलवत्त्वं शरीरस्य।

(२) मनसो बुद्धेश्च हीनमिथ्यायोगा-योगजनिता विकृतिश्च, मनस्येव मूर्तिमती। अतः सत्त्वस्यैव जयः, प्रकृतिस्थत्वं चेष्यते, लक्ष्यते च।

(३) बुद्ध्या सह मनसो योगः सम इत्य-भीष्टम्। तच्च धिया, मनःस्मृत्योर्योगरूपेण निष्पाद्यते। धृत्या च धीर्नियम्यते। धीधृति-स्मृतिसमुदाय एव बुद्धिः।

(४) स्मृतिः साक्षित्वेन स्थिता, यत्कि-ञ्चिदपि पश्यति, प्रतिबिम्बं तस्य स्वात्मनि स्थापयति; येन मनो यथेच्छं यथापेक्षितं वा ज्ञानवृद्ध्यर्थं, श्रेयोऽर्थं, सुखार्थं, दुःखपरिहा-रार्थं च पश्येत्प्रागनुभूतम्। स्मृत्यैवाधिष्ठितं मानसम्। 'स्मृतिनाशाद्विनश्यति।' अनयैव ज्ञानोदयः। अनयैव च तत्त्वज्ञाने, सात्म्यार्थ-प्रतीतौ च मनः शक्नोत्यभीष्टं निष्पादयितुम्।

(५) "सत्वावजयः" "मनोविनिग्रह" इति वा, किम्? नहि मनो निःसंकल्पं कर्तुं पार्यते। अहितादर्थान्निग्रह इति चेत्, किम-हितमिति दुष्करं निर्धारयितुम्। सर्वमेव हितमहितं वा देशकालबलप्रकृतिभेदैर्विभि-न्नम्। यथा हि—अहिंसोन्मुखं गुडाकेशं हृषी-केशो हिंसाकर्मणि प्रावर्तयत्।

सात्म्यार्थप्रवृत्तिः, स्मृतिपूर्वाश्च सर्वे समारम्भा इत्येव हिताचरणमित्यध्यात्म-विज्ञानम्। स्मृतिपूर्वाइति—नैजसंस्कार-सहजाः, स्वस्वभावसिद्धाः, निजप्रकृतिसात्म्याः; त एव च स्वधर्मनियताः।

न खलु "दुष्टमेतत्कर्म" इति चिन्त-यन्नरो मनोऽर्थं संस्तम्भयँस्तत्प्रभावाद्विनि-र्मुच्यते। संस्तम्भिताः मनोऽर्थाः क्लेशवास-नारूपैरधितिष्ठन्ति मानसं, विकृतिं चैव जनयन्ति, इति निर्दिष्टपूर्वमेव।

गुडाकेशो विषादमाकुलीभावञ्च सह-सैवानुभवन् विचलितधृतिरनिश्चितमतिश्चा-भवत्। तस्मिन्समये तस्य स्मृतिपूर्वकाः, स्वसंस्कारसुलभाः, क्षत्रियसहजाश्च भावाः, अपरोपनिधानाभिगृहीतया प्रज्ञावादवशीभू-तया धिया संस्तम्भिताः, ते भावाः स्मृतितिरो-हिता अभवन्। भावांस्तानेव जनार्दनोऽर्जुन-चेतसि प्राबोधयत्। स्मरणाच्च तेषां, मनसि सत्यमनोऽर्थोदयात्, धृत्युत्साहसमन्वितो विनिश्चितमतिश्च गुडाकेशः प्रोवाच—"नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाऽच्युत"।

स्वभावः

(६) स्वभावः प्रकृतिर्वा, शैशवकालीन-शिक्षासंगतिकर्मानुभवजातमनुसरति । अतश्च मातापितरौ गुरुजनांश्चानुगच्छति । पूर्वजन्मागतसंस्कारजातं, मानवानां सामूहिकं वा संस्कारजातं, बीजरूपेण विराजत एवेति निर्विवादमेव ।

स्वधर्मः

(७) संस्कारानुकूलैव धृतिः । धृतौ विचलितायां क्षुब्धायामाकुलीभूतायां वाऽखिलं मानसं विकृतिमापद्यते । धृतिरेव धारयति मानसम् । धृतिशक्तिमुपष्टम्भयति इत्यस्मादेव धर्मस्य धर्मत्वम् । स्वधर्मश्च स्वसंस्कारानुकूलं कर्म ।

निम्नाङ्किताः गीतोक्तयोऽत्र विशदीकुर्वन्ति प्रस्तुतार्थम् ।

"स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः" श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः" "सहजं कर्म कौन्तेय सदोषमपि न त्यजेत्" "स्वभावनियतं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम्" "सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानपि" "स्वभावजेन कौन्तेय निबद्धः स्वेन कर्मणा, कर्तुं नेच्छसि यन्मोहात्करिष्यस्यवशोऽपि तत्" ।

"सत्त्वं विधेयं विशदा च बुद्धिः" (चरक)

(८) "सत्त्वं विधेयं" इति चरकोक्तं सम्यगवगन्तव्यम् । विधेयं, न हि विधायकम् । सत्त्वमिन्द्रियार्थप्रतिनिधित्वाद् बाह्यस्य जगतः स्पर्शावहं प्राथमिकं साधनम् । तदनुभूतमेव स्मृत्याभिगृह्यते । धिया चोपयुज्यते । एतद् बुद्धिविधानं सत्त्वानुष्ठानस्य । बुद्धिविधानमन्तरैव यदि मनोऽप्रतिहतमर्थप्रतीत्यै प्रवर्तेत, तदा मनुष्यः पशुवदाचरेत् । उत वा एवं वाच्यं :—मनस एव विधाने, अनुशासने, यदि बुद्धिर्भवेत्तदा नरः सबुद्धिकपशुवदाचरेत् । यथा राक्षसवनचरप्रभृतयः । एतदस्ति सत्त्वस्य विधायकत्वम् ।

परं सत्त्वं विधेयमित्येव श्रेयस्करम् । स्मृतिपूर्विकया धिया निश्चिता, धृत्या चोत्साहप्रसादादिभिर्नियमिता प्रवृत्तिः सर्वारंभेषु-इतीदमस्ति बुद्धेर्विधायकत्वं मनसश्च विधेयत्वम् ।

(९) "विशदा च बुद्धिः" इत्यपि चरकोक्तं विचारणीयम् । "बुद्ध्या विशुद्धया युक्तो" इत्यपि च । न मनसाऽच्छादिता धीर्विशुद्धा । धिया स्मृतिपूर्वकमेव निश्चेतव्यम् । अपरोपनिधानानुशासिता प्रज्ञावादप्रभाविता धीर्न विशुद्धा । नापि विशदा मिथ्यायोगहेतोः ।

(१०) पुनश्च चरकतन्त्रे 'बुद्ध्या धृतिगृहीतया' "धृत्याऽऽत्मानं नियम्य च" । इदमत्राभिप्रेतम् । धृतिर्हि स्मृतिसंन्निकर्षात्स्मृतिसमाहितानां सत्यमनोऽर्थानां प्रतीत्यर्थं, मनो धियं च नियमति ।

अपरोपनिधानाभिगृहतीया छद्मरूपैर्मनोऽर्थैराच्छादितया मिथ्यायोगयुक्तया धियापि धृतिबलमपेक्ष्यते । धृतिमन्तरा तु न क्षणमपि मानसस्य स्थितिः परं मिथ्यायोगायोगयुक्तैव धृतिरेवम् ।

स्वस्मृतिपूर्विका धृतिस्तु पूर्णोत्साहसमन्विता प्रकृतिस्था च ।

धृतिहीनो मनुष्यः, सन्देहपरिपूर्णः, विचलितविश्वासः, मनोऽभिघातासहः, विषण्णः, श्रद्धाविहीनः, अनिष्टाशंकी, मनोदैन्योपेतः, चलचित्तः, विपरीतार्थपरः, दुःखोन्मुखश्चापि कदाचित् भवति । परैरुपष्टभ्यते । विनाशोन्मुखो वा भवति ।

धृतिर्मनो धियमुभे नियमति । धृतिबलसमन्वितः पुरुषो यदिष्टं तत्सर्वं साधयितुं क्षमते । धृतिरेव धर्मभावेन ज्ञायते । धृतिगृहीता, धृत्या धारिता बुद्धिरेव श्रेयस्करी ।

फाल्गुन २०१२

स्वधर्मेण तदेवाभिप्रेतं यत् स्वधृत्या धारितम्। धृतिरपि तानेव भावान्धारयितुं शक्नोति ये स्वसंस्कारसहजाः, स्वभावनियता-इव।

तत्त्वमेतत्! यत्किञ्चदपि धृत्या पूर्ण-बलेनावलम्बितं तंनिश्रेयसकरं धर्मानुकूलञ्चेत्य-वगन्तव्यम्। अत एवोक्तं यत्किञ्चिदपि भय-शङ्का-लज्जादिभावसमन्वितं तत्सर्वं पापकर्म।

संस्कारसाक्षात्कारः

(११) ज्ञानाग्निना कर्मदहनं—संस्कार-साक्षात्करणमिति वा किम्। उच्यते। अनु-भूतानां विषयाणां प्रतिबिम्बानि, पुराकृत-कर्मणां च संस्काराः, स्मृतौ तिष्ठन्ति इति ज्ञातमेव। स्मृतय एव संस्काराः। तत एव वासनानामुद्गमः।

यथोक्तं व्यासभाष्ये —

"यथानुभवास्तथा संस्काराः, ते च कर्म-वासनारूपाः। यथा च वासनास्तथा स्मृतिः। संस्कारेभ्यः स्मृतिः, स्मृतेश्च पुनः संस्काराः।"

(योग सूत्र भाष्य ४. ९)

एतच्चोक्तम् :—

"वृत्तिसंस्कारचक्रमनिशमावर्तते"

(यो० सू० भाष्य १.५)

मनसि साकल्येन प्रबुद्धाः समुदिताश्च वासनासंस्काराः स्मृतिसाधनेन द्रष्टृत्वशक्त्या दृष्टा भवन्ति। दर्शनेन च द्रष्टृदृश्योः संयोगो हीयते। संयोगहानेन च तद्रूपत्वं विनश्यति। तेषां प्रभावेन च मानसं विनिर्मुच्यते। एतद्धि साक्षात्करणं संस्काराणाम्।

एवं वा वाच्यम्। द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थि-तया धिया वासनानां सम्यग्दर्शनेन, ता वासना अर्थप्रतीतिमन्तरा अपि विगतवेगाः, पुरुषार्थशून्याः, निरर्थकाः, अत एव दग्धा इव, भस्मीभूता इति जायन्ते।

एतच्च दर्शनं सम्यग्ध्यानेन। वासना-मूलकतत्त्वानामेकैकशः प्रबोधनेन। प्रसंख्यान-मेतद्योगदर्शननिर्दिष्टम्; ध्यानञ्च।

"द्रष्टृदृश्ययोः संयोगो हेयहेतुः"

(यो० सू०)

"विवेकख्यातिरविप्लवा हानोपायः"

(यो० सू०)

"पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रतिप्रसवः कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा वा चितिशक्तेरिति"

(यो० सू०)

"ध्यानहेयास्तद्वृत्तयः" (यो० सू०) (प्रसंख्यानेन ध्यानेन) (यो० भा०)

"हानमेषां क्लेशवदुक्तम्" (यो० सू०) (प्रसंख्यानेन ध्यानेन) "प्रसंख्यानं विवेक-साक्षात्कारः" इति विज्ञानभिक्षुः। योगदर्श-नोक्तय एताः प्रस्तुतमर्थं विशदीकुर्वन्ति।

(१२) प्रत्यक्षानुभवसिद्धमप्येतत्। विचारोद्गारवमनात्, क्लिष्टस्य भावावेग-स्योदीरणात्, मानसिकव्यथावेदनानिसृतेश्च मनःक्लेशहानं विगतवेगवत्त्वं च भावनानाम्। वस्तुतस्तु ज्ञानप्रतीत्यर्थमेव तेषामुद्गमनो-न्मुखत्वम्। ज्ञानप्रतीत्यनुगतैवार्थप्रतीतिः। ज्ञानसम्पर्कश्चावरुद्धप्रवाहनिःसृतिवदेव प्रश-मयति क्लेशम्। ज्ञानादेव वियोगस्तेषां संस्त-म्भनम्। ज्ञानेन सह संयोगस्तेषां मोक्षः। ज्ञानक्षेत्रे उदयनमेव प्रवृत्तीनां समाप्तिः। विषयार्थप्रतीतिः पुनर्भवतु, न वा भवतु। ज्ञानवृत्तेर्वशीकारत्वे जाते, न तासां क्लेशकर-त्वम्।

योगभाष्ये चैतत् :—

(१३) "ख्यातिपर्यवसानं हि चित्तचेष्टितम्" यो० भा० १.५०

अत्र विज्ञानभिक्षुः—"चित्तस्य व्यापारो विवेकख्यातिपर्यन्तः। विवेकख्यातिनिष्पत्तौ सत्यां प्रवर्तकपुरुषार्थासम्भवात्।"

अनेन ज्ञायते कुतः सम्यग्ज्ञानात्साक्षात्करणाच्च, वासनानां वेगहीनत्वं सञ्जायते इति। न हि वासनाः, विषयार्थपूर्तिं क्रियारूपसमाप्तिमेव वाऽपेक्षन्ते पुरुषार्थहानाय। पुरुषार्थः प्रवर्तकवेग इति।

(१४) विषयार्थपूर्त्तिस्तु तावदेवापेक्षिता यावन्न सम्यग्दर्शनं तत्तन्मूलस्थितसंस्काराणाम्। प्रज्ञावादेत्यादिभिर्हेतुभिस्तिरोहितसंस्काराः मानवाः, मिथ्यामनोऽर्थरूपान्विषयाननुधावन्ति, यावन्न साक्षात्कुर्वन्ति तिरोहितपूर्वं मूलभूतं संस्कारजातम्। मार्गेण चानेन मनुष्याः महान्तं कालं, बहूनि च जन्मानि यापयन्ति। विषयोपभोगजन्यपरितापादिकमनुभूयानुभूय, पदात्पदमुपक्रम्य, क्रमेण तत्तद्वासनायाः सत्यं सत्यं स्वरूपमवलोक्य विनिर्मुच्यन्ते तत्तद्वासनानुशासनतः।

उक्तं हि योगदर्शने :—

(१५) "निमित्तमप्रयोजकं प्रकृतीनां, वरणभेदस्तु ततः क्षेत्रिकवत्" यो० सू० ४.३

अत्र भाष्यम् :—"न हि धर्मादिनिमित्तं प्रयोजकं प्रकृतीनां भवति। न हि कार्येण कारणं प्रवर्त्यत इति। कथं तर्हि, वरणभेदस्तु ततः क्षेत्रिकवत्—यथा क्षेत्रिकः केदारादपां पूरणात् केदारान्तरं पिप्लावयिषुः समं निम्नं निम्नतरं वा नापः पाणिनापकर्षति, आवरणं त्वासां भिनत्ति, तस्मिन् भिन्ने स्वयमेवापः केदारान्तरमाप्लावयन्ति, तथा धर्मः प्रकृतीनामावरणं भिनत्ति। तस्मिन् भिन्ने स्वयमेव प्रकृतयः स्वं स्वं विकारमाप्लावयन्ति ।

···धर्मोनिवृत्तिमात्रे कारणमधर्मस्य। न हि प्रकृतिप्रवृत्तौ धर्मो हेतुर्भवति।" इति। अवगन्तव्यञ्चातः। प्रकृत्यैव नरः स्वसंस्काराभिमुखं प्रवर्त्तते। स्वसंस्कारविमुखत्वं तु प्रज्ञावादलोकभयादिभिरभिभूतया धियैवापाद्यते। तन्निवारणमेव धर्मस्य तत्त्वम्।

(१६) प्रस्तुते तन्त्रे स्मृतिप्रबोधनव्यापारवता विज्ञानेन मानसविकृतिजयोऽभिलक्ष्यते। एतदेव च सत्त्वावजयप्रक्रियात्मकं विज्ञानम्।

अनेनैव विज्ञानेन मनोबुद्धिसमाधानं, संस्कार-साक्षात्करणं, प्रकृत्यावरणभेदनं, धर्माभ्युदयश्च। (क्रमशः)

—

Pandit Shiv Sharma's address at Ahmednagar

(Reproduced from Sunday Standard and Bombay Samachar, Bombay.)

पं० शिवशर्मा के अहमदनगर के भाषण का संक्षिप्त सारांश

(सण्डे स्टैण्डर्ड और बम्बई समाचार से उद्धृत)

अहमदनगर २५ फरवरी

Presiding over the Annual Memorial Meeting of the late Gangadhar Shashtri Gune, Pt. Shiv Sharma paid a glowing tribute to the pioneering work he had done for Ayurvedic education, medical relief and pharmacy. The Ahmednagar Ayurvedic College and Pharmacy were abiding monuments to his practical genius.

Addressing the students present Pandit Sharma said that the direction of the Ayurvedic education and the future of the Ayurvedic students had been matters of grave concern to him. No student in India was so discriminated as the Ayurvedic student. He studied two medical systems and got half the remuneration against other graduates who studied one system and got double the salaries. Till recently he was saddled with allopathic subjects removed from M.B.B.S. course long ago for being too difficult and useless even for the allopaths themselves. In certain States he was forced to study allopathy for the major part of his academic career

स्वर्गीय गंगाधर शास्त्री गुणे की ५ वीं पुण्य तिथि की अध्यक्षता करते हुए पं० शिवशर्मा ने श्रद्धांजली अर्पित करते हुए कहा कि स्वर्गीय शास्त्री जी ने आयुर्वेदिक शिक्षा, चिकित्सा और औषधनिर्माण के क्षेत्र में उच्चकोटि का प्रारंभिक कार्य किया। अहमदनगर आयुर्वेदिक महाविद्यालय तथा रसशाला उनकी साधक बुद्धि के ही जीवित प्रमाण हैं।

उपस्थित विद्यार्थियों को संबोधन करते हुए पण्डित जी ने कहा कि आयुर्वेदशिक्षा की चाल और विद्यार्थियों का भविष्य चिन्ता के कारण थे। भारतवर्षमें किसी अन्य विद्यार्थी को ऐसे अन्याय का सामना नहीं करना पड़ता था जितना कि आयुर्वेद के विद्यार्थी को। एक पद्धति का अध्ययन करके दो गुना वेतन लेने वालों के समक्ष इसे दो प्रणालियों का अध्ययन कराकर आधा वेतन दिया जाता है। अब तक इसका पाठ्यक्रम ऐसे विषयों से लदा रहा है जो ऐलोपैथिक पाठ्यक्रम से भी अति क्लिष्ट और अनुपादेय समझ कर कभी के निकाले जा चुके हैं। कुछ राज्यों में उसके विद्यार्थी जीवन का अधिकांश समय बलात्

and then debarred from practising it, being forced to practise Ayurveda which he was hardly taught. This was causing strikes and bitterness.

The Government of Bombay have taken a great step forward in introducing an intensive Ayurvedic course to enable the student to learn and practise it with confidence and competence. But the greatest and the most crucial reform came only this month when the Ayurvedic department was raised to a separate and independent unit. Thus all unnatural impediments had been removed and the way cleared for an untrammelled progress of the science. Only a strong, progressive and advanced State could take such an advanced step. The Ayurvedic profession of India owed a debt of gratitude to the Health Ministry of Bombay for blazing the trail for the rest of the country to follow. The Government had done its duty. The responsibility now rested squarely on the shoulders of the vaidyas themselves. It was for them to redeem it. But torn with mutual strife would they be able to grasp the opportunity firmly?

Referring to the level-headedness and peaceful nature of the late Gangadhar Shastri, Pandit Sharma said that a healthy mind was as important as a healthy body. The centre had left the task of prevention of disease exclusively to allopathy, a science whose conception of mental and moral disease was extremely primitive, and did not go beyond the control of the mentally deficient who were manifestly dangerous to society. Ayurveda alone had extended full textual

ऐलोपैथी पर व्यय कराकर उसे ऐलोपैथी के अभ्यास की आज्ञा नहीं। उसे केवल आयुर्वेदिक चिकित्सा करने पर बाध्य किया जाता है यद्यपि आयुर्वेद उसे न के बराबर सिखाया जाता है।

बम्बई सरकार ने गंभीर आयुर्वेद-प्रधान पाठ्यक्रम का सूत्रपात करके जिससे कि विद्यार्थी आत्मविश्वास और योग्यता से आयुर्वेद का पठन तथा अभ्यास कर सके एक महत्वपूर्ण पग उठाया है। परन्तु सर्वोत्कृष्ट सुधार इसी मास में यह हुआ है कि आयुर्वेद विभाग को पृथक् एक स्वतन्त्र विभाग बना दिया है। इस प्रकार अप्राकृत अड़चनें हटा दी गयी हैं और इस विज्ञान की अबाध प्रगति के लिए मार्ग खोल दिया गया है। एक सबल प्रगतिशील तथा उन्नत राज्य ही ऐसा साहसपूर्ण और प्रगतिशील पग उठाने में समर्थ हो सकता था। आयुर्वेद जगत बम्बई के स्वास्थ्य मन्त्रालय का सदा ऋणी रहेगा कि इस दिशा में देश के शेष राज्य को मार्ग प्रदर्शित करने में यह अग्रणी रहा। सरकार ने अपना कर्तव्य पालन कर दिया। अब उत्तरदायित्व स्वयं वैद्यों के कंधों पर है। उसे निभाना उनका काम है। परन्तु मतभेद से छिन्न-भिन्न हुए क्या वह सफल हो सकेंगे ?

स्वर्गीय गंगाधर शास्त्री गुणे की सम-बुद्धि और शांतिप्रियता का वर्णन करते हुए पण्डित शिवशर्मा ने कहा कि मानसिक स्वास्थ्य का महत्व शारीरिक स्वास्थ्य से कम नहीं। केन्द्रीय स्वास्थ्य विभाग ने व्याधि-निरोध का पूर्ण उत्तरदायित्व ऐलोपैथी पर छोड़ दिया परन्तु इस पद्धति का मानसिक तथा आध्यात्मिक स्वास्थ्य का ज्ञान अत्यन्त प्रारम्भिक अवस्था में है और उन ही मानसिक रोगियों की संभाल तक सीमित है जिनको स्वतन्त्र छोड़ देना समाज के लिए स्पष्टतया हानिकर है। केवल आयुर्वेद ही

recognition to this important branch of human ills and dealt effectively and scientifically with it. Anger and hatred, greed and avarice, jealousy and hypocrisy and allied diseases of the mind could assume the proportions of epidemics no less than did cholera, plague or smallpox. Charka had rightly dubbed man as the cause of the epidemic of arms (Sastra-prabhavajanapadodhavansana) which could lead to destruction of men and peoples when "greed and avarice, anger and wrath and pride and vanity held sway over peoples' minds". Alexis Carrel, the Nobal prize winner Surgeon had rightly wondered why the modern hygienists confined themselves to the prevention of physical ills only while ignoring the importance of the mental ills in the destruction of the human race. The medical profession got excited if a single case of plague occurred in the city, but over seventy deaths had occurred in Bombay during the recent epidemic of mental and spiritual imbalance, and the physicians were not even aware of the wholesome part they could play in preventing these ills.

It was evident that neither vaccines nor anti-biotics, but only correct philosophy and correct dietary could curb the mounting fury of the dreadful mental imbalance that had gripped certain sections of the city in an epidemic form. As an aftermath some people were accusing the Government of complacency and inaction in holding back the military from shooting down the rioters. Others complained of indiscriminate shooting. But the fact remained that considering the magnitude and the intensity of the passions and the

एक ऐसा शास्त्र है जिसने मानव जाति की व्याधियों की इस महत्वपूर्ण शाखा को अपने ग्रंथों में उचित स्थान प्रदान किया और इनके सफल तथा वैज्ञानिक उपचार का उल्लेख किया। क्रोध, घृणा, लोभ, मोह, ईर्ष्या, दंभ, तथा इस श्रेणी की अन्य मानसिक व्याधियाँ उतना ही उग्र रूप धारण कर सकती हैं जितनी कि विसूचिका, प्लेग तथा मसूरिका आदि महामारियाँ। चरक ने ठीक ही स्वयं मनुष्य को शस्त्रों से होने वाले "जनपदोद्ध्वंसन" का अपराधी ठहराया है, क्योंकि जब उसका मन लोभ तथा अभिद्रोह, क्रोध और मोह तथा अभिमान आदि से आक्रान्त होता है तो अपना और अपने साथियों का नाश आरम्भ कर देता है। नोबल पुरस्कार विजेता डा० अलेक्सिस करेल को यह विस्मय होना स्वाभाविक ही है कि आधुनिक रोग-निरोध-विशेषज्ञ क्यों ऐसा समझ बैठे हैं कि मनुष्य की हानि शारीरिक रोगों से ही हो सकती है तथा मानव जाति के नाश में मानसिक व्याधि का महत्व क्यों उनकी समझ में नहीं आता। शहर में एक रोगी की मृत्यु प्लेग से हो जाय तो चिकित्सक चिन्तामग्न हो जाते हैं परन्तु बम्बई में ७० से ऊपर व्यक्ति मानसिक और आध्यात्मिक विषमता की महामारी का शिकार हो गए और चिकित्सकों को यह ज्ञात भी नहीं कि इस प्रकार के दुःखों के निरोध में वह कितने सहायक हो सकते थे।

जिस भयँकर मानसिक विषमता ने बम्बई के एक वर्ग को महामारी के रूप में ग्रसित कर लिया था उसकी बढ़ती हुई उग्रता को न तो टीके ही रोक सकते थे न जीवाणुनाशक औषध। उसका प्रतिशोध तो सौम्य आहार विहार तथा सात्विक दृष्टिकोण ही कर सकते थे। घटना के पश्चात् कुछ व्यक्ति शासन को अकर्मण्यता का दोषी ठहराते थे कि उसने आरम्भ में सेना छोड़ कर ध्वंसकों पर गोली क्यों नहीं चलायी। दूसरा वर्ग शासन को दमन नीति का अप-

drive behind the disturbances the loss of life and property in this great city was small and did not come up to the expectation of the prophets of evil. The bitterness between the opposite camps disappeared as if by magic. This could not have happened if some hot headed bilingualist Chief Minister had let loose the military on the rioters. Nor could it have happened if some unilingualist in authority had allowed the beautiful city to be sacked and burnt to prove the intensity of his feelings. Herein lay the importance of true mental hygiene. Such outbursts of mental imbalance could be soothed only by a shock-absorbing calm and balance of the mind and a total absence of personal rancour and bitterness. These are indications of a high degree of mental and spiritual health which the chief guardian of the city, Shri Morarji Desai, luckily happend to possess. These qualities alone could constitute an antidote to bitterness and hatred. Many people regarded him as the saviour of the city. The forgotten factor was that he was also the saviour of the demonstrators inasmuch as he firmly held back the military in the face of gravest provocation. This happend at a time when he had hardly got up from a serious attack of pyelitis which disease itself, to the amazement of the physicians, he had got over purely by his own faith and fasting, refusing to take any antibiotics and even any Ayurvedic medicines.

Pandit Shiv Sharma said that he knew of no other case where the mental and spiritual wholesomeness of a person was called upon to match two such

राधी ठहराता है। परन्तु, यह तथ्य स्वीकार करना पड़ता है कि उत्पात के पीछे जितना विशाल क्रोध और बल था उसे देखते हुए इस महती नगरी की जन तथा सम्पत्ति की हानि अधिक नहीं हुई तथा अनिष्टवादियों के अनुमान पूरे न उतर सके। विरोधी नागरिकों की आपसी कटुता अकस्मात् लुप्त हो गयी। ऐसा कभी न हो सकता यदि कोई क्रोधी द्विभाषी राज्यवादी मुख्यमंत्री होता और ध्वसंकों पर सेना से गोली चलवा देता। न ही यह तब हो सकता यदि कोई एकभाषावादी अपने असंतोष का प्रदर्शन करने के लिए इस सुन्दर नगरी को भस्मीभूत हो जाने देता। ऐसे ही अवसरों पर मानसिक स्वास्थ्य का महत्व प्रकट होता है। मानसिक विषमता के ऐसे उग्र वेग को ठंडा किया जा सकता है तो आघात-सहिष्णु तथा सम मस्तिष्क द्वारा तथा व्यक्तिगत कटुता तथा हितात्मिका बुद्धि के निःशेष अभाव द्वारा। यह लक्षण हैं उस उच्च कोटि के मानसिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य के जो सौभाग्यवश नगर के मुख्य संरक्षक श्री मोरार जी देसाई में विद्यमान थे। केवल यह गुण ही घृणा और कटुता की एकमात्र औषध हो सकते थे। बहुत लोग मानते हैं कि उन्होंने नगर की रक्षा कर दी। परन्तु इस ओर ध्यान कम गया कि उन्होंने असंतुष्ट प्रदर्शकों की रक्षा भी की जो अत्यन्त उत्तेजना के समय भी वे सेना को मैदान में न लाने पर अड़े रहे। यह सब ऐसे समय हुआ जब वह वृक्कशोथ की भयंकर व्याधि से पूर्णतया अच्छे भी नहीं हुए थे। यह जानने योग्य है कि इस व्याधि से भी वह अपने आत्मबल तथा उपवास द्वारा ही मुक्त हुए तथा किसी भी जीवाणुनाशक अथवा आयुर्वेदिक औषध बिना स्वस्थ होकर उन्होंने चिकित्सक संसार को आश्चर्य में डाल दिया।

पंडित शिवशर्मा ने कहा, उन्हें कोई ऐसा दूसरा उदाहरण ज्ञात नहीं जिसमें एक व्यक्ति के मानसिक तथा आध्यात्मिक बल को इस प्रकार एक ही समय में दो विघ्नों का सामना

evils at a time, a physical illness and a politico-mental epidemic, the seriousness of one vying with the magnitude of the other.

The differences among the vaidyas today were as acute as among the politicians and the uni-linguists. Pandit Sharma said he had purposely brought in the example of Morarji Desai whom he considered a model of mental and spiritual health and wholesomeness, to demonstrate to them the extent to which a person could cultivate tolerance and goodwill. If it was possible for a layman to do so it should be still more so for the vaidyas whose very texts insisted upon the observance of the philosophy and the dietary which contributed to these healthy qualities.

करना पड़ा हो। एक शारीरिक व्याधिका, दूसरे राजनैतिक-बौद्धिक महामारी का, जिनमें पहली की उग्रता दूसरी की विशालता की प्रतिद्वंदी हो।

इन दिनों वैद्यसमाज में उतने ही भयंकर मतभेद दृष्टिगोचर हो रहे हैं जितने कि राजनीतिज्ञों तथा एकभाषा राज्यवादियों में। पं० शिवशर्मा ने कहा कि मोरारजी, जिन्हें वह मानसिक तथा आध्यात्मिक स्वास्थ्य तथा स्वच्छता का आदर्श मानते हैं, का उदाहरण इस प्रदर्शन के लिए ही दिया गया था कि एक व्यक्ति कहां तक सहिष्णु तथा पर-शुभ-चिन्तक बन सकता है। यदि एक वैद्येतर व्यक्ति ऐसा आचरण कर सकता है तो वैद्यों के लिए, जिनके शास्त्र ऐसे आचरण के निर्माण करने वाले आहारविहार के उपदेशों से भरे पड़े हैं, परस्पर में ऐसा आचरण करना और भी सरल होना चाहिए।

आयुर्वेद लोक

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन देहली

आचार्य श्री यादवजी त्रिकमजी के दुःखद निधन पर शोक सभा

आयुर्वेद मार्तण्ड वैद्य श्री यादव जी त्रिक्रम जी आचार्य के स्वर्गवास की सूचना पाकर महासम्मेलन-विद्यापीठ के स्थानीय पदाधिकारियों एवं कार्यालय के कर्मचारियों की एक शोक सभा दिनांक १३-३-५६ को मध्याह्नोत्तर २ बजे महासम्मेलन-विद्यापीठ कार्यालय में वैद्यरत्न श्री पं० परमानन्द जी, उपाध्यक्ष, अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन, की अध्यक्षता में हुई, जिसमें श्री पं० मोहन-लालजी शास्त्री, श्री पं० नानकचन्द जी शास्त्री, श्री स्वामी चेतनानन्द जी, श्री केशवप्रसाद जी आत्रेय, श्री शान्तिप्रसादजी जैन तथा कार्यालय के १० कर्मचारी उपस्थित थे। सभा ने खड़े होकर दो मिनट तक मौन धारण करके निम्नलिखित शोक प्रस्ताव स्वीकार किया :—

"अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन, देहली, के स्थानीय पदाधिकारियों एवं कार्यालय के कर्मचारियों की यह सभा आयुर्वेद जगत के पितामह वैद्य प्रवर स्वनामधन्य आयुर्वेद मार्तण्ड श्री यादवजी त्रिक्रमजी आचार्य के जामनगर में सहसा स्वर्गवास हो जाने पर अत्यधिक शोक प्रकट करती है तथा उनके शोकाकुल परिवार के प्रति संवेदना एवं सहानुभूति प्रकट करते हुए विमुक्त आत्मा की शान्ति एवं सद्गति की कामना करती है।

स्वर्गीय आचार्य जी ने आयुर्वेद विज्ञान की जो महान् सेवायें की हैं उनसे सभी भली प्रकार परिचित हैं। उनकी विविध आयुर्वे-दिक रचनायें उनकी सजीव स्मृति हैं। आयुर्वेद जगत में किये गये उनके महान् रचनात्मक, प्रयोगात्मक, अनुसन्धानात्मक तथा निस्वार्थ कार्यों के प्रति यह सभा हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करती है।

श्री आचार्य जी ने अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन की तीन बार अध्यक्षता की। दैव ने उन्हें हम से ठीक उस समय छीना है जबकि उनके नेतृत्व की हमें अत्यन्त आव-श्यकता थी। उनके आकस्मिक निधन से आयुर्वेद जगत की भारी क्षति हुई है जिसकी पूर्ति दीर्घकाल तक होना असम्भव है। देश के सभी राज्यों में आपके शिष्य हैं जो अपने अपने क्षेत्र में प्रसिद्ध वैद्य हैं।

आप हाल ही में केन्द्रीय आयुर्वेदिक अनुसन्धान शाला, जामनगर में प्रारम्भ किये जाने वाले स्नातकोत्तर महाविद्यालय के प्रिंसिपल बनाये गये थे। आपके असामयिक निधन ने समस्त वैद्य समाज को शोक सागर में डुबो दिया है।"

श्री सभापति जी द्वारा प्रस्तुत तथा सर्वसम्मति से स्वीकृत।

निश्चय हुआ कि इस प्रस्ताव की एक प्रति श्री आचार्य जी के परिवार को एवं एक एक प्रति समाचारपत्रों को प्रकाशनार्थ भेज दी जाय।

—केशवप्रसाद आत्रेय, संयुक्त मंत्री,
अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन।

श्रद्धांजलियां

—आचार्य यादव जी के देहावसान से एक उच्चकोटि का आयुर्वेदीय विद्वान्, रिसर्च स्कालर और चिकित्सक उठ गया। आयुर्वेद को लोकप्रिय बनाने तथा उसकी रक्षा करने के लिए आयुर्वेद महासम्मेलन-विद्यापीठ की स्थापना करने में उनका विशेष हाथ था—उन्हें सम्मेलन का पिता कहा जाए तो अनुचित न होगा। उनके अभाव की पूर्ति होना कठिन है। —रामेश्वरसिंहकंवर,
मंत्री, पंजाब राज्य आयुर्वेद सम्मेलन।

—पूज्य यादव जी ने यवनकाल से विनष्ट व लुप्तप्राय आयुर्वेद साहित्य को सैकड़ों वर्षों से पद-दलित रहने पर भी अपनी अमोघ साधना, तपस्या और विचार शक्ति से महान रूप में लाकर आयुर्वेद की विजय-वैजयन्ती को फहराया है। उसे आयुर्वेद विज्ञान और मानव समाज कभी नहीं भुला सकेगा।

—उदयपुर कमिश्नरी, वैद्यसभा

—आचार्य जी हिन्दु विश्वविद्यालय के वर्तमान आयुर्वेदिक कालेज के जन्मदाता तथा प्रथम 'अध्यक्ष' थे। वर्षों तक फैकल्टी के डीन तथा प्राध्यापक रहे। आपने आयुर्वेद के अनेक दुष्प्राप्य ग्रंथों का सम्पादन किया, अनेकों टीकायें लिखीं। मौलिक ग्रंथ भी लिखे। आयुर्वेद के वर्तमान प्राप्ति का बहुत कुछ श्रेय श्रद्धेय यादव जी को है।

आयुर्वेदिक छात्र संघ,
बनारस हिन्दु यूनिवर्सिटी।

—वर्तमान में आयुर्वेद पर जो काले बादल मंडरा रहे हैं उन्हें दूर करने में आप जिस पराक्रम और प्रतिभा से कार्य कर रहे थे वह चिरस्मरणीय रहेगा। आप वर्तमान युग के आयुर्वेद निर्माता थे। आयुर्वेद सेवा का आप का अलौकिक आदर्श अनुकरणीय है।

—वैद्य विद्याधर शर्मा,
सनातन धर्म आयुर्वेदमहाविद्यालय, बीकानेर।

इनके अतिरिक्त बलिया (कच्छ) के वैद्यों तथा तहसील वैद्य सभा सरदार शहर आ० चि० संघ, मुरादाबाद, वैद्यसभा, भाटापारा, आयुर्वेदिक चिकित्सकमण्डल, बम्बई, महिला आ० कालेज, होश्यारपुर, आयुर्वेद सेवा समिति, ऋषिकेश, धन्वन्तरि वैद्य मण्डल दक्षिण, देहली, नगर वैद्यसभा, सवाई माधोपुर आदि की ओर से शोक सभायें हुई तथा शोक प्रस्ताव पास किये गए।

क्षेत्रीय वैद्यसभा, शाहपुरा

क्षेत्रीय वैद्यसभा, शाहपुरा (राज०) का विशेषाधिवेशन दिनांक १ व २ अप्रैल को श्री प्रेमशंकर जी भिषगाचार्य, संचालक आयुर्वेद विभाग, राजस्थान, के सभापतित्व में सम्पन्न होगा। इसके साथ चिकित्सा सम्मेलन तथा प्रदर्शिनी का आयोजन भी रखा गया है। चिकित्सक सम्मेलन में कुष्ट तथा पाण्डू रोगों पर विचार किया जायेगा।

उ० प्र० वैद्य सम्मेलन के प्रस्ताव

उत्तर प्रदेशीय वैद्यसम्मेलन का हरिद्वार में जो अठारहवां अधिवेशन हुआ उसमें निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकृत हुए।

१—बरेली में बनायी गई कार्यवाहक समिति के कार्यों को वैधानिक तथा उचित समझते हुए सम्पुष्टि और संयोजक पण्डित अमरनाथ वैद्य शास्त्री की कर्मठता और तत्परता की भूरि भूरि प्रशंसा।

२—वैद्य सम्मेलन की संशोधित नियमावली की संपुष्टि (श्री जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल ने सभापति के चुनाव की विधि को संशोधनीय वतलाया; किन्तु इस वर्ष के लिये उसे पास करने का विरोध नहीं किया।)

३—भारतीय स्वतन्त्रता के सर्वांगीण क्रान्ति प्रभा में भारतीय कला, संस्कृति और विज्ञान अपने विकास से संसार को आश्चर्य चकित कर रहा है। ऐसे समय में आल-इण्डिया मेडिकल एसोशियेशन ने जयपुर में ऐलोपैथीको छोड़ अन्य आयुर्वेद आदि चिकित्सा-विज्ञानों को सदैव के लिये निर्मूल करने का जो प्रस्ताव स्वीकार किया है उसे यह उत्तरप्रदेशीय वैद्य सम्मेलन राष्ट्र विरोधी, स्वार्थपूर्ण, संकीर्ण भावना का द्योतक और सार्वजनिक हित का विरोधी समझते हुए उस पर घोर असन्तोष प्रकट करता है।

४—द्वितीय पंचवर्षीय योजना में सरकार ने आयुर्वेद की जो अवहेलना की है उस पर यह सम्मेलन खेद एवं रोष प्रकट करता है। स्वास्थ्य एवं चिकित्सा के लिये २० करोड़ की धनराशि में से आयुर्वेद के लिये

केवल ५० लाख रुपये रखना नगण्य है । अतएव सरकार से प्रार्थना है कि आयुर्वेद की उन्नति के लिये इस योजना में महत्वपूर्ण स्थान दे ।

५—उत्तर प्रदेशीय सरकार ने सन् १९३९ के इण्डियन मेडिसिन ऐक्ट में जो संशोधन किया है वह नितान्त दोषपूर्ण है । इसमें आयुर्वेद संगठन समिति की सिफारिशों को पूर्ण रूप से कार्यान्वित नहीं किया गया। वैद्य सम्मेलन का प्रतिनिधित्व समाप्त करने, बोर्ड से सभापति चुनने का अधिकार छीनने, ग्रामीण चिकित्सकों को दी जाने वाली सहायता बन्द करने के कार्य के प्रति यह सम्मेलन रोष और असन्तोष प्रकट करता है और सरकार से अनुरोध करता है कि सचिवालय में इस विभाग के संचालनार्थ किसी आयुर्वेदज्ञ की नियुक्ति करे ।

६—जी० ओ० संख्या २९४६ वी १२०-९०४० दिनांक २७-१०-५० का विरोध क्योंकि यह मेडिसिन ऐक्ट की धारा ४१ के विरुद्ध है। इससे वैद्य हकीमों के अधिकारों में हस्तक्षेप और मानमर्यादा में ठेस पहुंचती है अतः सरकार इसे वापस ले । (जी० ओ० में क्या लिखा है और क्या हस्तक्षेप और प्रतिष्ठा में ठेस किस रूप से पहुँचती है, इस पर सुझाने पर भी प्रकाश नहीं डाला गया।)

७—द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत प्रदेश के प्रत्येक जिले में एक पूर्ण चिकित्सालय और प्रान्त में पांच आयुर्वेदिक चिकित्सालय और आतुरालय तथा एक क्षय आतुरालय खोलने की तुरन्त व्यवस्था हो ।

८—रेल्वे, सेना, पोस्ट आफिस आदि विभागों में आयुर्वेदिक चिकित्सकों की नियुक्ति कर विभागीय व्यक्तियों को उनकी इच्छा के अनुसार आयुर्वेद की सस्ती सुलभ और जनप्रिय चिकित्सा से लाभ उठाने का केन्द्रीय सरकार अवसर प्रदान करे ।

९—सम्मेलन का संगठन सुदृढ़ और अनुशासन बनाये रखने के लिए आवश्यक है कि जिला वैद्य सभाओं को आदेश दिया जाय कि जिले में प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन से सम्बन्धित वैद्य सभाओं के अतिरिक्त अन्य सभाओं के सदस्य बनकर या अन्य सभाओं के निर्माण में सहयोग न दें; क्योंकि प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन द्वारा प्रमाणित सभा ही वैधानिक मानी जायगी ।

१०—उत्तर प्रदेशीय सरकार द्वारा इस देश में ५७० देशी चिकित्सालय चलाये जाने के लिये यह अधिवेशन सरकार को धन्यवाद देता है । किन्तु इन चिकित्सालयों का जनता पूर्ण लाभ उठाने में असमर्थ है । क्योंकि इन चिकित्सालयों के साथ रोगी शैयाओं, चिकित्सकों के निवासस्थान, तथा औषधालय भवन का समुचित प्रबन्ध नहीं है। अतएव यह सम्मेलन सरकार से अनुरोध करता है कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इन चिकित्सालयों में भवन, निवास और अन्तरंग रोगी निवास की सुविधा प्रदान करे ।

११—बोर्ड आफ इण्डियन मेडिसिन के द्वारा गत वर्षों में आयुर्वेद की जो सेवा की गयी है उसकी यह सम्मेलन सराहना करता हुआ सरकार से माँग करता है कि अन्य प्रदेशों के समान इस प्रान्त में भी बोर्ड का रजिस्ट्रार आयुर्वेद का ज्ञाता रखा जाय ।

१२—सरकारी समिति द्वारा किसी केन्द्रीय स्थान में एक बड़ा वनस्पति भंडार खोला जाय । पं० सीतावर पन्त, श्री योगेन्द्रपाल शास्त्री और श्री सुरेन्द्रनाथ जी पाराशर

इसकी पूर्ण योजना बनाकर आगामी स्थायी समिति की बैठक में प्रस्तुत करें।

१३—राजकीय शिक्षा प्रणाली के अन्तर्गत स्वास्थ्य के पाठ्यक्रम में आयुर्वेद को उचित स्थान दिया जाय, जिससे स्वस्थवृत्त और सद्वृत्त द्वारा देश के युवकों के स्वास्थ्य एवं चरित्र की रक्षा हो और अपनी संस्कृति के अनुरूप वैज्ञानिक शिक्षण हो सके।

१४—बीमा कम्पनियों और बैं... कम्पनियों के मेडिकल आफिसर के स्थान... आयुर्वेदिक स्नातकों की नियुक्ति के लि... सरकार से साग्रह अनुरोध करें क्योंकि परी... सम्बन्धी पूर्ण अध्ययन उन्हें कराया जाता है।

१५—प्रदेश में संचालित जनस्वा... कामों में वैद्यों को उचित स्थान देने के लि... प्रान्तीय सरकार से अनुरोध, क्योंकि प्रां...

जनता की रुचि और विश्वास आयुर्वेद पर ही है।

१६—इस प्रान्तीय सम्मेलनका विश्वास है कि देशी चिकित्सा विज्ञान की सर्वाङ्गपूर्ण उन्नति और प्रचार तब तक सफलतापूर्वक सम्भव नहीं है जब तक प्रान्तों और केन्द्रों में स्वतन्त्र मन्त्रालयकी स्थापना न हो। इस लिये यह सम्मेलन केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारसे अनुरोध करता है कि केन्द्र और प्रान्तों में पृथक् आयुर्वेद मन्त्रालयकी तथा डाइरेक्टरेटकी स्थापना की जाय तथा मन्त्रालय तथा डाइरेक्टर में आयुर्वेद के ही अनुभवी एवं सुप्रसिद्ध व्यक्ति लिये जायँ।

श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा का चुनाव

श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा, देहली, का वार्षिक चुनाव श्री पं० मनोहर लाल शी वैद्य की अध्यक्षता में मारवाड़ी धर्मशाला में सम्पन्न हुआ। भूतपूर्व प्रधान मंत्री श्री रामविलास शर्मा ने वार्षिक रिपोर्ट पढ़ कर सुनाई जो सर्वसम्मति से स्वीकृत हुई। तदुपरांत नये वर्ष के लिए निम्नलिखित पदाधिकारी चुने गए :—

प्रधान—क० कैलाशचन्द्र अग्रवाल, उपप्रधान—वैद्य ओंकारप्रसाद जी शर्मा, वैद्य नारायणदत्त जी, तथा वैद्य रामलाल जी मल्होत्रा, प्रधान मंत्री—वैद्य हजारीलाल शर्मा, मंत्री—श्रीजागेराम और नानकचन्द्र जी शर्मा, कोषाध्यक्ष—वैद्य शिवनाथ जी, आय-व्यय निरीक्षक—वैद्य शान्ति प्रसाद जी जैन, पुस्तकालाध्यक्ष—वैद्य बालकृष्ण जी शर्मा तथा प्रचार मंत्री—वैद्य गोविन्द सहाय जी दत्त।

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के सदस्यों तथा विद्यापीठ के स्नातकों की सेवा में नम्र निवेदन

यह बात वैद्य जगत में प्रसिद्ध है कि महासम्मेलन चिरकाल से आयुर्वेद की उन्नति के लिए प्रयत्नशील है। और इसके अन्तर्गत विद्यापीठ से ३५ वर्ष में सहस्त्रशः स्नातक विद्या प्राप्तकर देश देशान्तरों में यश तथा अर्थ प्राप्त कर रहे हैं। उन सब से हम इस मातृ संस्था की उन्नति के लिए सहयोग चाहते। इस संस्था की प्रख्याति तथा स्थायित्व तभी हो सकता है जब सर्व आयुर्वेदाभिमानी इसकी तन मन धन से सेवा करने की प्रतिज्ञा करें। आप सबको यह विदित ही है कि आजकल की भारत सरकार आयुर्वेद पर अनेक तरह से वृथा आघात करती हुई पाश्चात्य पद्धति के प्रचार में संलग्न है तथा इसे अमान्य समझकर हर समय इसे उपेक्षा की दृष्टि से देख रही है। अतः जब तक हम सब मिलकर आयुर्वेद की उन्नति के लिए यत्न न करेंगे तब तक इसका स्थिति में सुधार लाना सम्भव नहीं होगा।

हम आपके समक्ष कुछ सुझाव रखते हैं आप उन्हें यथा शक्ति सहयोग प्रदान कर पूरा करने का प्रयत्न करें।

१. हर प्रान्त में वैद्य सभाओं का संगठन करना और उनके द्वारा महासम्मेलन के अधिक से अधिक सदस्य बनाना, इसी प्रकार नगर, ग्राम, तहसील आदि में सभायें स्थापित करना। २. हर एक स्थान पर एक ऐसी समिति बनाना जो वैद्यों से मिलकर महासम्मेलन के सदस्य बनाये। ३. आयुर्वेदीय विश्वविद्यालय स्थापित करने के लिए हर वैद्य से धन संचय करके महासम्मेलनके कार्यालय में प्रेषित करना। ४. विद्यापीठ के स्नातकों का विशेष रूप से यह कर्तव्य होना चाहिए कि वह जिस नगर, ग्राम वा तहसील में कार्यकर रहे हों वहां की जनता से जो उनके प्रभाव में चिकित्सा द्वारा आती है उससे धन एकत्रित कर अपनी मातृ संस्था की उन्नति के लिए प्रेषित करें। यह सदा स्मरण रखना चाहिए कि यदि आप विश्वविद्यालय नहीं बनायेंगे तो आप लोगों को एक बड़ी भारी हानि का सामना करना पड़ेगा। विद्यापीठ के स्नातकों के प्राप्त किये हुए प्रमाण पत्रों को भारत सरकार मान्यता देने में संकोच इसीलिए करती है कि विद्यापीठ की अपनी कोई शिक्षा प्रद संस्था नहीं है। अतः इनकी मान्यता के मार्ग में तब तक बाधायें उपस्थित की जाती रहेंगी जब तक कि कोई डिग्री विद्यालय स्थापित नहीं करते अतः हम सबको संगठित रूप से विद्याभवन के लिए शीघ्राति शीघ्र प्रयत्नशील होकर आयुर्वेद जगत की मान मर्यादा की रक्षा के लिए कटिबद्ध हो जाना चाहिए।

नानकचाद्र शर्मा, विद्यापीठ मंत्री

मान्य सदस्यों से निवेदन

माननीय सदस्यवृन्द,

गत फ़रवरी मास की पत्रिका द्वारा प्रसारित सूचना में आप से प्रार्थना की गई थी कि आप अपना १९५६ वर्षीय सदस्यता-शुल्क १५ मार्च तक अवश्य भेज दें अन्यथा मार्च मास की पत्रिका वी० पी० द्वारा भेज कर सदस्यता-शुल्क प्राप्त कर लिया जायगा। परिणामतः बहुत से सदस्यों ने तो सदस्यता-शुल्क भेजने की कृपा की है किन्तु कुछ सदस्यों का शुल्क बाक़ी भी है। सम्भवतः वे इस मास वी० पी० की प्रतीक्षा करेंगे। मैं चाहता हूँ कि जो सदस्य अभी तक शुल्क नहीं भेज सके हैं वे मनिआर्डर द्वारा ही शुल्क भेज दें तो अधिक सुविधाजनक होगा। वी० पी० भेजने में प्रत्येक सदस्य को दस आने अधिक देने पड़ेंगे। अतएव जो सदस्य अभी तक सदस्यता शुल्क नहीं भेज सके हैं उनसे मेरी यह विनम्र प्रार्थना है कि वे आगामी १५ अप्रैल तक अवश्य सदस्यता-शुल्क भेजने का कष्ट करें। जिन सदस्यों का शुल्क १५ अप्रैल तक भी नहीं मिलेगा, अप्रैल का अंक उन्हें ही वी० पी० द्वारा भेजा जायेगा। सभी सदस्यों के सहयोग के लिए मैं अत्यन्त आभारी रहूँगा।

संरक्षक, आश्रयदाता, आजीवन एवं विशिष्ट सदस्यों से

फरवरी मास की पत्रिका द्वारा महासम्मेलन के सभी संरक्षक, आश्रयदाता, आजीवन एवं विशिष्ट सदस्यों से करनूल अधिवेशन के प्रस्तावानुसार २ रु० पत्रिका-शुल्क स्वरूप भेजने की प्रार्थना की गई थी। उस पर ध्यान देकर बहुत से सदस्य महानुभावों ने पत्रिका शुल्क भेजने की कृपा की है। उनकी इस सहयोग की भावना के लिए मैं उनका धन्यवाद करता हूं तथा आशा करता हूँ कि शेष सभी संरक्षक, आश्रयदाता, आजीवन एवं विशिष्ट सदस्य भी शीघ्राति शीघ्र दो-दो रुपए पत्रिका-शुल्क भेजकर कृतार्थ करेंगे। मैं समझता हूँ कि अपनी प्रिय संस्था के हित में वे इतना बलिदान अवश्य ही करना पसन्द करते हैं।

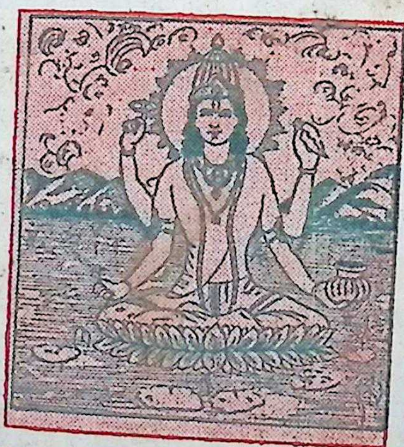
वामनराव दीनानाथ वैद्य
प्रधान मंत्री
अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन

Editor-in-Chief—Swami Chetnanand.
अ०भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के लिए कविराज स्वामी चेतनानन्द द्वारा प्रकाशित,
मुद्रक – नया हिन्दुस्तान प्रेस, चाँदनी चौक, देहली।

आयुर्वेद

महासम्मेलन पत्रिका

परीक्षाफलांक



ज्येष्ठ
२०१३

प्रधान सम्पादक—कविराज स्वामी चेतनानन्द चिदाकाशी, आयुर्वेदालंकार
उप सम्पादक—कविराज हरिकृष्ण सहगल, वैद्यवाचस्पति

Editor-in-Chief—Swami Chetnanand.

अ०भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के लिए कविराज स्वामी चेतनानन्द द्वारा प्रकाशित.

मुद्रक—नया हिन्दुस्तान प्रेस, दिल्ली।

विषय-सूची

१९५६ सितम्बर मासीय परिशिष्ट परीक्षा सम्बन्धी सूचना

परिशिष्ट परीक्षाधिकारी परीक्षार्थियों के परिशिष्ट विषयों की सूची परीक्षाफल के अन्तर्गत इसी पत्रिका में अन्यत्र प्रकाशित है। उक्त परीक्षायें २४ सितम्बर, १९५६, दिन सोमवार, को निम्नलिखित केन्द्रों में सम्पन्न होंगी :——

१—उज्जैन, २—उदयपुर, ३—देहली, ४—पिलानी, ५—नागपुर, ६—बड़ौदा, ७—बम्बई, ८—विजयवाड़ा, ९—लखनऊ।

परीक्षा समय १० बजे पूर्वाह्न से एक बजे अपराह्न तक रहेगा।

परिशिष्ट परीक्षार्थियों की परीक्षा के संपूर्ण खण्ड का शुल्क १० अगस्त १९५६ तक साधारणतया, तथा एक रुपया विलम्ब शुल्क सहित २० अगस्त १९५६ तक इस कार्यालय में पहुँच जाना चाहिये। आवेदनपत्र साधारणतया २० अगस्त १९५६ तक, तथा विलम्ब शुल्क से ३१ अगस्त तक ही स्वीकृत किये जा सकेंगे।

विशेष—परिशिष्ट परीक्षाधिकारियों को विशेषतया सूचित किया जाता है कि विद्यापीठ की नियमावली के अनुसार प्रत्येक परिशिष्ट विषय में परीक्षा देने के लिए केवल दो ही अवसर मिलते हैं। पहला अवसर आगामी २४ सितम्बर की परीक्षाओं में तथा दूसरा मार्च-१९५७ की परीक्षाओं में मिलेगा। उक्त अवसरों में जो परिशिष्ट परीक्षाधिकारी परीक्षा नहीं देंगे अथवा परीक्षा देने के अनन्तर अनुत्तीर्ण रहेंगे, वे सम्पूर्ण खण्ड में अनुत्तीर्ण समझे जायेंगे तथा तदुपरान्त उन्हें परिशिष्ट परीक्षा का कोई अधिकार शेष नहीं रहेगा।

नानक चन्द्र, मन्त्री

नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ।

॥ धन्वन्तरयेनमः ॥
यत्प्रभापटलोद्भासि भासतेऽद्यापि भारतम् ।
आयुर्वेदात्मकं ज्योतिः शाश्वतं नः प्रकाशताम् ॥

आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका

(अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन का मासिक मुख-पत्र)

प्रधान सम्पादक—कविराज स्वामी चेतनानन्द चिदाकाशी, आयुर्वेदालंकार
उप-सम्पादक—कविराज हरिकृष्ण सहगल, वैद्यवाचस्पति
पत्रिका कार्यालय—महालक्ष्मी मार्केट, चांदनी चौक, देहली ।
तार का पता "आयुर्वेद" दिल्ली

वर्ष ४३ अंक ६	दिल्ली, ज्येष्ठ २०१३, जून १९५६	वार्षिक ५) एकप्रति ॥)



आयुर्वेद एवं अखिल भारतीय आयुर्वेद महा-सम्मेलन-विद्यापीठ

इस बीसवीं शताब्दि का प्रभात ही था जबकि विदेशी शासन के आघात से भारत की सर्वश्रेष्ठ विभूति एवं भारतीय जीवन के मुख्य स्रोत "आयुर्वेद" की रक्षा की व्यवस्था बनाने के लिए देश के प्रमुख वैद्यवर पतितपावनी गोदावरी नदी के तट पर भारत के पुण्यधाम नासिक में एकत्रित हुए और उन्होंने अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन की नींव डाली । तदनन्तर सन् १९१० में अपनी वैज्ञानिक एवं साहित्यिक प्रवृत्तियों को प्रोत्साहित करने के ध्येय से तथा समस्त देश में आयुर्वेदीय शिक्षण, प्रशिक्षण एवं परीक्षण की सूत्रवद्ध व्यवस्था करने के लिए अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन ने अपने अन्तर्गत निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ की स्थापना की ।

महासम्मेलन एवं विद्यापीठ के कार्य में दिन प्रतिदिन उन्नति होती गई और आज महासम्मेलन विद्यापीठ का देश के कोने कोने में प्रचार एवं प्रसार है। भारतवर्ष के प्रत्येक प्रदेश में महासम्मेलन की शाखायें हैं और विद्यापीठ के केन्द्र और सम्बद्ध विद्यालय विद्यमान हैं। लंका और नेपाल में भी महासम्मेलन के सदस्य हैं। इस समय अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का अपनी सम्बद्ध संस्थाओं द्वारा भारत के लगभग १,००,००० वैद्य बन्धुओं से सम्बन्ध है जबकि भारत के प्रमुख-प्रमुख सभी वैद्यबन्धु महासम्मेलन के सीधे सदस्य भी हैं। इसी बीच में निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ द्वारा आयुर्वेद के लगभग ४५,००० विद्वान् तैयार किये गये हैं। इस प्रकार अधिकतर अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन एवं विद्यापीठ के इन सदस्यों एवं स्नातकों के कारण ही आज "आयुर्वेद" जीवित है और इसकी ध्वज-पताका भारत के कोने-कोने में लहरा रही है और "आयुर्वेद" का मस्तिष्क ऊंचा है। विगत २० वर्ष में संस्था ने विभिन्न दिशाओं में विशेष उन्नति की है। आज भारतीय वैद्य समाज एवं विश्व भर में आयुर्वेद का प्रातिनिध्य करने वाली एकमात्र संस्था यही अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन है।

काल चक्र है, रजोगुण प्रधान है। इस संस्था के कार्यप्रसार एवं प्रभाव क्षेत्र को देख कर कुछ स्वार्थान्ध एवं अवसरवादी तत्वों ने विभिन्न हेतुओं से प्रेरित होकर इस वैज्ञानिक संस्था में कुटिल राजनीति का समावेश किया और संस्था पर अपना आधिपत्य जमाने के लिए प्रयत्न जारी किए। परन्तु सभी कठिनाइयों का सामना करते हुए संस्था आगे बढ़ती चली गई और समय-समय पर महासम्मेलन के सदस्यों की एक बहुत बड़ी संख्या ने अपनी जागरूकता का परिचय देकर इन तत्वों को कोई स्थान नहीं दिया और अपनी प्रिय संस्था की रक्षा की। भारतीय वैद्यसमाज इसके लिये बधाई का पात्र है।

जब कोई सज्जन अपनी इच्छानुकूल किसी संस्था पर प्रभुत्व नहीं पा सकते तो स्वाभाविक रूप से वे तत्सम संस्थायें निर्माण करने की सोचते हैं। राजनैतिक संस्थाओं में तो यह प्रवृत्ति बहुत प्रबल है। परन्तु विज्ञान के क्षेत्र में ऐसी प्रवृत्तियों से सम्बन्धित विज्ञान को विशेष हानि पहुंचती है, अतएव आयुर्वेद के क्षेत्र में ऐसे कार्यों से न वैद्यसमाज का और न ही आयुर्वेद विज्ञान का कोई हित सम्भव है जबकि अहित होना निश्चित है। मेरी वैद्य समाज से सादर, सविनय तथा सानुरोध प्रार्थना है कि वे इन रीति-नीतियों को सतर्कता से पहिचानें, कुवृत्तियों को कोई आश्रय न दें और इस पुरातन-सनातन एवं फलपुष्पित प्रिय संस्था के प्रति अपना ममत्व और कर्त्तव्य निभाने की चेष्टा पूर्व की भान्ति निरन्तर करते रहें।

—स्वामी चेतनानन्द

रिन्यूवल फीस का अभिशाप

पत्रों में सूचना प्रकाशित हुई है कि पंजाब के वैद्यों तथा हकीमों की यह दीर्घकालीन मांग कि उनसे वार्षिक रिन्यूवल फीस न ली जाये बहुत शीघ्र पूर्ण होने वाली है। पंजाब सरकार ने बोर्ड की सिफारिश पर रिन्यूवल सिस्टम को उड़ा देने का निश्चय किया है, रजिस्ट्रेशन फीस १० से २० रुपया कर दी जावेगी और जो रजिस्टर्ड हैं .उनसे १५

रुपया और लिया जायेगा और इसी अभिप्राय से शीघ्र ही ईस्ट पंजाब आयुर्वेदिक एण्ड यूनानी प्रैक्टिशनर्ज ऐक्ट में संशोधन किया जायेगा। जब तक यह ऐक्ट नहीं बन जाता पुराने कानून के अनुसार रिन्यूवल फीस ली जावेगी।

देहली सरकार से भी देहली के वैद्यों की मांग है कि जब डाक्टरों से यह फीस नहीं ली जाती तो औरंगजेब के हिन्दुओं से कर लेने के समान इस अपमानजनक रिन्यूवल फीस का लेना बन्द किया जाये। गत इलैक्शन में बोर्ड के निर्वाचित सदस्यों ने वोटरों को वचन दिया था कि वह रिन्यूवल फीस को बन्द करा देंगे। परन्तु प्रतीत होता है कि पंजाब के आयुर्वेदिक एण्ड यूनानी बोर्ड के सदस्य अपने देहली बोर्ड के सदस्यों से बाजी जीत लें जायेंगे। देहली सरकार को शीघ्र ही वैद्यों की इस उचित मांग को पूरा करना चाहिये। ग्रैण्ड मुगल के दरबार में बहुत अधिक कोर्निश बजा लाया गया है इसका कहीं अन्त भी होना चाहिये।

दूसरी सरकारें देहली सरकार से कहीं आगे बढ़ चुकी हैं। बिहार सरकार के चिकित्सा मंत्री श्री हरिनाथ जी मिश्रा ने २० मार्च को आयुर्वेदिक महाविद्यालय में भाषण देते हुए बताया कि डा० महता के सुझावों के फलस्वरूप आयुर्वेद उन्नति की अनेक योजनायें, द्वितीय पंचवर्षीय योजना में सम्मिलित कर ली गई हैं एक सिफारिश यह थी कि देशी चिकित्सा पद्धति के लिये स्वतंत्र निर्देशालय (डायरैक्टोरेट) स्थापित किया जाये, सरकार इस सिफारिश को अगले वित्तीय वर्ष से कार्यरूप देने जा रही है। आशा है इससे देशी चिकित्सा की लोकप्रियता बढ़ जायेगी।

—हरिकृष्ण सहगल

डेढ ईंट की मस्जिद

पं० जवाहरलाल नेहरू अपने भाषणों में बहुधा देश के संगठन पर बल दिया करते हैं और साम्प्रदायिकों को बहुधा ही रगड़ा दिया करते हैं। कोई भी देश और जाति संगठन के बिना उन्नति नहीं कर सकती।

पं० जवाहरलाल नेहरू को संगठन पर बल देने की आवश्यकता क्यों पड़ी; वह इस लिए कि जिस किसी नेता की उचित व अनुचित इच्छा को वह पूर्ण न कर सके, उसने कांग्रेस से निकल कर आल इण्डिया नाम की एक डेढ ईंट की मस्जिद अलग खड़ी कर ली। इन डेढ ईंट की मस्जिदों से संगठन को आघात पहुंचता है।

डेढ ईंट की मस्जिद में न कोई अजान देता है और न कोई नमाजी होता है। इन डेढ ईंट मस्जिद नुमा आल इण्डिया बाडियों में न तो कोई त्यागयुक्त विद्वान् होते हैं और न ही सदस्य होते हैं। परन्तु एक बात अवश्य होती है कि इनके मैनिफैस्टों (घोषणापत्रों) में कुछ बड़ी-बड़ी आशाएं बंधाने वाली बड़ी बातें अवश्य होती हैं। परन्तु जब हमने गत मास एक रात्रि में जन्म लेने वाली अखिल भारतीय वैद्य हकीम कांग्रेस के बम्बई में प्रथम अधिवेशन के अवसर पर प्रकाशित मैनिफैस्टो को पढ़ा तो ऐसा लगा कि इस मैनिफैस्टो के लिखने में अवश्य या तो मीर जाफर या जयचन्द की प्रेतात्मा का हाथ है।

इस संस्था का उद्देश्य यह है कि वैद्यों और हकीमों को एकता के सूत्र में आबद्ध किया जाय। इस उद्देश्य की आवश्यकता पड़ सकती थी यदि वैद्य यूनानी और हकीम आयुर्वेद की उन्नति में बाधा उपस्थित कर रहे होते। परन्तु ऐसा नहीं है। दोनों ही ऐलोपैथी से दबाये जा रहे हैं और दोनों ही उसका सामना कर रहे हैं, न वैद्य यूनानी को देश से बाहर निकालना चाहते हैं न हकीम आयुर्वेद को समाप्त करना चाहते हैं। तो फिर इस उद्देश्य की आवश्यकता क्यों पड़ी ? स्पष्ट है कि इस उद्देश्य को लेकर किसी भी संस्था के जन्म लेने की आवश्यकता न थी। अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन तथा अखिल भारतीय यूनानी तिब्बी कान्फ्रेंस यह संस्थाएं चिरकाल से बनी हुई हैं। प्रान्तों के देशी चिकित्सा बोर्डों में इनके प्रतिनिधि हैं। कई सरकारी समितियों में भी इनके प्रतिनिधियों को लिया जा चुका है। वह व्यक्ति जो इन संस्थाओं में समा न सके और वह लोग जो बिना त्याग, परिश्रम और योग्यता के इन संस्थाओं में रहकर शिखर पर न पहुंच सके उन्होंने देशी चिकित्सा के संगठन को आघात पहुंचाने के लिए एक नई अखिल भारतीय वैद्य हकीम कांग्रेस नाम की संस्था को जन्म दिया।

इस अधिवेशन में मांग की गई कि देशी चिकित्सा के विकास और प्रचार के लिए शासन की ओर से पूर्ण प्रोत्साहन दिया जाय। कोई इस संस्था के कर्णधारों से यह पूछे कि यह मांग करके उन्होंने कौनसा नया तीर मारा है जो अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के मंच से आधी शताब्दि से अधिककाल से नहीं चलाया जा रहा है। अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन ने तो देश के भिन्न-भिन्न प्रान्तों के गवर्नरों के, मुख्यमंत्रियों, उपराष्ट्रपति श्री डा० एस. राधाकृष्णन्, राष्ट्रपति श्री डा०राजेन्द्रप्रसाद जी, पार्लियामेंट के स्पीकर श्री अनन्तशयनम् आयंगर और पं० जवाहरलाल नेहरू तक के मुख से यह निकलवा दिया, अब यह नई संस्था इससे आगे क्या करना चाहती है। कुछ नहीं, आज जो अवस्था पाकिस्तान में नेतागिरी की इच्छा की पूर्ति के लिए गतिमान दिखाई देती है और जिसके विरुद्ध पाकिस्तान के पत्र एक स्वर से कह रहे हैं कि देश का सर्वनाश इन नेताओं की नेतागिरी के कारण होने वाला है, वही बात अब भारत में नाममात्र की आल इण्डिया सभाओं को जन्म देकर दोहराई जा रही है और ऐसी सभाओं की लिस्ट में एक नाम अखिल भारतीय वैद्य हकीम कांग्रेस का भी है।

इस अखिल भारतीय वैद्य हकीम कांग्रेस के अधिवेशन में इसके स्वागताध्यक्ष श्री मोहम्मद ताहिर एम. एल. ए. ने कहा कि आयुर्वेद और तिब्ब पूर्णरूप से वैज्ञानिक हैं। कोई भी बताए कि अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन तथा अखिल भारतीय यूनानी तिब्बी कांफ्रेंस ने क्या कभी इससे इन्कार किया है और क्या इसे सिद्ध करने के लिए अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के नेताओं ने प्रयास नही किया। प्लैटफार्म और प्रेस से अर्द्ध शताब्दि से भी अधिक काल से ऐसा कहा जा रहा है। अखिल भारतीय वैद्य हकीम कांग्रेस में अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के मंच से कही हुई बातों को दोबारा दोहरा देना इस बात को सिद्ध नहीं करता कि नई एक ईंट की मस्जिद बनाने की कोई आवश्यकता थी।

कुछ जानकार स्थानों से ज्ञात हुआ है कि बम्बई के मुख्यमंत्री श्री मुरार जी देसाई

तथा बम्बई के गवर्नर ने इस अधिवेशन में इसीलिए सम्मिलित होने से इन्कार कर दिया कि एक नाम और एक ही काम की दो संस्थाओं का होना हानिकर होता है। परन्तु इस आल इण्डिया के नाम की बदौलत कुछ बड़े आदमी भी जिनमें बम्बई कार्पोरेशन के कुछ माननीय सदस्य और कुछ वैद्य थे भूल का शिकार हो गए। जिस संस्था के नाम को दिल्ली में वैद्य और हकीम नहीं जानते, बम्बई के शहर के कुछ इने गिने व्यक्तियों को छोड़ कर देश के बाकी २० प्रांतों में कोई नहीं जानता, ऐसी संस्थाओं की सदस्यता से वैद्यों और हकीमों को सतर्क रहना चाहिए क्योंकि इससे आयुर्वेद तथा यूनानी की हानि तो हो सकती है परन्तु लाभ नहीं।

—हरिकृष्ण सहगल

परिमार्जन

गत मई मास की पत्रिका में मेरे सम्पादकीय लेख में पृष्ठ २६० पर डा० मेरी स्टोप्स के नाम से एक कथन का उल्लेख किया गया है--वास्तव में वह कथन "मेरी स्टोप्स" का न होकर वैद्यरत्न श्री पं० शिवशर्मा जी का है और जो उनके ३९ वें अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन, कोट्टकल, के भाषण से उद्धृत किया गया है। हम यहां मेरी स्टोप्स के वास्तविक कथन के साथ श्री पंडित जी के कथन को पुनः उद्धृत कर रहे हैं ताकि पाठकों को किसी प्रकार की भ्रान्ति न हो और श्री पण्डित जी के उक्त कथन का महत्त्व भी ज्ञात हो जायः—

अपने भाषण के सिलसिले में श्री पण्डित ने कहा कि,

"मेरे विश्वास का समर्थन एक सर्वथा विदेशी स्रोत से भी हुआ है डा० मेरी स्टोप्स जिसका नाम आज संसार भर में फैला हुआ है, ने भी राजकुमारी जी की शीघ्र बातों में आ जाने की आदत के सम्बन्ध में निम्न शब्द कहे हैं "राजकुमारी अमृतकौर ऐसी भोली हैं कि निरापद समय जैसे झूठे आन्दोलन पर भी उन्हें विश्वास आ गया'........मैं विस्मित हूँ कि पं० नेहरू को इतनी बुरी सलाह मिली कि उन्होंने अमृतकौर को यह पद दिया क्योंकि जिस चाल पर वह चल रही हैं वह भारतवर्ष के लिए सक्रिय रूप से घातक है...... जो हानि अमृतकौर भारतवर्ष को पहुँचाएंगी उसका ज्ञान नेहरू को उस समय होगा जब प्रतिकार के लिए अत्यधिक विलम्ब हो चुकेगा।" (करेन्ट, जनवरी १३, १९५४ से उद्धृत)।

ऊपर के पैरे में उद्धृत डा० मेरी स्टोप्स के कथन का विश्लेषण करते हुए श्री पं० शिवशर्मा जी ने अपने भाषण में आगे कहा कि,

"डाक्टर मेरी स्टोप्स को राजकुमारी जी की कृतियों पर इसलिए विस्मय हुआ कि उन्हें यह ज्ञान नहीं कि उनके पूर्वजों का इतिहास भी भोलेपन का ही प्रतीक है जिनकी अवसरानुकूलता इसी से स्पष्ट होती है कि जब सिक्खों ने पञ्जाब पर विजय पायी तो उन्होंने सिक्ख धर्म स्वीकार कर लिया। जब अंग्रेजों ने उस प्रान्त पर विजय पायी तो उन्होंने सिक्ख धर्म त्याग कर ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया। राजकुमारी जी गांधी जी के साथ राष्ट्रीयता और आयुर्वेद की भक्त थीं। अब अन्तर्राष्ट्रीयता और एलोपैथी की भक्त हैं।"

—स्वामी चेतनानन्द

मस्तिष्क-ईश्वर की अद्भुत रचना

ले०—एच० लोनरगर, एम० डी०

मस्तिष्क रूपी गहन यंत्रांग में मनुष्य की सर्वश्रेष्ठ आन्तरिक शक्तियों को एकत्र किया गया है।

मानव शरीर के ऊपरी भाग में, खोपड़ी के भीतर लगभग डेढ़ सेर धातु (Tissue) इस प्रकार बन्द है, जिस प्रकार अखरोट के छिलके के अन्दर गिरी सुरक्षित रहती है। इसी को उत्तमांग कहते हैं।

भौंओं, कानों और सिर के पिछले उठे हुए स्थान के ऊपर मस्तुलँगपिण्ड (Brain) का सबसे ऊँचा भाग ऐसा प्रतीत होता है मानो अखरोट की आधी गिरी उलट कर रख दी गई हो। जिस प्रकार अखरोट की गिरी के अर्ध भाग के भी दो भाग होते हैं, इसी प्रकार यह भी दो भागों में विभाजित होता है, और बिल्कुल उसी तरह चपटी ओर के सिरे पर ये दोनों भाग जुड़े होते हैं--इसी को मस्तिष्क (Cerebrum) कहते हैं। इसका बाह्य भाग कुछ-कुछ धूसरवर्ण एक परत-सी होती है तथा आन्तर भाग इससे बहुत बड़ा और शुभ्र-वर्ण होता है।

अणुवीक्षण-यंत्र द्वारा देखने से विदित होता है कि यह शुभ्रवर्ण वस्तु असंख्य नाड़ियां हैं जो "टेलीफोन" के तारों के समान ऊपर प्रधान केन्द्र से नीचे दूसरे स्थानों तक संदेश पहुँचाती हैं।

धूसर वस्तु को जब अणुवीक्षण-यंत्र द्वारा देखा जाता है तो पता चलता है कि यह असंख्य नाड़ियों का एक समूह है।

मस्तिष्क के केन्द्र के बिल्कुल खोपड़ी के पिछले भाग में धम्मिल्लक (Cerebellum) होता है, जिसका परिमाण नारंगी जितना होता है।

यही वह स्थान है जहाँ देह के दूसरे स्थानों से सन्देश आते हैं। धम्मिल्लक बाहों और टाँगों में से संदेश प्राप्त करता है और उन्हें उन की स्थिति बताता है और इस प्रकार हमें अपने शरीर की स्थिति से सूचित करता है। धम्मिल्लक हमारे शरीर के संतुलन में सहायक रहता है और चलने फिरने तथा उँगलियों की सक्रियता जैसे जटिल कार्यों में भी माँस-पेशियों से सामूहिक रूप में इसी प्रकार काम लेता है, जिस प्रकार कोई सैनिक अधिकारी अपने सुअभ्यस्त सैनिकों से।

खोपड़ी के अन्दर धम्मिल्लक और सुषुम्णा (Spinalcord) को जोड़ने वाला एक और विलक्षण विभाग है जिस पर हमारे प्राण निर्धारित हैं। इसे सुषुम्णाशीर्षक (Medulla) कहते हैं। यहीं सारे दैहिक कार्य-केन्द्र हैं--एक केन्द्र का नाड़ियों पर नियन्त्रण होता है, दूसरा पेट में से किसी पीड़ा आदि की सूचना पाते ही उसे स्वयं खाली हो जाने की प्रेरणा देता है (प्रायः यह क्रिया प्राण-रक्षक सिद्ध हुई है); तीसरा हमारे श्वासों की गणना कराता है; चौथा हमारी आँखों की पुतलियों को धूप में सिकुड़ने और अंधेरे में अधिकाधिक प्रकाश-प्राप्ति के लिये फैलने में सहायता देता है। बिना सुषुम्णा-शीर्षक जीवित रहना असम्भव है।

... विश्राम के लिये समय

चाहिये । इसके लिए सब से उत्तम विधि यह है कि आप एक ही बात को एक ही रीति से न सोच कर, विभिन्न प्रकार से सोचने की आदत डालें ।

मानसिक कार्यकुशलता बनाये रखने के लिये दूसरी आवश्यक बात है खुली हवा में व्यायाम करना या घूमना फिरना ।

संदेह, शंका, चिन्ता, अनुचित खान-पान, अन्य ऐसी ही और बातें, और उत्तेजना-जनक और नशीले खाद्यपदार्थ मस्तिष्क के कोमल यंत्रांग को बड़ी हानि पहुँचाते हैं ।

मस्तिष्क ही से मनुष्य ईश्वर का गुण-गान करता है । इसी के कोटियों सूक्ष्मग्राही नाड़ी-सूत्रों की सहायता से पेड़, पौधे, झीलें, नदियाँ पहाड़, आदि देखता है; चट्टानों पर से नीचे गिरते हुए पानी का शब्द सुनता है, दुःख-सुख की पिछली बातें याद करता है और भविष्य के कार्यो का आयोजन करता है । मन-मन्दिर में ही हम सर्वश्रेष्ठ विचारों और वस्तुओं को ग्रहण करते हैं ।

सचमुच अपने मस्तिष्क ही से आदमी अपना मूल्य प्रकट करता है, मस्तिष्क ही विश्व भर की रचनाओं का आश्रय है और स्वयं सर्वश्रेष्ठ व अद्भुत रचना है ।

(स्वास्थ्य और जीवन से साभार)

आयुर्वेद विजय पथ पर

[मई मास की कुछ महत्वपूर्ण घटनाएं]

ले०—श्री पं० शिवशर्मा, बम्बई

(सर्वाधिकार 'पत्रिका' द्वारा सुरक्षित)

गत पत्रिका में "७ मई की ऐतिहासिक संध्या" नामक शीर्षक के नीचे कविराज हरिकृष्ण सहगल ने संसद के अध्यक्ष श्री अनंतशयनम् आयंगर, संसद सदस्यों, जनता तथा समाचार पत्रों पर उस व्याख्यानमाला के प्रभाव का वर्णन किया है जो कुछ संसद सदस्यों का सहयोग प्राप्त कर आयुर्वेद महासम्मेलन ने ७ मई को आरम्भ की।

परन्तु इसी मई मास में भारतवर्ष में और विदेश में कुछ ऐसी घटनाएँ घटी हैं जिनको मैं ७ मई के व्याख्यान की अपेक्षा अधिक महत्व देता हूँ और वैद्य समाज की जानकारी तथा उत्साहवृद्धि के लिए उनका वर्णन नीचे कर रहा हूँ :—

१

विश्व स्वास्थ्य परिषद् में आयुर्वेद

लंका की स्वास्थ्य मंत्रिणी की पाश्चात्य वैज्ञानिकों को चुनौती

इसी मास में संयुक्त राष्ट्रों के कार्यक्षेत्र जेनीवा में विश्व स्वास्थ्य परिषद् (World Health Assembly) का नवम अधिवेशन हुआ। संयुक्त राष्ट्र सदस्य होने के नाते लंका ने भी अपनी स्वास्थ्य मंत्रिणी को परिषद् प्रतिनिधि के रूप में जेनीवा विश्वसम्मेलन में भाग लेने के लिए भेजा।

लंका की वर्तमान सर्कार पाश्चात्य देशों की सांस्कृतिक दासता की विरोधी है। उसके प्रधानमंत्री श्री बण्डारनायक यद्यपि ऑक्सफोर्ड के स्नातक हैं और अंग्रेज़ी भाषा पर उन्हें अद्वितीय प्रभुत्व प्राप्त है (वह ऑक्सफोर्ड में भी स्पीकर्ज़ यूनियन के मंत्री रह चुके हैं) परन्तु अपनी राष्ट्रीय वेशभूषा, संस्कृति और प्राचीन विज्ञानों के प्रबल समर्थक हैं और इनका अध्ययन भी उन्होंने गंभीरता से किया है। इसलिए इन विज्ञानों के मूल्यांकन के लिए उन्हें अन्य विशेषज्ञों अथवा पदाधिकारियों से ज्ञानभिक्षा अथवा पथ-प्रदर्शन की मांग भी नहीं करनी पड़ती।

लंका के स्वास्थ्य मंत्री के पद के लिए भी श्री बण्डारनायक ने एक ऐसी ही कार्यक्षम विदुषी की छांट की जो स्वयं पाश्चात्य संस्कृति, दासता से सर्वथा मुक्त हैं तथा पौर्वात्य संस्कृति, साहित्य और विज्ञान की उन्नति तथा प्रसार की प्रबल समर्थक हैं। उनका नाम है विमला विजयवर्द्धन।

२० नवम्बर १९५५ को जब मैं अखिल लंका आयुर्वेद चिकित्सक सम्मेलन के ३६ वें वार्षिक अधिवेशन का मुख्य अतिथि होकर कोलंबो गया तब मेरे तथा आयुर्वेद के सौभाग्य से श्री बण्डारनायक तथा श्रीमती विजयवर्द्धन भी श्रोतागणों में उपस्थित थे। जब मेरा इनसे परिचय कराया गया तो इन दोनों की योग्यता और व्यक्तित्व की गहरी छाप मेरे हृदय पर पड़ी। उस समय मुझे ज्ञात नहीं था कि लंका में शीघ्र ही एक राजनैतिक बाढ़ आने वाली है जो वहां की पश्चिमाभिमुखी सर्कार को वहा ले जायगी और इन महान व्यक्तियों को प्रधानमंत्री तथा स्वास्थ्य मंत्रिणी बनाकर लंका के भविष्य निर्माण के लिए अधिकार-शिखर पर बिठा देगी।

अस्तु। वैद्य समाज का अधिक सम्बन्ध तो श्रीमती विजयवर्द्धन से ही रहेगा और उनके सम्बन्ध में पूर्ण सूचना तो किसी स्वतन्त्र लेख में कभी पृथक् दूँगा। यहाँ तो उनकी जेनीवा में दी गई वक्तृता में से केवल वह अंश उद्धृत करता हूँ जिसका सम्बन्ध आयुर्वेद से है। यह विशेष ध्यान रखना चाहिए कि आयुर्वेद के सम्बन्ध में जो कुछ उन्होंने जेनीवा में कहा वह यद्यपि संक्षिप्त कथन है तो भी अल्पकथन कदापि नहीं, प्रत्युत एक महान् कथन है। यह भी स्पष्ट है कि विश्व स्वास्थ्य सम्मेलन में सर्वोच्च अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सर्वप्रथम आयुर्वेद का विषय प्रविष्ट करने का अभूतपूर्व श्रेय जो लंका को प्राप्त हुआ वह आज से कई वर्ष पूर्व भारतवर्ष को प्राप्त होना चाहिए था। जैसे शान्ति स्थापना में श्री नेहरूजी द्वारा भारत संपूर्ण संसार का अगुवा बना वैसे ही स्वास्थ्य सम्मेलन में आयुर्वेद का प्रश्न संसार के आगे रखने का सर्वप्रथम अवसर तो भारत के केन्द्रीय स्वास्थ्य विभाग को मिला परन्तु दुर्भाग्यवश गांधीजी तथा नेहरूजी के ही प्रकाश से प्रकाशित भी हमारी स्वास्थ्य मंत्रिणी वहां उससे अधिक कभी कुछ न कह सकी जो उसके ऐलोपैथिक पथप्रदर्शकों ने उसे निर्दिष्ट किया। परन्तु अपनी स्वतन्त्र -बुद्धि तथा प्रतिभा से स्वयं प्रकाशमान और स्वतन्त्र विचारक विमला विजयवर्द्धन को उसके ऐलोपैथिक परामर्शदाता विश्वसम्मेलन पर विश्वस्वास्थ्य के कल्याण के लिए आयुर्वेद का विषय प्रविष्ट करने से न रोक सके, तथा जो श्रेय भारतवर्ष को प्राप्त होना चाहिए था वह लंका को प्राप्त हुआ और लंका उसकी पात्र भी सिद्ध हुई।

अस्तु। विश्वस्वास्थ्य परिषद् के प्रतिनिधियों को सम्बोधित करते हुए श्रीमती विजयवर्द्धन ने कहा :—

"We have come together, a healthy family of nations, to talk over a few family matters of pooling of knowledge and experience in finding better ways of spreading the gospel of health and happiness among mankind.

"Here I should like to offer this august assembly of experts a suggestion which, if taken up, may prove to be of some use to the rest of mankind.

"I come from a country where we have had a complete system of medicine for the past two thousand years. It is from this system, **Ayurveda**, or the Science of Life, that Western medicine has borrowed, Rouwolfia Serpentina (or Ekaweriya as we call it in Ceylon) as a remedy against high blood pressure, It is a system in which the cure of a disease is effected by raising the specific resistance of the tissues to fight an infection. Ayurveda is a system of medicine from which the West, I believe, has quite a lot to learn.

"You in the West have mastered disease of infection. But are you not entering a new era of disease of degeneration—perhaps the result of newer and more potent drugs.

"My woman's prayer to you is that this Organisation give some thought as to how the world may benefit from our ancient system by applying the searchlight of modern science on our remedies and herbs which have stood the test of centuries.

"Who knows, you might enter a new world of light—the wonder of which you have not yet known.

"Science certainly does not mean an intolerance towards truths you do not know, but a respectful approach towards truths others may propound."

अर्थात्, "विभिन्न राष्ट्रों के एक स्वस्थ कुटुम्ब के रूप में हम यहाँ इस लिए सम्मिलित हुए हैं कि मानव जाति में सुख तथा स्वास्थ्य के सिद्धान्तों के उत्कृष्टतर प्रसाद के लिए अपने-अपने ज्ञान और अनुभव को एक कौटुम्बिक वार्तालाप द्वारा एकत्रित और परिवर्द्धित करें।

"यहाँ विद्वानों के इस शुभ सम्मेलन पर, मैं एक विचार उपस्थित करना चाहती हूँ। यदि उसके अनुसार कार्य किया जाए तो संभव है कि संपूर्ण मानव जाति को इससे कुछ लाभ पहुँच सके।

"मैं एक ऐसे देश से आई हूं जहाँ आज से दो सहस्र वर्ष पूर्व से एक सर्वांगसंपूर्ण चिकित्सा शास्त्र विद्यमान है। पाश्चात्य चिकित्सा पद्धति ने रक्तचाप की औषध सर्पगंधा का ग्रहण इसी पद्धति, जिसका नाम आयुर्वेद है, से किया है। इस पद्धति के अनुसार रोगोपसर्ग के प्रति शारीरिक धातुओं की विशिष्ट रोग प्रतिबन्धिकी शक्ति को उन्नत करके व्याधि का नाश किया जाता है। मेरा विश्वास है कि आयुर्वेद एक ऐसी चिकित्सा प्रणाली है जिससे अभी पश्चिम को बहुत कुछ सीखना है।

"आप पाश्चात्य विद्वानों ने औपसर्गिक रोगों पर प्रभुता प्राप्त करली है। परन्तु क्या आप शारीरधातुतत्वनाशक व्याधियों के नवीन युग में प्रविष्ट नहीं हो रहे हैं जिसका संभव कारण आपकी नवीन और तीव्रतर औषधियाँ हैं ?

"मैं, एक स्त्री, आपसे प्रार्थना करती हूँ कि यह संस्था इस विषय पर गंभीर विचार करे कि हमारी ओषधियाँ और जड़ी बूटियाँ जो शताब्दियों की परीक्षा में सफल उतरी हैं, आधुनिक विज्ञान के प्रकाश में किस प्रकार संसार का हित साधन कर सकती हैं।

"कौन जानता है कि आप प्रकाश के एक नए संसार में प्रविष्ट हो जाएँ जिसके आश्चर्य से आप अभी तक अपरिचित हैं।

"निश्चय ही विज्ञान का अर्थ यह नहीं कि जो सत्य आपको ज्ञात नहीं उसके प्रति आप असहिष्णुता प्रदर्शित करें। वैज्ञानिकता का वास्तविक अर्थ तो इतर विद्वानों द्वारा प्रतिपादित सत्यों का विनीत भाव से अध्ययन करना है।"

२

विमला विजयवर्द्धन की पत्रकारों से भेंट

बम्बई में श्रीमती विजयवर्द्धन ने प्रायः प्रत्येक मुख्य समाचार पत्र को भेंट दी। टाइम्ज, स्टेण्डर्ड, इवनिंग न्यूज़ आदि सभी पत्रों के प्रतिनिधि उनसे मिले। नीचे स्टैंण्डर्ड की भेंट से कुछ अंश उद्धृत करता हूँ जिससे ज्ञात होगा कि आयुर्वेद के लिए उनके हृदय में कितना हित है। भेण्ट लम्बी है इसलिए अल्पांश ही उद्धृत करता हूँ :—

"During the two days she was here, holding the health portfolio, as she does in the Ceylon Cabinet, she was naturally busy not talking politics but studying how we tackle our health problems.

"She discussed that question with Shri Morarji Desai for a while when she paid a courtesy call on him, but apparantly she did most of the talking with Pandit Shiv Sharma. That is understandable, because Ayurveda is Vimala's pet subject.

"And she is, perhaps, the first ever to have broached it at the World Health Assembly.

(Here I omit the quotation from her speech delivered at Geneva).

"What was the reaction to your suggestion?' I asked. 'Delegates from Haiti, New Guinea, Indonesia and Libya wanted me to tell them more about Ayurveda, she replied.

"I wanted to know what had made her such an advocate of Ayurveda. 'I had allowed myself to be made a guinea pig,'

she told me, 'and so I know about the efficacy of Ayurveda from first-hand experience.'

"Then she explained to me that she had been ailing for a long time and that she had tried the best allopaths both in her country as well as abroad, but to no avail. And it was only after Western science had failed to cure her that she had tried Ayurveda to 'my great good fortune.'"

अर्थात्

"क्योंकि लंका में उसके हाथ में स्वास्थ्य विभाग है इसलिए यह स्वाभाविक ही था कि इन दो दिन में वह राजनीति पर बातचीत न करके हमारी स्वास्थ्य समस्याओं को सुल्झाने की विधि का ही अध्ययन करती रही।

"जब वह श्री मोरारजी देसाई से भेण्ट करने गई तब भी इस प्रश्न की चर्चा उनसे कुछ समय तक की। परन्तु स्पष्ट है कि यह चर्चा भी अधिकांश में पं० शिवशर्मा से ही की गई। यह बात समझना कठिन नहीं क्योंकि आयुर्वेद विमला का सर्वप्रिय विषय है। और शायद यह प्रथम व्यक्ति हैं जिसने विश्वस्वास्थ्य परिषद् में यह विषय प्रविष्ट किया......

(यहाँ उनके भाषण के उद्धरण हैं उन्हें पुनः उद्धृत करने की आवश्यकता नहीं)

......"मैंने पूछा, 'तुम्हारे भाषण से क्या प्रतिक्रिया हुई ?' उसने उत्तर दिया 'हायटी, न्यू गिनी, इण्डोनीशिया और लिबिया के प्रतिनिधियों ने विशेष दिलचस्पी दिखाई और आयुर्वेद के विषय में अधिक जानना चाहा।'

"मैंने पूछा, 'तुम आयुर्वेद की इतनी वकालात क्यों करती हो ?' उसने उत्तर दिया 'मुझे प्रयोग जीव (गिनीपिग) बनना पड़ा। अतएव मुझे आयुर्वेद की उत्कृष्ठता का व्यक्तिगत अनुभव है' फिर उसने मुझे बताया कि वह किस प्रकार चिरकाल तक बीमार रही और किस प्रकार उसके देश के तथा विदेशों के उच्चतम ऐलोपैथ उसे अच्छा करने के प्रयत्न में असफल हो गए। जब पाश्चात्य चिकित्सा सर्वथा निष्फल सिद्ध हो चुकी तब 'अपने महान् सौभाग्य से' उसने आयुर्वेदिक चिकित्सा की शरण ली।"

३

उत्कल के मुख्य मंत्री तथा स्वास्थ्य मंत्री से भेंट

जबकि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आयुर्वेद भारत और लंका के सीमान्तों को पार कर रहा है इस देश के राज्य एक-एक करके आयुर्वेद की ओर झुकते जा रहे हैं।

१४ मई को भुवनेश्वर में उत्कल प्रदेश के मुख्यमंत्री तथा स्वास्थ्यमंत्री से २॥ घण्टे तक आयुर्वेद के भविष्य के संबंध में मेरी खुली बात चीत हुई। मुझे विश्वास हा

गया कि शासन का तो आयुर्वेद में दृढ़ विश्वास है परन्तु कुछ वैद्यों का ही इस शास्त्र में विश्वास नहीं। सौभाग्यवश इस परिस्थिति से मुख्यमंत्री महोदय स्वयं परिचित थे। मैं यह विश्वास तथा आश्वासन लेकर लौटा कि उत्कल राज्य केन्द्रीय विचारधारा का अनुकरण नहीं करेगा और शीघ्र ही आयुर्वेद की परिस्थिति को दृढ़ करने के लिए कोई ठोस पग उठाएगा।

४

दिल्ली की १५ मई की बैठक

लोकसभा में स्वास्थ्यमंत्रिणी के कथन पढ़-पढ़ कर वैद्यसमाज कुछ निराश हो गया था और ऐसा प्रतीत होने लगा था कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना में आयुर्वेद के लिए कोई स्थान नहीं होगा।

परन्तु केन्द्रीय मंत्रिमण्डल और लोकसभा में ही आयुर्वेद के शुभचिंतक ऐसे तत्व विद्यमान थे जिन पर मुझे पूर्ण विश्वास था कि महासम्मेलन की भेजी हुई योजनाएं रद्दी की टोकरी में नहीं फेंकने देंगे। अतएव जब स्वास्थ्यमंत्रिणी ने लोकसभा में यह असत्य भाषण किया कि वैद्यसमाज के कोई योजना न भेजने के कारण ही रुपया आयुर्वेद पर व्यय नहीं होता मैंने योजना विभाग से लिख कर पूछा कि वह १४ योजनाएं जो महासम्मेलन ने भेजी थीं कहां गईं तथा योजनामंत्री की सेवा में यह प्रार्थना भी की कि देश के वैद्यों को एक बार एकत्रित करके उनके विचार अवश्य सुनें। मैं उनका कृतज्ञ हूँ १५ मई को उन्होंने देश भर के आयुर्वेद के विद्वानों को देहली में एकत्रित किया। मुझे खेद है कि योजना विभाग के इस आग्रह पर भी कि उत्कलप्रान्त का कार्यक्रम स्थगित करके मैं १५ मई की दिल्ली की मिटिंग में अवश्य भाग लूं मेरा उत्कल राज्य के मन्त्रियों की भेंट को स्थगित करने का साहस नहीं हुआ। उधर स्वास्थ्यमंत्रिणी के विदेश गमन का कार्यक्रम निश्चित हो जाने के कारण तथा उनका इस योजना समिति में सम्मिलित होना भी अत्यावश्यक होने के कारण यह मीटिंग भी १५ मई से आगे नहीं स्थगित हो सकी।

परन्तु आज मुझे अत्यन्त हर्ष और गौरव है कि जो निर्णय वैद्य सदस्यों तथा उनके संसद तथा मंत्रिमंडल के समर्थकों ने किया उससे उत्कृष्ट निर्णय मेरे विचार में कोई नहीं हो सकता था। यह वह अवसर था जबकि थोड़ा लेकर सर्वनाश की बुनियाद डालने से कुछ भी न लेकर भविष्य के लिए रक्षा का प्रबंध कर लेना ही आवश्यक था। मैं स्वयं उपस्थित होता तो इससे अधिक कुछ न मांग सकता। इस बैठक का यही निर्णय हुआ कि जब तक केन्द्रीय स्वास्थ्यविभाग से यह संतोषजनक तथा विश्वसनीय आश्वासन प्राप्त न हो कि भविष्य में आयुर्वेद के प्रति शासन के व्यवहार तथा लक्ष्य में आमूलचूल परिवर्तन कर दिया जायगा तथा आयुर्वेद विभाग तथा आयुर्वेदीय संस्थाओं के लिए एक केन्द्रीय उच्चाधिकारी नियुक्त हो जाएगा तब तक कोई योजना उपस्थित करने का कुछ लाभ

अथवा आवश्यकता नहीं। स्वास्थ्यमंत्रिणी को जब योजनामंत्री, कतिपय लोकसभा तथा संसद के सदस्यों तथा सब वैद्यों का एक ही रुख नज़र आया तो उन्होंने विवश होकर वह आश्वासन जो एक वाणी से मांगा गया था, दिया। मुझे विश्वास है कि उनके विदेश से लौटने पर वैद्यसमाज इस दिशा में सफल प्रयत्न कर सकेगा।

बंबई के मुख्यमंत्री आयुर्वेद के शुभचिन्तक हैं। उन्हें इस १५ मई के निश्चय को सुनकर परम संतोष हुआ और उन्होंने इस पर प्रसन्नता प्रकट की कि एक तो यह निर्णय बुद्धिमत्ता और निर्भीकतापूर्ण हुआ दूसरे मेरी अनुपस्थिति में हुआ।

इसके लिए में उन वैद्यों का हृदय से आभारी हूं जिन्होंने इस मीटिंग में भाग लिया। इस निर्णय द्वारा केन्द्र में आयुर्वेद की भावी दृढ़ता और उन्नति की नींव रखी गई है। संभव है कुछ भाइयों को इसमें संदेह हो। कुछ समय बीतने पर उस संदेह के लिए स्थान ही नहीं रहेगा।

५

श्री मोरार जी देसाई का भाषण

अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के त्रिवेन्द्रम अधिवेशन पर बंबई के मुख्यमंत्री श्री मोरार जी देसाई ने आयुर्वेद के हित में जैसी मार्मिक और उत्कृष्ट उद्घाटन-वक्तृता दी वैसी आज तक किसी अन्य वैद्येतर व्यक्ति ने, विशेषतया जिसका देश में इतना ऊंचा स्थान हो, नहीं दी। क्योंकि श्री मोरार जी देसाई कभी लिखित भाषण नहीं देते उनकी वह वक्तृता रिकार्ड तो हो गई (और वह ५० मिनट का रिकार्ड अब स्थाई रूप से महासम्मेलन के पास सुरक्षित है) परन्तु वह अब तक प्रकाशित नहीं हो सकी थी। वह भी इसी मास (मई) में बढ़िया ग्लेज कागज पर श्री मोरारजी देसाई के चित्र सहित तथा मेरे एक अल्प प्राक्कथन सहित महासम्मेलन कार्यालय देहली से प्रकाशित* हुई है।

आयुर्वेद के प्रचार के लिए विभिन्न राज्यों के मुख्यमंत्रियों, वित्तमंत्रियों, सर्जन जनरलों, उच्च नागरिकों, बुद्धिजीवियों तथा पत्रकारों आदि को आयुर्वेद के पक्ष में प्रभावित करने के लिए यह पुस्तिका एक प्रामाणिक तथा आकर्षक साहित्य है तथा आयुर्वेद के शुभचिंतक कहां तक आयुर्वेद का साथ देने को तैयार हैं उसका एक आशाजनक और उत्साहवर्द्धक जाज्वल्यमान उदाहरण है। वैद्यसमाज को इस पुस्तिका का अधिकाधिक प्रचार करना चाहिए।

६

एक अमरीकन महिला का पत्र

७ मई के भाषण के पश्चात् जो पत्र मुझे प्राप्त हुए उन में गत सप्ताह एक पत्र अमरीकन महिला का भी प्राप्त हुआ। उसमें से आयुर्वेदिक व्याख्यान सम्बन्धी अंश ही

* इसका मूल्य १) रु० है और यह आयुर्वेद महासम्मेलन कार्यालय, महालक्ष्मी मार्केट, चान्दनी चौक, देहली से प्राप्त हो सकती है।—संपादक

उद्धृत करता हूं क्योंकि वह श्रद्धांजली वास्तव में मुझे नहीं आयुर्वेद शास्त्र को है जिसकी व्याख्या उस संध्या की की गई:—

Dear Pandit Sharma,

Belatedly, let me tell you how much I enjoyed your lecture on Ayurveda on the 7th in Delhi... There is so little opportunity to learn something authentic about it that I had postponed my departure to A—for a couple of days and I am certainly glad I did. It was fascinating and I am sure you rendered a great service to your profession by your lucid exposition.

I have suffered.........I have great hopes that a completely different way of looking at such an ailment is in my case much more to the point than modern medicine which never has done any more than prescribe vitamin pills.........

Very sincerely
R—

अर्थात्

यद्यपि विलंब से ही, मैं आपको बताना चाहती हूँ कि देहली में ७ तारीख के आपके आयुर्वेद पर व्याख्यान से मुझे कितना आनन्द हुआ। इस विषय पर कुछ प्रामाणिक ज्ञान प्राप्त करने का अवसर इतना दुष्प्राप्य है कि इसे सुनने के लिए मैंने अ······जाने का प्रोग्राम दो दिन के लिए स्थागित कर दिया। निश्चय ही मैं प्रसन्न हूँ कि मैंने ऐसा किया। वह (भाषण) मंत्रमुग्ध कर देने वाला था। मुझे पूर्ण विश्वास है कि अपनी सरल व्याख्या द्वारा आपने वैद्यसंप्रदाय की एक महान सेवा की है।

मैं बीमार रही हूं······मुझे बड़ी आशा है कि मेरी व्याधि को एक सर्वथा विभिन्न दृष्टिकोण से देखना कहीं अधिक सार्थक होगा बजाए आधुनिक चिकित्सा करते रहने के जिसने आजतक विटामिन की गोलियाँ देते रहने के सिवाए और कुछ नहीं किया·····

आपकी
र······

७

उपसंहार

दो वर्ष हुए जब मैंने वास्तविक आयुर्वेद शिक्षा, स्वतंत्र आयुर्वेद विभाग तथा ऐलोपैथ विमुक्त आयुर्वेद शासन की मांग की थी उस समय बंबई के एक प्रसिद्ध वैद्य ने मुझे कहा था कि "केन्द्र डाक्टरों के हाथ में है, बंबई के प्रत्येक आयुर्वेद विभाग का उच्चाधिकारी डाक्टर है। ऐसी परिस्थिति में इस प्रकार की असंभव मांगें करना और कभी न पूरा होने

वाला लक्ष्य सामने रखना केवल समय और शक्ति की बरबादी के सिवाय और कुछ सिद्ध नहीं होगा। ईश्वर तुम्हें और वैद्य समाज को सद्बुद्धि दें।" मैं इस उपदेश को ग्रहण न कर सका क्योंकि आयुर्वेद के सिद्धान्तों के सत्य और बल पर मेरा विश्वास वास्तविक था, कृत्रिम नहीं। इस दृढ़ विश्वास के कारण मैं केन्द्रीय स्वास्थ्य विभाग तथा उसके सहयोगी ऐलोपैथिक समाज की कृपा का कभी पात्र न बन सका तथा राजकुमारी और उनकी डाक्टरी सेना की छांट केन्द्रीय आयुर्वेदिक कार्यों के लिए सदा उन्हीं लोगों पर पड़ी जिनको आयुर्वेद की रक्षा का साधन डाक्टरों की शरण ही सदा प्रतीत होता रहा। परन्तु उन्हें भी अपने विश्वास पर दृढ़ रहने का पूर्ण अधिकार है। संभव है मैं ही अत्यधिक आशावादी हूं परन्तु मैं भी अपने विश्वास और व्यक्तिगत अनुभव से विवश हूं। जब ऊपर दी गई चेतावनी के केवल छः ही मास के भीतर शुद्ध आयुर्वेद की शिक्षापद्धति भारत के सर्वोत्कृष्ट तथा सबसे अधिक "आधुनिक" राज्य में शासन न आरंभ करदी, जब आयुर्वेद विभाग के लिए ऐसे निर्देशक की नियुक्ति हो गई जो आयुर्वेद का प्रकाण्ड पण्डित होते हुए अंग्रेजी का विशेष पण्डित नहीं था, जब आयुर्वेद क्षेत्र में उच्चाधिकारों से सब डाक्टर पृथक् होकर सब स्थानों पर वैद्यों की और ऐसे वैद्यों की जो वास्तव में ही आयुर्वेद में श्रद्धा और विश्वास रखते हैं, नियुक्ति हो गई तो मैं कैसे स्वीकार करूं कि आयुर्वेद डाक्टरी के नीचे रह कर ही और राजकुमारी की आयुर्वेद विघातक केन्द्रीय योजनाओं को पूर्ण सहयोग देकर ही कुछ काल के लिए जीवित रखा जा सकता है और कुछ समय के पश्चात् तो उसका नाश अवश्यंभावी है।

मैं अपना विश्वास अन्त में पुनः दोहराता हूं।

कालान्तर में आयुर्वेद की प्रगति बंद नहीं होगी परन्तु एक २ करके वह ज़बानें बंद हो जाएंगी जो आयुर्वेद और इसके वास्तविक शुभचिन्तकों के प्रति विष उगलती हैं।

ईश्वर अविश्वासियों को दीर्घ जीवन प्रदान करे जिससे वह आयुर्वेद को पुनः उस उन्नति के शिखर पर देखें जिसका वह पात्र है और जिस पर वह अवश्य आरूढ़ होगा।

निधि-समिति के पदाधिकारियों का चुनाव

अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन नियमावलि के अनुसार निधि-समिति के सभापति एवं मन्त्री का चुनाव किया गया है जिसके परिणाम स्वरूप सन् १९५६-५७ के लिये वैद्य-भूषण श्री पं० ठाकुरदत्त जी शर्मा, अमृतधारा देहरादून, समिति के सभापति चुने गये हैं और कविराज श्री शिवनाथ शर्मा, आयुर्वेदाचार्य; देहली, समिति के मन्त्री चुने गये हैं।

शिवनाथ शर्मा
मन्त्री,
निधि-समिति
अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन।

तपेदिक और राजकुमारी अमृतकौर

ले०—कविराज श्री हरिकृष्ण सहगल, स० सं०, आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका, देहली

नई देहली २१ अप्रैल को तपेदिक एसोसियेशन के १७वें वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर, केन्द्रीय सरकार की स्वास्थ्य मंत्रिणी श्रीमती राजकुमारी अमृतकौर ने भाषण देते हुये कहा कि देश में तपेदिक के प्रसार के विरुद्ध, इस प्रकार का अन्दोलन चलाना चाहिये जो तपेदिक निरोध और चिकित्सा का सुन्दर मिश्रण हो और उन्होंने यह भी बताया कि प्रदेशों के स्वास्थ्यमंत्रियों ने उनको सुझाव दिया है कि तपेदिक के विरुद्ध आन्दोलन को कौमी प्रोग्राम के रूप में चलाया जाये।

राजकुमारी जी का विचार तो बहुत अच्छा है, परन्तु क्या वह ऐसा कर भी पायेंगी ? इसमें सन्देह है। हमें २१ वर्ष पूर्व की एक घटना का स्मरण हो आया है, सं० १९२७ में परिमहल, शाहालमी गेट, लाहौर, में एक योगीराज डाक्टर श्री राजा देवी प्रसाद जी मिश्रा पधारे थे। आप का दावा था कि आप योगबल और हिप्नाटिज्म की शक्ति से शरीर के रुग्ण अंगों को हटाकर उनकी जगह नये अंग लगा सकते हैं। अगरचे उनके भी इस दावे की पुष्टि कहीं से और कभी भी न हो सकी।

लाहौर से प्रस्थान के पश्चात्, सुना जाता है कि आप भ्रमण करते हुवे एक वैज्ञानिकों की सभा में पहुँच गये। आप ने वैज्ञानिकों से कहा कि साइन्स की सहायता से संसार में सर्वदा दिन रखा जा सकता है। आप ने उपाय यह बताया कि इक्वेटर रेखा पर बड़े बड़े मुखदर्शक शीशे लगा दिये जावें, इससे सूर्य का प्रतिबिम्ब और प्रकाश एक से दूसरे और दूसरे से तीसरे शीशे पर होता हुआ, संसार से रात्रि के अन्धेरे को दूर कर देगा।

साइन्सदानों ने राजा देवीप्रसाद की रिसर्च पर विचार करते हुए निर्णय दिया कि विज्ञान के अनुसार ऐसा किया जा सकता है परन्तु इतने बड़े शीशों का निर्माण, उन्हें लगाना और उनकी रक्षा करना असम्भव है।

राजकुमारी अमृतकौर चाहती तो हैं कि तपेदिक के विरुद्ध इस प्रकार का आन्दोलन चलाया जाये कि जो तपेदिक निरोध और चिकित्सा का सुन्दर मिश्रण हो परन्तु यह भी कार्यान्वित न हो पायेगा, क्योंकि जिन साधनों से वह इसे करना चाहती हैं, उनके द्वारा ऐसा हो नहीं सकता।

राजकुमारी ने देश में बी. सी. जी. का आन्दोलन चलाया और कहा कि इससे तपेदिक रुक जायगा। भारत के भूतपूर्व गवर्नर जनरल श्री राजगोपालाचार्य ने इसका भरसक विरोध किया परन्तु जिस तिरिया हठ के सामने भगवान् श्रीराम न ठहर सके, उसके सामने श्री राजगोपालाचार्य जी का विरोध भी टिक न सका। राजकुमारी जी बराबर अपनी डगर पर चलती जा रही हैं और देश का करोड़ों रुपया इस व्यर्थ के परीक्षण पर नष्ट हो रहा है।

राजकुमारी जी तपेदिक की रोकथाम ऐलोपैथिक विधियों तथा ऐलोपैथिक डाक्टरों

की तपेदिक एसोसियेशनों के द्वारा करना चाहती हैं। उत्तरप्रदेश विधानसभा के अध्यक्ष श्री खेर जी ने कुछ दिन पूर्व अपने एक भाषण में ऐलोपैथिक चिकित्सा पर इन शब्दों में प्रकाश डाला था "साइन्स का अर्थ है शास्त्र और आयुर्वेद इसी प्रकार की उच्च कोटि का एक शास्त्र है, ऐलोपैथी शास्त्र न हो कर, नई बोतलों में केवल लेबल बदल कर रखी हुई पुरानी शराब है।"

"मैं अपनी बीमार पत्नी का रोग निदान तथा चिकित्सा कराने के लिये एक डाक्टर के पास ले गया, लेकिन डाक्टर को अपनी चिकित्सा में यश नहीं मिल सका, जब-जब और जितनी बार मैं अपनी पत्नी को डाक्टर के पास ले गया, तब-तब और उतनी बार डाक्टर ने उसे नये रोग हो जाने की बात कही, मुझे शास्त्राभ्यास की पहले से आदत और चाह है, जब डाक्टर मेरी पत्नी को नया रोग होने की बात कहते, तब मैं उनसे उस रोग सम्बंधी पुस्तक मांग लेता और घर आकर उस रोग के सम्बंध में अध्ययन करता, लेकिन डाक्टर के बताये हुए रोग और उनकी चिकित्सा, मुझे ढूढ़ने पर भी उस पुस्तक में नहीं मिली, उनकी चिकित्सा में मेरी पत्नी को कुछ भी फायदा नहीं हुआ अपितु उन्होंने उसे जिन २ औषधियों का सेवन कराया उन से रोग बढ़ता ही गया, अन्त में आयुर्वेदिक चिकित्सा करने पर ही मेरी पत्नी की तबीयत ठीक हुई।"

श्री खेर के अनुभव को व्यक्तिगत अनुभव कहा जा सकता है परन्तु सामूहिक रूप में २० लाख व्यक्तियों को गत कुछ मासों में जब देहली में पीलिया फैला, ऐलोपैथिक डाक्टरों की साइन्टिफिक योग्यता अनुभव करने का अवसर प्राप्त हुआ।

जब तक पत्रों में पीलिया का नाम नहीं छपा, हस्पतालों में डाक्टरों ने रोगी की आँखों की ओर देखने की आवश्यकता अनुभव न की और धड़ाधड़ कुनीन मिक्सचर दिया जाता रहा। इस से पीलिया बिगड़ा भी और रोगियों की अधिक मृत्यु भी हुई।

भला हो तिब्बी एसोसियेशन दिल्ली वालों का तथा वैद्यों का, वह इस आड़े वक्त में दिल्ली की जनता और डाक्टरों के काम आये। नगर के प्रत्येक भाग में पीलिया की चिकित्सा के केन्द्र खुल गये। जीपकारों के द्वारा लोगों को केन्द्रों का पता और समय बताया गया। पीलिया देशी चिकित्सकों और देशी औषधियों से रुक गया। लोगों ने हस्पतालों में जाना बन्द कर दिया और एक दिन अखबारों में छप गया कि डाक्टरों की एसोसियेशन और डाक्टरों ने भयङ्कर पीलिया पर काबू पा लिया है। हस्पतालों में अब नवीन रोगी नहीं आ रहे हैं।

ऐलोपैथिक चिकित्सकों की योग्यता का अनुभव राजकुमारी जी को नहीं परन्तु जनता को बखूबी है। अभी कुछ दिनों की बात है कि अपने एक परिचित रिटायर्ड स्टेशन मास्टर जी को कोष्ठबद्धता हो गई। उनके मकान की निचली मंजिल में एक एम.बी.बी. एस. डाक्टर रहते हैं। उक्त डाक्टर ने उसे कोष्ठबद्धता नाशार्थ भी इंजेक्शन लगाने आरम्भ कर दिये। और जब ३० रु० का बिल हो जाने पर भी लाभ नहीं हुआ तो पका पपीता खाकर भरपेट दुग्ध पीने से शौच होकर उन्हें स्वास्थ्य लाभ हो गया।

'प्रताप' देहली, २४ अप्रैल के अङ्क में सम्पादकीय लेख 'गिरानी और म्युनिसिपल अहकाम' में महाशय कृष्ण प्रसिद्ध आर्यसमाजी नेता लिखते हैं, "देहली म्युनिसिपल कमेटी

के कर्मचारियों को, गन्दी भोज्य सामग्री बेचने वाले गरीब दुकानदारों का चालान करने के बजाय, ऐसी कमेटियां बनानी चाहियें, जो अन्नपूर्णा के ढंग पर कम दामों में सस्ते खाद्य भोजन गरीबों के लिये प्रस्तुत करें। इन कमेटियों में चिकित्सक (डाक्टर) भी होने चाहियें, परन्तु यह आवश्यक है कि डाक्टर, राजकुमारी अमृतकौर के दृष्टिकोण के न हों। क्योंकि उन्होंने (राजकुमारी अमृतकौर ने) तो पढ़ी ही एक बात है कि जो वस्तु विलायत में नहीं बनी वह निकम्मी है, ऐसे लोग इस मसला को हल न कर सकेंगे, हमें तो उन लोगों की जरूरत है जो यह मानते हों कि वाक्या ही हिन्दुस्तान की ऐसी भी चीजें हैं जो सस्ती भी हैं और मुफीद भी।"

जहां तक तपेदिक के निरोध का सम्बंध है, तपेदिक एसोसियेशनें सफल नहीं हो सकतीं। अगर वास्तव में ही राजकुमारी जी चाहती हैं कि तपेदिक का निरोध हो तो उन्हें देश में आयुर्वेदिक तपेदिक एसोसियेशन स्थापित करनी चाहियें अगर आयुर्वेदिक चिकित्सकों की एसोसियेशनों को सरकार की ओर से ऐलोपैथिक एसोसियेशनों को मिलने वाली धनराशि का अर्द्ध भाग भी मिले तो भी देश का भला हो सकता है परन्तु वह ऐसा करेंगी नहीं, क्योंकि उनकी विचारधारा के अनुसार देश में बनी प्रत्येक वस्तु निकम्मी है। अगरचे उनकी यह धारणा सर्वथा भ्रम-मूलक है। पत्रों में छपा है कि जर्मनी के एक विद्वान् प्राध्यापक डाक्टर कोरफले ने अष्टाङ्ग हृदय का जर्मन भाषा में अनुवाद करके उसे पुस्तक रूप में प्रकाशित किया है, जर्मनी में ही एक दूसरे प्राध्यापक डाक्टर बेकरालगे ने त्रिदोष संबंधी एक पुस्तक लिखकर आयुर्वेद का गुणगान एवं महत्व प्रतिपादित किया है। ऐसा कहा जाता है कि उक्त दोनों पुस्तकों के संस्करण धड़ाधड़ बिक रहे हैं जो वहां की जनता का आयुर्वेद के प्रति श्रद्धा और विश्वास का परिचायक है।

जर्मन विद्वानों को तो आयुर्वेद के गुण दिखाई देते हैं परन्तु राजकुमारी अमृतकौर ने कभी इस साइन्स की ओर, जो भारतीय है, देखने का भी कष्ट नहीं किया।

राजकुमारी जी भली प्रकार समझ लें कि जब तक भारत से ऐलोपैथिक चिकित्सा का बिस्तर गोल नहीं किया जाता, जब तक विदेशों से पेटेंट भारत में आती रहेंगी और जब तक आयुर्वेद की दिनचर्या, ऋतुचर्या को अपनाया नहीं जाता, जब तक नौजवानों को ब्रह्मचर्य का ज्ञान नहीं कराया जाता, हवन यज्ञ का पुनः आरम्भ नहीं हो जाता, योगाभ्यास आश्रमों तथा व्यायाम शालाओं का देश में जाल नहीं बिछ जाता और देश के कोने २ में अच्छी नसल की गाय भैंसों की डेरियां नहीं खुल जातीं, तब तक तपेदिक की रोकथाम नामुमकिन है। जैसे उन्होंने यह कहकर कि तपेदिक कि रोकथाम के लिये ऐसा आन्दोलन चलाना चाहिये जो तपेदिक की रोकथाम और चिकित्सा का सुन्दर मिश्रण हो, यह मान लिया है कि बी.सी.जी. पर उन्हें भरोसा नहीं रहा, बी.सी.जी. का उपाय निष्फल हो गया है एक दिन उन्हें यह भी स्वीकार करना पड़ेगा कि तपेदिक की रोकथाम केवल मात्र आयुर्वेदिक साइन्स द्वारा ही हो सकती है।

आन्ध्र प्रांत में आयुर्वेद

श्री गोगिनेनि वेंकट सुब्बया (संयुक्त मन्त्री आंध्र आयुर्वेद वैद्य मंडली)

आंध्र प्रांत का अवतरण हुए अभी बत्तीस महीने होगये हैं। पर आंध्र सरकार ने आज तक आयुर्वेद के लिये पृथक् शाखा या पृथक् बोर्ड या आयुर्वेद कालिज की स्थापना तक नहीं की है। कारण पैसे की कमी बतायी जाती है। पर आगामी जुलाई में कर्नूल में खुलने वाले एलोपैथिक कालिज के लिये तो पैसे की कमी नहीं है! इसीसे आयुर्वेद के प्रति आंध्र सरकार का अलक्ष्य भाव साफ जाहिर होता है। श्री प्रकाशम् पंतुलु जी के मंत्रित्व काल में ता० ३० जून १९५४ को भिषग्रत्न डा० आचंट लक्ष्मीपति जी की अध्यक्षता में आयुर्वेद वैद्य निपुणों की एक समिति की नियुक्ति हुई जिसको यह आदेश दिया गया कि आयुर्वेद के विकास के लिये एक योजना बनावे। उन प्रवीणों की समिति की बैठक १९५४ जुलाई में विजयवाड़ा में हुई और आयुर्वेद के विकास के लिये एक रिपोर्ट तैयार करके आंध्र सरकार के सामने पेश की गई। इसके कुछ समय पश्चात् नया मंत्रिमण्डल अधिकार में आया। ता० १० मई १९५४ को मद्रास के सेंट्रल बोर्ड आफ् इंडिजिनस मेडिसिन की बैठक हुई जिसमें यह प्रस्ताव पास किया गया कि आंध्र सदस्यों से आंध्र प्रांत के लिये एक पृथक् बोर्ड का निर्माण किया जाय। यह प्रस्ताव आंध्र सरकार के सामने पेश किया गया। पर आंध्र सरकार ने न तो सेंट्रल बोर्ड के इस प्रस्ताव पर ध्यान दिया न वैद्य प्रवीणों की समिति की सिफारिशों को कार्य रूप में परिणत किया। ऊपर से आंध्र सरकार ने आन्ध्र प्रांत का आयुर्वेद सम्बन्धी सारा कार्य मद्रास सरकार के आधीन कर दिया। साथ-साथ यह भी प्रकट किया कि १९५३ अक्तूबर से खर्च में अपना हिस्सा आधा चुकाने को आंध्र सरकार तैयार है। ता० २ दिसंबर १९५५ को आंध्र सरकार ने एक परवाना प्रकट किया जिसके अनुसार आंध्र प्रांत की आयुर्वेद फार्मेसियों, रूरल मेडिकल प्राक्टिशनरों, रजिस्टरी के लिये आवेदन पत्र भेजने वाले आयुर्वेद चिकित्सकों को मद्रास सरकार के कालिज आफ़ इंडिजिनस मेडिसिन के अध्यक्ष और सेंट्रल बोर्ड आफ़ इंडिजिनस मेडिसिन के अध्यक्ष के साथ पत्र व्यवहार करने में बड़ी कठिनाई हो रही है। ता० २१ अगस्त १९५५ को कूचीपूडी (तेनाली-तालुक) में भिषग्रत्न डा० आचंट लक्ष्मीपति जी की अध्यक्षता में आंध्र प्रांत की समस्त आयुर्वेदिक समितियों और आंध्र L.I.M. समिति का संयुक्त सम्मेलन हुआ और उस सभा में एक स्वर से यह प्रस्ताव पास हुआ कि आंध्र प्राँत में आयुर्वेद के प्रचार में सुगमता के लिये पृथक् शाखा खोली जाय, आयुर्वेद कालिज खोला जाय, और आयुर्वेद चिकित्सकों की रजिस्टरी करने के लिये आयुर्वेदिक कौंसिल का निर्माण किया जाय। यह प्रस्ताव आंध्र सरकार को पेश किया गया। पर आज तक न जाने उस प्रस्ताव की क्या गति हुई? मालूम होता है इस प्रस्ताव पर सरकार ने जरा भी ध्यान नहीं दिया। अगर आँध्र प्रांत में आयुर्वेद के लिये पृथक् शाखा और पृथक् कौंसिल का निर्माण किया होता

तो भी उतना ही पैसा काफी होता जितना कि मद्रास सरकार को चुकाया जाता था। यहाँ तक कि अगर बाकी आयुर्वेदिक चिकित्सकों की रजिस्टरी का काम अमल में लाया जाता तो दो लाख रुपये की आय भी होती।

मद्रास सरकार ने तो फरवरी १९३३ में आयुर्वेद के विकास के लिये एक विधान पास किया था जिसके अनुसार मद्रास में सेंट्रल बोर्ड आफ़ इंडिजिनस मेडिसिन नामक संस्था खोली गयी थी और उसके अधीन देशी चिकित्सकों को A व B वर्गों में आज तक रजिस्टर्ड किया जा रहा है। इस संस्था में आयुर्वेदिक चिकित्सकों को भी उचित स्थान दियेजाने से आज तक 'बी' वर्ग के देशी चिकित्सक भी उसमें सदस्य चुने जाते थे। इस संस्था में अब तक G.C.I.M. 72, L.I,M आदि देशी चिकित्सक A वर्ग वाले १४२८, B वर्ग के देशी चिकित्सक १३००० रजिस्टर किये जाकर मतदाता की हैसियत रखते थे। मई १९४९ में इस संस्था का चुनाव हुआ जिसके अनुसार इस संस्था में A वर्ग के चिकित्सकों के लिये ९ स्थान B वर्ग के देशी चिकित्सकों के लिये जिले वार नियोजक वर्ग बनाकर १४ स्थान देकर चुनाव हुआ। A वर्ग के चिकित्सकों में से तीन सदस्यों को लेकर सरकार ने नियुक्त किया। इस तरह २६ सदस्यों से उस संस्था का पुनर्निर्माण हुआ और वही संस्था आज तक देशी चिकित्सकों को रजिस्टर करना, देशी वैद्य फार्मेसियों को मंजूर करना (रिकग्नीशन देना), व्यक्तिगत कालिजों को रिकग्नीशन देना आदि काम करती आ रही है। पर १९५६ फरवरी में मद्रास सरकार ने एक आज्ञापत्र जारी किया जिसके अनुसार दोनों प्रांतो (मद्रास और आंध्र) के B वर्ग के १३००० देशी चिकित्सकों के नाम मतदाताओं की सूची से निकाल दिये गये और मद्रास सेंट्रल बोर्ड आफ़ इंडिजिनस मेडिसिन में इस B वर्ग के लिये जो १४ स्थान हैं वे भी रद्द कर दिये गये। दुख की बात है कि G.C. I.M, और L.I.M, आदि A वर्ग के चिकित्सकों के द्वारा ही उक्त संस्था का इसी महीने में सरकार चुनाव का कार्यक्रम चलाने जा रही है। आंध्र आयुर्वेद चिकित्सकों का कर्त्तव्य है कि वे लोग सबल आंदोलन करें जिससे आंध्र सरकार आंध्र प्रांत के लिये यह चुनाव लागू न करे। कर्नूल में गत साल दिसंबर महीने के अंत में जो अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन की महा सभा हुई उस में आरोग्य शाखा के मंत्री ने कहा था कि देहाती चिकित्सकों की शिक्षा के लिये वर्ग चलाये जाने वाले हैं। जिसके लिये आर्डर भेजा गया है। पर वर्ग तो आज तक आरम्भ नहीं किये गये। इसके लिये कई ग्रामीण चिकित्सक प्रतीक्षा कर रहें हैं। आयुर्वेद समितियों ने जो मेमोरेंडम सरकार को भेजे हैं उनके अनुसार हर एक जिला केन्द्र के अस्पताल में ग्रामीण चिकित्सकों को शिक्षा देने के लिये वर्ग चलाये जाने चाहियें जिससे साधारण चिकित्सक भी उस विद्यालय में भर्ती हो सकें। आयुर्वेद वैद्य समितियों की सूचनाओं के अनुसार एक सिलेक्शन कमिटी बनायी जाय जिसके सदस्य मद्रास सेंट्रल वोर्ड आफ़ इंडिजिनस मेडिसिन के सदस्य ही हों जो उन्हीं जिलावार नियोजक वर्गों में से चुने गये हों। इस तरह वनी कमिटी ही उन वर्गों में शिक्षा पाने के लिये योग्य अभ्यर्थियों को चुन सकती है। ग्रामीण चिकित्सक डरते हैं कि यह कमिटी कहीं आयुर्वेद चिकित्सकों से न बन कर उससे भिन्न वैद्य विधान के

[नाग]पुर विश्वविद्यालय का

आयुर्वेदिक संशोधन कार्य

ले०— वैद्य श्री वेणीमाधव शास्त्री जोशी, नागपुर

[इं]डियन फार्मेसिस्ट एसोसिएशन ने नागपुर [...] विश्वविद्यालय को पारद व लोह इन [...] विषयों में संशोधन करने की दृष्टि से [...] रु० प्रतिमास ५ वर्ष के लिए अनुदान [...]का आश्वासन दिया है तथा विश्वविद्यालय [...] इसे मान्य कर लिया है और उक्त दो [विष]यों में संशोधन करने का निश्चय किया [...]। इसके सिवाय म. प्र. सरकार ने 'तृण[...]ति' यह विषय भी संशोधन के लिये [...]ता है।

पारे पर ग्रंथों में बतलाई गई प्रक्रिया करने [की] परम्परा अब नहीं रही। वैद्यों एवं आयु[र्वेद]ीय औषधि कारखाने वालों को यह आवश्यक प्रतीत होने लगा था कि पारद प्रक्रिया पुनः प्रचिलित हों। इंडियन फाॅर्मेसिस्ट एसोसिएशन ने नागपुर विश्वविद्यालय को इस प्रकार की सहायता देकर, 'पारा' यह विषय संशोधन के लिए निश्चित कर, आयुर्वेदीय संशोधन क्षेत्र में एक शाखा के अत्यन्त महत्वपूर्ण आधार स्तंभ की स्थापना का उपक्रम शुरू किया है।

चालू कार्य

रुग्णालय में उपयोग में लाने के हेतु ई. मर्क के डबल डिस्टिलड व हिंगुलोत्थपारद पर प्रथम अष्ट-संस्कार किया गया। हिंगुलोत्थ-पारद पर यह अनुवासन संस्कार चालू है। बाद में लहसुन व निर्गुन्डी के रस में पारद् शुद्धि की गई। कच्छप यंत्र के द्वारा अंतर्धूम गंधक जारण का कार्य चालू है, उसमें भिन्न कल्पना के अनुसार जारण क्रिया की जा रही है। लोहकुप्पी में अंतर्धूम गंधक जारण से हिंगुल का दशगुण गंधक जारित रस सिंदूर भी तैयार हो रहा है। अनुवासन संस्कार के बाद स्वर्ण जारण के लिए शंखविडा की पूर्व तैयारी हो चुकी है। रूई के चिकों की १०० भावना पूर्ण हो चुकी हैं। केवल ३ गर्भपुट देना बाकी है। नील ज्योतित मूर्च्छित पारद, स्वेदित पारद परीक्षण के लिए तैयार हैं। इस कार्य के लिए एक वैद्य की सहायत ली जा रही है।

आधुनिक शास्त्र के अनुसार चालू कार्य

आर्गेनिक केमिस्ट्री विषय में एम. एस. सी. उत्तीर्ण एक फेलो सामयिक परीक्षण

[चि]कित्सकों से बने तो बड़ा ही अन्याय होगा, [...] हानि पहुँचेगी।

आयुर्वेद वैद्य प्रवीणों की समिति की [सूच]नाओं के अनुसार आंध्र सरकार आयुर्वेद [चि]कित्सकों की रजिस्टरी के लिये पूर्वरूप [...] कर बहुत जल्दी जनता के सामने रखे [औ]र इसको नया आंध्र प्रदेश के अवतरण के [सा]थ ही कानून बनावे और साथ-साथ [ग्रा]मीण चिकित्सकों को शिक्षा देने के लिये [...] भी आगामी जुलाई से ही चलाये जायं। [...] राज्य के वैद्यों का कर्त्तव्य है कि उप[...] कार्य प्रणाली को अमल में लाने के [लि]ये सरकार को मजबूर करें। इसमें अखिल [भार]तीय आयुर्वेद महासम्मेलन की सहानु[भूति] भी हम को मिलेगी। अगर जरूरत पड़े [तो] इसके लिये हम सत्याग्रह तक करने को [तैया]र रहें।

——

का कार्य कर रहे हैं। यहां भी प्रयोगशाला में पारद का विशिष्ट घनल तथा प्रतिशत के हिसाब से परीक्षण कर पारद शुद्ध है या नहीं यह देखा जाता है। यहां पर अधिक सूक्ष्म परीक्षण के साधन नहीं हैं। सूक्ष्म विश्लेषण से ही पारद के सूक्ष्म तत्वों का पता लग सकता है। यह परीक्षण कहां हो सकता है इस सम्बन्ध में जाँच जारी है।

प्रयोग

आयुर्वेदोक्त प्रक्रिया और उनका परीक्षण इन दोनों कार्यों का उल्लेख ऊपर किया गया है। कुछ प्रयोग भी चालू हैं। संशोधन तथा अन्वेषण शाला में कार्यों का आधार 'प्रयोग' ही है। ई. मर्क के पारे में सीसा. ०.०००१ प्र. श. प्रमाण में रहता है। हमारे संस्कारों से वह निकल गया अथवा नहीं यह जानने के लिए कोई मार्ग नहीं है। सूक्ष्म विश्लेषण की व्यवस्था न होने से पारे में जबरदस्ती सीसा, जस्ता आदि डालकर वे संस्कारों द्वारा बाहर निकलते हैं अथवा नहीं यह जानने के हेतु प्रयोग किये जा रहे हैं। इन प्रयोगों में सीसे के संबंध में यह बात देखने में आती है कि गरम पानी, केवल हवा आदि से भी पारे से कुछ प्रमाण में मुक्ति हो जाती है।

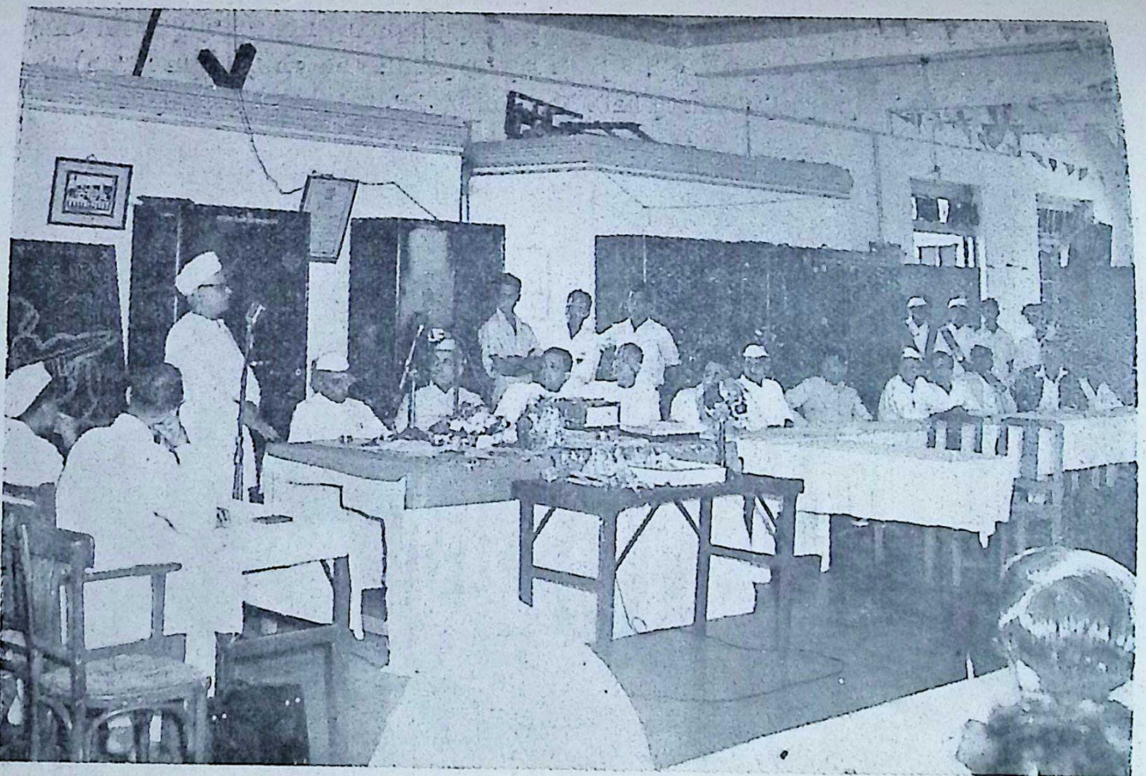
निकट भविष्य में

भिन्न-भिन्न अवस्था के पारद का प्राणियों पर प्रयोग कर शास्त्रोक्त परिणाम एवं अन्य परिणाम क्या होते हैं, तथा क्या नहीं होते यह देखने के लिए बायोकेमिस्ट्री सहायता किस प्रकार ली जाय इसकी व्यवस्था की जा रही है।

पारद के जो कल्प तैयार होंगे उनका रोगियों पर शास्त्रोक्त गुणधर्म की जांच (व्हेरिफिकेशन) के लिए मेयो अ... में व्यवस्था की जा रही है।

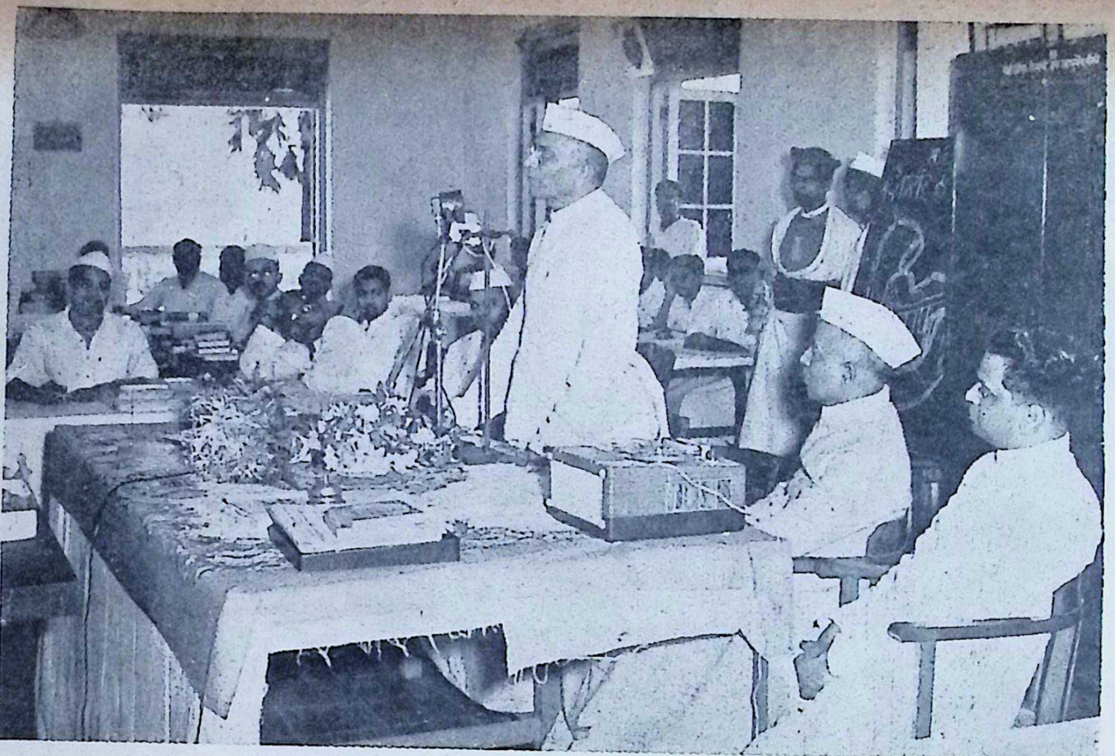
तृणज्योति

यह बनस्पति म. प्र. में मंडला जि... पाई जाती है। इसके बारे में काफी सा... प्रकाशित हुआ है। किन्तु वह इस वन... को लागू नहीं होता। तृणज्योति के बा... 'ज्वलन्ति पर्वतास्तैस्तु" ऐसा वर्णन कि... जाता है। जिस वनस्पति के कारण रा... पर्वत जलते हुए दिखाई देते हैं—उस व... स्पति के जमीन पर तृण चमकते हुए दि... देने चाहिएँ। इस वनस्पति का मूल ही च... कने वाला होना चाहिए और मूल (ज... जमीन के भीतर होने के कारण पर्वत ... रहे हैं ऐसा दृश्य इस वनस्पति के का... दिखाई नहीं देता था तथा यह संभव भी ... है। इस पर से यह वनस्पति तृणज्यो... नहीं है ऐसा मानना पड़ेगा। ऐसे और ... अन्य प्रमाण विद्यमान हैं। तृणज्योति ... प्रकाश हिरण्य सदृश्य बताया गया है। ... के समान लाल व पीला रंग के मिश्र... तो नहीं वरन् चांदी के समान सफेद भी ... है; तो अल्ट्रा व्हायोलेट रंग के समान ... रंग की छटा से युक्त सफेद रंग है। ... म नील ज्योति, तृणज्योतिः, उर्वरा हे... ल्लिका, इस प्रकार चार भिन्न-भिन्न प्र... की वनस्पति बताई गई हैं। यह नील ज्यो... है इस शीर्षक के अन्तर्गत एक लेख ना... के आयुर्वेद पत्रिका में छप चुका है। ... साधक और बाधक प्रमाणों का विचार कि... गया है। इस वनस्पति का पारद का... स्वतन्त्र रूप से उपयोग करके गुण ... जायंगे।



शारीर संज्ञा परिषद् के अध्यक्ष आयुर्वेदाचार्य पण्डित हरिदत्त शास्त्री मुख्यमन्त्री को सम्मेलन के कार्य का परिचय करा रहे हैं। चित्र में (बायें से दायें) वैद्य श्री एम० गोगटे, वैद्य एस० के० करमारकर, पं० हरिदत्त शास्त्री, श्री मोरार जी देसाई, वैद्य जी० वी० पुराणिक, श्री ए० एन० नाम जोशी, वैद्य रणजित राय देसाई, वैद्य भि० वि० डेखेकर, वैद्य जी० वी० पुरोहित, वैद्य एम० वाई० लेले, वैद्य गोपाल शास्त्री गोडबोले आदि दिख रहे हैं।

शारीर संज्ञा-परिषद् बम्बई



शारीर संज्ञा परिषद् में भाषरण देते हुए बम्बई राज्य के मुख्यमन्त्री श्री मोरार जी देसाई। चित्र में (दायें से वायें) श्री ए० एन० नाम जोशी, वैद्य श्री जी० वी० पुराणिक, श्री मोरार जी देसाई, वैद्य एन० एच० जोशी, वैद्य राम शिरोमणि द्विवेदी, वैद्य डी०एस० अन्तरकर, वैद्य ब्रह्मदत्त शर्मा, वैद्य वी०वी० व्यास तथा वैद्य एस० के० करमारकर विराजमान हैं।

बम्बई राजकीय आयुर्वेदीय अन्वेषण समिति

शारीर संज्ञा परिषद् का विवरण

(दिनांक ४ मई १९५६ से १० मई १९५६)

बम्बई राजकीय आयुर्वेदीय अन्वेषण समिति की ओर से दिनांक ४ मई १९५६ तक बम्बई में शारीर संज्ञा परिषद्, आयुर्वेदाचार्य पं० हरिदत्त शास्त्री, डायरेक्टर आफ आयुर्वेद, बम्बई राज्य, की अध्यक्षता में हुई, यह परिषद् ७ दिन तक होती रही।

अन्वेषण समिति की ओर से पूना के वैद्य ग. वी. पुरोहित, बी. ए. आयुर्विद्या विशारद लिखित ग्रंथ "आयुर्वेदीय शारीरम्" प्रकाशित किया गया। इस ग्रन्थ को पाठ्य पुस्तकतया मान्य करने के लिये समिति ने बम्बई की आयुर्वेदीय स्टेट फैकल्टी और शुद्ध आयुर्वेद पाठ्यक्रम समिति को विनती की। दोनों संस्थाओं ने ग्रन्थ की उपादेयता को स्वीकार करते हुए इस बात पर भार दिया था कि समिति को शारीर संज्ञाओं की सदा के लिये विनिश्चिति करने का प्रयत्न करना चाहिये।

चर्चा के पूर्व पक्ष के रूप में वैद्य श्री पुरोहितजी के "आयुर्वेदीय शारीरम्" ग्रन्थ पर से बनाई हुई संज्ञाओं की सूची उपयोग में ली गई।

यह परिषद् केवल चर्चारूप ही न रहकर साथ-साथ शवच्छेदन की व्यवस्था भी समिति की ओर से की गई थी।

परिषद् का कार्य ठीक ११ बजे प्रारम्भ होकर करीब दो बजे तक चलता था फिर दो से ढाई तक विश्राम लेकर ढाई से साडे चार तक चर्चा चलती थी। प्रायः साड़े चार से छ तक शवविच्छेदन शाला में प्रात्यक्षिक दिया जाता था।

परिषद् के अध्यक्ष, सभा संचालन में अतीव निपुण और कार्यदक्ष, आयुर्वेदाचार्य हरिदत्त जी शास्त्री ने परिषद् का संचालन बड़ी सफलता से किया। आपने अपने प्रास्ताविक भाषण में इस चर्चा के विषय की पार्श्वभूमि का बड़ी विद्वत्तापूर्ण भाषा में दिग्दर्शन कराया और इस परिषद् के कार्य का महत्व बतलाया।

इसके बाद परिषद् के प्रधान कार्य का आरंभ वैद्य ग. वि. पुरोहित जी के भाषण से हुआ। वैद्य पुरोहित जी एक-एक संज्ञा परिषद् के सामने रखते गये और उनपर चर्चा होती रही। प्रायः प्रतिदिन उपसमिति के सदस्य बैठकर अविवाद्य संज्ञाओं की सूची बनाते थे और वह दूसरे दिन परिषद् के सामने रखी जाती थी। इस सूची में से कई संज्ञायें विवाद्य बनकर दूसरे दिन उनपर चर्चा होती थी इस प्रकार परिषद् के अंतिम दिन तक करीब १९७ शारीर विषयक संज्ञाओं का अर्थ निश्चित करके उनपर निर्णय लिया गया। जिसमें क्लोम का निर्णय अर्वाचीन शब्द में (Pancreas) पैंक्रिग्रस् किया गया। सिरा, धमनी, नाडी इन संज्ञाओं के बारे में पर्याप्त चर्चा हुई और उनके अर्थ के बारे में क्या मतभिन्नता है यह निश्चित हुआ। प्रमाण सामने आये। शवच्छेदन करके प्रात्यक्षिक में वस्तुता बताई गई और हरेक प्रतिनिधि इस विषय से अधिक परिचित हुवा।

गुरुवार दिनांक १० मई को ११ बजे बम्बई राज्य के आयुर्वेद प्रेमी महामंत्री, माननीय श्री मोरारजी देसाई, परिषद् की कार्यवाही देखने के लिये पधारे। आपने परिषद् के कार्य का परिचय करा लिया और कार्य का गौरव बताते हुए कहा—

"लेकिन इतना मेरा जरूर ख्याल है कि आपने यहां जमा होकर ठीक काम किया है ये पारिभाषिक शब्दों में आप सर्वसम्मत हुए और आगे चल कर कुछ नहीं तो शब्दों की मारामारी तो नहीं रहेगी। इस देश में जो हमारा सबसे बड़ा नुकसान हुआ है वो एक हमारे में बड़ी भारी कमजोरी आगयी है, सदियों से वह कमजोरी है आपस में लड़ने की। इसके लिये सिर्फ बहाना ही चाहिये लड़ने की तैयारी हमेशा होती रहती है। किसी के गुण को स्वीकार करना हम सीखे नहीं और किसी के दुर्गुण को मान लेना, उसके लिये हमारी हमेशा तैयारी रही।

"यह सबसे पहली जरूरत है कि हम हमारी कमजोरी समझें और उसको दूर करें किसी आदमी को कोई और नहीं गिरा सकता, और कोई और ऊंचा भी नहीं उठा सकता। वैसा ही समाज का और देश का है ऐसा मैं समझता हूं। हम खुद गिरते हैं या तो हम खुद ऊंचे उठते हैं, हमारे ही कर्मों की वजह से।

"आपका जो शास्त्र है, आयुर्वेद, उसकी भी वही हालत हुई क्योंकि उसकी जो आराधना करने वाले थे उनकी ताकद नहीं रही आराधना करने की, मौका नहीं रहा वह करने का और समाज में वह कीमत नहीं रही उसको पहचानने की; इसलिये वो गिरता गया और जो राज्य हमारे यहां कायम हुआ परदेसियों का उनको तो कीमत थी ही नहीं क्योंकि वेअपने साथ दूसरा साधन ले आये थे और अपने साधन की वे ज्यादा कीमत करें उसमें कोई शक नहीं।"

"आयुर्वेद का वही हाल हुआ और जैसी सभी चीजें गिरती गयीं वैसा आयुर्वेद भी गिरता गया, याने आयुर्वेद नहीं गिरता गया आयुर्वेद के मानने वाले गिरते गये और इस साधन का उपयोग करने वाले गिरते गये. इसीलिए आयुर्वेद नहीं गिरता। वही योग शास्त्र की भी दशा हुई। आज लोग कहते हैं कि योग शास्त्र भी कोई शास्त्र नहीं।"

"जो आयुर्वेद की आराधना करना चाहते हों; उनको बंधन न हो, उनको अपनी रीति से चलते जाते देना चाहिये औरों का काम नहीं उनको रास्ता बताने का, वो जानते ही नहीं तो रास्ता कैसे बतायें। आयुर्वेद वाले कहें कि एलोपैथी की हम रक्षा करेंगे तो वो भी इतनी ही मूर्खता होगी जो यह मूर्खता है, ऐसा मैं समझता हूं।"

"आयुर्वेद को आगे लाने के लिये हम यही देखना चाहते हैं कि आयुर्वेद की आराधना वैसे ही लोग करें जो इस रास्ते पर जाना चाहते हैं और अपना जीवन उसी के मुताबिक बिताना चाहते हैं; यही काम आज बम्बई गवर्नमेंट की ओर से हो रहा है। मगर हम कितना भी वो करें आखिर उसमें यश मिले न मिले, कामयाबी हो न हो उसका आधार आप लोगों पर है।

"मैं तो यह देखकर हैरान हो गया हूं कि वैद्यों के इतने अखाड़े क्यों हो गये? * क्यों उनके

---

* नेता गिरी की इच्छा इसका प्रमुख कारण है। जो लोग काम तो करना नहीं चाहते, परन्तु गद्दियों पर आसीन होना चाहते हैं वह त्याग और तप से शिखर पर पहुंचने वालों से कट कर नित्य नवीन संस्थाओं को जन्म देकर आयुर्वेद की हानि के लिये, राजकुमारी अमृतकौर के हाथों को दृढ़ करते हैं। अगर भारत की स्वाधीनता नष्ट करने के लिये जयचंद ने जन्म लिया था तो आज आयुर्वेद को नष्ट करने के लिये भी जयचन्दों का जन्म हो चुका है। सं० सं०

सम्मेलन अलग-अलग होते हैं? क्यों उनकी सभायें अलग-अलग होती हैं; क्यों एक साथ नहीं मिल सकते? एक-एक क्यों पकड़कर वे लोग कहते हैं कि देखो ये एक कहता है वो उलटा कहता है इसलिए दोनों गलत हैं। दोनों में से कोई अच्छा तो नहीं बनता। दोनों की टांग पकड़ कर उलटी कर देते हैं। बस खतम हो गया। तो उसमें आप क्यों फंसते हैं, पहले तो आप को एक हो जाना चाहिये।"

"आज आपने यहां मुझे बुलाया है इसलिये मुझे आपका आभार तो मानना चाहिये। नहीं भी मानना चाहिये? क्योंकि मैं ऐसा भी कहूँ कि मैंने ही आप को बुलाया है; क्योंकि आखिर बोर्ड ने आपको बुलाया और बोर्ड हमारा बना हुआ है और इस राज्य का म ही मुख्य हूं। इसलिये हर एक के लिये मैं ही जिम्मेदार हूं।"

———

वरुण देवता

ले०—श्री रघुवीर शरण शर्मा वैद्य, बुलन्दशहर

वरुण ऋषि कश्यप का पुत्र था, इसकी माता का नाम अदिति था। इन्द्र, विष्णु सूर्यादि देवता इसके सहोदर भ्राता थे। वरुण वेद, वेदाङ्ग, आयुर्वेद, अध्यात्म शास्त्र, राजशास्त्र, (राजनीति) दिव्यास्त्रों का ज्ञाता तथा अनेक मंत्रों का द्रष्टा था। गौ और पुष्कर नाम के इसके दो पुत्र थे। इन दो पुत्रों के अतिरिक्त एक भृगु नाम का भी ऋषि वरुण का पुत्र था। वरुण की एक चर्षणी नाम की स्त्री थी। इस से पुनः भृगु का जन्म हुआ। और वल्मीक से वाल्मीकि ऋषि हुए। वाल्मीकि भृगुवंशी थे, इसी आधार पर इनको भार्गव कहते हैं।

ब्रह्मा के पुत्र भृगु—ब्रह्मा के पुत्र ऋषि भृगु की, दिव्या, पौलोमी और ख्याति नाम की तीन स्त्रियां थीं।

पौलोमी से ऋषि च्यवन पुत्र हुए थे। ख्याति से धाताविधाता नाम के दो पुत्र और लक्ष्मी नाम की कन्या थी। लक्ष्मी ने समुद्र मंथन के समय भगवान् विष्णु को वरण कर लिया था।

सञ्जीवनी विद्या का प्रभाव

एक वार भगवान् विष्णु ने भृगु की स्त्री दिव्या का वध कर दिया था तब भृगु ने अपनी सञ्जीवनी विद्या के वल पर ही दिव्या को पुनर्जीवित किया था। स्मरण रहे इस संजीवनी विद्या का ज्ञाता उस वैदिक युग में भी भगवान् शंकर, ऋषि भृगु और भृगु पुत्र शुक्राचार्य के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं था। अस्तु, इसी ऋषि भृगु के वंशज त्वष्टा[1] ऋषि दधीचि और्व, जमदग्नि और परशुराम आदि थे जो कि भृगु की सन्तान होने के कारण ही भार्गव कहाते थे।

वरुण पुत्र वशिष्ठ

वरुण का पुत्र एक वशिष्ठ भी था यह वशिष्ठ सोमवंशी राजा संवरण का[2] पुरोहित था। भीष्म आपव वशिष्ठ के पुत्र थे।

भृगु और वशिष्ठ पर विचार

जैसा कि हम ऊपर लिख आये हैं भृगु वशिष्ठ और आपव वशिष्ठ नाम के ऋषि वरुण देव के पुत्र थे। किन्तु स्मरण रहे इनके अतिरिक्त सत्ययुग के आरंभ से त्रेता द्वापर और कलियुग के आरंभ में लगभग चार सौ वर्ष तक भृगु और वशिष्ठ नाम के अनेक ऋषि हुए हैं। दक्ष प्रजापति ने अश्विद्वय को, अश्विनीकुमारों ने इन्द्र को और इन्द्र ने ऋषि कश्यप, वशिष्ठ, अत्रि और भृगु को आयुर्वेद पढ़ाया था।

ऋषि कश्यप, भरद्वाज, भृगु, वशिष्ठ और अगस्त्य का आश्रम हरिद्वार (जिला सहारनपुर) में था।

वरुण का निवासस्थान

हरिवंश में लिखा है वरुण प्रजापति कश्यप का पुत्र है, वह पश्चिम समुद्र का राजा है, जल के भीतर उसका घर है।

१—त्वष्टा की पुत्री संज्ञा अथवा सुरेण का विवाह सूर्य स हुआ था जिसका पुत्र श्राद्धदेव मनु था।

२—संवरण का विवाह सुर्य देव की पुत्री तपती से हुआ था।

वस्तुतः बात यह है कि आठ लोकपालों के अन्तर्गत एक वरुण भी था अतः प्रजापति कश्यप ने इस को पश्चिम समुद्र के कुछ भूभाग का राजा बनाया था। समुद्र अथवा समीपवर्ती प्रदेशों के यातायात आदि का यह पूर्ण अधिकारी था। इस देश का वरुण अधिकारी था अतः इसके नाम पर इस देश का नाम भी वरुण लोक हो गया था।

कभी प्राचीनयुग में भारत नव भागों में विभक्त था इनके अन्तर्गत वरुणलोक भी था।

वरुण का स्वरूप

कैलाशशृंगप्रतिमोऽप्रमेयः समुद्रनाथोऽमृतपो महात्मा। हरिवंश ३।५२।३५

अर्थात् वरुण का शरीर या स्वरूप कैलाश पर्वत के समान शुभ्रवर्ण वाला एवं सुदृढ़ है वह पश्चिम समुद्र का स्वामी है और अमृत का पान करनेवाला है।

अमृत—अमृत के सम्बन्ध में शतपथ ब्राह्मण ने लिखा है कि—"एतद्वै मनुष्यस्य अमृतं यत्सर्वमायुरेति" (श० प० ९।५।१।१०) अमृत उसका नाम है जो मनुष्य को पूर्णायु अर्थात् शतवर्षायु बनावे। पुनः स्पष्ट कहा है कि—"य ए शतं वर्षाणि यो वा भूयांसि जीवति सहैवैतदमृतमाप्नोति" (श० प० १०।२।६।८) अमृत के सेवन से मनुष्य सौ से भी अधिक वर्षों तक जीवित रहता है।

वक्तव्य—आयुर्वेद में च्यवनप्राश ब्राह्म रसायन, हरीतकी आदि अनेक रसायन हैं जिनके विधिपूर्वक सेवन से मनुष्य दीर्घायु होता है।

अथवा रसायन के अतिरिक्त और भी अनेक औषधियां हैं जिनके प्रयोग से मनुष्य दृढ़ शरीर नीरोग एवं दीर्घायु होता है। इस प्रकार का अमृत आद्य त्रेता युग में देवों ने समुद्र मंथन (समुद्र की खोज) के समय प्राप्त किया था। यह समुद्र मंथन पश्चिम समुद्र वरुण लोक के कहीं समीप ही हुआ था। अतः संभव है उन्हीं द्रव्यों का सेवन वरुण करते हों।

सोम औषधि

अमृत नाम सोम औषधि का भी है। वैदिक युग में सोम पान की प्रथा थी यज्ञों में सोम का पान होता था। उसमें देवों को निमन्त्रित किया जाता था। देवों में वरुण भी थे अतः इनको भी निमंत्रित किया जाता था।

समुद्र मंथन में वरुण का सहयोग

आदि त्रेता युग में समुद्र मंथन हुआ। यह वरुण राज्य एवं वरुण निवासस्थान के समीप ही हुआ था।

जब ब्रह्मा की आज्ञानुसार देवों ने वरुण से सहायता की प्रार्थना की तो वरुण ने सहायता देना तो स्वीकार कर लिया किन्तु इस शर्त के साथ कि उपलब्ध होने वाले पदार्थों में मेरा भी भाग रहेगा। इसी आधार पर वरुण को अमृत तो मिला ही था साथ ही उत्तम श्रेणी का छत्र भी मिला था।

सञ्जीवनी औषधि

प्रसङ्गवश यह कहना भी आवश्यक है कि सञ्जीवनी औषधि जो कि अमृत से कम महत्वपूर्ण नहीं है, भी समुद्र मंथन क्षेत्र में ही उत्पन्न होती थी। जिसका उल्लेख वाल्मीकि ने किया है—

राम रावण युद्ध में श्रीराम और लक्ष्मण दोनों भाइयों के मूर्च्छित होने पर सुषेण वैद्य[1] ने सुग्रीव से कहा था कि प्राचीन काल में देवासुर संग्राम हुआ था उसमें दानवों के प्रहार से जो देवता मूर्च्छित हो गये थे अथवा मर गये थे उनकी देवगुरु बृहस्पति ने मंत्रों

१—सुषेण वैद्य वानर बालि का श्वसुर था।

और औषधियों से चिकित्सा की थी। उनके सञ्जीवनी और विशल्यकरणी नाम है। इन औषधियों को हनूमान, संपाति और पनस आदि नाम के वानर जानते हैं। ये औषधियां जहाँ समुद्र मंथन हुआ था वहाँ पर चन्द्र और द्रोण नाम के पर्वत हैं इन्हीं पर होती हैं। इनको लाने के लिये शीघ्र ही हनूमान को भेज दो।

वरुण का वैद्यत्व

वरुण का हरिश्चन्द्र को पुत्र प्रदान करना

इक्ष्वाकुवंशी राजा हरिश्चन्द्र निःसन्तान था। यद्यपि उस की सौ स्त्रियां थीं फिर भी दौर्भाग्यवश उनमें से किसी से भी पुत्र नहीं हुआ। हरिश्चन्द्र के यहां पर्वत और नारद नाम के दो ऋषि रहते थे। राजा हरिश्चन्द्र ने इस विषय में ऋषि नारद से परामर्श किया। ऋषि नारद ने हरिश्चन्द्र की आद्योपान्त बात सुन कर यह परामर्श दिया कि तुम राजा वरुण के पास जावो, वे प्रभावशाली वैद्य हैं उनसे कहो कि आप ऐसा उपाय करें जिससे मेरे यहां पुत्र हो, यदि पुत्र होगा तो आप का उसी पुत्र से यजन करूँगा। नारद के उपदेशानुसार राजा हरिश्चन्द्र राजा वरुण के समीप गया और कहा कि मैं निःसन्तान हूँ आप ऐसा प्रयत्न करें जिससे मेरे पुत्र हो, यदि पुत्र होगा तो मैं आपका उसी से यजन करूंगा। राजा वरुण ने हरिश्चन्द्र की प्रार्थना को स्वीकार करके पुत्र प्राप्ति का उपाय किया, फलस्वरूप पुत्र हुआ जिसका नाम रोहित हुआ।

राजा वरुण आयुर्वेद का ज्ञाता तथा अनुभवी चिकित्सक था। किन्तु खेद है वर्तमान काल में वरुण का कोई ग्रंथ उपलब्ध नहीं है, केवल एक योग वरुण का निम्बारिष्ट नाम से आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रंथ अष्टाङ्ग संग्रह में मिलता है।

निम्बारिष्ट इति ख्यातो वरुणनैष निर्मितः
अष्टांगसंग्रह चि० स्था० अ २१

यह लेख लेखक की देवता नाम की पुस्तक के एक अध्याय का संक्षिप्त अंश है; पुस्तक अप्रकाशित है अतः सर्वाधिकार सुरक्षित हैं।

नोटः—श्री रघुवीर शरण जी उच्चकोटि के लेखक हैं। आप की रचनायें अतीव सुन्दर होती हैं। स्थानाभाव के कारण हम आपकी रचना का संक्षिप्त भाग ही यहाँ प्रकाशित कर रहे हैं। क्षमा करें। स० सं०

——

मानस-विज्ञानम्

लेखक—डा० बलदेव शर्मा शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य, आयुर्वेद बृहस्पति, D. Sc. A.
मनोविज्ञानविशेषज्ञ, B. A., M. N. M. S. (Berlin)

(अप्रैल अंक से आगे)

५—स्वप्न विज्ञानम्

(१) धिया, प्रवृत्तयः संस्तम्भ्यन्ते, न सहजप्रवृत्तयः। सहजप्रवृत्तयस्तु तिरोहितसत्यस्वरूपाः, ज्ञानयोगमन्तरैव प्रवृत्तिं लभन्ते, अजानत एव मनुष्यस्येति। सहजप्रज्ञयैव ताः संस्तम्भ्यन्ते, रूपान्तरेषु वा परिणम्यन्ते।

धिया सहजप्रवृत्तयस्तद्रूपान्तराणि वा न संस्तम्भयितुं शक्यन्त इति कथम्। उच्यते। तासां ज्ञानविच्छिन्नत्वात्। प्रत्ययाभावाद्धियोऽनुशासनं न स्पृशति ताः। एवमेव सहजप्रज्ञाप्रवृत्तयः।

धीरेव व्यत्यासेन प्रभाविता तिष्ठति ताभिः; तासां पुरुषार्थपूर्णत्वात्, व्युत्थानवेगवत्त्वाच्च।

सहजप्रज्ञा सहजप्रवृत्तिरित्युभे अपि ज्ञानविच्छिन्नानुबन्धत्वात्परस्परं सम्पर्कं भजतः। एवं च तयोः संघर्षः।

धिया तु केवलं, ताभ्यां प्रभावितेत्यतः, सहजप्रवृत्तिसहजप्रज्ञे तद्रूपान्तराणि वा प्रशंस्यन्ते-साध्वेतत्, युक्तमेतत्, अनिवार्यमेतत्, इत्यादिभिस्तर्कैरनुशंस्यन्ते च।

इत्थञ्च धीधृती सहजप्रज्ञायाः सहजप्रवृत्तीनाञ्चानुशासने स्थिते, इति सर्वमुक्तपूर्वमेव।

(२) स्मृतिप्रबोधनविज्ञानेनोद्बोधितानामेव मनोऽर्थानां धीधृतिभ्यां नियन्त्रणं नियमनञ्च कर्तुं शक्यते। तदा च धीरविशिष्टा ज्ञानवृत्तिरित्याख्यायते।

एतेनेदमप्यवगम्यते—न खलु प्रबुद्धप्रज्ञाप्रबुद्धमनोऽर्थयोः संघर्षश्चित्तविकृतिं जनयतीति। संघर्षघटकयोस्तत्त्वयोः प्रबुद्धत्वाज्ज्ञानवृत्त्या तयोर्वशीकारः शक्यः कर्तुम्।

(३) विशिष्टा बुद्धिः सहजप्रज्ञयाऽभिभूता, सभ्योचिताचारभाविता, धर्मशास्त्रादिप्रभाववशगा च, न सहजप्रवृत्तिमूलकस्मृतिप्रबोधने, तच्छद्मरूपानावरणार्थं, सेच्छं सानुमोदं वा प्रवर्त्तते; तन्मूलस्थित-स्मृतीनां सहजप्रज्ञया तिरस्कृतत्त्वात्, धृत्यापि तासां प्रबोधनाशंकया विषादमाकुलीभावञ्चानुभूयत इत्यतः।

(४) बुद्धिविरोधश्चैषः सत्त्वानुशीलनविज्ञानोद्दिष्टे पथि बलीयान् प्रतिबन्धकः।

(५) परमेष विरोधो मानवानां स्वप्नमये संसारे, कल्पनामूलासु रचनासु च शिथिलायते।

(६) शिथिलीभूते च बुद्धिविरोधे प्रकटी भवन्ति संस्तम्भिता वासनाप्रसवनिमित्तकाः स्मृतितिरोहितसंस्कारस्मृतयः।

(७) निद्राधिकारे तु साकल्येन शिथिलीभवत्ययं बुद्धिविरोधः। संस्तम्भिताः, ज्ञानवियुक्ताश्च भावाः प्रवर्त्तन्ते तत्र व्युत्थानलाभाय।

(८) प्रतीतिवञ्चिताः संस्तम्भिताश्च प्रवृत्तयो बुद्धिविरोधः। संस्तम्भिताः, ज्ञान-वियुक्ताश्च प्रवृत्तयो बुद्धिविरोधाभावे न प्रयत्नमपेक्षन्ते प्रतीत्यर्थमुद्गन्तुम्। सहजं प्रयत्नानपेक्षं तासां व्युत्थानोन्मुखत्वम्।

(९) धीधृत्योः प्रयत्नस्तु प्रतीतिनिरा-करणायैव भवति। नोद्गच्छेयुस्ताः प्रवृत्तय इति।

(१०) प्रयत्नस्य चैतस्य नियन्त्रणात्मक-स्याभावे निद्राधिकारे स्वप्नसंसारे स्वभावत एव समुद्भवन्ति ताः मानसे पटले। उद्गम-नस्य सुखहेतुत्वात्। संस्तम्भितावस्थायां प्रवृत्तीनां वेगसंरोधे, यावत्तासां क्लिष्टत्वं क्लेशमूलकत्वञ्च, तावदेव व्युत्थानवेगवत्त्वम्।

स्वप्नेषु प्रवृत्तीनामुद्गमः

(११) बुद्धियोगाभावात् स्वप्नक्षेत्रे तासामुद्गमो विरूपो, विशृङ्खलो, भ्रान्तो, व्यवहितो, देशकालच्युतो, व्यस्तः, समस्तो वा भवति।

(१२) सहजप्रज्ञाया अनुशासनं तत्रापि तत्संस्तम्भितप्रवृत्तिजातमुदीरणतो निगृह्णाति। तस्या अपि सहजप्रवृत्तिवज्ज्ञानायोगे निद्राधि-कारे च प्रवृत्तत्वात्।

(१३) सहजप्रज्ञाभावा अपि विशुद्धया धिया नाद्रियन्तुं शक्यन्ते। अत एव निद्राधि-कारे तेषामपि प्रवृत्तिः।

(१४) सहजप्रज्ञानिग्रहप्रभावादेव, व्युत्था-नोन्मुखानां मनोऽर्थानां स्वप्नेषु वैरूप्यादिकं, यदुक्तपूर्वम्।

(१५) आलङ्कारिकरूपवत्त्वं च भावि-कत्वात्, कल्पनामयत्वाच्च।

(१६) समस्तत्वं वेगवत्त्वात्।

(१७) क एते भावा मनोऽर्थाश्च ये स्वप्नेषु प्रादुर्भवंति, इत्युच्यते। व्युत्थानो-न्मुखाः संस्तभ्यमानाः मानसविकृतिमूलक-स्मृत्यनुबद्धाश्च भावाः, स्वप्नेषूदारत्वं लभन्ते, इति स्पष्टमेव।

(१८) न सुलभं स्वप्नमूलस्थितभाव-निर्धारणम्, वैरूप्यादिकानां प्रभावात्। परं सत्त्वानुशीलनार्थं, तिरोहितस्मृतिप्रबोध-नार्थञ्च, स्वप्नविज्ञानस्य महदुपयोगित्वम्।

(१९) स्वप्नानां प्राधान्येन त्रैविध्यम्।
(१) संस्तंभितप्रवृत्त्यर्थप्रतीतिरूपाः।
(२) आशंकितानिष्टनिवारणप्रवृत्तिरूपाः।
(३) सहजप्रज्ञाप्रचोदितदमनप्रवृत्तिरूपाश्च।
त्रिविधेष्वेव सहजं सुखोन्मुखत्वं, संस्तम्भित-भावप्रतीतिपरकश्च वेगः।

(२०) तत्र प्रथमाः प्रसादं जनयन्ति। द्वितीया उद्विग्नताम्। तृतीयाश्च दमनरूपा विषादादिकं भावजातम्। एतच्च प्राधान्येन निर्दिष्टम्। संसृष्टभावैर्भाविताः खलु स्वप्न-रचनाः।

स्वप्नानां सप्तविधत्वम्

(२१) चरकतन्त्रे यत्प्रतिपादितम् 'दृष्टं श्रुतानुभूतञ्च प्रार्थितं कल्पितं तथा। भाविकं दोषजं चैव स्वप्नं सप्तविधं विदुः' तत्र :—

प्रार्थितमर्थप्रतीतिरूपम्, भाविकमनिष्टा-शङ्कोद्भूतम्, कल्पितञ्च सहजप्रज्ञाप्रचोदितं वेदितव्यम्। परमेभिस्त्रिभिरेव त्रिविधकल्पै-रपि भवितुं शक्यते। दृष्टश्रुतानुभूतानामपि त्रिष्वेव समावेशः। दोषजोऽपि दोषस्य नैमि-त्तिकत्वेऽपि भाविकः प्रार्थितः कल्पितो वा भवेत्। 'भावितस्मर्त्तव्या स्मृतिः स्वप्नेषु' इति योग भाष्येऽपि।

(२२) स्वप्नरचनाश्च, प्रतिरूपा विक्षिप्तचित्तानां विकृतमानसानां व्यापारेषु च वर्तमारस्य, वैरूप्यादिकस्य। तत्र जाग्रद-वस्थायामेव व्युत्थानोन्मुखानां क्लिष्टानां संस्तम्भ्यमानानामावेगानां, स्वप्नवद्वैरूप्या-दिकं मात्राभेदेन।

मानुषशरीरं पार्थिव द्रव्याणि च

लेखक—वेणीमाधव शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य, प्रवाचक, नागपुर विश्वविद्यालय

[कुर्नूलनगरे अखिलभारतवर्षीयायुर्वेदमहासम्मेलनस्य विज्ञानपरिषदि ३०-१२-१९५६ दिनांके पठितोऽयं निबन्धः ।]

(अप्रैल अङ्क से आगे)

पार्थिवद्रव्याणां हेतुपुरःसरः आंतरोपयोगः

विविधधातुकर्मकृतां सुवर्णकारलोहकारादीनां तथैव खनिकर्म कुर्वतां ये शारीरिका मानसिकाश्च गुणदोषा वैद्यवरैर्दृष्टाः तेषां परीक्षणं कृत्वा कस्मिन्पात्रे किमाधेयं केन केषां धातूनामलंकाराः शरीरे धारणीयाः इति तैः सुनिश्चितम् । तथैव तेषां धातूनां जठरे ग्रहणं कथं किमर्थं वा कस्यामवस्थायां वा कर्तव्यमित्यपि तैर्निर्दिष्टम् ।

धातूनामेषां ग्रहणमेवं सूक्ष्मं स्यात् येन तत् शरीरे शल्यरूपं न भवेत् । तैर्वैद्यवरैः एतदर्थं याः कृतयो लिखिताः ताभ्यः एव इदं सुस्पष्टं भवति ।

तीक्ष्णायसः प्रथमं लघुखंडान् कृत्वा खदिरांगारे भृशं तप्त्वा ओषधिविशेषाणां द्रवे च पुनः पुनः संनिवेशयेत् । एवं सर्वमयः विलीनं यावद्भवेत्तावदियं क्रिया कर्तव्या । तदनंतरं च तं द्रवमुपगुह्य यवराशौ बहुदिवसपर्यंतं निधातव्यम् । 'साधयेदसनादीनां पलानां विशतिं पृथक् । द्विवहेऽपाँ क्षिपेत्तत्र पादस्थे ......। खदिरांगारतप्तानि बहुशोऽत्र निमज्जयेत् । तनूनि तीक्ष्णलोहस्य पत्राण्यालोहसंक्षयात् । स्थितं दृढे जतुसृते यवराशौ निधापयेत् । वाग्भटः । धान्यराशौ निधानेन ये केचन स्थूलाः कणा अवशिष्टाः कदाचित् आसन् तेऽपि असनत्रिफलया सह संयोगं प्राप्य सूक्ष्मातिसूक्ष्मा भूत्वा वनस्पतिद्रव्यैः सहैकरूपतां भजन्ते ।

मण्डूरसमद्रव्याणां सूक्ष्मशुद्धचूर्णं गोमूत्रे संपच्य कृतस्तेषामुपयोगः पूर्वाचार्यैः । मंडूरं द्विगुणं चूर्णात् गोमूत्रे द्व्याढके पचेत् ।' 'मंडूरं द्विगुणं चूर्णात् शुद्धामंजनसन्निभम् । वाग्भटः ।

अरिष्टनिर्माणविधौ आवश्यकं लोहचूर्णं सुसूक्ष्ममेव कर्तुं प्रयत्नः कृतः । यथा "अयोरजः । लोध्रं चैतेषु गौडः स्यादरिष्टः पाण्डुरोगिणः ।

यदि सम्पूर्णतया त्रिःशल्यभूतं चूर्णं कर्तुं शक्यते तर्हि तत् योगेन सह संमिश्रणेन कतिचिद्दिवसपर्यंतं अरिष्टद्रवं निधाय तदनंतरं

---

(२३) आलङ्कारिकरूपवत्त्वं तु प्रभूतेषु मानवानां व्यापारेष्वप्याविर्भवति । कविकलाभृदादिषु बाहुल्येन ।

(२४) स्वप्नकारणभूतानां भावानामनुशीलनेनैव, याथार्थ्येन सौकर्येण च सत्त्वानुशीलनात्मके व्यापारे सिद्धिः ।

(२५) 'स्वप्ननिद्राज्ञानालम्बनं वा' इति योगसूत्रम् । यो० सू० १.३८ ।
तत्र भाष्यम् :—'योगिनश्चित्तं स्थितिपदं लभते' ।

स्वप्नज्ञानेन मनसः स्थितिनिबन्धनमित्यनेन स्वप्नविचारस्य प्रसंख्यानवद्विवेकसाक्षात्कारे साधकत्वं निर्दिष्टम् । (क्रमशः)

तस्योपयोगः कर्तव्यः। यथा माक्षिकस्य च सिद्धस्य लौहस्य रजसस्तथा...... 'तत्सर्वं सूक्ष्मचूर्णितम्।" माक्षिकेणाप्लुतं स्थाप्यमायसे भाजने शुभे। तथैव लौहं रजो वल्लमेव च सर्पिः क्षौद्रहतं स्थापितमब्दमात्रम्।

चूर्णमतीव सूक्ष्ममंजनवत्सूक्ष्मातिसूक्ष्मं भवितुमर्हति लोचने निहितमपि तन्न भवतु किंचिदपि पीडाकारकम्। नोचेत्तत्सूक्ष्मं यावद्भवेत्तावद्वर्षपर्यन्तमपि योगे तन्निधातव्यम्। एवं सुविशदमेतद्यत् शरीरे गते सति निःशल्यं तद्भवत्विति।

मंडूरसुवर्णमाक्षिककासीसमनःशिलाऽदि द्रव्याणां सूक्ष्मं निःशल्यं चूर्णं शीघ्रं भवति। परं लोहताम्रस्फटिकवैडूर्यादिरत्नानां चूर्णं निःशल्यं सहसा न भवति। तेषामपि चूर्णानामुपयोग उक्त एव। यथा 'हेमताम्रप्रवालानामायसःस्फटिकस्य च। मुक्तावैदूर्यशंखानां चूर्णानां रजतस्य च। प्रक्षिप्य षोडशीं मात्रां...।

मानवः यद्यपि प्रयतते पार्थिवद्रव्येभ्यः दूरं गन्तुं तथापि वैद्यवरैस्तस्य आरोग्यरक्षणार्थं रोगनाशाय च आभ्यंतरोपयोगः कथितः एव।

किमर्थं वैद्यवरैः पार्थिवद्रव्याणामुपयोगः कृतः ?

मानवः यदा नरमांसभक्षकः तथा च मांसभक्षकः आसीत्तदा सः स्वरोगनिवारणं विविधप्राणिमांसगतशृंगास्थिसाहाय्येनैव अकरोत्। कंदमूलफलधान्यभक्षकः यदा सः संजातस्तदा रोगनिवृत्तिमपि प्राणिजवनस्पतिजद्रव्याणां साहाय्येनैव कर्तुं प्रायतत। वानस्पत्यौषधानि रसबहुलानि यदा वैपुल्येन लभ्यन्ते तदा शरदृतौ तान् संचित्य तेषां संग्रहः कर्तव्य इति वैद्यवरैरवधीरितम्। यथा 'शरद्यखिलकार्यार्थं ग्राह्यं सरसमौषधम्। औषधानीमानि वर्षादनंतरं गुणहीनानि भवन्तीति तानि त्याज्यानि। कानिचिदौषधानि अग्निगुणभूयिष्ठानि विंध्यपर्वतात् सौम्यौषधानि हिमालयपर्वतादपि महता प्रयत्नेनानीय तेषां संग्रहं ते कुर्वन्तिस्म। नचेत्तेषां नियते काले उपयोगावसरः लब्धः तर्हि तेषां त्याग एव आवश्यकः भवति। परं तदतीव मनस्तापकारकम्। कियन्मनस्तापकारकं तत्स्यात् इति तु कल्पनयैव ज्ञातुं शक्यते। अयमप्यासीत्तेषामनुभवः यत् नर्तका नर्तकुलसमानं तृणधान्यं दशद्वादशवर्षपर्यन्तमपि यथापूर्वं रक्षितुं शक्यते। न तत्र भवति कीटकसंसर्गो नवा भवति तस्य हीनवीर्यत्वमिति। विडंगपिप्पलिधानाकगुडघृतमध्वादि द्रव्याणि पुराणानि जातान्यप्यौषधदृष्ट्या न हीनवीर्याणि भवन्ति। अपि तु भवन्ति तान्यधिकगुणकारीणि। द्रव्याणामेषां संचयः कर्तुं शक्यते, ओषधिसंग्रहार्थं परिश्रमान् कर्तुं व्यतीतधनं च संरक्षितुं प्रवृत्तिरासीत्तस्मिन्काले तेषां वैद्यवराणामतिप्रबला। व्यर्थत्वं गन्तृणां वनस्पतीनां ज्वलनेन क्षारं कृत्वा तेषामुपयोगं ते कर्तुमारभन्त। परं क्षाराणामवस्थाऽग्रतीव भिन्ना वर्तते। ओषधीभिर्घृततैलानि सिद्धानि कृतानि परं तानि मासचतुष्टयानंतरं गुणहीनानि भवन्तीत्यनुभूतं तैः। अनंतरं गुटिकालेहादि सिद्धानि द्रव्याणि विनिर्मितानि परं तान्यपि संवत्सरादनंतरं हीनवीर्याणि जातानि। यदा हि अपेक्षितं फलं न स्यात् अनेन मार्गेण इति तैर्दृष्टं तदा केनोपायेन ओषधिगुणयुतम् अधिकं भवितुमर्हति इति ते विचारपरा बभूवुः।

आसवारिष्टकल्पना।—गुडघृतमधुप्रभृतीनि द्रव्याणि यानि च संवत्सरेऽतीते गुणाधिक्ययुतानि भवन्ति अपि च यावन्ति च तानि पुराणानि तावन्त्येव अधिकानि गुणग्राहीनि भवन्ति इति तु तैः अनुभूतमेवासीत्।

यथा नूतनगुड: मेदकफकृमिकृत् तथा अग्निसादकृच्चास्ति परमयं दोष: पुराणे गुडे न विद्यते यत: पुराण: गुड: मेदकफकृमिविकारान् नाशयत्येव। नूतनो गुड: पथ्यकरो नास्ति पुराणस्तु पथ्यतमो गुणवांश्चास्ति। यथा "हृद्य: पुराण: पथ्यश्च नवश्लेष्माऽग्निसादकृत्।" वाग्भट) "स पुराणोऽधिकगुणो गुड: पथ्यतम: स्मृत:। (सुश्रुत)

मध्वपि तथैव, नूतनं चेदम्लं त्रिदोषकृत् भवति। कालपक्वं चेत् (अग्निपक्वं निषिद्धम्) पुराणं त्रिदोषनाशकं भवति। यथा "दोषामयहरं पक्वमाममम्लं त्रिदोषकृत्।" दशवर्षानंतरं घृतं पुराणं भवति, शतवर्षानंतरं तत्कुंभसर्पिरित्याख्यां भजते। एकादशोत्तरशतवर्षानंतरमतिजीर्णघृतं महाघृतं भवति। नवघृतात्पुराणघृतं पुराणघृतात्कुंभघृतं कुंभघृत् महाघृतं गुणाधिक्येन यथाक्रमं वरीवर्ति। तस्मादेव एतावद्वर्षपर्यन्तं घृतमिदं रक्षितम्। पुरा भूपतीनां गडेषु पुराणघृतस्य संचय: अवर्तत। तेषामुपयोगश्च युद्धजन्यव्रणोपचारार्थं संधानार्थंच ते कृतवन्त: इति सुज्ञातमेव।

घृतस्थो दोष:—यद्यपि केवलं घृतं पुराणं गुणयुक्ततमं भवति तथापि ओषधिसिद्धं घृतं चतुर्मासादनंतरं निर्वीर्यं भवति। यथा 'हीना: स्युर्घृततैलाद्याश्चतुर्मासाधिकात्तथा'।

गुड: मधुच निर्दोषम्—गुडमध्वोर्मध्ये मधुद्रव्यं गुडवद्विपुलं नोपलभ्यते। ओषधिरसे वा ओषधिकषाये वा प्रक्षिप्तस्य गुडस्य ओषधिगुणकर्मे सविषं परिवर्तनं न भवेत् यावद्धि ओषधसिद्धिर्भवति। स्याद्यपि न्यूनात् न्यूनतरं तदपि तदनंतरमेव भवतु इत्यपि आचार्याणां मनसि विचार: प्रादुर्भूत:। अपिच प्रयत्नान्ते तै: यश: संपादितम्।

यथावश्यकं गुणधर्मापेक्षया मधुशर्करोपयोगमपि ते कर्तुमारभन्त। गुडस्याऽपि सहाय्यकत्वेन स्वातंत्रेण वा उपयोगमौषधसिध्यर्थं कर्तुमारभन्त। इयमेव कल्पना आसवारिष्टकल्पनेत्यभिधीयते।

आसवारिष्टकल्पना तु भ्रान्तिकारक: शोध एव।

भूरिपरिश्रमेण द्रव्यव्ययेन च संप्राप्त: आसवारिष्टकल्परूपेण स्वगुणान्दीर्घकालपर्यंतं रक्षयित्वा तान्वर्धयित्वा च मानवरोगहरणार्थमारोग्यरक्षणार्थं वा उपयुक्त: सञ्जात:। 'पुराणा: स्युर्गुणैर्युक्ता आसवा:...।' स कल्प: यथा यथा पुराणो भवति तथातथा गुणसंपन्नतरोऽपि भवति। आसवारिष्टा यावत् पुराणास्तावत् गुणवत्तमा भवन्ति। अत एव केचन पुरातना आसवारिष्टनिर्मातार: पुराणाऽसवारिष्टानामधिकंमूल्यं गृह्णन्ति। आसवारिष्टा जगत: अंतपर्यंतं योग्यप्रकारेण रक्षिता: स्युस्तर्हि वैगुण्यरहितास्ते स्वगुणान् वर्धयन्त्येव। उत्कृष्टेयं कल्पना आयुर्वेदेन मानवाय संप्रदत्ता। अतीते तस्मिन्काले इयं कल्पना कियती भ्रान्तिकारिका आसीदिति तु विचारवन्तैर्ज्ञायत एव।

अनल्पावनस्पतय: भूरिपरिश्रमेण संचित्य रक्षणार्थं तेषां कृतेऽपि भूरिपरिश्रमे यदि त्याज्या भवेयु: तर्हि वैद्यास्तत् अतिदुर्धरं संकटमिव अमन्यन्त इति नाश्चर्यकारकम्। महती स्यात्तेषाँ दु:खसंवेदना। परं आसवारिष्टकल्पनया वलयंगतास्तेषामश्रुबिंदव: संकटसिंधवश्च। रुग्णानां दीर्घकालीनानां श्लीपदादीनां रोगाणां निवारणाय एक: उत्तमोपाय: आगत: दृष्टिपथं तेषां कल्पनया अनया।

अत्रापि एकापत्ति:—वनस्पतीनां चूर्णावलेहगुटिकातैलघृतपरिमाणापेक्षया आसवारिष्टानां परिमाणं महत्तरं वर्त्तते।

तथा दिने दिने तेषाँ संख्यायामपि वृद्धिर्भवत्येव । अतिविस्तीर्णो भवति तस्य प्रसरः । तद्रक्षणस्याऽपि चिंता महती विद्यते । तस्योत्पादने, भरणे रक्षणे च भवति महान् प्रयासः व्यवसायश्च कठिनतरो भवति । असुविधां सतां संचित्य गुणवत्तरान् अनल्पपरिश्रमसाध्यान् अन्यान् औषधकल्पान् संशोधयितुं प्रायतन्त ते वैद्यवराः ।

मानवशरीरमेव गुरुः—मानवशरीरे १/१० परिमिताः पार्थिवघटकाः विद्यन्ते इति दृष्टपूर्वमेव अस्माभिः । आयुर्वेदविद्याप्रवीणैः पार्थिवघटकानामेतावत् प्रमाणं सुनिश्चितं नवा इति नाहं वक्तुं शक्नोमि । परं इति तु निश्चितमेव यत्मानवशरीरे रसरक्तलसीकावसामज्जाशुक्रधातवः द्रवस्वरूपेणैव वर्तन्ते । मांसमेदसी च घनस्वरूपे वर्तते यद्यपि । तथापि पूर्वः मांसधातुः जलांशबहुलः अन्यो मेदाधातुश्च द्रवस्वरूपात्मको घृतमिव अस्थिधातुरेव पार्थिवः परं तस्मिन्नपि जलांशः अल्पप्रमाणेन वर्तत एव । द्रवधातावपि पार्थिवघटकाः अत्यल्पप्रमाणेन वर्तन्त एवेति दृष्टमेव पूर्वाचार्यैः । मानवशरीरे पार्थिवघटकेषु लवणलोहसुधाख्या महत्वपूर्णा घटका वर्तन्ते । सुधया एव अस्थिधातुः घटितः । अस्थि धातुः कठिनः । तस्य मुख्यं कार्यं देहस्य स्तम्भमिव ऊर्ध्वस्थितौ धारणमेव । यथा "देहोर्ध्वताधारणमज्जपोषणाभ्यामस्थि" । (अ. सं.)

शरीरस्थाः सप्तधातवः यादृग् विशुद्धा विशुद्धतराः स्युःतादृगेव शरीरं बलवत् भवेत् । धातुरयं सारधातुरित्यभिधीयते । तत्तद्धातुसारग्राही व्यक्तिस्तत्तद्धातुसारव्यक्तिरिति व्यपदिश्यते आयुर्वेदशास्त्रे । विविधविशुद्धतरधातूनां शरीरमनोबुद्ध्युपरि सुष्ठुपरिणामः दृश्यते । मानवानामस्थिधातुर्यदि विशुद्धतरः स्यात् तर्हि अस्थिदन्तनखा बलवन्तो भवन्ति,

शीर्षस्कंधाद्यवयवाः संधयश्च तेषां विशाला भवन्ति । यथा "ते महोत्साहाः क्रियावन्तः क्लेशसहाः सारस्थिरशरीरा भवन्ति आयुष्मन्तश्च ।" शरीरस्थाः पार्थिवघटका द्रव्यतोगुणतश्चाधिका वर्तन्ते इत्यनेन एतत्स्पष्टं भवति ।

किं तत् स्थिरं शरीरन्नाम ।—कैपुचिद्व्यक्तिषु सुखदुःखपरिणामः शरीरपुष्टिं शरीरकार्श्यं वा अचिरेण जनयतीति दृश्यते । सुखपरिणामे शरीरपुष्टिर्भवति दुःखपरिणतौ च तच्छरीरं कृशत्वं भजते । परं तेषु अस्थिसारव्यक्तिषु न भवत्येवं विधः परिणामः । न ते भवन्ति सुखेन पुष्टाः दुःखपरंपरया वा कृशाः । सदैव ते यथापूर्वमेव वर्तन्ते । न भवति तेषां भारोऽल्पः अधिको वा । अस्थिधातुसारयुतानां व्यक्तीनां शरीरम् एवमेव स्थिरं वर्तते । ते यथा सारस्थिरशरीरा भवन्ति । स्थिरशरीरन्नाम एतदेव ।

जीवनकष्टसहमुन्नतं व्यूढोरस्कं स्थिरं नित्यकर्मकृद्भव्यं शरीरं अस्थिरूपे पार्थिवघटककार्यमेव वर्तते इति यैर्ज्ञातं । यैश्च शरीरे पार्थिवघटका वर्तन्ते, आहारेण जलेन च सूक्ष्मरूपेण शरीरं गच्छन्तीति ज्ञातम् तेषां पार्थिवघटकानां शरीरस्योपरि के इष्टानिष्टा परिणामा भवन्तीति जिज्ञासा स्वाभाविकी एव ।

अनुभवानां परीक्षणम् ।—पूर्वानुभवो हि अग्रे मार्गदर्शको भवति इति न्यायेन जिज्ञासयाऽनया गतानुभवानां परीक्षणेन च तेभ्यः अग्रिमो मार्गः संप्रदर्शितः । आंतरिक्षं जलं भूमौ पतति भूम्यन्तरे च प्रविशति । तत्र स्थिरीभूतस्य तस्य रसस्यैवंगुणानामपि परिवर्तनं जातम् 'पृथिव्यादीनामन्योन्यप्रवेशकृतः सलिलरसो भवत्युत्कर्षापकर्षेण ।' तत्र [illegible]भूयिष्ठायां भूमावभ्रं लवणं च ।

अंबुभूयिष्ठायां मधुरं तेजोभूयिष्ठायां कटुकं तिक्तं च । इत्यादि सुश्रुतः। दिव्यमुदकं भ्रष्टं पात्रं वा स्थानमपेक्षते । "श्वेते कषायं भवति पांडुरे स्यात्तु तिक्तकं । कपिले क्षारसंसृष्टमूषरे लवणान्वितम् । कटु पर्वतविस्तारे मधुरं कृष्णमृत्तिके । एतत्षाड्गुण्यमाख्यातं महीस्थस्य जलस्य हि । विविधा मृत्तिका सूक्ष्मघटकाः प्रावृड्जले विलीय तत्तज्जलं तत्तन्मृत्तिकायुतं तडागं स्रोतसं प्रतिगच्छति । मृत्तिकायाः सूक्ष्मघटकानां रस इव तत्तज्जलरसः भवति । भवति च तस्य परिणामः शरीरस्योपरि ।

तृष्णारोगस्य चिकित्सा—तृष्णारोगचिकित्सायां कृष्णा मृत्तिका कृष्णा वालुका नूतनं खर्परं वाऽग्नौ तप्त्वा जले निर्वाप्य वस्त्रपूतं कृत्वा तृष्णारुग्णं पाययेदित्युक्तं शास्त्रे । यथा—"अंभसि अग्निनिभां कृष्णमृदं कृष्णसिकतां वा तप्तानि नवकपालान्यथवा निर्वाप्य पाययेदाच्छम् । जलेऽस्मिन् मृत्तिकायाः सूक्ष्मघटका अत्यल्पप्रमाणेन विद्यन्त एव । सुवर्णं रूप्यकं वाऽग्नौ तप्त्वा जले निर्वापितं जलमपि तृष्णानाशकरं भवतीति लिखितं शास्त्रे । यथा 'सुवर्णरूप्यादिभिरग्नितप्तैर्लोष्टैः कृतं वा सिकतादिभिर्वा । जलं सुखोष्णं शमयेत्तु ,तृष्णाम् । सुश्रुतः सूक्ष्मपार्थिवघटकानां शरीरस्योपरि के परिणामाः भवन्तीत्यवधारितमेवम् ।

सुवर्णम्—सर्वधासुषु सुवर्णं निर्मलं शुद्धं मृदु च वर्तते । धातुरयं पाषाणे जलेन सह घृष्ट्वा मधुना सह लेह्यः (सेवनीयः) इत्युक्तमेव । तद्भवति गुणदायकमेव । "अपक्वं हेमसंघृष्टं शिलायां जलयोगतः । द्रवरूपं तु तत्पेयं मधुना गुणदायकम् । सुवर्णस्य तबकोऽपि मधुना सह विषबाधापीडिताय रोगिणे देयः तत्कालविषनाशो भवतीति कथितमेव । यथा "यद्वा तनकाख्यं तु स्वर्णपत्रं विचूर्णितं मधुना संमृहीतं चेत्सद्यो हन्ति विषादिकम् । सुवर्णचूर्णं विषभक्षीणकृते पुरुषाय देयमिति कथितम् । 'शुद्धे हृदि ततः शाणं हेमचूर्णस्य दापयेत् ।

सुवर्णस्योपयोगः अतिसूक्ष्मांशतः चूर्णपर्यंतं क्रियते इति दृष्टमस्माभिः । सुवर्णधातुर्मृदुरिति कृत्वा तस्य सूक्ष्मचूर्णं सहसा शल्यं न भवितुमर्हति अत एव तस्योपयोगः निश्शंकमनसा उद्घोषितः। तस्य गुणानामपि मुक्तकंठेन स्तुतिः कृता पूर्वाचार्यैः ।

ताम्रम्— ताम्रं जले निमज्य पाषाणेन वा घृष्ट्वा जठरे गृहीतव्यमित्युपदेशः न केनापिकृतः इत्यहं मन्ये । न मयैवं वा पठितम् । सुवर्णरूप्यादिभिरित्यस्मिन्वचने आदिशब्देन ताम्रमपि ग्रहीतुं शक्यं, 'हेमताम्रप्रवालानां—चूर्णानाम् । तथा-विषभुक्ताय दद्याच्च शुद्धायोर्ध्वमधस्तथा । सूक्ष्मं ताम्ररजः काले सक्षौद्रं हृद्विशोधनम् । इतिवचनाभ्यां स्पष्टमिदं भवति यत्ताम्रचूर्णं देयमिति विषभुक्तमानवम् विहायान्यस्मै कस्मै अपि ताम्रचूर्णं देयमिति न कथितं दृश्यते ।

रौप्यम्—तप्तरूप्यकावापितं जलं तस्य पूर्णं वा जठरे गृहीतुमुक्तं परं सुवर्णवत् रूप्यकस्य चूर्णं भस्मक्रियां विना न देयमिति सुस्पष्टं कथितम् । यथा 'अपक्वं रजतं नैव संयोज्यं स्वर्णवद् गदे । आ० प्र०

अपक्वरौप्यस्य ताम्रस्य चोपयोगा न कथिताः । इति न । परं पक्वस्य भस्मयोगः अधिकः लाभदायकः दृश्यते । अपक्वस्य सुवर्णस्य बहवो गुणा कथिताः। यथा 'सुवर्णं शीतलं वृष्यं बल्यं गुरु रसायनं तुवरं स्वादु तिक्तं च पाके तु स्वादु पिच्छिलम् । पवित्रं बृंहणं नेत्र्यं मेधास्मृतिमतिप्रदम् । हृद्यमायुष्करं कान्तिवाग्विशुद्धिस्थिरत्वकृत् । विषद्वयक्षयोन्मादत्रिदोषज्वरशोफजित् । अपक्वमेव संशुद्धम् ।

[illegible] निरुपक्षिप्तोऽस्त्यप-

क्ते गुणः। ताम्रं चाऽपि विषार्तिहृन्निगदितं वैद्यैरपक्वं ध्रुवम्।

लोहसुवर्णमाक्षिकरौप्यमाक्षिकमंडुरस्फाटिकानां सूक्ष्मचूर्णानि स्वातंत्र्येण जठरे ग्रहीतुं नोक्तानि। इंद्रोक्तरसायने, योगराजे नवायसे, ताप्यादियोगे तेषामुपयोगः कृतः। अन्येषु वनस्पतिचूर्णेषु मधुघृतादिद्रव्यैःसह तानि पार्थिवचूर्णानि उपयुक्तानि वर्तंते एव।

भस्मानि—अपक्वधातूनां चूर्णकरणम् अंजनवत्तेषां सूक्ष्मकरणं अतीव कठिनं कष्टदायकं च वर्तते। स्थूलाः कणास्तु शल्यभूता एव भवन्ति। तेषां शल्यत्वस्य नाशं कर्तुं तान् सुयोग्ये द्रव्ये निर्वाप्य मासाद्वयं यावत् यथावश्यकं धान्यराशौ निधातुं अत्यावश्यकता वर्तते। तदनन्तरमेव तस्योपयोगः कर्तव्यः।

अपक्वधातूनां चूर्णानि मानवशरीराग्निना साह्येन पक्तुम् अशक्यान्येव। यतस्तानि स्थूलानि गुरूणि च वर्तन्ते। इति शास्त्रकाराणामनुभवः। तानि लघून्यग्निदीपकानि च भवितुमर्हन्ति। अपि च तानि पक्वानि शरीरे शोष्यमाणानि भवितुमर्हन्ति। तस्माद्धातूनां कंटकवेधिपत्राणि कृत्वा तेषां वा चूर्णं गृहत्वा यौगिकवनस्पतिना इतरद्रव्यैः सह वा तेषां संमिश्रणं मर्दनं च कृत्वा अग्नौ पुटं च दत्वा पश्चादेव उपयोगः कार्यः इति कल्पना समुद्भूता। यौगिकद्रव्यमिश्रणं, मर्दनं, अग्निपुरदानमिति क्रियात्रैविध्यमत्र मुख्यम्। यौगिकद्रव्यमिश्रणेन पार्थिवद्रव्याणामुपरि रासायनिकी क्रिया भूत्वा भवति तस्य यौगिकः संस्कारः। अनया क्रियया खल्वमध्ये मर्दनेन च भवंति सूक्ष्माः कणास्तस्य द्रव्यस्य। अग्निना च क्रियाभ्यामेताभ्यां साहाय्यं भवति। इति क्रियाभ्यामिदं महत्वपूर्णम्। तासु क्रियासु मर्दनं तु सविशेषमहत्वपूर्णम्। यथा 'मर्दनस्यैव भस्मसंपादकत्वात्'। यौगिकं द्रव्यं मुख्यपार्थिवद्रव्येण संमिश्र्य तस्य एकीकरणं सूक्ष्मीकरणं तथा भर्जनमपि आवश्यकं भवति। एतेषां पूर्वप्रक्रियार्थं मर्दनमावश्यकमेव। प्रक्रियाभयस्यास्य सूक्ष्मीकरणद्वारा निःशल्यनिर्माणस्य प्रधानहेतोः मर्दनेनैव विशेषतः सिद्धिर्भवति। अत एव मर्दनमतिमहत्वपूर्णम्।

द्रव्यस्य अग्नौ भर्जनक्रियायाः एव पुट इति संज्ञा वैद्यके। उच्यते हि 'धातुपूपलेन्धनदाहः पुटम्।

धातोः मृदुकठिनत्वमनुसृत्यैव पुटस्य पुटद्रव्यप्रकाराणां चोपयोगः करणीयः। पारदभस्मने तुषाग्निः; सुवर्णरौप्यभस्मने वनोपलाग्निः, ताम्रलोहार्थं काष्ठाग्निः सुयोग्यः कथितः। तथैव सुवर्णरूप्यार्थं कुक्कुटपुटम्, ताम्रादिकार्थं गजपुटमुक्तम्। उक्तं यथा 'सुवर्णरूपवधे ज्ञेयं पुटं कुक्कुटादिकम्। ताम्रे काष्ठादिजो वह्निर्लोहे गजपुटानि च।

मर्दनानंतरं भावना अनन्तरञ्च पुनर्मर्दनं पुनश्च पुटमित्यनेन क्रमेण धातुरंजननिभः सूक्ष्मः करणीयः। पुटे धातोर्गुरुघटका लघवो भवन्ति। ते वारितराः भवन्ति अतिसूक्ष्मत्वात्। हस्तस्य पृष्ठभागे घृष्टं चेद्भस्म चर्मरेखासु प्रविष्टं यदा भवति तदा तत्सूक्ष्ममिति जानीयात्। दन्तैश्चर्वितं तत् केतकीरजःसमं सुश्लिष्टं भवति तदा तन्मृदु इति ज्ञातव्यम्। "अनप्सु मज्जता रेखापूर्णता पुटतो भवेत्। पुटाद्गुरोर्लघुत्वं स्याद् शीघ्रव्याप्तिश्च दीपनम्। कचकचति न दन्ताग्रे कुर्वन्ति समानि केतकीरजसा। योग्यानि हि प्रयोगे रसोपरसलोहचूर्णानि।

पाकपरीक्षा—उपरि निर्दिष्टा भस्मपरीक्षा स्थूलैव। स्वरूपतः सा परीक्षा। भस्म [illegible] शरीरे यदि न शल्यभूतं

स्यात्तथापि कदाचिदन्तःशरीरे कायाग्नि-संयोगेन तेषां सूक्ष्मकणाः स्थूला भविष्यन्ति। तदा पुनश्च स धातुः उत्थितो भवेत्। तस्य निरुत्थभवनमत्यन्तमावश्यकम्। अन्यथा उदरे उत्थितश्चेत् सः धातुः शल्यः भवेदत एव निरुत्थभस्मनः परीक्षा कार्या। पंचमित्रैःसह भस्म एकीकृत्य मूषायां संतप्तं यदि धातु-कणनिर्माणे असमर्थं स्यात्तर्हि तन्निरुत्थमिति ज्ञेयम्। एवंविधं भस्म जठरे प्रवेष्टुं योग्यमिति ज्ञेयम्।

अमृतीकरणम्। भस्माना धातुः निः-शल्यभूतः एव भवति। परं पदार्थस्तु सः पार्थिव एवेति न विस्मर्तव्यम्। पार्थिव-पदार्थः शरीराय अतिदविष्टः दृश्यते। प्राणिज-द्रव्याणि शरीराय नेदिष्टानि। तदपेक्षया वनस्पतिजद्रव्याणि दविष्टानि। पार्थिव-द्रव्याणि च तदपेक्षया अधिकानि दविष्टानि अत एव भस्मानीमानि वनस्पतिजप्राणिज-द्रव्यैर्भावनायुतान्येव करणीयानि। नित्य-सेवनीये वनस्पतिजे त्रिफलादिद्रव्ये तथा घृते प्राणिजे द्रव्ये पक्त्वा तदुपभोक्तुं युज्यत एव। उच्यते यथा "वरांबु गोघृतं चाभ्रं कला-षड्दिक्समांशकम्। मृद्वग्निना पचेल्लोह्य-ममृतीकरणं त्विदम्।

द्विगुणे त्रिफलाक्वाथे तुल्ये पिष्ट्वाप्य-योरजः। विपचेन्मध्यपाकेन सर्वव्याधिज-रापहम्।

अमृतीकरणे निहितानि द्रव्याणि न भवन्ति ज्वलितानि। तानि तु विपच्यन्ते। अग्निसंस्कारोऽपि तत्र मृदुरेव स्यात्। इति विशषतोऽवधारणीयम्।

अनुपानम्—शरीराय अन्नाज्जलमति-दूरं दृश्यते। बुभुक्षासमये जठरेऽन्नकवलः गतश्चेत्तदा आमाशयोत्थितः पाचकाग्नेः उदीर्णः स्रावोऽतिजवेन संचरति। परं अन्नकवलापेक्षया यदि जठरे जलं गच्छति तदा पाचकाग्निरत्रावश्योदरिणामत्यल्पं भवति। अतः भस्मवत् दूरस्थं द्रव्यं जठरे गतं चेन्न तत्तथा दूरस्थं भवितुमर्हति। तत् आमाशये च यथावस्थं स्वस्थेन पतितुं नार्हति। तस्य पचनक्रिया आमाशये शीघ्र-मेव भवतु इति हेतोराहारे समुपयुज्य-मानानि दुग्धघृतगुड़मधुशर्करादिद्रव्याणि भस्मरूपपार्थिवद्रव्यैः सह संप्रयोगार्हाणीति शास्त्रकाराणामाज्ञा।

यशस्विता—एवं पार्थिवघटकान् निःशल्यावस्थां नीत्वा शरीरे तेषां पचन-विभजनविक्षेपणादि क्रियासंस्कारेण द्रव्याणि शरीरायोपकारकाणि कर्तुमायुर्वे-दीयाः यशस्विनः समभवन्। अपि तु शरीरं तैः पार्थिवद्रव्यैः समं दृढं स्थिरं भवेदिति तेषामनुमानमनुभवेन दृढीकृतम्।

मृतानि लोहानि रसीभवन्ति। निघ्नन्ति युक्तानि महाभयांश्च। अभ्यास-योगाद् दृढदेहसिद्धिं कुर्वन्ति रुग्जन्मजराविना-शम्।

वैक्रान्तो वज्रसदृशो देहलोहकरो मतः।
रसश्च रसकावुभौ श्रेष्ठौ"' देहलोहकरौ परम्।

वचनेस्वेतेपु तेषां पार्थिवद्रव्याणां विष-यकः उपरिलिखितोऽनुभव एव संगृहीतो वर्तते।

गर्मी का उपहार आम

लें०—अज्ञात

१. दुग्ध १ पाव, आम का गूदा और रस ½ पाव, खांड, शर्बत बजूरी, शर्बत सन्दल आवश्यकतानुसार मिलाकर पीना पूर्ण भोजन है। इसे अंग्रेजी में मैंगोफूड कहते हैं। तीसरे पहर में या रात्रि के भोजन के बाद खायें। कुछ दिन सेवन करने से हृदय, मस्तिष्क, वृक्कों मसाने यकृत की शक्ति को बढ़ाता है। अधिक रक्त उत्पन्न होता है तथा गालों का रंग निखर जाता है।

२. आम का ताजा और मीठा रस ½ पाव, दुग्ध ½ पाव, अद्रक का रस चमच भर, सालब मिश्री (चूर्ण) ३ मा०, सतावर (चूर्ण) ३ मा०, मूसली श्वेत (चूर्ण) ३ मा०, चीनी आवश्यकतानुसार मिला डाल कर सब को मिला लें, यह एक मात्रा है। कुछ दिनों तक लगातार इस का सेवन करने से रक्त और वीर्य की उत्पत्ति होती है। हृदय मस्तिष्क आदि अङ्गों की शक्ति बढ़ती है।

३. आम की कच्ची केरी का चूर्ण १ छ०, सोंठ (चूर्ण) १ तो०, सालब मिश्री (चूर्ण) १ तो०, सतावर १ तो०, वंग भस्म, प्रवाल भस्म ३-३ मा०, सब के समभाग चीनी मिलाकर खरल करें, मात्रा ७ मा० प्रातः सायं दुग्ध से दें। गुण—वीर्य स्राव, प्रमेह, शीघ्र पतन को दूर करता है तथा वीर्य को उत्पन्न और गाढ़ा करने वाला है।

४. आम का ताज़ह और मीठा रस १छ०, दधि मीठा १ छ०, अद्रक का स्वरस चाय के दो चमच भर अच्छी तरह से मिलायें, यह एक मात्रा है। प्रातः दोपहर और सायं प्रति दिन ऐसी ३ मात्रायें पीना आमाशय, आन्तों की निर्बलता, अर्श, पुराने अतिसार और संग्रहणी की अच्छी चिकित्सा है।

५. कच्चा आम तन्दूर या चूल्हे की गरम राख में दबा दें, जब वह अच्छी तरह भुन-जाय तो निकाल कर जल से धो लें, छिलका उतार कर पाव डेढ़ पाव जल में भली प्रकार मल लें, गुठली फेंक दें, थोड़ी चीनी मिलाकर और ठण्डा कर के पियें। इसके प्रयोग से गर्मी में लू लगने से रक्षा होती है। लू के रोगी को थोड़े २ अन्तर से पिलाना ज्वर, दाह, शिर पीड़ा, वमन, छाती की जकड़न, घबराहट, पिपासा, श्वास कष्ट, हृदय स्पन्दन, शरीर अङ्ग में फड़कन आदि को दूर करता है।

६. आम की गुठली का चूर्ण ३ तो०, छाया में शुष्क की हुई आम की कोमल कोंपलों का चूर्ण ३ तो०, गोन्द कतीरा का चूर्ण ३ तो०, सबको मिलालें, मात्रा ३ से ५ मा० तक, प्रातः दोपहर और सायं को मीठे दधि आध पाव के तक्र के साथ दें। पुराने अतिसार, मूत्र का इच्छा के बिना निकल जाना, बिन्दु बिन्दु आना आदि दूर होते हैं।

७. आम के पुष्पों (मञ्जरी) को छाया में शुष्क करके चूर्ण करें, इसकी भस्म लेने से बवासीर का रक्त रुक जाता है।

८. आम की हरी टहनी की दतून करने से मसूड़ों की निर्बलता, ढीलापन, रक्त स्राव, मुख दुर्गंध दूर होते हैं और दान्त दृढ़ हो जाते हैं।

शाल्मली अथवा समल

लेo—कविराज श्री यतीन्द्रनाथ गोस्वामी वैद्यभूषण, कतरासगढ़

शाल्मली का डाक्टरी नाम (Bombax malabarica) है। हिन्दी में इसको शेम्वल, अथवा समल कहा जाता है।

आयुर्वेद गुण:— शीतवीज्य, मधुर रस, मधुर विपाक, रसायन, एवं कफ कारक है।

परिचय:— इसके पेड़ की उँचाई पंद्रह अथवा वीस फीट तक होती है। इसका पत्ता चौड़ा और मुलायम होता है। इसका फूल लाल रंग का होता है और इसकी जड़ सरू और मोटी भी होती है।

व्यवहार:— इसका फूल, मूल और लट्ठा काम में लिया जाता है।

जिन्हें शुक्र तरल हुआ हो और जिनकी वाजीकरण शक्ति क्षीण हो गयी हो उनके लिये कच्ची सी जड़ का रस चार आना भर थोड़ा मधु में मिलाकर सेवन करने से विशेष उपकार होता है। भूमिकुष्मान्ड का चूर्ण दो आना भर और अस्वगन्धा जड़ी का चूर्ण दो आना भर के साथ समल की कच्ची जड़ का चूर्ण दो आना भर मिलाकर गर्म दूध के साथ सेवन करने से विशेष उपकार होता है।

रक्त प्रदर:— रक्त प्रदर में रक्तस्राव जब अधिक होता है उस समय इसके दो फूल ठंडे जल में पीस कर दिन में तीन बार मधु के साथ मिलाकर सेवन करने से स्राव साथ-साथ बन्द हो जाता है। इसके साथ प्रदरान्तक लौह अथवा प्रदरान्तक रस और मधु मिलाकर सेवन करने से विशेष लाभ होता है

प्रवाहिका अतिसार में:—समल के लट्ठे का विशेष प्रयोजन होता है। समल के लट्ठे को मोचरस कहते हैं। मोचरस साधारणत: प्रवाहिका, अतिसार, आमदोष कफपित्त, रक्त दोष एवं दाह नाशक औषधि के रूप में काम आता है।

वसंत रोग की प्रतिशेधक औषधि:—

समल के बीज इक्कीस दाने और गोलमिर्च तीन दाने मिला पानी में पीस कर तीन दिन लगातार सेवन करने से जल्दी वसंत रोग के आक्रमण का भय नहीं रहता।

(प्रत्यक्ष फलप्रद)

पूयमेय (सोजाक) पर मेरे अनुभव

लेखक—वैद्य लक्ष्मीनारायण शर्मा आयुर्वेद भिषक्

जिस रोग में लिङ्गेन्द्रिय के मूत्र मार्ग के भीतर जख्म (घाव) हो जाते हैं, पेशाब करते समय जलन होती है और मूत्र मार्ग से पीप सी (मवाद) निकलती है उसे "सोजाक" और डाक्टर उसे "गनोरिया" कहते हैं। उपदंश और सोजाक में बहुत बड़ा अन्तर है। सोजाक में शिश्नेन्द्रिय के मुख के अन्दर और उपदंश में शिश्नमुण्ड (सुपारी) के ऊपर जख्म (घाव) होते हैं। सोजाक स्त्री से पुरुष के और पुरुष से स्त्री के हो सकता है। विसूचिका (हैजा) आदि की तरह सोज़ाक के भी छोटे छोटे कीटाणु होते हैं। उनको डाक्टर लोग "गोनो काकस" कहते हैं।

सोजाक के कारण—वेश्या गमन से तो आज-कल अधिकांश लोगों को सोज़ाक होता ही है, परन्तु इसके अलावा सोजाक के स्वप्नदोष, वीर्यविरोध, ऋतु काल में मैथुन आदि भी कारण हैं।

सोजाक की चिकित्सा—सर्व प्रथम सोजाक वाले रोगी को बलानुसार रेचक देकर उसका आमाशय साफ कर देना चाहिए। तत्पश्चात् निम्नलिखित योग बनाकर देने चाहिएं, मेरे शतसोऽनुभूत हैं।

योग नं० १—देसी हल्दी ऽ५ सेर को एक हँडिया में डाल कर उसमें २।। अढाई सेर गौ का दुग्ध भर दें, पश्चात् उस हल्दी को खुश्क करके पाताल यन्त्र द्वारा तैल निकाल कर एक शीशी में भर कर सुरक्षित रख छोड़ें।

लेने की विधि—एक सींख भर कर मलाई या मसका में रखकर रोगी को खिलादें। नित्य प्रति सुबह खिलावें। कुछ ही दिनों में रोग बिल्कुल नष्ट हो जाएगा।

योग नं० २—नीला थोथा दो तोले की दो डली लेकर पाव भर रीठे के पोस्त में रख कर किसी कूंजे में बन्द करके ३ सेर उपलों की आंच में दे दें। पश्चात् सर्वाङ्ग शीतल होने पर निकाल लें। नीला थोथा कुस्ता होकर बरामद होगा। सोजाक रोग चाहे कैसा भी भयङ्कर क्यों न हो केवल एक रत्ती मलाई में रख कर रोगी को खिलादें और रोगी को अपने पास रक्खें। रोगी को जब प्यास लगे तब बजाय पानी के रोगन जर्द नीम गरम पिलावें। ईश्वर चाहे६ घण्टे के अन्दर रोग नष्ट हो जायगा।

नोट—बारह घण्टे के बाद पानी पीने की इजाजत है।

योग नं० ३—३ माशे नीला थोथे को एक छटांक मक्खन के साथ ताम्बे के बर्तन में नीम के सोंटे से जिसमें नीचे पैसा लगा हो चौबीस घण्टे खरल करके रख छोड़ो।

लेने कि विधि—सादे पान में एक माशा खुराक सुबह नित्य प्रति जो चाहें खावें कैसा भी भयङ्कर सोजाक हो ७ दिन सेवन करने से बिल्कुल नष्ट हो जायगा। बार २ परीक्षित योग है।

श्रीमान वैद्य बन्धुओं से कर जोड़ निवेदन है कि इन तीनों योगों को बनाकर किसी सोजाक वाले रोगी पर अजमायश करें और धन तथा यश के भागी बनें।

आयुर्वेद लोक



लंका की स्वास्थ्य मंत्रिणी श्रीमती विमला विजयवर्द्धन बंबई में

लंका की स्वास्थ्य मंत्रिणी श्रीमती विमला विजयवर्द्धन जेनीवा से कोलंबो लौटती हुईं दो दिन के लिए बंबई में ठहरीं।

२१ मई को प्रातःकाल पं० शिवशर्मा ने श्रीमती विजयवर्द्धन का श्री मोरारजी देसाई, मुख्य मंत्री, बंबई, से परिचय कराया तथा दोनों अधिकारियों में लंका और बंबई की आयुर्वेद संबंधी भावी नीति पर लगभग एक घण्टा बात हुई।

२१ मई को सायंकाल विलिंगटन क्लब में पण्डित शिवशर्मा ने उन्हें प्रीतिभोज दिया। निमंत्रण अल्पकालिक होने पर भी प्रीतिभोज में बंबई के अग्रगण्य नागरिक सम्मिलित हुए जिनमें मुख्य मंत्री श्री मोरार जी देसाई, स्वास्थ्य मंत्री श्री शान्तिलाल शाह, पब्लिक सर्विस कमिशन के चेयरमैन डा० के० बी० भरूचा, प्रादेशिक कांग्रेस मंत्री श्री रामसहाय पाण्डे, सीलोन के ट्रेड कमिश्नर श्री तिलकरत्न, डायरैक्टर ऑफ आयुर्वेद श्री हरिदत्त शास्त्री, बोर्ड आफ आयुर्वेद रिसर्च के अध्यक्ष श्री नानासाहिब पुराणिक, उपस्वास्थ्य सचिव श्री चिलमुलगुन, यूनिवर्सल हैल्थ इन्स्टिट्यूट के अर्थमंत्री श्री ईश्वरलाल पारेख आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

२२ तारीख को श्रीमती विजयवर्द्धन ने यूनिवर्सल हैल्थ इन्स्टिट्यूट का निरीक्षण किया और इस संस्था के कार्य पर परम संतोष व्यक्त करते हुए लंका में इसके विचारों का समावेश करने की इच्छा प्रगट की।

इसी शाम को TWA के वायुयान से श्रीमती विजयवर्द्धन शांताक्रुज हवाई अड्डे से कोलंबो के लिए रवाना हो गईं। जाने से पहले पण्डित शिवशर्मा ने राज्यपाल श्री हरेकृष्ण महताब, चीफ जस्टिस श्री चागला, भूतपूर्व राज्यपाल श्री मंगलदास पक्वासा तथा अन्य प्रसिद्ध नागरिकों, व्यापारियों, लेखकों, शिक्षकों तथा कलाकारों से जो किसी मित्र के शुभ प्रसंग पर ताजमहल होटल में सम्मिलित हुए थे, भी उनका परिचय कराया।

विभिन्न समाचार पत्रों के प्रतिनिधियों ने जो भेंटें उनसे कीं उन सब में श्रीमती विजयवर्द्धन ने आयुर्वेद की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की और अपनी सरकार का आयुर्वेद के लिए अविलंब उन्नतिशील नीति प्रचलित करने का दृढ़ और असंदिग्ध निश्चय प्रकट किया।

आयुर्वेद की उत्कृष्ट पुस्तकों पर पुरस्कार

अंग्रेजी, हिंदी, संस्कृत तथा उर्दू भाषाओं में आयुर्वेदिक एवं तिब्बी सम्बंधी उत्कृष्ट पुस्तकों के लेखकों को प्रोत्साहित करने के लिए उत्तरप्रदेश की आयुर्वेदिक व तिब्बी अकादमी ने चालू वित्तीय वर्ष में २८००) का पुरस्कार देने का निश्चय किया है। यह पुरस्कार उन उत्कृष्ट पुस्तकों पर दिया

जायगा जो १९५५ की जनवरी के बाद प्रकाशित हुई हैं।

पेप्सू का आयुर्वेदिक उन्नति समाचार

आयुर्वेद औषधालय का उद्घाटन करते हुए पेप्सू के स्वास्थ्य मन्त्री जर्नल शिवदेव ने कहा कि आयुर्वेद पद्धति में गवेषणा की परम आवश्यकता है। आपने बताया कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ५० नए आयुर्वेदिक औषधालय खोले जायेंगे और तीस लाख रुपये की राशि आयुर्वेदिक उन्नति के लिए खर्च की जाएगी।

इससे पूर्व आयुर्वेदिक निर्देशक श्री कांती नारायण मिश्र ने कहा कि पेप्सू के ६४ औषधालय राज्य की एक तिहाई जनसंख्या के लिए पर्याप्त हैं।

गांवों में चिकित्सा आयुर्वेद से ही संभव

राजस्थान के स्वास्थ्य मंत्री का ग्रामसभा में भाषण

"स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात् राष्ट्र के चतुर्दिक विकास का उत्तरदायित्व हम पर आया है। अशिक्षा, बेरोजगारी तथा सामाजिक भेदभाव आदि अन्य समस्याओं के साथ ही जनता के स्वास्थ्य का प्रश्न भी उपस्थित है। हमारा देश गांवों में बसता है। एतदर्थ ग्रामों में चिकित्सा-व्यवस्था आयुर्वेद पद्धति से ही संभव है।" राजस्थान के स्वास्थ्य मंत्री श्री बद्रीप्रसाद गुप्त ने यहां भ्रातृमंडल औषधालय के उद्घाटन समारोह में अध्यक्ष पद से कहा।

आगे चलकर आपने कहा कि आयुर्वेद चिकित्सा विधि अति प्राचीन है। सत्य तो यह है कि आयुर्वेद ही एकमेव राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति हो सकती है। भले ही कुछ लोग आज आयुर्वेद का विरोध करते हों परन्तु निश्चय ही आयुर्वेद अपनी पूर्व प्रतिष्ठा को प्राप्त कर सकेगा।

संस्था की अब तक की प्रगति पर संतोष प्रकट करते हुए इस ओर जनता के सहयोग की अपील की।

देशी चिकित्सा रीति का वैज्ञानिक विकास

मेडिकल ग्रेजुएटों के उत्सव पर श्री पंडित का भाषण

नेशनल मेडिकल ग्रेजुएट्स एसोसिएशन के आठवें वार्षिकोत्सव पर रविवार को नई दिल्ली में अध्यक्षीय भाषण देते हुए चीफ कमिश्नर श्री आनन्द दत्तात्रेय पंडित ने कहा कि ज्ञानोपार्जन की कोई सीमा नहीं। ज्ञान विज्ञान की किसी भी शाखा में उन्नति करने के लिये किसी भी देश में कोई बाधा या प्रादेशिक सीमाएं नहीं हो सकतीं।

श्री पंडित ने खेद प्रकट किया कि आधुनिक चिकित्सा विज्ञान (ऐलोपैथी) को इतने समय से सरकारी संरक्षण और सहायता मिल रही है फिर भी देश में अभी तक दिमाग और दिल की शल्य चिकित्सा (सर्जरी) करने वाले डाक्टर पैदा नहीं हुए। हमें धीरे-धीरे देशी चिकित्सा प्रणालियों को वैज्ञानिक ढंग पर पुनर्जीवित करना चाहिए।

इससे पूर्व तीन संसत्सदस्यों श्री राधारमण, श्री बारलिंगे और श्री दासप्पा ने एसोसिएशन की मांगों का समर्थन करते हुए विभिन्न प्रणालियों से चिकित्सा करने वालों के प्रति भेद-भाव न करने की मांग की।

एसोसिएशन के ज्ञापन में मांग की गई है कि देशी चिकित्सकों को भी रजिस्टर्ड मेडिकल प्रेक्टिशनरों के समान सुविधाएं और अधिकार दिए जाएं।

श्वेत कुष्ठ की नई औषधि

सुना जाता है कि लखनऊ की केन्द्रीय औषधि-अनुसंधान शाला ने बाबची नामक एक भारतीय जड़ी से इन्जैक्शन तैयार किये हैं जो श्वेत कुष्ठ की चिकित्सा में सफल सिद्ध होंगे।

संस्था द्वारा अनेक कुष्ठ रोगियों पर उक्त इन्जैक्शन का परीक्षण किया गया है तथा ५५ प्रतिशत मामलों में सफलता का दावा किया गया है।

संस्था की इस सफल खोजके लिये ब्रिटेन के नफील्ड ट्रस्ट द्वारा संस्था को १लाख पौंड का उपहार देने का विचार किया जा रहा है।

आंध्रायुर्वेद परिषन्महासभा

आन्ध्रायुर्वेद परिषन्महासभा, चिन्तलूरु, का २२ वां अधिवेशन ता० २१,२२ तथा २३ अप्रैल को सम्पन्न हुआ-जिसमें आन्ध्र प्रदेश सरकार से केन्द्रायुर्वेद कलाशाला (आतुरालय सहित) की स्थापना, आसवारिष्ट को मद्य-निषेध कानून से पृथक् रखने तथा आन्ध्र में एक "सेन्ट्रल बोर्ड आफ आयुर्वेद" की स्थापना के लिये अनुरोध करते हुए प्रस्ताव पास किये गए। अधिवेशन में वैद्य श्री नोरीराम शर्मा, विजयवाडा, आचार्य यादव जी त्रिकम जी, बम्बई, श्री भागीरथ स्वामी तथा श्री जी० वी० मावलंकर (स्पीकर-लोकसभा) के देहावसान पर शोक प्रस्ताव भी स्वीकृत हुआ। १९५६ वर्ष के लिये निम्न पदाधिकारी निर्वाचित हुए:—

अध्यक्ष—श्री वि० टि० वी० रामानुजस्वामी, उपाध्यक्ष श्रीरघुत्तमाचार्युलु तथा द्विभाष्यं वेंकट सूर्यनारायणमूर्ति, प्रधान-मंत्री श्री मुक्कामल वेंकट शास्त्री, सहायक मंत्री श्रीपाण्यं पार्थ सारथि शर्मा, हैदराबाद, तथा श्रीगुडूरि नमश्शिवाय, विजयवाड़ा, कोषाध्यक्ष रुद्रपाक विग्नेश्वर शर्मा, तथा आडीटर-श्री गोट्टिमुक्कल सुब्रमण्य शास्त्री।

संयुक्त औषधि प्रणाली के विकास पर बल

झांसी आयुर्वेद विश्वविद्यालय का दीक्षान्त महोत्सव ता० २९-४-५६ को श्री एम० अनन्तशयनम जी आयंगर की अध्यक्षता में हुआ। इस अवसर पर उपाधियों का वितरण वैद्यरत्न श्री पं० शिवशर्मा जी द्वारा किया गया।

अपने दीक्षान्त भाषण में श्री अनन्तशयनम् आयंगर ने औषधि विकास की एक सयुंक्त प्रणाली के आविष्कार की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा कि पश्चिमी तथा भारतीय औषधि-प्रणालियों की सर्वोत्तम बातों को संयुक्त कर दिया जाय। आयुर्वेदिक प्रणाली का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि जिन रोगों के लिये ऐलोपैथी में कोई औषधि नहीं है ऐसे रोगों के लिये भी आयुर्वेद में विभिन्न औषधियां हैं जिनसे बहुत से वैद्य भी अपरिचित हैं।

श्री आयंगर ने सुझाव दिया कि ५ प्रादेशिक अनुसंधान संस्थाओं की स्थापना की जाये जिन्हें एक दूसरे के अन्वेषणों के अध्ययन का अवसर प्राप्त हो।

सत्योदय समाज झांसी

सत्योदय समाज, झांसी के कार्यालय में ता० ३० अप्रैल को श्री पं० गोवर्धन शर्मा छांगाणी तथा पं० रामनारायण शर्मा पधारे। समाज के संस्थापक श्रीकृष्ण पद भट्टाचार्य ने दोनों महानुभावों का स्वागत-सत्कार किया।

श्री भट्टाचार्य ने सत्योदय प्रकाशन की कहानी अस्पताल, विज्ञान में ब्रह्मदर्शन या

आयुर्वेद में आत्मदर्शन, छायालोक की रहस्य नगरी आदि पुस्तकें उन्हें भेंट कीं।

शोक सभा

शिमला आयुर्वेद मण्डल की १८-५-५६ की मीटिंग में आचार्य यादव जी के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की गई तथा शोक-प्रस्ताव पास किया गया।

श्री वैद्यरत्न पं० शिवशर्मा अभिनन्दन महोत्सव

कुछ समय पूर्व आयुर्वेद प्रेमियों तथा वैद्य बन्धुओं को सूचना दी गई थी कि बम्बई के वैद्य समाज की ओर से आयुर्वेद के एक मात्र नेता के रूप में आयुर्वेद जगत का सही मार्ग दर्शन करने तथा इस क्षेत्र में की गई उनकी अमूल्य सेवाओं के लिये पत्रं पुष्पं फलं तोयं की श्रद्धांजलि के रूप में श्री पंडित शिवशर्मा जी आयुर्वेद बृहस्पति का सार्वजनिक शानदार स्वागत किया जाये।

किन्तु कई अनिवार्य कारणों से यह स्थगित होता रहा है। अनेक आयुर्वेद प्रेमी तथा वैद्य बन्धुओं ने इस विषय में पूछताछ की है कि समारोह अभी तक क्यों नहीं हो सका और कब हो रहा है? इन सब सज्जनों को यह जानकर हर्ष होगा कि स्वागत समिति अपना कार्य कर रही है। श्री पंडित जी की जीवनी तथा अभिनन्दन पत्र प्रेस में हैं। प्रेमीजनों को शीघ्र ही समारोह के निमंत्रण पहुँच जायेंगे। आयुर्वेद जगत की जिज्ञासा तथा उनकी अपने नेता में श्रद्धा को हम समझते हैं। किन्तु कभी कभी कार्य में अनिवार्य बाधायें आ जाती हैं जिनसे विलम्ब हो जाता है। अतः सहयोगियों, वैद्यों तथा आयुर्वेद प्रेमी जनता से विलम्ब के लिये क्षमा चाहते हैं।

कविराज महेन्द्र कुमार शास्त्री
कविराज कृष्णचन्द्र वैद्य वाचस्पति
वैद्य श्रीराम शर्मा
वैद्य यमजीभाई ठाकोर

पिलानी में आयुर्वेद शिक्षण की नवीन व्यवस्था

पिलानी में नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ के पाठ्यक्रम के अनुसार आयुर्वेद शिविर की व्यवस्था मनोवैज्ञानिक ढंग से की गई है। यहाँ पर आयुर्वेदीय विषयों को इस प्रकार से हृदयंगम कराया जाता है कि छात्र को रटने की जरूरत नहीं पड़ती। इस प्रणाली में मृण्मय प्रतिकृतियों, विभिन्न यन्त्रों और चार्टों आदि से सहायता ली जाती है, जिससे नवीन विषयों की भी जानकारी आसानी से हो जाती है। पुस्तकालय, वाचनालय, औषधालय, रसायन शाला आदि की व्यवस्था है। छात्रों को हिन्दी और अंग्रेजी में योग्य बनाने को अतिरिक्त कक्षाओं का प्रबन्ध है। कुछ सुयोग्य छात्रों को भोजन, वस्त्र आदि का पूरा खर्चा और कुछ को छात्रवृत्ति दी जाती है। शेष के लिए नल, बिजली, खेल, छात्रावास में निवास और अध्ययन व्यवस्था निःशुल्क है। छात्रावास में भोजन का व्यय १५, रु० से २०, रु० मासिक तक होता है। कालेज १ जुलाई को खुल जाएगा, किन्तु प्रवेश मास के अन्त तक हो सकेगा। प्रवेशार्थियों को मंत्री, बिरला आयुर्वेद विभाग, पिलानी (राजस्थान) से पत्रव्यवहार करना चाहिए।

रामनिवास शाह, मंत्री

साहित्य-सत्कार

अनुभूत योग चर्चा :— यह पुस्तक आयुर्वेदचार्य वैद्य वन्सरी लाल साहनी द्वारा प्रकाशित हुई है। इस पुस्तक का प्रथम भाग मेरे सन्मुख है इस ग्रन्थ के निर्माण में वैद्यराज ने जो प्रयोग बयान किये हैं वह अत्यन्त सुलभ, सद्यः लाभप्रद हैं, यह पुस्तक हर एक वैद्य तथा आयुर्वेद के छात्रों के लिये अत्यन्तोपयोगी है ऐसा मेरा मत है।

यह पुस्तक कई भागों में प्रकाशित हो रही है। वैद्य समाज को इससे लाभ उठाना चाहिये।

नानक चन्द
मन्त्री—नि० भा० आ० विद्यापीठ

महासम्मेलनाध्यक्ष वैद्य श्री वाई० पार्थनारायण जी पण्डित की यात्राओं का विवरण

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के माननीय अध्यक्ष वैद्य श्री वाई० पार्थनारायण जी पण्डित एक बड़े कर्मठ व्यक्ति हैं। सहृदय एवं मृदुभाषी होने के साथ-साथ आप में विचित्र संगठन शक्ति भी है। महासम्मेलन के अध्यक्ष निर्वाचित होने के समय से ही आपकी यह प्रबल इच्छा रही है कि भारतीय वैद्य समाज की एक मात्र प्रतिनिधि संस्था का संगठन इतना सुदृढ़ और शक्तिशाली हो जाय कि देश के एक छोर से दूसरे छोर तक वैद्यमात्र इसकी पताका के नीचे आकर सामूहिक एवं संगठित रूप से आयुर्वेद की उन्नत्यर्थ अग्रसर हों। इस ध्येय की सिद्धि के हेतु आप सतत् प्रयत्नशील हैं। एतदर्थ आपने दो विस्तृत यात्रायें भी की हैं तथा भविष्य में भी करने वाले हैं। पाठकों की सूचनार्थ हम आपकी विगत यात्राओं का संक्षिप्त सा विवरण नीचे प्रकाशित कर रहे हैं। श्री अध्यक्ष जी की भावी यात्राओं का विवरण भी हम समय-समय पर प्रकाशित करते रहेंगे। प्र० सं०

आन्ध्र देश की यात्रा

१८ अप्रैल से २५ अप्रैल तक

इस एक सप्ताह की अवधि में आपने गंतूर, विजयवाडा, समलकोट, रामचन्द्रपुरम, पेडापुरम, काकीनाडा, चिन्तलूर, तुनी, राजमहेन्द्री, पस्सीविथेलू, कोनूर, टुमकुर, भीमवरम, एल्लौर आदि स्थानों की यात्रा की। सभी स्थानों पर आपका भव्य स्वागत किया गया, मानपत्र दिए गए तथा सार्वजनिक सभाओं का आयोजन किया गया। आप विभिन्न स्थानीय वैद्यों तथा वैद्यक संस्थाओं के अधिकारियों से मिले और स्थान स्थान पर आयुर्वेद की उन्नति एवं संगठन पर बल दिया। आपने भिन्न-भिन्न स्थानों पर विभिन्न आयुर्वेदिक संस्थाओं का निरीक्षण भी किया। वैद्यसमाज को आपने महासम्मेलन के कार्यक्रम तथा योजनाओं से परिचित कराया तथा बड़ी संख्या में सदस्य बन कर उसे पुष्ट करने और उसके कार्यों में सहयोग देने की अपील की।

देहली यात्रा

५ मई से २० मई तक

इस यात्रा का अधिकांश काल देहली में ही व्यतीत हुआ। ५ मई को सायंकाल आप वायुयान द्वारा देहली पधारे। हवाई अड्डे पर आपका सम्मेलन के स्थानीय पदाधिकारियों तथा अन्य मित्रों द्वारा स्वागत किया गया। आप श्री एस० वी० कृष्णमूर्ति राव, उपाध्यक्ष, राज्य सभा, के निवास स्थान, १०, अकबर रोड, पर ठहरे। संध्या को ६ बजे आप महासम्मेलन कार्यालय में आये।

६ मई को विद्यापीठाध्यक्ष, श्री भि० वि० डेग्वेकर तथा श्री पं० शिवशर्मा जी से मिले। सायंकाल ३ बजे महासम्मेलन स्थायी समिति की अध्यक्षता की तथा रात्रि को ८ बजे डा० हार्डिकर से भेंट की। ७ मई को प्रातः डा० लक्ष्मीपति जी से मिले, ११ से ४ बजे सायं तक राज्य सभा की कार्यवाही का अवलोकन किया तथा सायंकाल ६ बजे माननीय श्री अनन्तशयनम् आयंगर, स्पीकर लोक सभा, की अध्यक्षता में कान्स्टीट्यूशन क्लब, नई दिल्ली में आयोजित, संसदीय आयुर्वेदिक भाषणमाला के अन्तर्गत प्रथम भाषण में सम्मिलित हुए और स्वागत भाषण दिया।

८ मई को प्रातः आपने देहली के कुछ वैद्यों से अनौपचारिक बातचीत की। मध्याह्न में संसद सदस्यों से वार्तालाप किया। महासम्मेलन कार्यालय का निरीक्षण किया। सायंकाल ५ बजे भवन निर्माण समिति के अनौपचारिक अधिवेशन में भाग लिया तथा तदुपरान्त श्री डा० बालिगे के निवास स्थान पर वैद्यों, हकीमों तथा होम्योपैथों की एक सभा में सम्मिलित हुए।

६ मई को प्लानिंग कमीशन द्वारा निमंत्रित व्यक्तियों की एक संयुक्त मीटिंग में भाग लिया जिसमें प्लानिंग कमीशन के साथ आगामी मीटिंग में संयुक्त रूप से कार्य करने पर विचार किया गया। इसी दिन रात्रि को काली कमली वाला तथा आयुर्वेद विद्यापीठ के सम्बन्ध में श्री स्वामी दयानिधि जी से बातचीत करने के लिए ऋषिकेश के लिए प्रस्थान किया। वहां से १३ मई को लौटने पर योजना समिति में विचार विनिमय के आधार-विषयों को तैयार करने के लिए एक मीटिंग में भाग लिया।

महासम्मेलन के बढ़ते हुए महत्व को ध्यान में रखते हुए उसके संगठन के विषय में ता० १४-५-५६ को आपने महासम्मेलन के उपाध्यक्ष, वैद्यरत्न श्री पं० परमानन्द जी, पत्रिका के प्रधान सम्पादक श्री स्वामी चेतनानन्द जी तथा कार्यालय मंत्री से विचार विमर्श किया।

१५ मई को सायं ३ बजे प्लैनिंग कमीशन द्वारा बुलाई गई मीटिंग में सम्मिलित हुए। सायंकाल ६ बजे योजना समिति द्वारा आयोजित आयुर्वेदिक व्यवसाय के प्रतिनिधियों की एक सभा में भाग लिया। १६ मई को प्रातः पुनः प्लैनिंग कमीशन की मीटिंग में सम्मिलित हुए। सायंकाल ४ बजे वेंगर होटल में कविराज श्री केशवप्रसाद आत्रेय, संयुक्त मंत्री, अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन द्वारा आयोजित महासम्मेलन के स्थानीय पदाधिकारियों की एक औपचारिक मिटिंग में भाग लिया। श्री संयुक्त मंत्री जी ने इसी अवसर पर श्री प्रधान जी के सम्मान में एक पार्टी भी दी। १७ मई को देहली के कुछ वैद्यों से श्री मजूमदार के औषधालय में दूसरी बार मिले।

१८ तथा १९ मई को लक्ष्मीनारायण धर्मशाला में गए, जैन गुरु से भेंट की, पण्डित यल्लप्पा तथा विद्यापीठ के उपाध्यक्ष श्री पं० मोहनलाल शास्त्री द्वारा उनके सम्मान में वेंगर रेस्टोरेंट में दी गई पार्टी एवं स्वागत सत्कार में सम्मिलित हुए। देहली में

प्रचार कार्य को चलाने के लिए एक समिति के निर्माण पर विचार के लिए आयोजित आयुर्वेद, युनानी तथा होम्योपैथिक संस्थाओं के प्रतिनिधियों तथा डा० बरलयाश की एक सभा में भाग लिया।

१९ मई को सोनीपत गए जहां श्री एस. वी. कृष्णमूर्ति राव, उपाध्यक्ष राज्य सभा तथा डा० हर्डिकर के साथ एटलस साइकिल फैक्टरी को देखा।

२० मई को वार्धा के लिए प्रस्थान किया जहाँ आपने गांधी मेमोरियल लैपारेसी फाउण्डेशन के प्रतिनिधियों से बेंगलोर में एक परीक्षणात्मक विशुद्ध आयुर्वेदिक केन्द्र खोलने के विषय में बातचीत की।

देहली में निवास करते हुए आपने वैद्यरत्न श्री परमानन्द जी, महासम्मेलनोपाध्यक्ष, कविराज श्री केशवप्रसाद जी आत्रेय, संयुक्त मंत्री. कविराज श्री आशुतोष मजुमदार, कविराज श्री कैलाशचन्द्र अग्रवाल, वैद्य श्री जगदीश प्रसाद शर्मा द्वारा दिए गए प्रीति भोजों में भाग लिया, श्री संयुक्त मंत्री तथा विद्यापीठोपाध्यक्ष द्वारा वेंगर्स रेस्टोरेन्ट में आपके सम्मान में आयोजित पार्टियों में सम्मिलित हुए।

TOUR PROGRAMMES OF VAIDYA SRI PARTHANARAYANA PANDIT, PRESIDENT, ALL INDIA AYURVEDIC CONGRESS, BANGALORE, IN ANDHRA DESH FROM 19TH TO 28TH APRIL 1956

18th April 1956

Left Bangalore at 9 A.M.

19th April, 1956

Arrival at Guntur at 6-50 A.M.—Reception at the Station—Halt at Vaidya Palluri Subba Rao—Interviews between 9 and 10 A.M. with the Working Committee of the Guntur Taluk Vaidya Mandali—10 A.M. Visit to Ram Mohana Ayurvedic College and talk with the Principal and the staff—12 noon Dinner and rest—2-30 P.M. Interviews—4 P.M. Public meeting—Presentation of address and the Chief Guest's reply—Burrah Katha on Ayurveda and group photo—Leave Guntur at 8 P.M. Arrival at Bezwada at 10-20 P.M.—A brief talk with the Vaidya Mandali members on the platform.

20th April, 1956

Leave at 5-30 A.M. by Mail to Samalkot. Arrival at Samalkot at 1 O'clock—Meeting and reception and addresses.—2 P.M. Ramachandrapuram—3-30 P.M. Peddapuram—5-30 P.M. Kakinada—Public Meeting at the Municipal Town Hall—Reception by Kakinada District Congress Committee—Presentation of address and President's lecture—Interviews between 8-30 P.M. and 10-30 P.M.—Halt at Ramakrishna Vishranthi Bhavan with Sri Gottumukkulu Subrahmanya Shastri.

21st April, 1956

Leave Kakinada at 6 A.M. by car to Chintalur. Arrival at Chintalur at 9-30 A.M.—Reception and procession—Hoisting of Flag at 10-30 A.M. Interviews between 1-30 P.M. to 2-30 P.M.—Opening of the Provincial Ayurvedic Parishat at 3 P.M.—Address—President's reply—Leave Chintalur at 7-30 P.M. to Tuni—Arrival at Tuni at 11-30 P.M.—Rest at Tuni.

22nd April, 1956

Meeting at Tuni in Bhogalingeswara Ayurvedic Hall—Presentation of Address by District Mandal and the Pharmacy.—President's lecture—Leave Tuni after dinner by 1-30 P.M. to Rajamundry.—Arrival at Rajamundry at 4-45 P.M.—Lunch at Vaidya Seetharama Rao's Vaidyashala at 5-30 P.M. Public meeting at Tirumala Rao's Congress House at 6 P.M. Presentation of Address, Lecture and interviews—Leave Rajamundry at 8-30 P.M. to Passivethula—Halt and rest at Passivethula in Pregyananda Ashrama.

23rd April, 1956

Leave Passivethula in the morning to Kovvur—Arrival at Kovvur at 8-45 A.M.—Visit to the Sanskrit College—Public meeting at 9-30 A.M.—Presentation of address and President's speech—Press Interviews—Dinner at Dr. Somayajulu—Leave for Tunukur at 1-30 P.M.—Leave Tunukur after meeting to Bheemavaram via Tadepalligur—Arrival at Bheemavaram at 7 P.M.—Halt at Ramakrishna Ayurvedic Ashrama and rest.

24th April, 1956

Morning at 7 A.M. visit to Prakana Chikitsalya and Ashram—Visit to Leprosy Hospital—9 A.M. Public Meeting—Presentation of address—.Leave for Ellore after dinner—Arrival at Ellore at 5 P.M.—Reception by the East Godavari District Vaidya Mandali—Public Meeting at 5-30 P.M.—Presentation of address—Leave Ellore by 8-30 P.M. to Bezwada—Reach Bezwada—Reception at Station—Halt at Modern Cafe Vishranthi Bhavan.

25th April, 1956

Visit to Venkateshwara Ayurvedic Kala Shala at 6-30 A.M.—Interviews between 8-30 A.M. and 10 A.M.—10 A.M. Public Meeting—Presentation of Address by the Andhra Province Maha Mandal—President's reply—2 P.M. interviews with the Drug Sellers—3 P.M. interviews to the Pharamacy Doctors—4 P.M. exclusive interview and talk with the L.I.M. Association—Presentation of Memoranda by the L.I.M. Association—Farewell Address at 5 P.M.—Leave for Bangalore via Guntur.

IN DELHI FROM 5TH TO 20TH MAY 1956.

5th May, 1956

Left Bangalore by plane at 7 A.M.—Presentation of flowers and garlands at the Aerodrome at 6-45 A.M. by Domlur Vaidya Sabha. 3-15 Arrival at Delhi—(Was received by the Vice-President, Editor Maha Mandal Patrika, Office Secretary and friends)—Camped at No. 10 Akbar Road.

6 to 6 15 P.M. visited Maha Mandal Office.

6th May, 1956

Morning Courtesy visits.

2 P.M. Meeting with the President of the Vidyapeeth—Visit to Pandit Shiv Sharma at Lodhi Estate.

3 P.M. Presided over the Governing Council Meeting at East Patel Nagar (Swamy Chetanand Ji's Dharmarth Oushadhalaya Premises) 8 P.M. Meet Dr. Hardekar.

7th May, 1956

9 A.M. Visited Dr. A. Lakshmipathy at Humayun Road.
11 A.M. to 4 P.M. Rajya Sabha.

6 P.M. Meeting at the Constitution Club under the Chairmanship of Hon'ble Sri Anantha-Shayanam Iyengar, Speaker of the Loka Sabha.

8th May, 1956

9-30 A.M. Informal meeting with the members of the discenting group of Vaidyas. Informal talk with M.Ps. and attended the Office. Building Sub-Committee meeting and a preliminary meeting of Ayurvedists, Unanists and Homeopathists at Dr. Barlinge's (M.P.) Residence at 5 P.M.

9th May, 1956

Present at a common front in the Planning Commission meeting.

9th May, 1956 to 13th May, 1956

Night—Left for Rishikesh to have a personal talk with Swami Dayanidhi regarding the Kali Kamliwala and Ayurvedic Vidyapith Offices. Returned to Delhi on 13th to attend the final meeting to prepare terms of reference for discussion at the Planning Commission meeting at No. 1, Hanuman Road.

14th May, 1956

Consultation with the Vice-President, Office Secretary and Chief Editor regarding the Organisation of the Office in view of the growing importance of the Institution, representing the Ayurvedic Profession in the country.

15th May, 1956

3 P.M. The Planning Commission Meeting.

5-40 P.M. Informal meeting of the Representatives of the Ayurvedic Profession invited by the Planning Commission.

16th May, 1956

Planning Commission Meeting in the morning. A formal meeting of all the Office Bearers of the All India Ayurvedic Congress, residing at Delhi, at Wenger Hotel, convened by Vaidya Keshav Prasad Atrey, Joint Secretary of the All India Ayurvedic Congress.

17th May, 1956

Second Meeting with the Representatives of the discenting group of Vaidyas at Mazumdar's dispensary.

18th May, 1956 and 19th May, 1956

18th—Visit to Sri Lakshminaryana Dharma Shala and the Jain Guru—Entertainment by Pandit Yellapa—Entertainment by the Vice-President of the Vidya Pith at Wenger Hotel. Meeting of the Representatives of Ayurvedic, Unani and Homeopathic Institutions and Dr. Barlayash to form a Steering Committee to carry on the programme of Propaganda at Delhi.

19th morning left Delhi for Sonepet—Visited the Atlas Cycle Factory along with Sri S. V. Krishnamoorthy, Deputy Chairman of Rajya Sabha and Dr. Hardekar.

20th May, 1956

Left for Wardha to hold discussions with the representatives of the Gandhi Memorial Leprosy Foundation, Wardha, on the question of opening of a Shudha Ayurvedic Trial Centre at Bangalore.

SOCIAL FUNCTIONS ATTENDED AT DELHI

1. Dinner with Sri Parmanand Ji—Vice-President, All-India Ayurvedic Congress.
2. Dinner with Sri Keshva Prasad Atrey—Joint Secretary.
3. Dinner with Dr. Asutosh Mazumdar.
4. Dinner with Sri Agarwala, Ex-Joint Secretary of the All-India Ayurvedic Congress.
5. Dinner with Sri Jagadish Prasad.
6. Lunch and Tea Party at Wenger Hotel, given by Sri Keshav Prasad Atrey—Joint Secretary.
7. Party at Wenger Hotel by the Vice-President of the All-India Ayurved Vidyapeeth.
8. Visit to Karnatak Sangha.

The Parliamentary Ayurvedic Lecture Series

As is now well known, the All India Ayurvedic Congress has started an Ayurvedic Lecture series for the Hon'ble Members of the Indian Parliament with a view to help bring about a radical change in our National Health Policy. The first lecture in the Series was delivered by Vaidyaratna Shri Pt. Shiv Sharma ji, Ayurvedacharya, of Bombay, on the 7th of May 1956, at the Constitution Club, New Delhi. The Hon'ble Shri M. Ananthasayanam Ayyangar, Speaker of the Lok Sabha, presided. Detailed news in this regard has been given in Hindi in the May issue of the Ayurveda Mahasammelan Patrika.

Some members from the South have made enquiries in this regard and have stated that the news having been published in Hindi alone, they were at a loss to follow the whole thing. It is, therefore, now for their advantage only that this news is being published in the Patrika in English.

The gist of Vaidyaratna Shri Pt. Shiv Sharma's lecture has already appeared in English. The English translation of the letter on the basis of which the inaugural function was arranged is given hereunder, a perusal of which will enable the readers to fully understand the objectives and implications of this series. The general letter of invitation is also reproduced below for their information.

The Future of the Series

The introduction of the series has received acclamation from very many quarters and it is going to form a permanent feature of the activities of the All India Ayurvedic Congress. The scheme can be also applied with equal profit in the State spheres where the Hon'ble members of the State Legislative Assemblies and Councils should be approached and addressed likewise with a view to post them with full and important information on the subject.

Those of the learned Vaidyas who may be prepared to present the case for AYURVEDA in lucid terms before the Hon'ble Members of our Parliament may contact the undersigned through a letter and also send to him a complete copy of his proposed lecture on the subject. The prepared luctures thus received will be considered by the Parliamentary Lecture Series Committee of the All India Ayurvedic Congress, and if the same is found to be up-to the mark, the scholar concerned will be invited to deliver his lecture. The travelling expenses of those who will thus be invited to Delhi will be defrayed by the All India Ayurvedic Congress. Standard lectures shall also be published in the Ayurveda Mahasammelan Patrika.

The interested persons are advised in their own interest to first deliver their lecture to the local or State Vaidya Sabhas or other literary bodies, and if the same receive acclamation there than it will count for much in the considerations of the Parliamentary Lecture Series Committee.

KAVIRAJ SWAMI CHETNANAND,
Convener,
Parliamentry Ayurvedic Lecture Series
Committee.

COPY OF THE LETTER

To the Hon'ble Members of the Indian Parliament,

Sirs,

The state of our national health continues to remain a serious problem before the country. The Central Government has tried to solve it with the aid of the allopathic system exclusively, but so far the solution is not in sight.

A considerable improvement in this situation can be brought about by taking recourse to AYURVEDA, India's own system of medicine. Actually, AYURVEDA is more than merely a system of medicine. AYURVEDA prescribes simple but deeply significant modes of daily and seasonal routine, hygiene, dietetics and living as also rules of general conduct, by observing which disease is ordinarily warded off and chances of a person falling ill are reduced to the barest minimum. It is best suited to our habits, nature and temperament and the climatic conditions of our country. Its therapy is not only easily available and cheap but it is nearer to nature, non-toxic, harmless and more radically curative. Being based on the fundamentals of life and creation, AYURVEDA is basically more scientific and more complete. Its hypotheses still remain undisproved and the modern investigations merely succeed in confirming instead of demolishing them.

As many as 16 committees of enquiry appointed by the Central and various Provincial Governments have declared it to be a scientific system. It is a vast storehouse of valuable knowledge and experience gained and accumulated over thousands of years by Ayurvedic physicians and Darshanikas. Patients declared incurable by other systems are often cured by it. It excels both in prevention and cure of the disease. But our Central Health Ministry seems hardly aware of the potentialities of this system and is consequently paying scant attention to it.

We wish to bring about a radical re-orientation in our National Health Policy in the best interests of the suffering masses. As you are one of the elected representatives of the people, we solicit your active co-operation in the matter.

With a view to convey to you all the important information on the subject, so as to achieve the aforesaid object effectively in a democratic manner, we have, in collaboration with the All India Ayurvedic Congress, the represnetive organisation of the Ayurvedic profession for the last 50 years, decided to arrange a series of intensely informative lectures on this subject. The series will be inaugurated at the Constitution Club, Curzon Road, New Delhi, on May 7, 1956, at 6 P. M. India's front-rank Ayurvedic scholar, Vaidyaratna **Pt. Shiv Sharma**, has been specially invited to deliver the inaugural lecture. The Hon'ble Shri **M. Ananthasayanam Ayyangar**, Speaker of the

Lok Sabha, has very graciously agreed to preside over the function. Your valuable presence at this inaugural funtion is solicited. You are welcome to bring with you, if you like, any allopathic physicians to ask the most searching questions having a bearing on AYURVEDA and India's national health policy, so that you may fully satisfy yourselves on the soundness of the health programme which we wish to be put into practice for the greater well-being of the nation.

It has fallen on you to have a hand in the formulation of our national policies. You are the chosen custodian of the welfare of the nation. We earnestly request you, therefore, to kindly spare some of your valuable time to attend the said meeting and consider the problem more seriously after grasping it more clearly. By doing so you will earn our gratitude and the gratitude of the suffering masses of this country.

Your Brothers,

1. Thakur Dass Bhargava
2. Mohan Lal Saxena
3. R. V. Dhulekar
4. W. S. Barlingay
5. Krishnacharya Joshi
6. Swami Ramanand Tirtha
7. Kamakhya Prasad Tripathi
8. Benarsi Dass Jhunjhunuwala
9. Badshah Gupta

MEMBERS OF PARLIAMENT

10. Goswami Ganesh Datt. and 11. Y. Parthnarayan Pandit.

President, All India Ayurvedic Congress.

Delhi, April 21, 1956.

COPY OF THE INVITATION

Vaidya Y. Parthnarayan Pandit, President,
and Members of

The All India Ayurvedic Congress

request the pleasure of your company
at the inauguration of the Ayurvedic Lecture Series
at the Constitution Club, Curzon Road, New Delhi,
on Monday, May 7, 1956, at 6 P. M.
by Vaidyaratna Shri Pt. Shiv Sharma,
under the Presidentship of
Shri M. Ananthasyanam Ayyangar,
Speaker of the Lok Sabha.

R. S. V. P.

SWAMI CHETNANAND CHIDAKASHI,
All India Ayurvedic Congress,
Chandni Chowk, Delhi.
Phone : 24348.

KINDLY BRING THIS CARD WITH YOU.

निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठम्
१९५९ वर्षीय परीक्षाफलम्

१—आयुर्वेदाचार्य परीक्षाफलम्

(क) आयुर्वेदाचार्य परीक्षोत्तीर्णाः—२३ लक्ष्मीनारायण शुक्ल, प्रथम । २६ पूर्णानन्द व्यास, द्वितीय ! ३४ रामनारायण त्रिपाठी, द्वि० । ३७ रामबहादुर मिश्र, तृ० । ५२ तंगिराल सदाशिव शर्मा, द्वि० । ५५ वासुदेव शर्मा, तृतीय । ५७ महेशदत्त शर्मा गौड़, प्र० । ६५ चन्द्रप्रकाश शास्त्री, द्वि० । ७३ मदनमोहन शर्मा, द्वि० । ९६ शुकदेवप्रसाद, तृ० । ९७ गोविन्दप्रसाद त्रिवेदी, तृ० । १०२ गोवर्धनभाई पटेल, द्वि० । १०३ चिमनलाल, द्वि० । १०४ हिम्मतलाल, द्वि० । १०५ अमृतलाल त्रिवेदी, द्वि० । १०६ सुरेन्द्रनाथ, द्वि० । ११८ सुदर्शन पाण्डेय, तृ० । १२२ इन्द्रजीत शर्मा, द्वि० । १४३ पतंजलि भट्ट, तृ० । १७२ चिरंजीलाल शर्मा, दाधीच, तृ० । १८५ नागरमल शर्मा,द्वि० । १९९ राधेश्याम व्यास, द्वि० । २०३ धन्यकुमार जैन, तृ० । २१० भजनदास स्वामी, द्वि० । २१२ हरिश्चन्द्र जैन, द्वि० । २१६ गोपीनाथ शर्मा, द्वि० । २३५ सी. के. दिवाकरन्, द्वि० । २३८ रामानन्द शर्मा, द्वि० । २४७ कूचिभोद्ल वेंकटेश्वर शर्मा, द्वि० ।

(ख) आयुर्वेदाचार्य प्रथमखण्डपरीक्षोत्तीर्णाः—१३ रामकृष्ण शास्त्री । १७ हेमचन्द्र त्रिवेदी । १८ पुरुषोत्तम शर्मा । ३६ हनुमत्प्रसाद शर्मा । ३८ रामप्रकाश त्रिपाठी । ३९ प्रयागनारायण त्रिपाठी । ४० सीताराम मिश्र । ४१ शंकरदयालु द्विवेदी । ४२ सुदामाप्रसाद अवस्थी । ४४ रामजियावन त्रिपाठी । ५३ ओम्प्रकाश शास्त्री । ६१ व्यास लक्ष्मीनारायण । ६४ बलराम बुधौलिया । ६९ हरेन्द्रकुमार शर्मा मिश्र । ७४ गिरधरशर्मा । ७५ देवीप्रसाद शर्मा रून्थला । ८२ माताप्रसाद द्विवेदी । ९१ शरदरंजन दवे । ९२ हेतलाल पण्डया । ९३ पुनमचन्द्र शाह । ९४ शंकरलाल गुप्ता । ९५ अमृतलाल दवे । १०७ देवीप्रसाद दवे । १०८ छितानीप्रसाद त्रिपाठी । १०९ प्रभाकर त्रिपाठी । ११३ नारायणप्रसाद पाण्डेय । ११६ नन्दराम द्विवेदी । १३१ शान्तिलाल । १३८ सन्तरेणु उदासीन । १४१ गंगाशरण शर्मा आर्य । १४८ सोमनाथ मिश्र । १५० रामजी पाण्डेय । १५१ के. वेदव्यास जोशी । १५६ के. राघवन् नम्बियार । १५९ श्यामसुन्दरलाल शर्मा । १६३ श्रीकान्त शर्मा । १६४ अमरनाथ शर्मा । १६५ मेलाराम शर्मा । १६६ गजानन्द शर्मा । १६८ वृद्धिश्चन्द्र शर्मा । १७० चन्द्रशेखर शर्मा । १७३ परमेश्वरलाल शर्मा । १७४ मामराज शर्मा । १७५ रामावतार शर्मा । १७६ सज्जनकुमार शर्मा । १८० भुवनकिशोर शर्मा । १८२ प्रभुदत्त शर्मा जोशी । १८४ ज्वालाप्रसाद शर्मा द्विवेदी । २०० शान्तिकुमार जैन । २०१ प्रकाशचन्द्र पण्डया । २०२ जयरामदास स्वामी । २०६ कल्याणशरण शर्मा । २०८ शान्तिस्वरूप । २०९ मदनदास

स्वामी । २१३ हुकमचन्द जैन । २१४ महेन्द्रकुमार पण्डया । २२० हरिश्चन्द्र शर्मा हारीत । २२६ जगदीशप्रसाद शर्मा । २४१ वैष्णवदास । २४२ शिवकुमार द्विवेदी । २४३ रामचन्द्र त्रिपाठी । २४६ सुरेश । २५० रामतीर्थ । २६० प्यारालाल शास्त्री । २६५ कृष्णकान्त श्रीधरशास्त्री । २६६ बनवारीलाल स्वामी ।

(ग) परिशिष्टपरीक्षाधिकारिणः—२० दुर्गाप्रसाद तिवारी, मौखिक । २६ रामेश्वरप्रसाद, शल्य० । ३३ टेकचन्द शर्मा, शारीर । ३५ विश्वम्भरदत्त, शारीर । ८० कमलकुमार जैन, शल्य । १३२ दाऊदयाल रंगा, शल्य । १४२ सत्यव्रत मैठाणी, शल्य० । १४६ रामचन्द्र झा, द्रव्य० । १६२ रुद्रमणि शर्मा, शल्य० । १७१ बनवारीलाल शर्मा, शल्य० । १७८ भालचन्द्र कौशिक, प्रसूति० । २५६ छोटेलाल शर्मा, शारीर ।

(२) वैद्याचार्य परीक्षाफलम् ।

(क) वैद्याचार्य परीक्षोत्तीर्णाः—४१ भंवरलाल महात्मा, तृ० । ४६ माणिक्य-लाल नागदा, द्वि० । ५० श्री कान्ता टाली, द्वि० । ६९ ज्ञानचन्द जैन, द्वि० । ८१ सुशील-कुमारी गिरधर, द्वि० । १०० विठ्ठलभाई, तृ० । १०२ सत्यप्रकाश द्विवेदी, द्वि० । १०६ ए. अनन्ताचार, तृ० । १२४ रूक्मणी देवी, तृ० । १२६ अनुसूया प्रसाद सुकुल, द्वि० । १३३ ब्रह्मानन्द गुप्त, तृ० ।

(ख) वैद्याचार्य प्रथम खण्ड परीक्षोत्तीर्णाः —८ अर्जुनदान । ९ मूलचन्द मिश्र । १५ हरिश्चन्द्र भट्ट । २० रामप्रसाद । २१ श्री हरेकृष्ण शर्मा त्रिपाठी । २४ रामगोपाल गौड़ । २७ वृजमोहन महता । ३० तेजमल जैन । ३१ मंगलचन्द जैन । ३३ नन्दकिशोर केदावत । ३५ सतीशचन्द्र वर्मा । ४० पुरन्दर व्यास । ५४ मुरलीधर शर्मा । ६० नन्दकिशोर शर्मा । ६२ दाऊदयाल जोशी । ६३ शम्भूदयाल शर्मा । ६५ जोधराज आर्य । ६८ देवकृष्ण वघेल । ७७ हरीराम वर्मा । ८५ रामशब्द मिश्र । ८७ जयदेव जैन । ९४ रामलोचन दुवे । ९८ नारायण । १०४ रणजीत सिंह डावर । १०८ हरदेव शर्मा । ११० सागरमल पारीक । १११ वि. आर. के. रंगाचार्य । ११४ दीनदयालु वैद्य । ११५ हरिश्चन्द्र शर्मा । ११६ गि. महागणरे । १२५ बृजलाल । १३० गुलाब सिंह । १३१ वाल्मीकि प्रसाद त्रिपाठी । १३५ के. टी. एन. दामोदरन नम्बियार । १३६ डालचन्द वर्मा । १३९ पृथ्वीराज वैद्य । १४० वंशीलाल अजेय । १४१ मुरलीधर व्यास । १४६ वदरीनारायण शर्मा । १५४ कृष्ण-कुमार गुप्ता । १५७ शिवमोहन लाल अग्रवाल ।

(ग) परिशिष्टपरीक्षाधिकारिणः—१४ बालकृष्ण पाराशर, शारीर । २६ कस्तूर चन्द जैन, मौखिक । ३६ कालूराम व्यास, काय० । ४५ देवेन्द्र दत्त भट्ट, शारीर । ५३ कृष्णचन्द्र दाधीच, शारीर । ६४ युगल किशोर, शारीर । ७१ मोहनलाल शर्मा, द्रव्यगुण । ७२ जेठामल शर्मा, द्रव्य० । ७३ गोरीशंकर व्यास, चरक । ७४ मण्डल दत्त, ओझा, चरक ।

३—आयुर्वेदविशारदपरीक्षाफलम्

(क) आयुर्वेद विशारद परीक्षोत्तीर्णाः—२८ अयोध्याप्रसाद मिश्र, द्वि० । ३६ भूपाल लाल शर्मा, तृ० । ३७ बनवारीलाल शर्मा, प्रथम । ४३ श्रीधर शर्मा जोशी, द्वि० । ४४ महावीर प्रसाद दाधीच, द्वि० । ५२ कैलाश नाथ त्रिपाठी, तृ० । ५३ ओंमप्रकाश, तृ० । ६० प्रभुदयाल शर्मा, द्वि० । ६१ मदनलाल शर्मा, द्वि० । ६६ मोतीलाल त्रिपाठी, प्र० । १०८ रतनचन्द जैन, द्वि० । ११६ कृष्णगोपाल त्रिपाठी द्वि० । १२० मणीभाई, द्वि० । १२१ जीवन्नाथ, द्वि० । १२६ रामनाथ तिवारी, द्वि० । १४३ चन्द्रशेखर तिवारी, तृ० । १५५ गिरधरप्रसाद शर्मा, द्वि० । १५६ बनवारीलाल शर्मा द्वि० । १५८ जगदीश प्रसाद पारीक, तृ० । १६८ बुधनारायण दाधीच, द्वि० । १६९ श्रीराम रामस्नेही, तृ० । १८२ लाभशंकर शर्मा, द्वि० । १९१ जगजीवन मिश्र, तृ० । १९५ सरयूप्रसाद द्विवेदी, तृ० । १९६ देवीप्रसाद शर्मा, द्वि० । १९७ कृष्णनन्दन मिश्र, तृ० । २७७ वीरेन्द्रकुमार जैन, द्वि० । २७८ रामस्वरूप रामस्नेही, द्वि० । २७९ वाचस्पति शर्मा, द्वि० । २८० शिवलाल शर्मा, द्वि० । २८१ भूधर शर्मा, द्वि० । २८२ मूलचन्द्र शर्मा, द्वि० । २८३ सत्यनारायण शर्मा, द्वि० । २८४ रामजीलाल शर्मा, द्वि० । २८६ भालीराम शर्मा, द्वि० । २८७ मदनलाल शर्मा, द्वि० । २९० श्रीनिवास शर्मा जोशी, द्वि० । २९७ श्री दीनदयालु शर्मा, द्वि० । २९९ रमेशचन्द्र शर्मा, द्वि० । ३०० ब्रह्मानन्द, द्वि० । ३०२ गोविन्दराम स्वामी, द्वि० । ३०५ राधेश्याम महर्षि, द्वि० । ३०८ हरिशंकर निर्मल, द्वि० । ३०९ पूर्णचंद्र शर्मा द्वि० । ३१० नन्दकुमार भारद्वाज, द्वि ० । ३१३ पदमचन्द्र जैन, द्वि० । ३१६ बनवारीलाल मिश्रा, द्वि० । ३२६ राधाकृष्ण, द्वि० । ३३४ श्रीअवधेश त्रिपाठी, द्वि० । ३३७ रामाचार्य, द्वि० । ३४० प्रयागनारायण पाठक, तृ० । ३६२ राधाचरण वल्लभ गोस्वामी, तृ० । ३६७ शिवहर्ष मिश्र, द्वि० । ३७० रामबाबू पाठक, तृ० । ३७२ भगवान सहाय मिश्र, प्र० ।

(ख) आयुर्वेद विशारद प्रथम खण्ड परीक्षोत्तीर्णाः—१८ पुरुषोत्तमलाल शर्मा। ३९ मार्कण्डेय झा। ६१ भिक्षुदान रत्नू। ६३ केशवलाल आचार्य। ६७ मदनलाल शर्मा। ८४ जुगलकिशोरभट्ट। ८६ स्वामी रामतीर्थ विरक्त। ८७ राधेश्याम शर्मा। ८८ कैलाशचन्द्र शर्मा। ८९ रामनिवास शर्मा। ९३ हरिशंकर त्रिपाठी। ९५ रामशिरोमणि शुक्ल। १०० रसिकबिहारी मिश्र। ११४ सीताराम शुक्ल। ११९ सिद्धनाथ शर्मा। १२४ कृपाशंकर तिंवारी। १२५ रामाश्रय गोस्वामी। १३१ व्रजबिहारी उपाध्याय। १३२ विष्णुप्रसाद द्विवेदी। १३५ रामसेवक शर्मा। १३६ प्रेमनारायण भार्गव। १३८ ललिताप्रसाद मिश्र। १४० पारसनाथ पाण्डेय। १४१ राममूर्ती शुक्ल। १५० बनारसीदत्त। १६२ रघुराज प्रसाद पाण्डेय। १६४ पालचन्द यति। १६५ हरिप्रसाद शर्मा। १७५ जगदीशचन्द्र शर्मा। १८३ विजयकुमार शर्मा। १८५ इन्दुशेखर शर्मा। १८६ परमानन्द शर्मा। १८८ वंशीधर चतुर्वेदः। १९४ चन्द्रशेखर शर्मा जोशी। १९८ महेन्द्रनाथ ओझा। २१३ प्रभुदयाल शर्मा। २२० हेमचन्द्र जैन। २३० मोहनलाल शर्मा। २३९ भगवान दत्त शर्मा। २४३ कृष्ण दत्त शर्मा। २४८ वासुदेव शर्मा त्रिवेदी। २५४ जगदीश प्रसाद। २५६ कल्याण शर्मा। २५९ शंकरलाल शर्मा। २६४ रमेश-

चन्द्र कौशिक। २६६ त्रिलोक चन्द्र मिश्र। २६७ विद्यासागर शर्मा। २६८ जगदीशचन्द्र। २७४ सुन्दरलाल जैन। २७५ पूरणचन्द्र जैन। २७६ रामनिवास दाधीच। ३२३ जनार्दन पाटंगणकर। ३३८ रामकृष्ण अग्निहोत्री। ३४३ रामकृपालु त्रिपाठी। ३४४ राधेश्वरण द्विवेदी। ३५० दामोदर प्रसाद शर्मा। ३५९ गौरसुन्दर वाजपेयी।

(ग) परिशिष्ट परीक्षाधिकारिणः—४७ गोविन्द नारायण मिश्र, द्रव्य०। ६० चतुर्भुज शर्मा, द्रव्य०। १०२ रतनचन्द्र जैन,द्रव्य। १०३ निर्मकुमार जैन, द्रव्य०। १०६ धर्मचन्द्र जैन, अष्टांग उ०। ११५ गयाप्रसाद शुक्ला, शारीर। १२२ देवशंकर ओझा, काय०। १३३ वि०पुरुषोत्तम द्विवेदी, द्रव्य। १५४रामकुमार शर्मा, काय०। १६३ गिरधारीलाल शर्मा,द्रव्य०। १६७ नन्दकिशोर हारीत, शल्य०। २१५ सत्यदेव प्रसाद मिश्र, द्रव्य०। २२६ राधेश्याम शर्मा, द्रव्य०। २२७ कृष्णदत्त शर्मा, द्रव्य०। २२९ पूर्णमलशर्मा, द्रव्य०। २३६ परशुराम शर्मा, द्रव्य०। २३८ किशोरीलाल शर्मा,द्रव्य०। २४० मोहनलाल शर्मा. द्रव्य०। २४७ रमाकान्त, द्रव्य०।२५८ वेणीमाधव शर्मा, द्रव्य०। २६० बनवारीलाल, द्रव्य०। २६१ ओंप्रकाश जोशी, द्रव्य०। २६९ सागरमल शर्मा, द्रव्य०। २७० दुर्गाप्रसाद शर्मा, द्रव्य०। ३०७ राधेश्याम खाण्डल, काय०। ३१७ कृष्णवल्लभ शर्मा दाधीच, द्रव्य०। ३२२ विश्वनाथ शर्मा, द्रव्य०।

(४) वैद्यविशारदपरीक्षाफलम्

(क) वैद्य विशारदपरीक्षोत्तीर्णाः—१४ बाबूराम शर्मा, द्वि०। १५ वरियामसिंह, द्वि०। १६ हरवंशसिंह चावला, तृ०। २० दलीपसिंह वर्मा, तृ०। २२ सियाराम शर्मा, तृ०। २३ परशुराम शर्मा, तृ०। २७. खूबीराम गुप्त, द्वि०। २८ रामनाथ योगी, तृ०। ३२ स्वामीदयाल शुक्ल, द्वि०। ३३ रामेश्वर जोशी, द्वि०। ३४ शिवनारायण शर्मा, द्वि०। ४७ महावीरप्रसाद महात्मा, द्वि०। ५६ हरदयाल शर्मा, तृ०। ५७ अम्बालाल त्रिवेदी, द्वि। ५९ रेवाशंकर शर्मा, द्वि०। ६४ रामसेवक अवस्थी, तृ०। ६६ गणपतलाल महात्मा, तृ०। ६८ रामस्वरूप शर्मा, द्वि०। ७३ शंकरलाल गुप्ता, द्वि०। ७६ बद्रीनारायण शर्मा, द्वि०। ८३ यशोदादेवी, तृ०। ९४ सौभाग्यदेवी, द्वि०। १०३ कमला गुप्ता, प्र०। १२२ किशोरीलाल शर्मा, द्वि०। १२३ स्वर्णदत्त शर्मा, द्वि०। १३९ धनपाल सुतैल तृ०। १४० मंगलदास तृ०। १४४ मूलशंकर, द्वि०। १४८ कर्मवीर आर्य द्वि०। १४९ घनश्यामदास, द्वि०। १५६ मोहनलाल गुप्त, तृ०। १५७ रामसुन्दर शुक्ल, तृ०। १६१ ब्रह्मानन्द शर्मा, द्वि०। १६४ जगजीतसिंह, तृ०। १७५ ब्रजलाल शर्मा, द्वि०। १७८ महेन्द्रसिंह, द्वि०। १८२ माधवानन्द, तृ०। १८५ सरदारीलाल शर्मा, तृ०। १८८ रामचन्द्र शर्मा, तृ०। १९० अमरनाथ शर्मा, द्वि०। २१७ हरगोविन्द शर्मा, तृ०। २२३ रामहर्ष त्रिपाठी, प्र०। २५२ सूरजमल वर्मा, द्वि०। २५६ प्रह्लाददास, द्वि०। २६५ विमलाकुमारी, द्वि०। २६६ इन्दुमती कुमारी, द्वि०। २६७ कमलाकुमारी, द्वि०। २७१ नटवरलाल शुक्ल, तृ०। २७४ दामोदरलाल शर्मा, तृ०। २८८ देवधर द्विवेदी, द्वि०। २९२ कन्हैयादास साधु, द्वि०।

(ख) वैद्यविशारद प्रथमखण्ड परीक्षोत्तीर्णाः—३ गोवर्धनदास वाधवाणी । १८ तीर्थराम । १९ संसारचन्द शर्मा, २१ रामभरोसीलाल । २४ वृजमोहनलाल शर्मा । ३५ प्रभुदयाल शर्मा । ४० हीरालाल चौहान । ४१ गोकुलदास । ४२ रामदत्त पूरे । ४४ जमनालाल मण्डोरे । ५५ कृष्णदेवसिंह (पुष्करलाल) ६० श्यामसुन्दर शर्मा । ६३ श्रीकृष्ण मिश्र । ६९ बालकृष्ण शर्मा । ७० बालकृष्ण शर्मा । ७१ श्यामसुन्दर शर्मा । ७४ लाभशंकर व्यास । ७५ मगनलाल । ८५ सुशीला देवी । ८७ श्यामलाल शर्मा । ८८ श्यामलाल लाठे जी । ८९ वीरेन्द्र गुप्ता । ९० प्राणनाथ शर्मा । ९१ प्रह्लाददत्त हारीत । ९५ सन्तोष कुमारी मल्होत्रा । ९७ राजेन्द्र कुमारी । ९८ विमलादेवी अग्रवाल । १०० स्वच्छलता । १०१ ऊषा सेठी । १०२ भूपेन्द्र कौर । १२४ दीनदयाल शर्मा । १२६ दीनानाथ शर्मा । १२९ रामस्वरूप शर्मा । १३० बलदेवकृष्ण शर्मा वत्स । १३१ सोहनलाल शर्मा । १३२ दामोदरप्रसाद शर्मा । १३५ विष्णुदिगम्बर मिश्रा । १३८ लक्ष्मीकान्त शर्मा १५१ हुबलाल सिंह । १५२ शिवकुमार पाण्डेय । १५३ हजारीलाल गुप्ता । १५५ रमाशंकर शर्मा । १६८ गायत्री देवी शर्मा । १७२ कूडलय्यागटीवालय्याशीवयोगीमठ । १७३ रुद्राणी पुराणीक । १७६ रामस्वरूप विश्नोई । १७७ राजाराम । १७९ रामकुमार शर्मा । १८१ परमात्मानन्द । १८९ हरिराम अरोड़े । १९१ मोहनकौर सरीन । २१४ दामोदरदास परदेशी । २१५ वि. वेंकटेश बालिगा । २१६ वि. पुण्डलीक बालिगा । २१८ रघुनन्दन भट्ट । २२० द्वारिकाप्रसाद अग्रवाल । २२८ नेतराम शर्मा । २३० श्रीरामपदार्थ मिश्र । २३१ गोपालमोहन मिश्र । २३२ होत्रीनारायण मिश्र । २३५ सुगनचन्द शर्मा । २३७ किशनस्वरूप शर्मा । २३८ भास्करराय । २४४ वंशीधर शर्मा । २४६ राधेश्याम शर्मा । २४७ वंशीधर शर्मा । २४८ प्राणवती शर्मा । २४९ घनश्यामचन्द्र शर्मा । २५४ गंगासहाय शर्मा । २५८ नागप्पा । २५९ टि. एन. तुलपुले । २६० होशियारसिंह । २६३ धनीराम शर्मा । २६८ करनलाल गंगवार । २६९ विश्वम्भरदत्त शर्मा । २७३ रवीन्द्रप्रकाश दीक्षित । २७५ हीरालाल शर्मा । २७६ गोवर्धन वेंकटाचार्युलु । २९० के. के. चात्तुकुटि नम्बियार । २९४ बद्रीप्रसाद शर्मा । २९५ हीरानन्ददास । ३०२ प्रेमकुमारी पंवार । ३०३ रामदयाल शर्मा । ३०४ मोहनलाल वर्मा । ३०५ कृष्णबल्लभ जोशी । ३०६ विष्णुप्रसाद । ३१० शकुन्तलादेवी । ३११ गणपतलाल व्यास । ३१३ कुमारी दयावती ।

(ग) परिशिष्ट परीक्षाधिकारिणः—१७ अयोध्याप्रसाद शर्मा, शल्य० । ४३ गोविन्दप्रसाद ओझा, द्रव्य० । ४९ पन्नालाल शर्मा, द्रव्य० । ५३ केसरसिंह, द्रव्य० । ८१ लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी, अष्टांगपू० । ९९ दमयन्तकौर, द्रव्य० । ११९ तारासिंह गोयल, अगद० । १२८ गणेशदत्त शर्मा, द्रव्य० । १३४ भगवानदास गर्ग शल्य० । १५० जलेश्वरसिंह, शल्य० । १६० प्रीतमसिंह, शल्य० । २१३ बलदेवप्रसाद पाण्डे, शल्य० । २२१ प्रकाशचन्द गुप्त, द्रव्य० । २३९ मुकुन्दलाल, प्रसूति० । २५१ बालमुकुन्द सारस्वत, द्रव्य० । २८४ रामजी लाल शर्मा मिश्र, शल्य० । २९३ जगदीशप्रसाद शर्मा, शल्य० । ३०८ जयरामदास, द्रव्य० । ३०९ प्रभातीलाल, शल्य० ।

(५) आयुर्वेदभिषक् परीक्षाफलम्

(क) आयुर्वेद भिषक् परीक्षोत्तीर्णाः—२ मदनगोपाल मिश्र, द्वि० । ३ श्रीनारायण चतुर्वेदी, द्वि० । ४ देवेन्द्र शर्मा, द्वि० । २४ मेठाराम, तृ० । २७ नवलराय वाचाणी । ३१ दाऊलाल शर्मा, द्वि० । ४८ द्वारिकानाथ शर्मा, तृ० । ५६ गुरुवचनसिंह शर्मा, द्वि० । ६३ ज्ञानचन्द रम्पाल, तृ० । ६४ जगदीशचन्द्र शर्मा, तृ० । ७९ विपिनकुमार जैन, तृ० । ८७ कनैयालाल, तृ० । ८८ नन्दलाल, द्वि० । ८९ दुष्यन्तराय, द्वि० । ९१ भोगीलाल त्रिवेदी, द्वि० । ९२ विश्वम्भर, द्वि० । ९३ वासुदेव प्रसाद, तृ० । ९५ बाडीलाल, तृ० । ९७ भद्रकुमार, द्वि० । १०३ कान्तिलाल, तृ० । १०४ भगीरथ आर्य, द्वि० । १०६ रामाधार शर्मा, द्वि० । १०७ माधुरी देवी शर्मा, द्वि० । ११५ मुरलीधर शर्मा, तृ० । १२४ रामप्रताप नैनगुरिया, द्वि० । १२५ ईश्वरचन्द्र, तृ० । १३० कन्हैयालाल शर्मा, तृ० । १४० व्रजभूषनलाल, तृ० । १४१ पद्मनाभ जोशी, तृ० । १४२ सुन्दरलाल शर्मा, तृ० । १६० गणेश, द्वि० । १६५ स्वामी कृष्णानन्द जी, तृ० । १६८ रामेश्वर व्यास, तृ० । १७१ गोपालदत्त द्विवेदी, द्वि० । १७३ द्वारका प्रसाद शर्मा, तृ० । १७८ बलवन्त जोशी, तृ० । १८० श्यामसुन्दर निगम, द्वि० । १८३ गौरीशंकर त्रिवेदी, द्वि० । १८४ विनोद कुमारी, द्वि० । १८६ रामचन्द्र मजावदिया द्वि० । १८७ भागीरथ जोशी, तृ० । १८८ कान्तिलाल त्रिवेदी, तृ० । १८९ गणेशराम सक्सेना, तृ० । १९० हरिश्चन्द्र द्विवेदी, द्वि० । १९४ हुकमीचन्द सौनी, द्वि० । २३४ त्रिवेदी जयदत्त शर्मा, द्वि० । २३५ मुन्नी देवी मिश्रा, द्वि० । २५० शिवरत्न सिंह, तृ० । २५८ अश्वनिकुमार शर्मा, द्वि० । २५९ मदनलाल त्रिपाठी, द्वि० । २६७ कृष्णाकुमारी, तृ० । २७४ गिरिराज प्रसाद, द्वि० । २७७ धनदत्त जैन, द्वि० । २७८ दयाशंकर शर्मा, द्वि० । २९१ गोपीराम दुबे, द्वि० । २९२ किशोरीलाल त्रिपाठी, द्वि० । ३०३ भट्ट किशनलाल, द्वि० । ३०६ मुकुन्दराय, द्वि० । ३२५ अब्दुलरहेमान पठान, तृ० । ३२७ देवीदान वारोट, द्वि० । ३२८ याज्ञिक माहेश्वर, द्वि० । ३३९ गौतम देव भागी, प्र० । ३४० तीर्थराम शर्मा, द्वि० । ३६८ मोहनदास विरक्त, तृ० । ३६९ मांगीलाल बोहरा, द्वि० । ३७७ जगदीश नारायण गोस्वामी, द्वि० । ३८१ धर्मसिंह आर्य, द्वि० । ३८३ स्नेहलता, द्वि० । ३८५ ओम्प्रकाश शर्मा, द्वि० । ३८६ दयाशंकर चौबे, तृ० । ३९२ प्रेमचन्द सकलानी, तृ० । ३९४ मदनगोपाल शर्मा, द्वि० । ३९७ जमना दास स्वामी, तृ० । ४०१ अविनाशीराम, तृ० । ४०२ सुखदेवराज, द्वि० । ४०४ निर्मलकुमारी, तृ० । ४०५ रामस्वरूप जैन, द्वि० । ४०६ ओंप्रकाश, द्वि० । ४२२ स्वदेशकुमारी शर्मा, द्वि० । ४३० बाबूराम शर्मा, तृ० । ४३६ धर्मवीर ढ़ींगरा, तृ० । ४४१ छाजूराम शर्मा, तृ० । ४४६ सुन्दरलाल शर्मा, द्वि० । ४७२ श्री भगवान सिंह, तृ० । ४८८ खुशीराम, द्वि० । ४९४ सुदर्शनकुमारी, द्वि० । ५०१ सुरेन्द्रकुमार शर्मा, तृ० । ५०६ प्रभाधर शर्मा, द्वि० । ५०७ सीताराम शर्मा, द्वि० । ५११ अमरबहादुर सिंह, तृ० । ५१२ भगवानदीन पाण्डेय, तृ० । ५१४ रामेश्वर प्रसाद पाठक, द्वि० । ५१८ रामप्रसाद द्विवेदी, तृ० । ५२७ श्री प्रेमकृष्ण अरोड़ा, द्वि० । ५३६ देवशंकर केशवराम, तृ० । ५३७ इन्दुप्रसाद पण्ड्या, द्वि० । ५३९ रोमेशचन्द्र, तृ० । ५४२ चन्द्रका[illegible], तृ० । ५४४ [illegible] वैद्य, द्वि० । ५४७

नरेन्द्रकुमार, द्वि० । ५६६ सूर्यनाथ सिंह, द्वि० । ५६७ रामकृष्ण गुप्ता, द्वि० । ५७१ अमरनाथ पाण्डेय, द्वि० । ललिताप्रसाद त्रिपाठी, द्वि० । ५८० राममूर्ति पाण्डेय, तृ० । ५८२ रामसिंहासन मिश्र, तृ० । ५८६ मार्कण्डेयराय शर्मा, द्वि० । ५८८ हरिहरछत्र सिंह, तृ० । ६१५ करतार सिंह,तृ० । ६२० वेदप्रकाश कौशल,द्वि० । ६२१ मदनलाल शर्मा,द्वि० । ६२२ नत्थासिंह, तृ० । ६३१ सन्तशरण अग्रवाल, द्वि० । ६३७ सूर्यप्रकाश, तृ० । ६४० रामप्रकाश सोनी, तृ० । ६४१ मोहनलाल शर्मा ढण्ड, द्वि० । ६४२ विद्याधर शर्मा, द्वि० । ६६१ चन्तविरय्या तृ० । ६६२ मल्लय्या कल्लीमठ, तृ० । ६७१ चन्नप्पा एहोली, तृ० । ६७२ लक्ष्मीनरसिंह कोडिहाल, तृ० । ६७३ गुरसिद्दय्या चौकीमठ, तृ० । ६७७ एस. रंगस्वामी, द्वि० । ६७८ एस. जि. नरसिंह मूर्ति, द्वि० । ६७९ एस. जि. अनन्त सुब्बाराव, तृ० । ६८२ सुखराम "कुलचन्द", द्वि० । ६८३ पत्तराम शर्मा, द्वि० । ६८४ मणिराम शर्मा, द्वि० । ६९२ देशराज शर्मा, तृ० । ६९३ चन्द्रमणि शर्मा, तृ० । ६९५ मग्घर सिंह, द्वि० । ७०७ तेजप्रकाश गिर, द्वि० । ७१४ सत्यपाल मोंगा, तृ० । ७६५ बलराम तिवारी, तृ० । ७६६ करिगाण श्रीनिवासकामात,प्र० । ७६७ यु० सुन्दर पण्डित, तृ० । ७६९ चालस एच. लोवो, तृ०। ७७० पि० वरदायनायक, द्वि० । ७७३ वि० नरेन्द्र आचार्य,द्वि० । ७७४ बि० पुण्डलीक नायक, तृ० । ७७५ सि०पाण्डुरंगराव, द्वि० । ७७६ के० प्रभाकर, तृ० । ७७८ अनन्त भट्ट एम, द्वि० । ७७९ के० गोविन्द जोशी, तृ० । ७८० बि० विट्ठलराव, द्वि० । ८२२ विद्याराम शर्मा, द्वि० । ८२३ राजकुमार सिंह, तृ० । ८२४ रोशनलाल आर्य, द्वि० । ८२५ रामदयाल गोयल, तृ० । ८३० ओंमप्रकाश आर्य तृ० । ८५२ खेमचन्द शर्मा, तृ० । ८६० घूरेलाल जैन, तृ० । ८६४ रतनलाल, द्वि० । ८७०-बलदेव सिंह, तृ० । ८७१ महावीर दत्त शर्मा, तृ० । ८७३ मदन सिंह वर्मा, द्वि० । ८७५-पुष्करदत्त श्रोत्रिय, द्वि० । ८७६ वेदेश्वरी देवी शर्मा, द्वि० । ८८० शकुन्तला देवी शर्मा,-द्वि० । ८८३ रामस्वरूप शर्मा, तृ० । ८८४ जयन्तकुमार शुक्ल, द्वि० । ९०० मगनलाल, द्वि० ९१२ रमणीकलाल, तृ० । ९५७ जगदीश प्रसाद, तृ० । ९६० रामावतार लक्षकार, द्वि० । ९६१ गिरिजाशंकर द्विवेदी, द्वि० । ९६४ बखतराम, तृ० । ९६५ थांवरदास, तृ० । ९८५-देवचन्द्र सेन, तृ० । ९८६ कुँवरसिंह, द्वि०। ९८७ वैकुण्ठनारायण तिवारी, तृ० । ९८८ रामदत्त अवस्थी, तृ० । ९८९ इन्द्रजीतसिह कुशवाहा, तृ० । ९९० रामकृष्ण शुक्ल, तृ० । ९९१-धर्मकिशोर मिश्र, द्वि० । १००० किशोरीलाल गुप्त, तृ० । १०३८ वजरंग भारती, द्वि० । १०४७ श्रीनारायण शर्मा, द्वि० । १०५३ सुदर्शनप्रसाद त्रिवेदी, द्वि० । १०५८ जगदीशनारायण शर्मा, तृ० । १०६१ हरफूल सिंह, द्वि० । १०७४ बसलिंगय्य, तृ० । १०७५ मरूलसिद्धय्य, तृ० । १०७६ फक्कीरय्य, द्वि० । १०७७तुलजाराम, तृ० । १०७८ बाबूराव, तृ० । १०८१ निजगुणि, द्वि० । ११०६ विद्यावती अग्रवाल, द्वि० । ११०७ उर्मिलाकुमारी दिलावरी, द्वि० । ११०८ सुदर्शनकुमारी दिलावरी, द्वि० । ११०९ विजयलक्ष्मी चौधरी, तृ० १११२ तेजकुमारी, तृ० । ११२० ओंप्रकाश शर्मा, द्वि० । ११२१ नेमीशरण, द्वि० । ११२५ बाबूराम शर्मा, द्वि० । ११३० जगदीश प्रसाद वर्मा, द्वि० । ११३१ ठाठसिंह, द्वि० । ११३२-भीमसेन कपाही, द्वि० । ११३९ धीरसिंह वर्मा, द्वि० । ११४० गोपाल पाठक, तृ० । ११४१-

रमेशदत्त गौतम, तृ० । ११४२ धर्मवीर दत्त शर्मा, द्वि० । ११४६ देवदत्त शर्मा, द्वि० । ११४७ राजेन्द्र प्रसाद शर्मा, द्वि० । ११५२ रघुवीर शरण शर्मा, तृ० । ११५३ स्वामी ध्यान-प्रकाश, द्वि० । ११५४ जगदीश प्रसाद, द्वि० । ११५५ सोमप्रकाश शर्मा कौशिक, द्वि० । ११६४ जगतसिंह, द्वि० ।

(ख) आयुर्वेदभिषक् प्रथमखण्ड परीक्षोत्तीर्णाः—६ बजरंगलाल। ७ रामनिवास-हुडोल । ९ नन्दलाल माथुर । १२ राममान सिंघाणी । ३२ रामनिवास शर्मा । ५२ मोहनलाल वर्मा । ५३ तुलसीराम शर्मा । ५९ बलबीर सिंह कुकरंजा । ६६ मोहनलाल घर । ६८ दसौंधीराम शर्मा । ६९ समासिंह । ७३ व्रजकुमार कुलश्रेष्ठ । ७४ श्रीपाल शर्मा । ७५ वीरेन्द्र-कुलश्रेष्ठ । ७६ कोमलप्रसाद गोस्वामी । ७७ रमेशचन्द्र शर्मा । ७९ हुकम सिंह वर्मा । ८० चेतन स्वरूप जैन । ८१ अमरसिंह । ८३ मूलजी पथुजी । ८६ नारायणदास मगनलाल । १०० रमेश के. भट्ट । १०१ मंगलदास । १०२ छगनलाल । १११ कजोडमल गुप्त । ११२ दीपचन्द यादव । ११३ प्रहलाद प्रसाद गुप्त । ११४ घासीराम गुप्त १२१ भंवरपाल सिंह । १२२ किशनस्वरूप शर्मा । १२३ अम्बादत्त शर्मा । १२७ रोहनलाल मिश्र । १३३ अमर-चन्द जैन । १३९ महेशनारायण । १४४ श्रीकृष्ण सोहनी । १४५ पुष्पलाल । १४६ मनुदेव-तिवारी । १४७ रामकृष्ण शर्मा । १४८ रामकृष्ण शुक्ल । १५० रामाधार कटोर । १५१ चिन्ता मण पंचभाई । १५२ चम्पालाल शर्मा । १५३ मोतीलाल शर्मा द्विवेदी । १५६ माणिकलाल दिसावाल । १५८ कन्हैयालाल गुप्त । १५९ चौथमल बरमोटा । १६६ श्री रामदास सोलंकी । १६७ सूरजमल जैन । १७० माधवलाल पाटीदार । १७२ केशव प्रसाद । १७५ शिवप्रसाद तिवारी । १७७ रविशंकर पचोरी । १८१ रामेश्वर दयाल शर्मा । १८५ नन्दकिशोर शर्मा । १९७ मनोहर लाल शाह । १९८ विनायक ओझा । १९९ जमनालाल शर्मा । २०१ कलावती महात्मा । २०३ नत्थूलाल शर्मा । २०९ इन्द्रदेव व्यास । २११ जोधराज मान्डावत । २१५ यमुनाप्रसाद दाधीच । २१८ चन्द्र शेखर त्रिपाठी । २३३ गुडिवाडवेंकटस्वामी । २३८ शिवकली देवी । २४२ श्यामशरण शर्मा गौड । २५३ कैलाश-नाथ द्विवेदी । २५४ रामशंकर त्रिपाठी । २६० त्रिलोकचन्द्र पंचोली । २६४ बजरंगलाल शर्मा २६८ हरगोविन्द पारीक । २६९ गजानन्द पारीक । २७० प्रभुलाल गुप्त (राही) । २७२ पुरुषोत्तमलाल मेहता । २८३ हरिभाऊ पटील । २८४ वासुदेव शर्मा कटारे । २८५ छदामीदास । २८६ राजबाबू । २९४ मेहता नवल शंकर । २९५ राजाणी जितेन्द्र । ३०५ लक्ष्मीशंकर दुवे । ३०८ पटेलठाकुरसी । ३१३ महेता जन्मशंकर । ३१५ त्रिवेदी नर्मदाशंकर । ३१६ दवे शान्तिलाल । ३१९ रमण गौरी दवे । ३२३ गोस्वामी यशवन्त गिरी । ३४१ धर्मपाल शर्मा । ३४२ सुशीला सैनी । ३४३ हरदीप सैनी । ३४४ कमला शर्मा । ३४६ सन्तोष कुमारी शर्मा । ३४७ वलदेव प्रसाद । ३४८ पुष्पानारंग । ३४९ सन्तोष चोपडा । ३५० शान्ता कपूर । ३५१ सन्तोष भाटिया । ३५२ सुरेन्द्र कुमारी । ३५३ सुदेशकुमारी-शर्मा । ३५४ रमेशचन्द्र । ३६५ किशनाराम । ३६६ बजरंगलाल शर्मा । ३७२ घनश्याम दास । ३७३ बालकृष्ण सोनिलिया । ३७४ रामकृष्ण कुमार । ३७७ वृन्दावन अग्रवाल । ३७८

बिलायतीराम सिंगल। ३८० सतीशचन्द्र मिश्रा। ३८४ लोकनाथ शर्मा। ३८६ जगदीशचन्द्र शर्मा। ३९८ उर्मिला सेठ। ३९९ बनवारीलाल। ४०८ बाबूलाल शर्मा। ४१० भूदेवप्रसाद-शर्मा। ४१५ मातुराम भारद्वाज। ४१८ भंवर सिंह। ४२१ जयकृष्ण शर्मा। ४२३ मोहन-लाल ढींगरा। ४२४ बलवीर सिंह। ४२५ करम दास। ४२८ राजकुमारी शर्मा। ४३१ मदनमोहन जैन। ४४० बलवीर कुमार नारद। ४४२ रामचन्द्र। ४४४ दुर्गादत्त शर्मा। ४४८ देवीप्रसाद शर्मा। ४५१ अरुणकुमार दीक्षित। ४६८ रामएकबाल सिंह। ४७५ विहारीलाल गुप्त। ४७७ जयनारायण गुप्त। ४८० लछमन सिंह। ४८३ नारायणदत्त-शर्मा। ४८४ सुनहाराम शर्मा। ४८७ ओंप्रकाश मलिक। ४९० विमला देवी शर्मा। ४९१ सत्यप्रसाद जोशी। ४९७ जुगतीराम। ४९८ नगेन्द्रदेव शर्मा। ५०४ सुलतान सिंह। ५०५ विष्णुकुमार शर्मा। ५०८ गिरधारी लाल शर्मा। ५१३ जीवनलाल शर्मा। ५१५ सत्यदेव-सिंह। ५१७ मारकण्डेय मिश्र। ५२२ देवनारायण शुक्ल। ५२५ इन्द्रभान पटेल। ५२९ महन्त रामलोचन दास। ५३४ मंगलदास। ५४० भानुप्रसाद। ५४१ चिमन भाई। ५४३ नर्मदाशंकर पण्डया। ५५२ सरलाबेन। ५५४ शम्भुनाथ त्रिपाठी। ५५५ कैलाशनाथ पाण्डेय। ५५६ विश्वनाथ प्रसाद। ५५७ भगवन्ती देवी। ५५८ केशवदत्त पाण्डेय। ५५९ मनसाराम। ५६५ काशीनाथ पाण्डेय। ५७५ रामजी प्रसाद वर्मा। ५७६ जयन्ती प्रसाद। ५८५ कुमारी सरोज दलाल। ६१६ गुरदियाल सिंह। ६१७ कुन्दन लाल शर्मा। ६२४ शमशेर सिंह गिल। ६२५ दयावती अहलूवालिया। ६२६ हरकृष्ण नाभ। ६३८ बसलिंगय्य। ६३९ स्वामी कृष्णानन्द। ६४५ मुरलीधर श्रीमाली। ६५२ सिद्रमप्पा पेरली। ६५४ चनवास वार्य सोप्पीमठ। ६५५रामचन्द्रप्पा सोप्पीन। ६५७ वासेपा गलगली। ६५८ शिवशरणप्पा गुब्याड। ६५९ प्रमथनाथ। ६६३ मल्लप्पा रकरड्डी। ६६४ मुदकप्पा हीरेमठ। ६६५ बसय्या हीरेमठ। ६६६ हालय्या पाटील। ६६७ शेखरय्या नरेगलमठ। ६६८ पन्नय्या नरेगलमठ। ६६९ शांता बाई। ६७० यलप्पा कट्टीमनी। ६७६ वि. आर. राजगोपाल। ६८० एम.एन. कृष्णमूर्ति। ६८५तोलाराम शर्मा। ६८८रामानन्द सागवान। ६९१ सरस्वती शर्मा गौड़। ६९६ प्रेमनाथ अग्रवाल। ६९७ चिम्मनलाल। ७०० सोहनलाल शर्मा, शारद। ७०१ मेहरचन्द मार्कण्डेय। ७०२ प्रीतमसिंह ढिल्लो। ७०५ सेवादास सन्त। ७१०ठाकुरदास अग्रवाल। ७११ रामकृष्ण शर्मा। ७१२ मेघनाथ। ७१३ देवीदयाल। ७१६ वासुदेव चतुर्वेदी। ७२१ लेखराम आर्य। ७२२ शिवप्रतापसिंह वर्मा। ७२३ परमेश्वरी देवी। ७२४ रामस्वरूप। ७३३ रमेशचन्द्र अग्धी। ७३४ हरभगवानवत्रा। ७४८ भीमराव नारखेडे। ७५९ कृष्णराव कुरकुटे। ७८१ एम. वेंकटेश कामत। ७८३ सर्वोत्तम शेणै एम.। ७८४ देवदास आर० किणी। ७८७ अ. केशव प्रभु। ७८९ के. रामकुवणराय। ७९० वेंकटेश नरसिंह भट्ट। ७९२ टि. बालकृष्ण भट्ट। ७९४ यम. पि. वेंकट कृष्णराव। ७९५ वि. अप्पय्याबल्याया। ७९८ वि. जितेन्द्रनाथ वालिगा। ८०० ए. के. नागलक्ष्मीराव। ८०२ यम. विश्वनाथ शेट्टी। ८०७ भगवानवल्लभ गौड़। ८११ प्रेमशंकर शर्मा त्रिवेदी। ८१२ श्योराज शर्मा गौड़। ८१३ अर्जुनसिंह गौड़। ८१४ वेदप्रकाश शर्मा शुक्ल। ८१५ निरंजनलाल वर्मा।

८१६ शंकरलाल अग्रवाल। ८१७ रमेशचन्द्र शर्मा गौड़। ८१८ दफेदार शर्मा। ८२७ रणछोड़लाल मिश्र। ८४२ शान्तकुमार शर्मा। ८५७ कैलाशचन्द्र शर्मा। ८६३ ओमप्रकाश शर्मा भारद्वाज। ८६६ वेदकुमारी। ८६७ स्वदेशकुमारी। ८७९ महात्मा अभेद सुखानन्द। ८८१ चेतनसिंह यादव। ८८२ परशुराम शर्मा। ८८५ दुर्गाशंकर पंचोली। ८९१ सुखदेव। ८९५ मोहनलाल। ८९६ मूलशंकर। ८९९ मोहनलाल। ९०१ त्रिवेदी कुन्दनराय। ९०४ महेन्द्रकुमार। ९०५ अमृतलाल। ९०८ चुन्नीलाल। ९०९ डाह्यालाल। ९१० मोहनलाल पाण्डया। ९१५ हरिलाल। ९१६ कनक राय। ९१७ कान्तीलाल। ९१८ दयाल जी। ९१९ जेठालाल। ९२२ नानजी। ९२३ नरसिंह। ९२४ महाराणीदास। ९२५ नरोत्तमदास। ९२७ नाथालाल। ९२८ मुकुन्दराय। ९३१ माधवदास। ९३२ केशव। ९३३ नरहरिदास। ९३९ भमिडिपल्ली वेंकट लक्ष्मीप्रसाद राव। ९४० कुक्कलपुल्लय्या। ९६२ सेवाराम नावाणीं। ९७८ रामप्रकाश द्विवेदी। ९८० सोमेश्वरप्रसाद पाण्डेय। ९८३ सत्यप्रसाद पालीवाल। ९९५ रामलाल वर्मा। ९९६ रामदुलारे वर्मा। ९९७ विष्णुदत्त पाण्डे। ९९९ मनोहरलाल मिश्र। १००१ श्रीदत्त गौतम। १०१३ चोल्लेटिराम शर्मा। १०१४ त्रिपुरारी वेंकटेश्वर शर्मा। १०१६समुद्राल विष्णु, चित्ताचार्य। १०१८ वलस मल्लप्य। १०२०दंडापन्तुल वेंकटेश्वर शर्मा। १०२१ कोंडा वेंकट नरसय्या। १०२३ डिङ्गरी चलमाचार्युलु। १०२६ जानकी नाथ जिज्ञासु। १०२७ जयलाल भट्ट। १०२८ रूडमल शर्मा। १०६९ सीताराम शर्मा। १०८० गणपति। १०८३ बीरय्य रुद्रय्य हिरेमठ। १०८५ कैलाशचन्द्र पुरोहित। ११०१ कैलाशकुमारी। ११३३ अनुसूयाप्रसाद मैठानी। ११३६ जगतसिंह मेहता। ११५० पूर्णमल शर्मा। ११७३ रामकल्याण शर्मा।

(ग)आयुर्वेद भिषक् परिशिष्ट परीक्षाधिकारिणः—२२ रामप्रकाश सोनी, काय०। ५४ सोहनलाल शर्मा जोशी, द्रव्य०। ६१ शम्भुनाथ शर्मा, द्रव्य०। ६२ कर्तार सिंह स्वा०। ७१ शंकरलाल वर्मा, द्रव्य०। ७२ विमला देवी द्रव्य०। ७८ सरवन सिंह, द्रव्य०। ९० रमा-वहेन, प्रसूति०। १०९ पूरनचन्द शर्मा, द्रव्य०। १३१ परमोलीराम, शल्य०। १७६ उमाशंकर शांडिल्य, मौ०। १९५ शिवनारायण व्यास, द्रव्य०। २१३ गोपीलाल जोशी, रोग०। २२६ डी. वी. सुब्बाराओ, अगद०। २३१ नारायणम् श्रीनिवासचार्लु, स्वस्थ०। २३९ शिवकुमार शुक्ल, द्रव्य०। २५६ घनश्यामदास शर्मा, रोग०। २९६ छगनदास निम्बार्क, अगद०। ३१७ वणिता मणिलाल बोरा, द्रव्य०। ३२६ वसन्तराय भट्ट, कौमार०। ३५७ विद्यावती देवी, द्रव्य०। ३५८ प्रतापसिंह बोराणा, द्रव्य०। ३६१ दाउलाल व्यास, द्रव्य०। ३६३ रामधन शर्मा, शारीर०। ३८२ लोकनाथ अरोरा, शल्य०। ३९५ जयभगवान शर्मा, मौ०। ३९६ अमरसिंह, मौ०। ४०० सूरजभान, द्रव्य०। ४०३ जसवन्तसिंह, मौ०। ४१३ लक्ष्मीरमण तिवाड़ी, मौ०। ४१९ महेशदत्त शर्मा, द्रव्य०। ४७६ गुलजारीलाल सांगा, रोग०। ४८१ चन्द्रप्रकाश शारीर०। ५२१ देवीप्रसाद शर्मा, द्रव्य०। ५३० शुकदेवप्रसाद मिश्र, शल्य०। ५३१ लक्ष्मी-कान्त शुक्ल, स्वस्थ०। ५३५ भाईशंकर, मौ०। ५९२ गिजुभाई जोशी, कौमार०। ५९६ श्रीनारायण मिश्र, द्रव्य०। ६३३ ललिताप्रसाद, शल्य०। ६४७ श्यामसुन्दर वर्मा, शल्य०।

७६१ नारायणप्रसाद पाण्डे, द्रव्य० । ७६८ एम. रामदास मारुति शेट्, अगद० । ७८६ यु. ए. कृष्ण, रोग० । ८१० रतिराम शर्मा गौड़, द्रव्य० । ८१९ चन्डीप्रसाद शर्मा, द्रव्य० । ८२० गजराज शर्मा, द्रव्य० । ८२६ केवलराम शर्मा द्रव्य० । ८३४ शालिग्राम पाठक, द्रव्य० । ८५१ रामकिशोर शर्मा, द्रव्य०। ८६३ रामजीलाल शर्मा, द्रव्य० । ८६८ राधाकृष्ण ठकराल, द्रव्य० । ९०२ अश्विनकुमार, शारीर० । ९०३ राम्रोल दलीपसिंह, शारीर०। ९३४ नागदान, द्रव्य० । ९५५ उर्मिलाप्रसाद तिवारी, शारीर० । ९७९ रामफल यादव, द्रव्य० । ९९३ गंगाधर त्रिपाठी, द्रव्य० । १०४८ किशनलाल गुप्ता, शारीर० । १०५२ गौरीशंकर हरीतवाल, शल्य० । १०५९ किशनलाल शर्मा, द्रव्य० । १०६३ पन्नालाल दाधीच, शल्य० । १०९७ कु. रमा वर्मा, द्रव्य०। ११०२ सरस्वती शर्मा, द्रव्य० । ११०४ विद्याकुमारी चौधरी, द्रव्य० । ११३८ धर्मवीर शर्मा, काय० । ११४८ ताराचन्द शर्मा, द्रव्य० । ११६८ मांगीलाल छिपा, द्रव्य० ।

विशेषः—१--नागपुर तथा रायपुर परीक्षा केन्द्रों एवं मराठी भाषा के परीक्षार्थियों का परिणाम अभी तक तैयार नहीं हुआ । उसे पत्रिका के आगामी अंक में प्रकाशित किया जायगा ।

२--कानपुर परीक्षा केन्द्र के आयुर्वेदाचार्य द्वितीय खण्ड के परीक्षार्थियों के परीक्षा परिणाम की घोषणा तब तक स्थगित है जब तक उस केन्द्र के विषय की जांच की रिपोर्ट पर विचार होकर निश्चय नहीं हो जाता ।

३--आगामी परिशिष्ट परीक्षायें २४ सितम्बर १९५६ को सम्पन्न होंगी । तत्सम्बन्धी सूचना इसी अंक में अन्यत्र प्रकाशित है ।

नानक चन्द्रः
विद्यापीठ मन्त्री

चीनाफल

अभी कुछ दिन पूर्व वैद्यरत्न कविराज श्री प्रतापसिंह जी रसायनाचार्य ने, जो वनस्पति गवेषणा तथा संशोधन में विशेष रुचि रखते हैं, एक फल का नमूना हमें भेजा है इसे निरंजनफल अथवा चीन से आने के कारण चीनाफल भी कहते हैं ।

कविराज जी के कथनानुसार यदि एक चीना फल को १ छटांक पानी में भिगोकर रात्रि में रख दिया जाय और प्रातः उसी पानी में घोटकर रुचि के अनुसार मिश्री मिलाकर रक्तार्श के रोगी को पिलाया जाय तो अच्छा लाभ करता है ।

क्या अन्य वैद्य-बन्धुओं को इस फल का ज्ञान है ? यदि है तो कृपया अपने अपने अनुभव पत्रिका द्वारा प्रकाशित करने की कृपा करेंगे, ऐसी प्रार्थना है ।

कविराज स्वामी चेतनानन्द
प्रधान सम्पादक
आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका

विद्यापीठ के उपमंत्री वैद्य श्री सीताराम जी मिश्र आयुर्वेदाचार्य "आयुर्वेद मार्तण्ड" की उपाधि से विभूषित

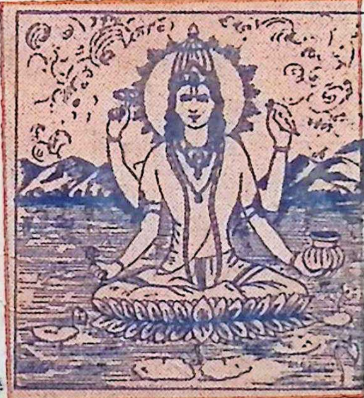
हरिनगर, २३-५-५६। आज हरिनगर सुगर मिल्स में गायत्री के पुरश्चरन की समाप्ति के अवसर पर अपार जनसमूह के बीच काशी और चम्पारन के वैद्यों द्वारा वैद्य श्री सीताराम जी मिश्र आयुर्वेदाचार्य, बम्बई-जयपुर को "आयुर्वेद मार्तण्ड", की उपाधि से विभूषित किया गया। काशी के लब्ध प्रतिष्ठ विद्वान् श्री पूरनचन्द्र जी आचारी की अध्यक्षता में आप को एक अभिनन्दनपत्र भी समर्पित किया गया, जिसके लिए आभार प्रदर्शित करते हुए आपने कहा कि भारतीय जनता का स्वास्थ्य आयुर्वेदिक चिकित्सा से ही समुन्नत हो सकता है। यह पद्धति जनसाधारण के लिए सर्वाधिक सुलभ है। आपने कहा कि अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन-विद्यापीठ ही समस्त भारतीय वैद्यों की एकमात्र प्रतिनिधि संस्था है। इस संस्था के द्वारा ही सच्चा आयुर्वेदिक स्वराज्य प्राप्त होगा। अतएव जनता तथा वैद्यों को संस्था की हर प्रकार से सहायता करनी चाहिए। वैद्यों को चाहिये कि अधिकाधिक संख्या में इसके सदस्य बनकर इसे पुष्ट बनायें।



स्मरण रहे वैद्य श्री सीताराम जी मिश्र आयुर्वेद के प्रचार तथा प्रसार के निमित्त निरन्तर प्रयत्नशील हैं। आपके सुप्रयत्नों के परिणामस्वरूप ही देहली, चांदनीचौक, तथा जयपुर में स्व० सेठ श्री बेनीप्रसाद जी जयपुरिया की पुण्य स्मृति में धर्मार्थ औषधालय स्थापित हुए जहां के आप प्रधान चिकित्सक हैं। आपकी प्रेरणा से ही हरिनगर में मिल के संचालक राजा बहादुर नारायणलाल जी पित्ती द्वारा आपकी अध्यक्षता में एक आयुर्वेदिक केन्द्र की स्थापना की गई है। आज से १५ वर्ष पूर्व फतहपुर में संस्थापित राजस्थान ग्रामोद्वार संघ के आप ही संस्थापक तथा संचालक हैं। इस संघ द्वारा जनता की महान् सेवाएं की जा रही हैं। फतहपुर में स्थायी औषधालय के अतिरिक्त इसके अन्तर्गत समय-समय पर आवश्यकतानुसार विभिन्न स्थानों पर चिकित्सा शिविर खोल कर जनता को चिकित्सा का लाभ पहुंचाया जाता है। आपकी प्रेरणा से एक औषधालय "भारतीय आयुर्वेदिक औषधालय" के नाम से बैंड स्टैंड, चौपाटी, बम्बई में चल रहा है। इसकी स्थापना में आपका पूर्ण सहयोग रहा है। इस प्रकार आपने आयुर्वेद की विविध सेवायें की हैं। चिकित्सक क्षेत्र में भी आपकी विशेष ख्याति है। महासम्मेलन विद्यापीठ की उन्नति में आपकी विशेष रुचि है तथा इसके लिए आप प्रयत्नशील भी हैं। संस्था तथा वैद्य समाज को भविष्य में भी आप से अनेक आशायें हैं।

आयुर्वेद

महासम्मेल[illegible] पत्रिका



ुलाई
५६

आषाढ़
२०१३

प्रधान सम्पादक—कविराज स्वामी चेतनानन्द चिदाकाशी, आयुर्वेदालंकार
उप सम्पादक—कविराज हरिकृष्ण सहगल, वैद्यवाचस्पति

शुद्ध बंसलोचन



बंसलोचन अपने प्रभावकारी गुणों के कारण आयुर्वेद जगत में विशेष प्रचलित है तथा वृद्ध, बाल, युवा, स्त्री-पुरुष प्रायः इसका सेवन करते हैं। जावा, सुमात्रा के सघन जंगलों में बड़े कष्ट से बांस से निकाली जाने वाली यह औषधि तवासीर अथवा बांस कपूर के नाम से भी प्रसिद्ध है। इसमें कैलशियम प्रचुर मात्रा में होती है। स्त्रियों में गर्भावस्था के कारण बहुधा कैलशियम की कमी होकर रक्त संचार धीमा पड़ जाता है जिससे रक्ताल्पता, मुखपर पीलापन, आलस्य, किसी कार्य में मन न लगना तथा क्षय आदि भयंकर रोग हो जाते हैं—ऐसी अवस्था में बंसलोचन का सेवन अनिवार्य रूप से करना चाहिये। यह कैलशियम की कमी का पूरक तथा बलवर्धक भी है। प्रसवके पश्चात् माता और शिशु दोनों स्वस्थ और सुगठित रहते हैं।

बंसलोचन दूध अथवा मधु के साथ देने से बच्चों की अस्थियों को पुष्टि तथा बढ़ाव को प्रोत्साहन देता है। युवकों के लिये अति पौष्टिक वीर्यवर्धक है और वृद्धों को भी विशेष शक्ति प्रदान करता है। प्रकृति की मानव को यह अद्भुत व अमूल्य देन है। किन्तु दुख का विषय है कि आज बाजार में विशुद्ध बंसलोचन का मिलना असम्भव ही हो गया है—सोडा सिलीकेट (जिससे साबुन बनता है) तथा सल्फेट आफ अमोनिया जैसी अखाद्य एवं हानिकर वस्तुओं से बनाया नकली बंसलोचन ही प्रायः मिल रहा है। ऐसी नकली वस्तुओं के प्रचलन से ही आयुर्वेद कलंकित होता है।

हमें जनता का पूर्ण विश्वास, रुचि व आयुर्वेद के प्रति प्रेम मिल सकता है यदि हमारे देश के वैद्य एवं औषधि निर्माण शालायें अपने कर्त्तव्य को समझें और लोभ का त्यागकर पूर्ण विशुद्धता की ओर ध्यान दें। इसी दृष्टिकोण को लेकर हमने बाँस से निकला हुआ बाँस के जंगल मार्का असली बंसलोचन सील बन्द डिब्बों में बेचना प्रारम्भ कर दिया है जिससे जनता अखाद्य तथा हानिकारक नकली बंसोलचन से बच सके। जनता, वैद्य तथा निर्माण संस्थाओं से हमारा अनुरोध है कि वे अपनी औषधियों के लिये लखपतराय सम्पत राय साध कलकत्ते वालों का बाँस मार्का असली बंसलोचन ही दुकानदारों से माँगें। पाव आध पाव के पैकिंग में सर्वत्र प्राप्य है। जनता के हितार्थ सं० १९८७ से निरन्तर सेवारत एकमात्र असली बंसलोचन का कारखाना—

लखपतराय सम्पतराय साध, कलकत्ता—७

Editor-in-Chief—Swami Chetnanand.

अ०भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के लिए कविराज स्वामी चेतनानन्द द्वारा प्रकाशित,

विषय सूची

लेखकों से अनुरोध

(१) पत्रिका के लिए आयुर्वेद विज्ञान के विविध अंगों के सम्बन्ध में तुलनात्मक, गवेषणापूर्ण और आयुर्वेद गौरव-प्रदर्शक लेख भेजें। (२) वर्तमान शासन द्वारा आयुर्वेद के प्रति किए जा रहे पक्षपात पूर्ण व्यवहार के विरोध में युक्तियुक्त सप्रमाण लेख भेजें। (३) महासम्मेलन और वैद्य समाज के संगठन को पुष्ट करने वाले लेख, प्रान्तीय सम्मेलन तथा जिला, नगर व ग्राम वैद्यसभाओं के समाचार भेजें, (४) लेख पृष्ठ के एक ओर हाशिया छोड़कर, सुस्पष्ट और शुद्ध भाषा में हों। (५) अप्रकाशित लेख को वापस मंगवाने के लिए आवश्यक डाक-व्यय साथ भेजें। (६) लेख के प्रकाशन का अन्तिम निश्चय सम्पादक ही करता है। (७) अपने लेख की प्रतिलिपि अपने पास अवश्य रखें।

ग्राहकों से अनुरोध—पूरी सावधानता और देखभाल के बाद दायित्वपूर्ण व्यक्ति के हाथ पत्रिका डाक घर में पहुँचाई जाती है। न मिलने पर पहले अपने स्थान के डाक घर को लिखित शिकायत भेजें। डाक घर से प्राप्त उत्तर के बाद ही महासम्मेलन कार्यालय से पत्र-व्यवहार करें।

महासम्मेलन को १०१ रु० का दान

वैद्यराज श्री वेंणीमाधव शास्त्री जोशी, अध्यक्ष, अनुसंधान विभाग, नागपुर विश्वविद्यालय, नागपुर, ने अपनी जन्म तिथि के उपलक्ष्य में अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन को १०१) रु० भेंट किये हैं—आपने उन सभी संस्थाओं को कुछ न कुछ, धनराशि भेंट स्वरूप भेजी है जिन्हें वे अपनी उन्नति में सहायक समझते हैं—आप नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ के आयुर्वेदाचार्य हैं तथा अनेक वर्षों से महासम्मेलन के सदस्य हैं। शास्त्री जी की इस उदारता तथा कृतज्ञता की भावना के प्रति हम हार्दिक धन्यवाद प्रकट करते हैं।

शास्त्री जी ने अपने जीवन के प्रारम्भ काल से ही विविध प्रकार की राष्ट्रीय एवं सामाजिक सेवायें की हैं—सन् १९२७ में असहयोग आन्दोलन में भाग लेने के लिये आपने सरकारी नौकरी का परित्याग कर दिया था। तदुपरान्त खादी केन्द्र में खादी उत्पादन तथा ग्रामों में कांग्रेस का प्रचार करते रहे। आयुर्वेद का अध्ययन आपने आर्यांग्ल वैद्यक महाविद्यालय सतारा, में किया तथा अहमदनगर में गुरु बायवारू जी और गु० आ० पं० गुणे जी के पास आयुर्वेद का विशेष अध्ययन किया। नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ की आयुर्वेदाचार्य परीक्षा उत्तीर्ण की। आप कई आयुर्वेदीय शिक्षण संस्थाओं में आयुर्वेदाध्यापन का कार्य कर चुके हैं तथा अनेक प्रसिद्ध फार्मेसियों के डायरेक्टर बोर्ड के अध्यक्ष रहे हैं। सतारा की 'आयुर्मीमांसा' नामक प्रसिद्ध आयुर्वेदीय पत्रिका के आप ही प्रवर्तक हैं और उसके प्रधान सम्पादक रह चुके हैं। १९४० में महाराष्ट्र प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन के अध्यक्ष चुने गए। १९३४-३५ और फिर १९४०-४१ में आयुर्वेद प्रचारार्थ विस्तृत दौरे किये। आप बम्बई आयुर्वेदिक एण्ड यूनानी सिस्टम्ज पोस्ट ग्रेजुएट कमेटी के सदस्य भी रहे हैं। १९५१ से ५५ तक बम्बई आयुर्वेदिक एण्ड यूनानी बोर्ड तथा फैकल्टी के सदस्य रहे। बम्बई में शुद्धायुर्वेद आन्दोलन में आपने श्री पं० शिवशर्मा जी तथा श्री वामनराव दीनानाथ जी आदि के साथ कार्य किया। १९५३ में आप नागपुर युनिवर्सिटी में "रीडर इन आयुर्वेदिक रिसर्च" नियुक्त किये गये जहां आप अब भी आयुर्वेदिक संशोधन का कार्य कर रहे हैं। आयुर्वेद सेवा संघ नासिक के आप २ वर्ष से अध्यक्ष हैं।

आपके गवेषणापूर्ण लेख अनेक आयुर्वेदीय पत्रों, दैनिक तथा साप्ताहिक पत्रों में प्रकाशित होते रहते हैं। अपनी चिकित्सा में आप सदैव वनस्पति तथा सिद्धौषधियों का व्यवहार करते हैं।

भगवान् आपको चिरायु करे हमारी यही शुभ कामना है।

।। धन्वन्तरयेनमः ।।

यत्प्रभापटलोद्भासि भासतेऽद्यापि भारत ।

आयुर्वेदात्मकं ज्योतिः शाश्वतं नः प्रकाशताम् ।।

आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका

(अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन का मासिक मुख-पत्र)

प्रधान सम्पादक—कविराज स्वामी चेतनानन्द चिदाकाशी, आयुर्वेदालंकार

उप-सम्पादक—कविराज हरिकृष्ण सहगल, वैद्यवाचस्पति

पत्रिका कार्यालय—महालक्ष्मी मार्केट, चांदनी चौक, देहली ।

तार का पता "आयुर्वेद" दिल्ली

वर्ष ४३ अंक ७ — दिल्ली, आषाढ़ २०१३, जुलाई १९५६ — वार्षिक ५) एकप्रति ।।)



दूसरी पंचवर्षीय योजना और आयुर्वेद की उन्नति

राजवैद्य श्री जीवराम कालीदास जी शास्त्री के दर्शन प्रथम बार आल इण्डिया आयुर्वेदिक कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन के समय हुये थे, दूसरी बार आपको मिलने का सौभाग्य राजकोट सम्मेलन पर हुआ और तीसरी बार बड़ौदा सम्मेलन में हम राजवैद्य जी को एक सन्यासी के वेश में देख कर पहचान ही न सके। अब आपका नाम श्री चरणतीर्थ महाराज है। आपने भारत सरकार को "दूसरी पंचवर्षीय योजना और आयुर्वेद उन्नति" के शीर्षक से एक योजना छपा कर भेजी है। इस ६३ पृष्ठ की पुस्तक की एक कापी हमारे पास भी आई है, हम आज उसकी कुछ झलकियां आपके सामने उपस्थित करते हैं।

आरम्भ में शास्त्री जी ने एक खुला पत्र राजकुमारी अमृतकौर के नाम से छापा है, इस पत्र की कुछ महत्वपूर्ण पंक्तियों में आपने बताया है कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना में स्वास्थ्य के लिये २६५ करोड़ रुपया रखा गया है। इसमें से आयुर्वेद, युनानी, होम्योपैथी

और नेचरपैथी पर ५ करोड़ रुपया खर्च किया जायेगा (नोट—यह राशी पांच करोड़ नहीं सात करोड़ है। इसमें से छै क्ररोड़ रुपया स्टेट्स और एक करोड़ रुपया केन्द्र देगा) और २६० करोड़ रु० ऐलोपैथी द्वारे व्यय होगा।

शास्त्री जी ने इस २६० करोड़ रु० के खर्च का हिसाब नहीं बताया, उसे हम बताये देते हैं, क्षय रोग के सैनिटोरियम या क्लिनिक ३००, अन्य चिकित्सा रोगी भवन ५, दन्त विद्या के कालेज ६, मिडवाइफ ट्रेंनिग ५०००, प्रादेशिक प्रयोग शाला २५०, क्षय रोगी शैय्या १५०००, मैडिकल कालेज १०, जिला के दन्त हस्पताल २५०, बड़ी प्रयोग शालायें २६, हैल्थ सर्विस एन० ई० ऐस० ब्लाक १००० तथा इन पांच वर्षों मे २०००० डाक्टर तैयार किये जायेंगे।

(इस समय भारत में ३५ मेडिकल कालेज हैं, उनमें २६०० छात्र प्रतिवर्ष प्रविष्ट होते हैं।)

एक कहानी है कि एक रईस ने अपने नौकर को रात्रि में दूध पिलाने को कहा। जब वह सो रहा था तो नौकर ने एक मासा मलाई रईस की मूछों पर लगा दी और दूध स्वयं पी गया। प्रातः रईस ने नौकर से पूछा कि उसने दूध क्यों नहीं पिलाया तो नौकर ने उत्तर दिया कि दूध उन्हें सोते में पिलाया गया है और अभी तक उसकी मलाई उनकी मूछों पर लगी है।

आयुर्वेद का विज्ञान ऐलोपैथी की तरह ४०० वर्ष नहीं ४००० वर्ष पुराना है। इसके द्वारा दीर्घ जीवन, पुनर्यौवन तथा पारद आदि का स्वर्ण में परिवर्तन प्राप्त होता है। इस आयुर्वेद के लिये २६५ करोड़ की मोटी रकम में से केवल ७ करोड़ का कुछ भाग प्लैनिंग कमीशन द्वारा रखना, अगर रईस की मूछों पर मलाई लगाने का फरेब नहीं तो क्या है?

इसी मई मास में प्लैनिंग कमीशन ने परामर्श के लिये आयुर्वेद, युनानी, होम्योपैथी और नेचरपैथी के ३१ प्रतिनिधियों को बुलाया था। प्लैनिंग कमीशन की इच्छा शायद एक तमाशा देखने को थी। यह तमाशा हरिद्वार में एक गुड़ का ढेला और १०-२० काष्ठ दण्डों को समीप रख कर लोग देखा करते हैं। परिणामस्वरूप ढेला ज्यों का त्यों रहता है परन्तु बन्दरों के शिर फट जाते हैं।

मगर यह तमाशा हो न सका। इन प्रतिनिधियों ने एक दूसरे पर कीचड़ उछालने की वजाय प्लैनिंग कमीशन से ही पूछ लिया कि वह क्या करना चाहता है। इस प्रकार प्लैनिंग कमीशन इस तमाशे से वंचित हो गया।

शास्त्री जी लिखते हैं कि भारत में जो ५ रिसर्च केन्द्र खोले गये हैं उनमें से अकेले जामनगर में १६-१७ लाख रुपया खर्च हो रहा है। यह रुपया ऐलोपैथी के हित के लिये है। यह आयुर्वेदिक रिसर्च नहीं।

श्री द० अ० कुलकर्णी जी ने केन्द्रीय आयुर्वेदिक अनुसन्धानशाला, जामनगर, के कार्यों का परिचय अपने एक लेख में इस प्रकार कराया है कि पंडित कमेटी के सम्मति के

आधार पर यह अनुसन्धान कार्य होता है। इस समय केवल पांडु रोग तथा उसके आनुषंगिक रोगों का अनुसन्धान कार्य चल रहा है। इस अनुसन्धानशाला में एक ओर आयुर्वेदिक सिद्धांतों के अनुसार अनुसन्धानिक दल काम करता है तो दूसरी ओर ऐलोपैथिक अनुसन्धानिक दल भी अपनी दृष्टि से काम कर रहा है। आयुर्वेदिक दल आयुर्वेदिक सिद्धान्तों के अनुसार (वात, पित्त, कफ) रोग निर्णय और औषध विवेचन करता है और ऐलोपैथिक दल रक्त, मूत्र, थूक टैस्ट तथा अन्य टैस्टों द्वारा इसका प्रभाव नापता है। यह सब रिपोर्ट संचालक के पास चली जाती है। चिकित्सालय में बहिराङ्ग विभाग तथा आन्तरिक विभाग हैं। यहां पांडु रोगों पर अनुसन्धान चल रहा है।

परन्तु इस अनुसन्धान विधि द्वारा अनुसन्धान से आयुर्वेद जगत को सन्तुष्टि नहीं। आयुर्वेद के विद्वान् चाहते हैं कि सर्व प्रथम आयुर्वेद के लुप्त साहित्य को प्राप्त किया जाये। सर्व भाषाओं के आयुर्वेदिक ग्रंथ रत्नों को जैसे कि संस्कृत, हिन्दी, अरबी, फारसी, इंगलिश, ग्रीक, जर्मन, फ्रैंच, चीनी, जापानी, तिब्बती, पाली, उर्दू, रोमन, बंगाली, मराठी, गुजराती, पंजाबी, भोजपुरी, तामिल, तेलगु, मलयालम, कनाडी, सिंहली, प्राकृत को इकट्ठा किया जाये। यवनकाल और इससे भी पूर्व जो आयुर्वेद के ग्रन्थ भारत से विदेशों में जा चुके हैं और आल इण्डिया लायब्रेरी, लन्डन, फ्रांस, जर्मन आदि की लायब्रेरियों में सजे हुये हैं उन्हें व उनकी प्रतियों को प्राप्त करके भारत में लाया जाये।

चरकादि के वात, पित्त, कफ, आदि दोष क्या हैं ? इनमें गुण व कार्य की उपलब्धि कैसे होती है ? आयुर्वेद का मुख्य सिद्धान्त यह त्रिदोष सिद्धान्त है। अगर इसका अनुसन्धान नहीं होता तो आयुर्वेदिक दृष्टिकोण से कोई अनुसन्धान नहीं होता।

आयुर्वेद को आवश्यकता है कि उसकी औषधियां शुद्ध हों। और यह तभी हो सकता है अगर इस पर अनुसन्धान हो। वैद्यों को शुद्ध औषधियों का परिचय कराया जाये। आयुर्वेदिक निघन्टु में जो कुछ अस्पष्ट आ गया है इसे स्पष्ट किया जाये। इसमें फारिस्ट का पूरा सहयोग लिया जाये। भारत में जो आयुर्वेदिक वनस्पति विशारद हैं उनसे संदिग्ध औषधियों के निर्णय में सहायता ली जाये।

भारत में अनेक लोग हैं जिनके पास चामत्कारिक गुप्त योग हैं। लामाओं के देश तिब्बत और उसके पास पड़ोस के देशों में बहुत चिकित्सक ऐसे हैं जो ऐलोपैथी के असाध्य रोगों को दूर कर देते हैं। ऐसे योगों को प्राप्त करना भी अनुसन्धान शाला का कार्य होना चाहिये। इससे अन्य गुणान्वेषण तथा उनका प्रकाशन होना चाहिये।

जामनगर आदि में जो रिसर्च हो रही है उस पर लेबल बेशक आयुर्वेद का है परन्तु वह वास्तव में आयुर्वेदिक रिसर्च नहीं ऐसी बहुत विद्वानों की धारणा है। चीन में जो देशी चिकित्सा की रिसर्च हो रही है उसकी रूपरेखा भी इस रिसर्च से भिन्न है।

शास्त्री जी ने पत्र के अन्त में इच्छा प्रकट की है कि चीन, लंका, पोलैण्ड की सरकारों की तरह राजकुमारी जी आयुर्वेदिक चिकित्सा को भारतीय सभ्यता का अंग मानकर प्रोत्साहन दें।

शास्त्री जी ने इच्छा प्रकट कर दी परन्तु हम राजकुमारी जी की इच्छाओं से परिचित हैं। अगर राजकुमारी जी के बस में हो तो वह ऐलोपैथिक औषधियों के समान भारतीयों को घृत त्याग कर चर्बियों से निर्मित मार्जरीन खाना अनिवार्य कर दें, क्योंकि पाश्चात्य देशों में घृत नहीं मार्जरीन खाई जाती है। बाजारों में देशी ढावे और तन्दूर बन्द कर दिये जायें उनके स्थान पर उबले आलू और डबल रोटियां आ जावें। दूध लस्सी की जगह चाय और कोकाकोला रह जावे। हलवाइयों की दुकानों से हलवा, पूरी, जलेबी, समोसा, लड्डू, वर्फी गायब हो जायें, उनके स्थान पर टाफी, केक, बिस्कुट, चैकोलेट दृष्टिगोचर हों। न जाने और क्या कुछ हो, परन्तु ऐसा करना राजकुमारी के बस में नहीं।

इस पुस्तक में शास्त्री जी ने एक गान्धी मैमोरियल धन्वन्तरि नगर की रूपरेखा उपस्थित की है। आप चाहते हैं कि भारत के अतीत के गौरव तक्षशिला और नालन्दा की आयुर्वेदिक यूनिवर्सिटियों को गांधी मैमोरियल धन्वन्तरि नगर के नाम से पुनर्जीवित किया जाये। शास्त्री जी के निकट गांधी जी में आयुर्वेद के प्रति बहुत गहरा प्रेम था। गांधी जी ने अफ्रीका में सत्याग्रहियों की चिकित्सा में देशी चिकित्सा का सफल प्रयोग किया था। देश लौटने पर गोंडल की रसशाला में भाषण देते हुए आपने कहा था कि मेरे हृदय में आयुर्वेद के प्रति बहुत मान है, भारत के लाखों गावों के करोड़ों व्यक्तियों की यह वैज्ञानिक चिकित्सा प्रणाली है। मेरा आदेश है कि भारतीय जनता इस आयुर्वेद विज्ञान द्वारा अपने जीवन को व्यतीत करते हुये स्वास्थ्य प्राप्त करे।

महात्मा जी के सैक्रेटरी श्री महादेव देसाई ने पारद को स्वर्ण में सिद्ध कल्क की सहायता से परिवर्तित करने का आंखों देखा हाल वर्णन किया, इससे बापू का आयुर्वेद विज्ञान पर विश्वास बढ़ा। महादेव देसाई ने महात्मा जी को बताया आयुर्वेद का सिद्ध कल्प दीर्घ जीवन और चिर स्वास्थ्य के लिये बहुत उपयोगी है, महात्मा जी जब भी गांव में भ्रमण के लिये गये आपने चिकित्सा में देशी औषधियों को लाने के लिये कहा।

शास्त्री जी को विदित होना चाहिये कि रूस के स्टालिन युग व जर्मनी के हर हिटलर युग के समान गांधी युग भी समाप्त हो चुका है। आधुनिक युग गांधी युग नहीं, गांधी जी ने कस्तूरबा के रुग्णकाल में अंग्रेज से मांग की थी कि लाहौर के वैद्यरत्न पं० शिवशर्मा जी को आगाखान महल में बुलाया जाये, इसके बाद जब महात्मा जी के उदर में कृमि टो गये तो भी उन्होंने वैद्यरत्न पं० शिवशर्मा जी को परामर्श के लिये बुलाया था। बापू समय समय पर वैद्यरत्न पं० शिवशर्मा जी से परामर्श लिया करते थे, बापू साबरमती आश्रम में बहुधा ही आश्रमवासियों के रुग्ण होने पर उन्हें आयुर्वेदिक चिकित्सा बतलाया करते थे। बापू ३५ वर्ष की अवस्था से ७० वर्ष की अवस्था तक ब्रह्मचारी रहे। क्या यह सिद्धान्त ऐलोपैथी का है ?

बापू के उत्तराधिकारी श्री विनोबा भावे जी ने आयुर्वेदिक विधि के अनुसार क्षय से बचने के लिये, स्ट्रेप्टोमाइसीन का नहीं, लहसुन का प्रयोग किया तथा उन्हें

स्वास्थ्य लाभ हुआ। श्री बालकृष्ण जी, श्री महात्मा रमण जी, श्री सत्यदेव जी परिव्राजक आदि ने आयुर्वेदिक चिकित्सा को अपने जीवन काल में अपनाया। परन्तु गांधी जी की मृत्यु के पश्चात् गांधी युग समाप्त हो गया। अब देश के स्वास्थ्य की बागडोर जिनके हाथ में है वह भारतवासियों पर उनकी इच्छा के विरुद्ध ऐलोपैथी को ठूंसना ही देश सेवा समझते हैं।

शास्त्री जी ने आयुर्वेदिक विज्ञान का एक उदाहरण काशी के वैद्यराज कृष्णपाल शास्त्री का उपस्थित किया है, जिन्होंने पारद को बुभूक्षित कर के सेठ बिरला, श्री सीताराम खेमका, इंजीनियर मि० विलसन, श्री अमृतलाल ठाकुर, श्री महादेव देसाई, गोस्वामी श्री गणेशदत्त आफ लाहौर तथा श्री वियोगीहरि की उपस्थिति में ३८ पौंड पारद को कुछ घन्टों में स्वर्ण में परिवर्तित कर दिया था। वह शुद्ध स्वर्ण ७५,००० रुपया में बाजार में बिक गया, वैद्य कृष्णपाल की मृत्यु १९४३ में हरिद्वार में हुई थी।

भारत की द्वितीय पंचवर्षीय योजना को सफल बनाने के लिये धन की आवश्यकता है। इसी धन की कमी को पूरा करने के लिये विदेशों से सर्व प्रकार की सहायता ली जा रही है। टैक्सों से परेशान भारतीयों पर और टैक्सों का बोझा लादने की सोची जा रही है। आर्थिक कमी को पूरा करने के लिये और नोट छापने का विचार भी सामने है। परन्तु भारत सरकार सहज में ही आयुर्वेदिक विज्ञान को अपनाकर इस अर्थ संकट से मुक्त हो सकती है। परन्तु पाश्चात्य रंग में रंगे हुए को इस गंगा में स्नान करने की कौन कहे ?

शास्त्री जी का कथन है कि अंग्रेजी राज्य से पहले लोगों का स्वास्थ्य तथा शारीरिक बल अधिक था। ऐलोपैथिक चिकित्सा के प्रचार और पाश्चात्य ढंग के रहन सहन से इसमें कमी आ गई है। महाराणा प्रताप जिस लोह कवच को पहन कर १२ घंन्टे युद्ध क्षेत्र में घोड़े की पीठ पर रहा करते थे आज उस कवच को उठाने के लिये भी ४, ५ आदमियों की आवश्यकता है। क्षत्रपति शिवाजी भगवती की जिस तलवार को हाथ में ले कर शत्रुओं के शिर काटा करते थे, आज उसे उठाने का कार्य भी देश का कोई पहलवान ही कर सकता है।

शास्त्री जी को विदित होना चाहिये कि सनातन काल में लोग डालडा नहीं शुद्ध घृत खाते थे। उस काल में कोकाकोला लेमन चाय नहीं लोग दूध और लस्सी पीते थे। उसकाल में बिस्कुट और चीनी की मिठाईयों का रिवाज नहीं था, लोग बर्फी, खोया, कलाकन्द, माखन का सेवन करते थे। आयुर्वेदिक चिकित्सा केवल मात्र शरीर के स्वास्थ्य का ही नहीं मन के स्वास्थ्य का भी प्रबन्ध करती है। आयुर्वेद में ब्रह्मचर्य का उपाय जीवन को लम्बा, निरोग और शक्तिशाली बना देता है। ऋतुचर्या और दिनचर्या शरीर और स्वास्थ्य में उन्नति लाती हैं। आयुर्वेद की रसायनें और बाजीकरण औषधियां रोग और वृद्धावस्था की सफल चिकित्सा है। अंग्रेजों से पूर्व बहुत लोगों के कद नौ फुट से अधिक होते थे जो आज पांच फुट तीन इन्च रह गये हैं। प्रति वर्ष भारत का १०० क्रोड़ रुपया विदेशों में औषधियों की कीमत के रूप में जाता है और स्वास्थ्य का स्तर

अलग गिर रहा है परन्तु राजहठ के सामने सभी वेबस हो रहे हैं। माता सीता ने राम से स्वर्ण हरिण को मारने का हट कर के राम के जीवन को दुःखों की मंझधार में डाल दिया था और आज राजकुमारी ऐलोपैथिक चिकित्सा को ठोसने की कोशिश करते हुए भारतीयों के स्वास्थ्य की होली कर रही हैं। भारतीयों के स्वास्थ्य की रक्षा केवल मात्र आयुर्वेद द्वारा ही हो सकती है।

—कविराज हरिकृष्ण सहगल

इस दुनिया में सब चोर चोर

भाई अविनाशचन्द्र जी वैद्य वाचस्पति, भरवारी (प्रयाग) ने एक पत्र "ठग वैद्यों से बचें" के शीर्षक से लिख कर पत्रिका कार्यालय में भेजा है।

घटना इस प्रकार है कि १४-५-५६ को ग्राम गढ़वा गोहानी का कोई व्यक्ति उनके पास आया, उनसे कहा कि वह लड़की को लेने बरेली जा रहा था रुपया कम था, इसलिए वह साथ में कुछ भस्में ले आया ताकि उन्हें बेचकर लड़की को लाने का प्रबन्ध किया जाए और वह उनके पास वह भस्में बेचना चाहता है।

श्री अविनाशचन्द्र जी का मन एक वैद्य को दुख में देखकर पसीज गया और आप ने सहर्ष वह भस्में १३ रुपया में खरीद लीं। मगर हम समझते हैं कि आखें बन्द करके वह खरीदीं, क्योंकि बाद में वैद्य जी को पता चला कि लोह भस्म, अभ्रक, प्रवाल, गोदन्ती, वङ्ग, रस माणिक्य, आनन्द भैरव, स्वर्ण वङ्ग आदि जो आपने खरीदे हैं, सिवाय खड़िया मट्टी के तथा भिन्न २ आवश्यक रंगों के और कुछ नहीं। बाद में वैद्य जी को पता चला कि उक्त गांव के २०-२५ कुटुम्बों का यही धन्धा है।

इस पर वैद्यराज ने क्षुब्ध होकर एक पत्र और इन भस्मों के नमूने पत्रिका कार्यालय में भेज दिए। यद्यपि सम्मेलन पत्रिका आफिस न तो उनके प्रान्त व शहर का पुलिस स्टेशन अथवा हैल्थ मिनिस्टर का आफिस है और न ही सम्मेलन पत्रिका आफिस पं० जवाहरलाल जी का व राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद जी का दफतर है।

खैर, वह पत्र और भस्मों के नमूने आ चुके हैं और हमें अपने वैद्य बन्धु जी की सेवा जैसे भी हो, अवश्य करनी है। और यही कारण है कि यह कुछ पंक्तियां लिखी जा रही हैं।

अभी कुछ दिन पूर्व हमने एक फिलम भाई भाई देखी थी, इसमें निम्मी एक गाना गाती है जो इस प्रकार है:—

इस दुनिया में सब चोर चोर
कोई पैसा चोर, कोई मुर्गी चोर, कोई दिल का चोर
इस दुनिया में सब चोर चोर
कोई चोरी करे खजाने की, कोई आने या दो आने की
कोई छोटा चोर कोई बड़ा चोर, इस दुनिया में सब चोर चोर

Have a look on this Patrika

कोई बैठा चोर कोई खड़ा चोर, इस दुनिया में सब चोर चोर
कोई गोरा चोर कोई काला चोर, कोई लाट साहिब का साला चोर
इस दुनिया में सब चोर चोर

कोई किसी की नींद चुराता है, और मौज से खुद सो जाता है
मेरी नींद चुराने आया है, कोई ऐसा ही दिल वाला चोर
इस दुनिया में सब चोर चोर

भाई अविनाश चन्द्र जी ! इस दुनिया में सब चोर चोर हैं। और आयुर्वेदिक जगत में सब ठग ही ठग हैं। पंसारी से शर्बत बनफशा मांगिये अगर उसके पास वह तैयार नहीं तो वह यह नहीं कहेगा कि शर्बत बनफशा उसके यहाँ नहीं, वह झट चीनी का शर्बत देकर आपसे पैसे बटोर लेगा। अगर आप अर्क मांगें तो ऐसेंसों के अर्क दे देगा। शर्बत क्वाथों से नहीं खुशबूओं से तैयार किए जाते हैं। शुद्ध चीनी का शर्बत भी न मिलेगा, उसमें भी सक्रीन होगी। और किसी बूटी की जड़ छाल पत्र मांगिए वह आपकी अज्ञानता का लाभ उठाते हुए आपके हाथ में कुछ और ही पकड़ा देगा। भले आपका रोगी जिए या मरे।

मधु लेने के लिए आप बाज़ार छान मारिए, वही चीनी और गुड़ के क्वाथ सर्वत्र दृष्टिगोचर होंगे। कस्तूरी, केसर, गोरोचन, जिंद बदस्तर, दालचीनी, ऐलवा, रसौंत, सेंधा नमक, शिलाजीत कुछ भी ठगों से नहीं बचा, नकली घृत की तरह सब की नक्लें तैयार हो चुकी हैं।

फार्मेसियां भी इस ठगी से सुरक्षित नहीं, वह भी हींग जीरा बेचने वाले गुल खान पठान से लेकर शिलाजीत, फौलाद, अभ्रक बेचने वाले ईश्वर सिंह गढ़वाली तक के पेशे को अपना रही हैं।

आप कोई भी आसव अरिष्ट इनसे ले लीजिए और स्वयं बनाये हुए आसव अरिष्ट से मिलान कीजिए, 'सब चोर चोर' की गर्दन आप भी रटने लगेंगे।

कौन नहीं जानता कि आधुनिक फार्मेसियां जैसे एक ही शीशी से सूर्यतापी और अग्नितापी शिलाजीत निकाल देती हैं, ठीक ऐसे ही वह एक ही शीशी से ३० पुटी ६० पुटी और सहस्र पुटी अभ्रक भस्म भी निकाल देती हैं। वंग में कौड़ी भस्म व गोदन्ती का मिजान बहुधा पकड़ा जा चुका है। रस सिन्दूर के साथ तो अत्याचार ही हुआ है। हिंगुल को रस सिन्दूर के नाम से बेचना इन्होंने एक प्रथा बना ली है। और सम गुण को द्विगुण, चतुर्गुण व षड्गुण और कभी मकरध्वज के नाम से बेचना इनकी डिक्शनरी में पाप नहीं।

स्वर्ण और मुक्ता आदि के योगों की वह मट्टी पलीद हुई है कि शैतान भी तोबा करने पर मजबूर हो गया है। स्वर्ण के स्थान पर स्वर्णमाक्षिक और मुक्ता के नाम पर मुक्ता शुक्ति का डालना इनके लिए साधारण बात है। शास्त्रीय योगों के निर्माण में कुछ ऐसे फेर-फार हुये हैं कि आयुर्वेद के सिर में भी दर्द होने लगा है। चरक, अग्निवेश, सुश्रुत जीवक, भेल, काश्यप आदि ऋषियों की आत्मायें भी स्वर्ग में हाहाकार कर उठी हैं।

श्री अविनाश चन्द्र जी की तरह प्रतिदिन ठगों द्वारा हज़ारों वैद्य और लाखों लोग ठगे जा रहे हैं। भगवान का शुक्र है कि कुछ इनी गिनी फार्मेसियाँ ऐसी भी हैं जो शुद्ध शास्त्रीय औषधियाँ प्रस्तुत करने में प्रसिद्ध हैं, और इन्हीं के सहारे आयुर्वेद जीवित है। इन्हीं के सहारे आयुर्वेद का कुछ मान शेष है।

जनता को या तो योग स्वयं बनाने चाहियें या विश्वस्त फार्मेसियों से खरीदने चाहियें। और चलते-फिरते वैद्यराजों से सस्ती औषधियाँ लेकर अपना और आयुर्वेद का सर्वनाश न करना चाहिए।

और मुझे दुख है कि मैं जिन्हें विश्वस्त फार्मेसियाँ समझता हूँ, उनमें एक बहुत बड़ी बुराई यह है कि वह लूट में सम्मिलित हो गई हैं। अकारण उनके दाम बहुत अधिक हैं। उन्हें कोई पूछने वाला नहीं कि भाई इतने दाम, इतना लाभ क्यों रखा गया है। फार्मेसियों का कर्त्तव्य है कि वह अपने लाभ का उचित भाग लें। औषधियों को सस्ता करने का यत्न करें। अगर वह औषधियों को सस्ता नहीं करेंगे तो वैद्यों के ठगों के हाथों लुटने का काम बराबर जारी रहेगा। आयुर्वेद की सच्ची सेवा इसमें ही है कि आयुर्वेदिक औषधियों को सस्ते से सस्ता और शुद्ध से शुद्ध करके जनता में लाया जाये।

—कविराज हरिकृष्ण सहगल

चीन देश की प्राचीन चिकित्सा

लेखक—ह० जे० डी० लाल

चीन भारत का पड़ौसी राज्य है। इस राज्य ने बादशाहों का जमाना, जमहूरी हकूमत और अब कम्यूनिस्टों का शासन देखा है। यह देश कई क्रान्तियों से निकला है।

आज हम आप को चीन की प्राचीन चिकित्सा प्रणाली से परिचित कराना चाहते हैं। उसी देश की चिकित्सा प्रणाली से जहां के लोग रात्रि में शीत से रक्षा करने के लिये सुअरों के बाल मूंड कर इनके शरीर के साथ शरीर को लगाकर सोते हैं, जहां खच्चरों का मांस खाने के काम आता है, जहां की रैस्टोरैन्टों में आप को मसाले में पकी हुई सीपियां, भुने हुए कच्छुए के कबाब, रोस्ट मेंढक, स्वादिष्ट केकड़े का मांस पेश किया जाता है।

आप अगर पहली बार रैस्टोरैन्ट में प्रविष्ठ हों तो सीखचों में टंगी हुई चीजों को देखकर हैरान रह जायें। कौबरा, कर्कट, अजगर, मुर्ग, मुर्गाबी, बतख आपको सभी प्रकार के परिन्दे और बिलों में रहने वाले जानवर इन सीखचों पर दृष्टिगोचर हो जायेंगे। सांप की करी एक लजीज़ भोजन है। इसके लिए सिर को काट कर, बाकी के शरीर भाग को मसालों के साथ शोरबेदार पकाया जाता है।

और बेकन तो कोई विदेशी खा नहीं सकता, मछलियों को विशेष प्रकार के पत्तों में लपेट, बर्तनों में दबा और सड़ा कर केवल वही खा सकते हैं और वियटनाम, इण्डो-चायना में आप को कभी ही कोई पक्षी दृष्टिगोचर होगा क्योंकि प्रत्येक प्रकार के पक्षियों को मार कर वहां खा लिया जाता है। वहां आपको बाजार में आवारा घूमते हुए बिल्लियां कुत्ते भी न मिलेंगे। यह कहां चले जाते हैं यह वही बता सकता है जिसने चीन का भ्रमण किया है।

आप कहेंगे कि चीनी अच्छे नहीं क्योंकि वह वायु में उड़ने वाले, भूमि पर रेंगने वाले और जल में रहने वाले प्रत्येक जीव को खा जाते हैं। परन्तु चीन में अगर ऐसा न किया जाये तो पक्षियों की तरह वहां मनुष्य भी न मिलें, क्योंकि चीन में भयंकर अकाल पड़ते हैं। अकाल में जीवन बचाना धर्म होता है। इन्हीं अकालों में लोगों ने खेतों के चूहों, तालाबों के मेंढकों, समुद्र और नदियों के जानवरो और हर दिखाई देने वाले जानदार, सर्प आदि को खाया। अकाल दो चार वर्ष बाद आते रहे और लोग इन भोजनों के आदी हो गये। शार्क के पंखों का व अबाबीन के घोंसलों का शोरबा केवल चीन में ही पिया जाता है।

चीन के वैद्यों के सामने दो प्रश्न सदैव रहे एक तो रोगियों की चिकित्सा और दूसरे लोगों के लिये भोजन व्यवस्था। चीनी वैद्यों ने अपने पड़ौसी देश भारत से भोजन व्यवस्था में बहुत कुछ सीखा। अकाल के समय में उन्होंने जो कुछ खाने की व्यवस्था की है, वह सब आज से तीन हजार वर्ष पूर्व लिखे गये चरक में लिखा हुआ है। चरक में

जंगली जीवों, गृद्ध से लेकर चिड़ियों तक पक्षियों, रेंगने वाले, जल में रहने वाले जीव मांसों की औषध व पथ्य में व्यवस्था है।

चीन में मिंग Ming राजाओं ने १३६८ में राज्य स्थापित किया। वह राज्य किसानों की क्रान्ति का परिणाम था। सोलहवीं शताब्दी में इस खानदान ने विशेष उन्नति की। चाय चेंग का राज्यकाल चीन का स्वर्ण युग था, सोलहवीं शताब्दी में चीन ने चिकित्सा विज्ञान में विशेष उन्नति की।

१५ वीं शताब्दी में चेंग हो ७ वार अपने जहाजों में समुद्र में घूमा। वह अफ्रीका तक गया, उसके साथ जाने वाले चिकित्सकों ने रास्ते के देशों के चिकित्सा विज्ञान और वनस्पति विज्ञान का परिचय प्राप्त किया। इस प्रकार चीन की देशी चिकित्सा के निघन्टु में सम्वर्द्धन हुआ। इसमें भारत का भी भाग है।

तेरहवीं शताब्दी में चीनी चिकित्सकों का सिद्धान्त था कि पाचक अङ्गों में बिगाड़ होकर रोग उत्पत्ति होती है। यह सिद्धान्त आयुर्वेद के सिद्धान्त का ही दूसरा रूप है। ली को और चू चैन हुंग नाम के चिकित्सकों ने खाद्यपदार्थों का एक निघन्टु बनाया और बहुत प्रकार के घासों व मूलों तथा वनस्पतियों का, जो खाई जा सकतीं थीं, उसमें वर्णन किया।

चीनी चिकित्सा के निघन्टु में औषधों का वर्गीकरण, आयुर्वेदिक वर्गीकरण के ही अनुसार था जैसे—झाड़ियां, वृक्ष, कन्द, फल, पक्षी, जंगली जीव, धातुएं, खनिज आदि आदि। उनके खाद्य निघन्टु में वर्गीकरण इस प्रकार था, चावल, अन्न, शाक, फल, पक्षी, जंगली जीव, मछलियां, कीड़े, तितलियां आदि। इस निघन्टु में इन पदार्थों के भोजनार्थ व चिकित्सार्थ गुण दोषों का वर्णन था।

चीनी चिकित्सक ल्यू हो कहता था कि मनुष्य का भोजन, चावल, गेहूँ आदि का ठीक है। मांस भोजन से उष्णता बढ़ती है और मुंग राज्यवंश के बादशाह उसके इस सिद्धांत पर विश्वास करते थे।

चीनी चिकित्सक ली शी चिन के समय में पंच महाभूतों का सिद्धान्त चीन में प्रचलित था। भारत के आयुर्वेदिक चिकित्सकों की तरह चीनी चिकित्सकों ने भी औषध गुण निर्णय और चिकित्सा में पंचमहाभूतों का पूर्ण प्रयोग किया। चिकित्सा में पंच महाभूतों का सिद्धान्त उसके गौरव का साधन है।

भारत में ही आयुर्वेदिक चिकित्सक केवल नाड़ी परीक्षा द्वारा रोग को नहीं जान लेते। ईसा से चार पांच सौ वर्ष पूर्व चीन का प्रसिद्ध चिकित्सक पी एन चूएह भी नाड़ी द्वारा रोग परीक्षा में दक्ष था। नाड़ी परीक्षा चीनी देशी चिकित्सा का एक अङ्ग है। चीनी चिकित्सक बहुत से रोगों की चिकित्सा के लिये बारीक-बारीक सुइयों से नाड़ी को चुभोते और बूटियों को गरम करके शरीर के विशेष अङ्गों को सेंकते हैं। चीनी वैद्य चांग चुंग चिंग ने ईसा की पहली और दूसरी शताब्दी में ज्वरों पर एक सुन्दर पुस्तक लिखी थी, जिसका नाम "सांग हान लून" है। अन्य रोगों पर इस वैद्य की दूसरी पुस्तक "चिंग कुए युहान चिंग" है जो आज भी प्रसिद्ध हैं। को हुंग नाम के एक चीनी वैद्य ने प्रथम वार पारद का शोधन कर औषध रूप में इसका प्रयोग किया।

प्रसिद्ध वैद्य सुन जे पिआव की पुस्तक "चीन चिंग याओ फाग" से जिसके अर्थ है

'सुनहरी दवायें' पता चलता है कि उन दिनों प्राणियों के अन्दर के अङ्गों जैसे गाय व भेड़ का पित्ता, यकृत, अस्थि, वसा आदि से आदमियों के रोगों को दूर किया जाने लगा था।

चीन में आयुर्वेदिक शिक्षा केन्द्रों में कांसे की ऐसी मूर्तियां बना कर रखी जाती थीं जैसे आजकल वले माडल बनाए जाते हैं व स्कल रखे जाते हैं उनसे विद्यार्थियों को शरीर अंग और उन पर औषध प्रभाव का परिचय कराया जाता था।

प्राचीन चीनी चिकित्सा में कृमिघ्न औषधों का प्रयोग औषध रूप में व कमरे, विस्तर, कपड़ों के कृमियों के नाशार्थ सम्मिलित है। कृषि नाश के लिए शरीर के अंदर व त्वचा रोगों में, चीनी चिकित्सक कौप्टिस टीटा Coptis Teeta का बहुत उपयोग करते थे। चीनी चिकित्सा में प्रवाहिका चिकित्सा में पाईतोड वेंग नाम की औषध बहुत प्रसिद्ध है। मरेलिया की रामबाण औषध का नाम 'चोग यान' है। खांसी की दवा 'पाई यू' है। पेट के कद्दानों की सफाई के लिए चीनी चिकित्सक 'कू चीन पी' का प्रयोग करते हैं। ब्लड प्रैशर के लिये चीनी औषध 'तू चुंग' है। अन्तड़ियों के नीचे के रोग प्राचीन चीनी औषधों के प्रयोग से बहुत शीघ्र अच्छे हो जाते हैं।

चीन की कम्यूनिस्ट राज्य पार्टी अपने देश की पुरानी सांस्कृतिक देन का बहुत सम्मान करती है। इसलिए वह ३ लाख प्राचीन चीनी चिकित्सा प्रणाली के चिकित्सकों को देश की बड़ी शक्ति मानती है। चीन में देशी चिकित्सा की उन्नति के लिये चीनी मैडिकल एकैडेमी खोली गई है। शंघाई, कैन्टन, नानकिंग और चुंगकिंग में पुराने चीनी इलाज के सरकारी अस्पताल खोले गये हैं।

चीन में अपनी चिकित्सा पद्धति

चीनी शिष्टमंडल ता० २३-२-५५ को भारत भ्रमण की पारस्परिक यात्रा के सिलसिले में कानपुर आया पारस्परिक संभाषण के अवसर पर श्री पं० सुन्दर लाल जी की मध्यस्थता में चीन के चिकित्सा कार्य के सम्बन्ध में जिज्ञासा प्रकट की तो शिष्ट मंडल के नेता ने बतलाया कि चीन में पुरातन प्रचलित प्रथा के अनुसार चिकित्सा कार्य हो रहा है। वहां एलोपैथी का भी प्रचार है परन्तु चीन सरकार अपनी पुरानी चिकित्सा पद्धति के प्रचार, उत्थान और सामयिक गति विधि के अनुकूल बनाने के सदाभिप्राय से प्रचुर धन राशि व्यय कर रही है। वहां गर्दन तोड़ और यक्ष्मा आदि विशिष्ट रोगों की चिकित्सा चीनी चिकित्सा प्रणाली से सफलता पूर्वक की जाती है। श्री पं० सुन्दरलाल जी से ज्ञात हुआ कि यहां भारतीय चिकित्सा पद्धति के अनुसार अवलेह क्वाथ आदि की प्रक्रिया का अत्यधिक प्रचार है और इससे रोग शान्ति में बहुत सफलता मिल रही है। वहां के निवासियों को अपनी चिकित्सा प्रणाली पर अपेक्षा कृत विशिष्ट गौरव है।

——

लहसुन और उसके उपयोग

एक लहसुन प्रेमी अंग्रेज मि० किंग का नारवियन क्लब में व्याख्यान

[लेखक—आचार्य विशाल बुद्धि]

लहसुन द्वारा ब्रह्मचर्य सिद्धि

मेरे प्यारे बच्चो, तुम ब्रह्मचर्य सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करना चाहते हो, यह जान कर हमें परम सन्तोष प्राप्त हुआ। भारतवासी लोग Celibacy को ब्रह्मचर्य के नाम से पुकारते हैं परन्तु उनका ब्रह्मचर्य शब्द बड़ा व्यापक, महा पुनीत और जीवनदाता है। हमारा पश्चमीय जगत तो प्राकृतिक पदार्थों से शिक्षा ग्रहण करने का अभ्यासी है परन्तु भारतीय विद्वान् आत्मा को प्रकृति का स्वामी मान कर आध्यात्मिक अनुभवों द्वारा शिक्षा के सिद्धान्तों को स्थिर करते हैं।

तुम सब नवयुवक मुझसे यही पूछ रहे हो कि वीर्य का स्तम्भन कैसे किया जा सकता है? इस विषय में मेरा तजुर्बा यह है कि सबसे पहले जीभ का संयम सीखना चाहिये। यह रसना रसों की चटोरी है। पेट का संतुलन बिगड़ने से, शरीर में तुफान उठते हैं, और वही वीर्य विनाश के कारण बनते हैं।

प्यारे नौजवानो! अपनी जंघायें पुष्ट करो, उनकी नसों को कठोर बनाना सीखो, भारतीय दंड बैठक वाला व्यायाम ही जंघाओं को पुष्ट और कठोर बना सकता है। वही व्यायाम ब्रह्मचर्य का सहायक बनता है। बैठने के लिये सिद्धासन और पद्मासन उत्तम आसन हैं। ये भी ब्रह्मचर्य में सहायक होते हैं। प्राणायाम की क्रिया भी ब्रह्मचर्य के लिये परम हितकारी है।

ब्रह्मचर्य साधन के लिये लहसुन एक अपूर्व मित्र है। जिसको स्वप्नदोष हो जाता हो वे रात को सोते समय लहसुन की एक पूर्ति छील कर चबा लिया करें, स्वप्नदोष एकदम बन्द हो जायेगा।

[सालब पंजा व सालब मिश्री का यूनानी में अत्यधिक व्यवहार है, यह क्या है? विशेष प्रकार के सूखे हुए लशुन ही हैं। सं०]

जिनका मन विषय करने के लिये बेताब रहता हो, वह भी एक पूर्ति प्रातः और एक पूर्ति सायंकाल चबाया करें। लहसुन की कृपा से मन में विकार ही उत्पन्न न होगा। लहसुन का प्रभाव शरीर पर ही नहीं, मन पर भी होता है।

गांधी जी ने ३५ वर्ष की आयु से ब्रह्मचर्य की साधना की थी। वे ७० वर्ष तक ब्रह्मचारी रहे थे, परन्तु यह बात बहुत कम लोग जानते हैं कि उन्होंने लहसुन के सेवन से ही ब्रह्मचर्य का समय व्यतीत किया था। लहसुन की मदद से ब्रह्मचर्य धारण करो और बिन लहसुन के ब्रह्मचर्य की साधना निरर्थक है।

लहसुन को 'अमृता' क्यों कहते हैं?

संस्कृत में लहसुन को अमृता नाम से भी पुकारा जाता है। इसका कारण सुनिये।

जब सागर का मंथन किया गया था, तब उस में से १४ रत्न निकाले गये थे, उनमें एक रत्न था अमृत घट, वह एक सोने का घड़ा था, जिस में अमृत भरा हुआ था।

एक तरफ दैवी सम्प्रदाय खड़ा हो गया और दूसरी ओर आसुरी सम्प्रदाय डट गया। दोनों दल अमृत पीकर अमर होना चाहते थे, सागर मथने का पुरस्कार वह लोग यही चाहते थे।

विष्णु भगवान ने गरुड़ जी को इशारा किया, एक पंजे से पकड़कर गरुड़ जी अमृत घट ले उड़े, आसमान में गरुड़ जी दौड़ रहे थे और पृथ्वी पर उनके पीछे-पीछे दोनों दल दौड़ रहे थे।

गरुड़ जी ने सात मरतबा पृथ्वी की प्रदक्षिणा की, परन्तु वह दोनों दल भला उनका पिंड कैसे छोड़ सकते थे, अमृत का लोभ थोड़ा नहीं होता। अन्त में एक पंजे में अमृत का घड़ा लिये उड़ते-उड़ते गरुड़ जी भी थक गये।

उन्होंने सोचा कि थोड़ी देर के लिये जमीन पर कहीं अमृत घट रख दिया जावे और वह भी वहीं बैठ कर सुस्ता लें। इसके बाद गरुड़ जी ने देखा कि दोनों दल भी थक गये हैं और थकावट से उनकी गति में कमी आ कर वह काफी पीछे रह गये हैं।

गरुड़ जी आकाश से पृथ्वी पर उतरे और उन्होंने एक खेत में वह घड़ा रख दिया, उस खेत में कुछ खड़ा था और उसके पत्ते लम्बे थे, घड़ा रखते समय जो छलका तो कुछ अमृत खेत में बिखर गया, गरुड़ जी अपने आप से कहने लगे, अमृत के प्रभाव से इस खेत की वस्तु भी अमृत रूप हो जायेगी, क्योंकि इस वस्तु के बीज में अमृत का निवास हो जायेगा। फिर यह वस्तु जहाँ बोई जायगी अपने अमृत तत्व से खाली न होगी।

इतना कहकर गरुड़ जी ने चन्द पत्ते चबाये और थूक दिया, बोले, यह वनस्पति बदबू और तीक्ष्णता का घर है। इसके अमृत रूप हो जाने पर भी इसे कोई नहीं खायेगा। बाज़ार में यह वस्तु ३ पैसे छटांक बिक रही है। हिन्दू इसे नहीं खाते। मुसलमान और ईसाई शौक से खाते हैं परंतु इसे बिगाड़ कर। अमृततत्व को हाण्डी में आग पर भूनने से वह उड़ जाता है। क्योंकि अमृत में भी पारद के समान उड़ने वाला स्वभाव है। इस वनस्पति का नाम है लहसुन।

सन्त श्री विनोबा भावे को क्षय हो गया था और अमृत व्यापी लहसुन के सेवन से ही इस क्षय से उनके प्राण बचे थे। श्री बालकृष्ण जी ने पांच वर्षों तक, पांच तोला कच्चा लहसुन प्रतिदिन खाया है। लहसुन एक शक्तिशाली रसायन है। इसके सेवन से ओज वृद्धि होती है।

श्री रमण महात्मा के प्रधान शिष्य परांजपे शास्त्री ने कहा था, "गुरुदेव रमण महर्षि जी, लहसुन को अभक्ष्य नहीं मानते थे, वह इसे सात्विक भोजन बताते थे। वे ६ पूर्तियां छिलवाकर, सिल पर बारीक पिसवाते थे। आधी छटांक पानी और अठन्नी भर शहद डलवाते थे, फिर मलकर शर्बत की तरह धीरे-धीरे पी जाते थे। वे इसे ब्रह्मचर्य का ही रक्षक नहीं, समाधी का सहायक भी मानते थे। लहसुन को तामसी कहना ढपोलशंखों का काम है।"

स्वामी सत्यदेव परिव्राजक द्वारा लहसुन सेवन

"हमें विगत २४ वर्षों से लहसुन के प्रयोग ने कई नये-नये अनुभव सिखाये हैं। अपनी यात्रा में, मैं सदा लहसुन अपनी जेब में रखता हूँ। अवसर पाकर उपयोग करता हूँ। यह टानिक तो है ही, घाव को आराम करने की भी इसमें अद्भुत शक्ति है। लहसुन का रस घाव में भरने से लाभ होता

है। त्वचा की फुन्सियों पर इसका रस मलने से फुन्सियों से पिंड छूट जाता है। लहसुन की तुरियां छील कर यूं ही चबाना चाहिये। उसके चरपरेपन और तीक्ष्णपन से घबराना नहीं चाहिये। कुछ मिन्टों बाद ही तीक्ष्णता शांत हो जाती है।"

लंदन के प्रसिद्ध डा० मचीन लिखते हैं कि एक युवक के पांव में क्षय हो गया था, मैंने उसे पंजा कटवाने की सम्मति दी मगर उसने मेरी सम्मति न मान कर एक भारतीय मित्र के कहने पर इस पर लहसुन की लुगदी की पट्टी चढ़ाना आरम्भ किया और वह स्वस्थ हो गया। लहसुन में अलील सल्फाइड नामक तत्व पाया जाता है। यही तत्व क्षय के किटाणुओं को नष्ट करता है। अगर लहसुन की ५-७ तुरियां छील कर, उनकी लुगदी बना कर पांव के तलवों पर १५-२० मिनट के लिये बांध दिया जावे तो सांस से लहसुन की महक आने लगेगी। सारे शरीर की त्वचा हड्डियों और नसों को भेदता हुआ वह अलील सल्फाइड ही पैर से शिर तक पहुँचता है।

[संक्रामक रोगों चेचक, हैजा आदि के दिनों में भारतीय ग्रामों में एक आम रिवाज है कि लहसुन की तुरियों को डोरे में बांधकर बच्चों के गले और हाथों में बांध दिया जाता है। अलील सल्फाइड के व्यापक तथा कीटाणु नाशक गुणों के कारण संक्रामक रोगों से रक्षा हो जाती है। सं०]

यहां तक जो कुछ लिखा गया है यह "रसायन" में प्रकाशित स्वामी पारसनाथ जी के एक लेख से लिया गया है। हम इनके आभारी हैं। अब आपके सामने हम श्री रामेश वेदी जी के सचित्र आयुर्वेद में प्रकाशित एक लेख का लहसुन विषय का एक भाग उपस्थित करते हैं।

"वायु रोगों में लहसुन एक बहुत काम की चीज है, गठिया में बड़े जोड़ों की सोजों में और वायु की दर्दों में इसे कई तरीकों से देते हैं। लहसुन की तुरियों को छीलकर घृत के साथ वायु रोगों में दिया जाता है। १ छ० लहसुन की तुरियों को छील, लुगदी बना १ पाव तिल तैल में, मन्द आंच पर सिद्ध कर, वायु रोगों पर मलाया जाता है।

कमर दर्द में और वायु की दूसरी दर्दों में यदि कब्ज भी रहती हो तो लहसुन की लुगदी १ छ०, हरड़ और सोंठ का चूर्ण १-१ छ० लेकर दो सेर दुग्ध में खोया बनावें और घृत में भून लें। दालचीनी, पिप्पली और छोटी इलायची के दाने प्रत्येक १½-१½ तो० लेकर चूर्ण कर और खोया में मिलाकर बरफी की तरह जमा लें, नाश्ते में इसकी दो तीन टुकड़ियां दूध के साथ लिया करें।

जोड़ों की दर्दों और सोज (गृध्रसी) पर अलसी के आटे में लहसुन मिलाकर, पुल्टिस बनाकर बांधने से दर्द और सूजन में कमी होती है।

जीरा, हींग, सेंधा नमक, सवर्चल नमक, सोंठ, कालीमिरच और पिप्पली को बराबर-बराबर लेकर कूट छान लें। तीन माशा भर यह चूर्ण, लहसुन की ३ तुरियों की लुगदी में मिलाकर, वात के रोगों, लकवा, पेट में वायु भरना आदि में १ मास तक सेवन करना लाभ करता है। लकवा में लहसुन को समभाग माखन में मिलाकर खाना हितकर है। [लकवा के रोग में कच्ची लहसुन तुरियों को चबाकर भी खिलाया जाता है]

हिस्टीरिया ग्रस्तों को होश में लाने के लिये लहसुन का सुंघाना व इसके रस का

१-२ बूंदों का नाक में टपकाना लाभ करता है। हिस्टीरिया रोगी को लहसुन की लुगदी को प्रतिदिन दूध से खाना चाहिये। हिस्टीरिया व मृगी के रोगियों को ३-४ मास तक इसका सेवन कराना चाहिये।

काली खांसी में बच्चों को लहसुन की तुरियों को छील कर ३-४ घन्टे सुंघाना चाहिये (काली खांसी में लाभ करने वाला पदार्थ लहसुन का अलील सल्फाइड तत्व है, भारतीय ग्रामों में काली खांसी के संक्रमण के दिनों में लहसुन की तुरियों को डोरा में पिरो कर बच्चों के हाथों और गले में पहनाने का अब भी रिवाज है) डेढ़ दो वर्ष की आयु के बच्चों को ५-१० बूंद लहसुन स्वरस, काली खांसी होने पर मधु व चीनी में मिला कर दिन में २-३ बार देते हैं। इससे २-३ दिनों में ही लाभ हो जाता है।

लहसुन हैजे के जीवाणुओं का नाश करता है, हैजे के दिनों में (शास्त्रोक्त लहसुनादि वटि अथवा) लहसुन व अदरख बराबर लेकर तथा उसमें काली मिर्च या थोड़ा नमक डाल कर चटनी की तरह दिन में २-३ बार चाटते रहने से हैजे से रक्षा होती है।

पुराने घावों पर लहसुन का रस तथा मधु बराबर मिला कर लगाने से लाभ होता है अथवा लहसुन को कड़वे तैल में जला कर फिर उस जले हुये लहसुन को नीम के तैल में पीस कर मलहम की तरह गाढ़ा बना कर रख लें। यह मलहम पुराने फोड़े, नासूर तथा अन्य किसी भी प्रकार के घावों में बहुत लाभदायक है।"

नोट—मेडिकल कालेज लखनऊ में भी अभी हाल में अन्वेषण कर लहसुन का प्रयोग हैजा तथा घाव में जीवाणु नाश के लिये बड़ा उपयुक्त पाया गया है।

प्रिय पाठक ! आपने श्री रामेश बेदी जी की लेखनी का रसास्वादन कर लिया। आइये अब आपकी भेंट श्री कविराज प्रताप सिंह जी के एक लेख से कराते हैं।

"इस कन्द का भारतवर्ष में सर्वत्र उपयोग होता है, किन्तु औषध के रूप में कौनसा रसोन (लहसुन) काम में लाना चाहिये, यह एक विचारणीय प्रश्न है।

[लहसुन दो प्रकार का होता है। एक में बहुत तुरियाँ होती हैं, यह साधारण रसोन है और एक में केवल एक ही तुरी (पोथी) होती है। इसे पंजाब में एक पोथिया रसोन कहते हैं। कविराज प्रतापसिंह जी का इशारा इस एक पोथिया लहसुन की ओर है। अरब देशों से जो सालब पंजा व सालब मिश्री आते हैं वह भी यही एक पोथिया सूखे हुये उस देश के लहसुन हैं। सं०]

इस रसोन कन्द में विशेषता यह है कि यह एक ही कन्द (पोथी) का होता है अतः इसे एक पोदी लहसुन के नाम से व्यापारी बेचते हैं। इसके अन्दर अन्य सुलभ प्राप्त लहसुन की तरह दाहोत्पादक या प्लोषोत्पादक उग्र शक्ति नहीं। इसका सेवन कराने से हाई ब्लडप्रैशर धीरे धीरे कम हो जाता है। आज ज़र्मन चिकित्सक इसके तैल का प्रयोग भिन्न भिन्न नामों से करते हैं। परिव्राजक सत्यदेव जी ने इस विषय में बड़ी खोज की है और इस पर हिन्दी में लहसुन का बादशाह शीर्षक एक निबन्ध भी प्रकाशित किया है। स्विटजरलैंड का एक निवासी भारतवर्ष में योगियों से इस कन्द का ज्ञान प्राप्त कर जर्मनी में कायाकल्प चिकित्सा कर रहा है।

अनेक प्रकार से प्रयोग करने पर मैं निम्न विधि को अधिक उपयोगी और व्यवहारिक

पा रहा हूं, एक पोदी लहसुन के जितने नमूने मुझे बनारस, लखनऊ या देहरादून में प्राप्त हुये, उन सब में देहरादून का सर्वोत्तम और गुणवान सिद्ध हुआ। यह कन्द प्याज के मध्य कन्द के बराबर मोटा होता है।

इस कन्द के छिलके हटाकर, बारीक काट कर २ छ० लें, और ५ पाव गो दुग्ध में मिलाकर, मन्द आँच पर पकाकर मावा बना लें, इस मावे में समान शर्करा मिलाकर २० पेड़े बना लें, प्रातः १ से २ पेड़े तक प्रतिदिन खाली पेट दूध के साथ लिया करें। इसके सेवन करने से प्रवाही नाड़ियों में मार्दव उत्पन्न होता है, पाचन शक्ति बढ़ती है। हृदय की गति सम और प्रसादयुक्त होने लगती है एवं ब्लड प्रैशर धीरे धीरे स्वाभाविक होता जाता है।"

कविराज प्रतापसिंह जी का लेख समाप्त हुआ। अब हम आपके सामने कुछ अपरिचित व्यक्तियों के अनुभव रखते हैं। श्री मदनलाल जी कपड़े के व्यापारी हैं। उन्हें कोई व्यक्ति एक गोलियों का योग बता गया था। गठिया पक्षाघात के रोगी उनसे बिना मूल्य की यह गोलियां लेकर स्वास्थ्यलाभ करते हैं। एक बार हमने उनसे यह योग मांगा और यह देखकर हमारे आश्चर्य की सीमा न रही कि यह भी रसोन का ही एक योग है जो इस प्रकार है।

हरमल के बीज १ पाव, रसोन २ सेर, अदरख स्वरस १ सेर मिलाकर, खरल करके चनक प्रमाण गोलियां बना लें, और घृत के घूंट से प्रयोग करें।

दर्द व पक्षाघात के लिए—लहसुन ४ छ०, नमक काला १ तो०, अजवायन १ तो०, हींग भुनी हुई १ तो०, नमक सेंधा १ तो०, सोंठ १ तो०, मिरच काली १ तो०, पिप्पली १ तो०, जीरा १ तो०। विधि—लहसुन का छिलका उतार कर सिल पर पीस लें। बाकी चीजों को कूट कपड़ छान कर के मिला लें। आधे से एक तोला तक एरण्ड मूल क्वाथ से प्रातः सायं दिया करें।

बाल जीवन—प्याज़ का रस १५ तो०, लहसुन का रस १५ तो०, गोमूत्र १ पाव, रैक्टिफाइड स्पिरिट १० तो०, केशर ३ मा०, सबको मिलाकर रखें। डब्बा, निमोनिया, सर्दी, जुकाम खाँसी में लाभकारी है। मात्रा ५-५ बूंद मां के दूध के साथ दें।

लहसुन—लहसुन के लहशुन नाम के आयुर्वेदिक इंजैक्शन भी मार्कीट में हैं। पक्षाघात, निमोनिया, नपुंसकता में इनका सफलता से प्रयोग हो रहा है। ३० बूंद परिस्रुत जल में ३ बूंद लहसुन स्वरस मिला कर भी इंजैक्शन बनाकर लगाया जा सकता है। परन्तु यह इंजैक्शन दर्द बहुत अधिक देता है।

अन्धापन

लेखक —डा० एस० के० हरी

आँख एक कैमरे के समान है। जिस प्रकार फोटो कैमरा के सामने आने वाली वस्तु का चित्र नैगेटिव प्लेट पर बन जाता है, इसी प्रकार आँख की पिछली ओर एक बारीक झिल्ली प्लेट का काम करती है। आँख में बने चित्र को आँख नहीं देखा करती, किन्तु एक नाड़ी की सहायता से जिसे औपटिक नर्व कहते हैं, मस्तिष्क देखा करता है। कई अवस्थाओं में यह चित्र धुंधला बनता है। बाहरी वस्तुओं से टकरा कर जो प्रकाश रश्मियां, आंख के कैमरे में पुतली की राह से प्रविष्ट होती है, उन रश्मियों के फोक्स होकर नैगेटिव प्लेट तक पहुंचते हैं और चित्र साफ बनता है। रश्मियों को फोक्स (केन्द्रित) करने के लिये प्रकृति ने आंख के भीतर एक कन्वैक्स शीशा लगा रखा है जिसे Lense कहते हैं। यह शीशा प्रत्येक आंख में एक जैसा नहीं होता, इस लिए प्रत्येक व्यक्ति की दृष्टि एक समान नहीं होती।

आपने कभी रात्रि में शेर, बिल्ली, गाय आदि की आंख को थोड़ी रोशनी में देखा हो तो मालूम होगा कि बिजली के बल्ब की तरह उनमें से रोशनी होती है। इसका कारण यह है कि रात्रि में भ्रमण करने वाले जानवरों की आंखों में एक नहीं चार-चार और आठ-आठ शीशे चित्र को केन्द्रित करने के लिये लगे होते हैं। और इन शीशों Lense के कारण ही यह जानवर रात को देख सकते हैं। कौटिल्य शास्त्र और अन्य प्राचीन ग्रंथों में ऐसे सुरमों के योग मिलते हैं जिनमें इन मनुष्य शीशों की शक्ति बढ़ाने के लिए रात्रि के अन्धेरे में विचरने वाले पशुओं की आंखों को अर्थात् शीशों को प्रयोग करने का उल्लेख मिलता है। गीध की आँख व अण्डों का प्रयोग तो दृष्टि बढ़ाने के लिए प्रसिद्ध है।

अगर मनुष्य की आंख के शीशों की मोटाई अधिक हो तो आंख के अन्दर जाने वाली किरणें नैगेटिव प्लेट तक पहुंचने से पूर्व ही मार्ग में ही फोक्स हो जाया करती है, ऐसे लोगों की दृष्टि कम हुआ करती है। अगर ऐसे व्यक्तियों की आंख के आगे मध्य में पतले अर्थात् कंकेन शीशे ऐनक द्वारा लगा दिए जावें तो रश्मियां प्लेट के निकट पहुंच जाती हैं, और दृष्टि बढ़ जाती है। अगर यह शीशे मोटाई में कम हों तो यह रश्मियाँ नैगेटिव प्लेट को पार करके उसकी पिछली ओर जाकर फोक्स होती हैं। ऐसी आंख की निकट दृष्टि मन्द होती है। अगर ऐसी आंखों के आगे कन्वैक्स शीशों की ऐनक लगाई जाए तो रश्मियां प्लेट के निकट फोक्स होने लगेंगी और दृष्टि बढ़ जायगी। दोनों ही अवस्थाओं में एकही नियम काम करता है। अर्थात् रश्मियों का फोक्स जितना नैगेटिव प्लेट के निकट बनेगा उतना ही चित्र साफ होगा।

अगर रश्मियों का फोक्स ठीक करने के लिए ऐनक का प्रयोग न किया जाये तो धुंधले चित्र को देखने के लिए मस्तिष्क जोर लगाता है और थक जाता है। मस्तिष्क की थकावट को Strain कहते हैं। इस जोर

लगाने का परिणाम सिर पीड़ा होता है। आंख की थकावट, आंख में दर्द, जल का बहना, दृष्टि का फट जाना, आंख के आगे अन्धेरा आना, आंख में खुजली होना, आंख का लाल हो जाना, ज्वर हो जाना, चक्कर आना, आंख में फुन्सियां निकलना, आदि। कई लोग इसी कारण से काले मोतिया का शिकार हो कर सर्वदा के लिए अन्धे हो जाते हैं। ४०-५० वर्ष की अवस्था में जब दृष्टि मन्द हो जाऐ तो ऐनक के बिना लिखने पढ़ने का काम न करना चाहिऐ।

जन्म के अन्धे भी देखने लगेंगे

मि० विलियम की आयु ५२ वर्ष की है। वह ३० वर्ष की आयु में एक दिन अन्धा हो गया। वह शैफिल्ड (होलैण्ड) के निकट मिसिज गरटर वुड प्रिन्स के पास मोटर ड्राइवर था, एक दिन डरबी को जाते हुवे उसकी आंखों के सामने अन्धेरा आने लगा और २० मिनट में वह बिल्कुल अन्धा हो गया। सं० १९५० में वह शैफिल्ड के एक नेत्रों के हस्पताल में प्रविष्ट हुवा। डाक्टरों ने रोग का निदान किया कि उसके मस्तिष्क में कोई विद्रधि होने से अन्धा हुआ है। उन्हों ने उसके मस्तिष्क को खोल कर काटा चीरा। एक आपरेशन गले पर भी किया, परन्तु उसकी दृष्टि वापस न आई। डाक्टरों ने निर्णय दिया कि उसकी आंख में रोशनी की एक भी किरण नहीं।

इसके बाद वह लंदन में मिसिज जूलिया के नेत्र चिकित्सा हस्पताल में प्रविष्ट हुवा। मिसिज़ जूलिया ने प्रथम दिन दो बार उसकी ग्रीवा की पिछली ओर मधुमक्खी से कटवाया, अगले दिन चार बार, उससे अगले दिन ६ बार और चौथे दिन मि० विलियम देखने योग्य हो गया। अब मि० विलियम ऐनक लगाता है परन्तु मिसिज़ जूलिया का कहना है कि इसी चिकित्सा से उसकी ऐनक भी छूट जायेगी।

१०० वर्ष तक दृष्टि ठीक रखने के उपाय

१-स्नान से पूर्व नित्य प्रति पैर के अंगूठे के नाखूनों को सरसों के तेल से तर रखें।

२-प्रति दिन पांव के तलुवों की ५ मिनट तक तैल से मालिश करें।

३-प्रातःकाल में मुख में जल भर कर आंखों पर जल के २० बार छीटे दें। इस में अपना मुह पूर्व दिशा में रखें, इससे आंख का दुखना और रतौंधी भी दूर होती हैं।

४-आंखों में कच्ची घानी के तेल की १-२ बूंद डालें।

५-भोजनोपरान्त आँखों व मस्तक को खूब धोना चाहिए।

नीम का काजल—नीम के पत्तों की लुगदी बना कर रुई की बत्तियों पर लगा कर सुखा लें, उसको शुद्ध घृत व सरसों के तेल के दिये में रख कर जला लें, थोड़ा मुश्क कपूर भी मिलावें। ऊपर मिट्टी का ठीकरा रख कर काजल उतार लें। यह काजल ममीरे से भी बढ़िया है, दृष्टि बढ़ाता है।

आमले का स्वरस सेवन करने से दृष्टि बढ़ जाती है।

दृष्टिमांद्य—अपनी आयु के तृतीय भाग की संख्या में बादाम रात्रि को पानी में भिगो दें। प्रातः छिलका उतार कर पाव भर उष्ण दुग्ध के साथ प्रयोग करें।

निर्मली के बीज ५ तोला, काली मिर्च ५ तोला, दोनों को बारीक चूर्ण कर काले सर्प की चर्बी से २ दिन घोंट कर अञ्जन बनावें, इसके लगाने से दृष्टि बढ़ जाती हैं।

विलाऊ, ऊंट, भेड़िया, सुअर, बगुली, कौआ, उल्लू, और रात्रि में विचरण करने

वाले अन्य प्राणियों में से एक दो व बहुतों की दाहिनी आंखों को अलग और बांई आंखों को अलग ले कर दो जगहों पर चूर्ण कर लें। बाद में बांई आंख के चूर्ण को दांई आंख में और दांई आंख के चूर्ण को बांई आंख में लगावें। इससे अन्धकार में भी पुरुष प्रत्येक वस्तु को देख सकता है। लैन्स शक्ति के लिए लैन्सों को प्रयोग किया गया है।

नेवला का भेजा आंख में लगाने से नेत्र रोग दूर होते ह।

गिर गिट के सर का सुरमा दृष्टि बढ़ाता हैं।

मुर्ग वसा मधु मिला कर आंख में लगाने से तिमिर दूर होता है। उल्लू की वसा को पिघला कर आँख में डालें तो रात्रि में नजर आने लगे।

बाज का रक्त व पित्त आंख में डालने से दृष्टि बढ़ती है। काले सर्प की वसा शेख नामी और निर्मली बीजों को खरल कर बनाये अन्जन से अन्धों को भी दिखाई देने लगता है।

सफल चिकित्सा

एक असाध्य रोग की असाध्यता पर आयुर्वेदीय चिकित्सा प्रणाली की असाधारण विजय

लेखक—वैद्य श्री वासुदेव, रघुनाथपुरा, जम्मू

रोग—साक्षेपकोन्माद।

रोगी—श्रीमती शान्तिदेवी जी। आयु—२२ वर्ष। रोग का पूर्व वृत्त—रुग्णा के पिता श्री ला. हवेली राम जी तत्कालीन चीफ़ सैक्रेटरी, जम्मू व काश्मीर स्टेट, के कथनानुसार—आयुर्वेदीय चिकित्साधीन आने से ३ मास पूर्व रुग्णा जरायु विकारजन्य उत्क्षेपों (Convulsions) द्वारा पीड़ित हुई।

वर्तमान वृत्त—रुग्णा को थोड़ी २ देर के बाद मृत्यु पथ पर ले जाने वाले विशेष कष्टप्रद उत्क्षेपों का आक्रमण, निद्रा और क्षुधा का अभाव, मलावरोध, विषण्णता अवसन्नता, तथा विमर्शता और बुद्धिविभ्रंश इत्यादि उन्माद के लक्षणों की विद्यमानता। चूंकि अपने आप मल का उत्सर्जन नहीं होता था इसलिये मल विसर्जन के लिये प्रतिदिन वस्ति कर्म का प्रयोग होता था!

चिकित्सा सम्बन्धी व्यवस्था

(१) वातकुलांतक विशेष १ रत्ती
सिद्ध मकरध्वज ½ रत्ती
जवाहर मौहरा ½ रत्ती
सहपान-मधु—अनुपान-त्रिफला फांट।
प्रयोग काल—प्रात: ७ बजे।

(२) सर्पगन्धा मूल चूर्ण ६ रत्ती
मकरध्वज ½ रत्ती
जवाहर मौहरा ½ रत्ती
अनुपान—गुलाब जल
प्रयोग काल—मध्याह्न: १ बजे व रात्रि के १० बजे।

(३) वृहद्वात चिन्तामणि १ रत्ती
वात कुलांतक विशेष ½ रत्ती
जवाहर मौहरा ½ रत्ती
सहपान-मधु, अनुपान-त्रिफला फांट।
प्रयोग काल—६ बजे सायं।

परिणाम—१ सप्ताह बाद उत्क्षेपों के दौरे बंद होगये, मल का उत्सर्जन वस्ति कर्म बिना ही होने लग गया, क्षुधा बढ़ गई और निद्रा भी आने लग गई। करीब १॥ मास तक उपर्युक्त चिकित्सा ही चालू रही। फल स्वरूप रोगजन्य इतर लक्षण तो शान्त हो गये परन्तु रुग्णा ने मौन व्रत्त धारण कर लिया, अतएव सब औषधियां बंद करके अधो लिखित व्यवस्था की गई।

(१) माहेश्वर घृत ६ माशे
सहपान—गौदुग्ध
प्रयोग काल—प्रात: सायं

(२) कृष्ण चतुर्मुख १ रत्ती
जवाहर मौहरा ½ रत्ती
अनुपान—मधु
प्रयोग—नित्य नहीं बल्कि कभी २ प्रात: काल घृत के प्रयोग से पूर्व।

उपर्युक्त चिकित्सा अनुमानत: १॥-२ मास तक जारी रही। परिणाम स्वरूप रुग्णा पूर्ण स्वस्थ हो गई।

नोट—जिस औषधि को माहेश्वर घृत के नाम से अभिहित किया गया है। वह वास्तव में भैषज्य रत्नावल्योक्त महा पैशाचक घृत ही है, अन्तर केवल इतना ही है कि घृत की क्वाथ्य औषधियों में ४ सेर घृत के लिये

१० तोले सर्पगन्धा मूल को भी परिक्षिप्त किया गया था और वृश्चकाली के स्थान में दरुनज अक़रबी नामक यूनानी द्रव्य का प्रयोग किया गया था।

वातकुलांतक विशेष और जवाहर मौहरा के योगों और गुण-धर्म आदि का उल्लेख मेरे उस लेख में आ चुका है जो दिसम्बर १९५५ की सम्मेलन पत्रिका में अखण्ड अपस्मार के मरणासन्न रोगी की सफल चिकित्सा शीर्षक से प्रकाशित हुआ था।

(मत्प्रणीत जटिल रोगों की सफल चिकित्सा से उद्धृत)

——

साबूदाना

ले०—आयुर्वेदाचार्य पं० चन्द्रमणि शास्त्री एम० ए०

वर्तमान युग में साबूदाने का पथ्य रूप में व्यवहार अधिकता से किया जाता है। किन्तु यह एक खेद का विषय है कि इस के मौलिक तथ्य को खोजने का प्रयत्न नहीं किया गया है। वैद्य, डाक्टर, यूनानी, हकीम सभी निःशंक इसका व्यवहार करते हैं। निघण्टु-ग्रन्थों में कहीं भी इस का उल्लेख नहीं मिलता।

धनपति मिश्र ने आकर व्रज्या नामक ग्रन्थ में साबूदाने को सर्वथा अभक्ष्य लिखा है। इस से स्पष्ट सिद्ध है कि यह कृत्रिम संदिग्ध पदार्थ है। सन् १६०६ में सिकन्दराबाद (यू. पी.) में भाषण देते हुये विश्वान्वेषक दो विद्यार्थियों ने बतलाया था कि साबूदाने की उत्पत्ति केले जैसे वृक्ष की फली से दानों की शक्ल में ही होती है। यह विचार संदिग्ध है। प्लान भूगोल का अध्ययन करने से विदित हुआ है इस की उत्पत्ति खिजूर जाति के वृक्ष "Sago Plant" से होती है। इस का वृक्ष चीन, जापान, मलाया, जावा, सुमात्रा, बोर्नियो, न्यूगिनी आदि प्रदेशों में पाया जाता है। इस के फल गोल गेंद के सदृश होते हैं परन्तु साबूदाना इस के फल से नहीं प्राप्त होता। अपितु उस वृक्ष की छाल को कूटकर पानी में डाल कर मथ डाला जाता है। सत गिलोय के सदृश श्वेत सार उस में से निकाला जाता है। सार को शुष्क होने से पूर्व ही गोल दानों की शक्ल में बना दिया जाता है।

आज विज्ञान के युग में तो जब कि प्रत्येक पदार्थ कृत्रिम बनने लगा है साबूदाने में भी नक्कालों ने क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिखाया है। चावलों की टूटन से तथा आलू, अरारोट, शोरा आदि डालकर साबूदाना बनाया जाने लगा है। गत महायुद्ध काल में मक्का, बाजरे के आटे से बना हज़ारों मन साबूदाना देहली के बाजारों में बेचा जाता था जो कि पथ्य रूप में सर्वथा अग्राह्य है। आज भी साबूदाना शुद्ध रूप में नहीं मिलता।

अतः वैद्य बन्धुओं को साबूदाने की विकृति को भली प्रकार समझ कर जनता के हित के लिये अपनी रोगीपथ्य व्यवस्था से उसे बहिष्कृत करने का सतत प्रयत्न करना चाहिये।

उत्तिष्ठत, जागृत, प्राप्य वरान्निबोधत

ले०—वैद्यरत्न कविराज श्री प्रतापसिंह जी रसायनाचार्य, बनारस

राजनैतिक स्वातन्त्र्य देश का सच्चा स्वातन्त्र्य नहीं है। हमारा आराध्य चिकित्सा-शास्त्र विदेशी स्वार्थी व्यापार परायण चिकित्सा कुशलों के कुचक्र की जंजीरों से आज भी जकड़ा हुआ है। पश्चिमी चतुर चिकित्सकों ने हमारे देश-वासियों को ऐसा चकाचौंध कर दिया है कि वे उनके वाक्-जाल, प्रचार और औषधियों के नवातिनव स्वरूपों को सामने देखकर मुग्ध हो गये हैं और चिकित्सा-समाज को जड़ बना दिया है। क्या यह दशा आपके लिए सहनीय है? यदि नहीं तो उठिये, जागिये और अपने कल्याण के मार्ग को ढूंढिये, जैसा वेद भगवान ने भी उपदेश दिया है—

"उत्तिष्ठत, जागृत, प्राप्य वरान्निबोधत"

आप भगवान धन्वन्तरि के उपासक हैं, प्रतिवर्ष आप कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी को उनकी जयन्ती मनाने का समारोह करते हैं। परन्तु क्या कभी आपने यह भी सोचा है कि आप आत्रेय, पुनर्वसु, भारद्वाज आदि ऋषियों की जयन्तियां क्यों नहीं मनाते। आप जानते हैं कि भगवान आदि देव धन्वन्तरि ने सर्वप्रथम संसार में शल्य-शालाक्य-चिकित्सा का उपदेश दिया। आप केवल आयुर्वेद विद्यालय और औषधालय का पट्टा लगाकर और कुछ शीशियां इधर-उधर जमा कर कवि-भूषण, कवि-विनोद, कविराज, काव्य-सांख्य, वेदान्ततीर्थ, आयुर्वेद मार्त्तण्ड, पंचानन आदि की उपाधियां लगाकर विविध प्रकार के आडम्बर करते हैं। आप यह भी जानते हैं कि इस प्रकार की अवस्था आपके लिये उन्नतिकारक नहीं है। कभी आप अपने शल्य-शालाक्य-चिकित्सा नैपुण्य से जीवकादि चिकित्सकों के गौरव को पुनः स्थापित करेंगे। इसी आशालता के मूल-सिंचन के लिये यह धन्वन्तरि जयन्ती समारोह मनाते रहे।

अतः मेरी आपसे प्रार्थना है कि यदि आप आयुर्वेद में जीवन डालना चाहते हैं तो शल्य-शालाक्य-चिकित्सा सीखिये और उसमें सुश्रुतोक्त सत्य को मिलाकर शस्त्र-क्रिया में क्रान्ति उत्पन्न कीजिये। चांदसी-चिकित्सा को पुनः जिलाइये। इसी प्रकार काय-चिकित्सा का काया-कल्प कीजिये और अनेक प्रकार की बनस्पतियों का पुनः संशोधन कर संसार की प्रगति के साथ उनके कल्प-निर्माण कर आर्त जनता की रक्षा कीजिये।

आज की सरकार आयुर्वेद के सत्य तत्वों पर भी ध्यान नहीं देती है। इसके कुछ उदाहरण मेरे अनुभव में आए हैं। मैं जब राजस्थान में डायरैक्टर था, तब स्थानीय सरकार के सामने मैंने यह प्रश्न रखा कि स्नायुक (गिनीवर्म) रोग को निर्मूल करने के लिये द्रोणपुष्पी का उपयोग किया जावे। यह रोग राजस्थान में बड़ी भयंकरता से व्याप्त है। मैंने इस औषधि से सहस्रशः रोगियों को लाभ पहुंचाया है और विभाग के सचिव को उसका परिणाम दिखाया है। उसने

यह कार्य पाश्चात्य-चिकित्सकों के हाथ में दे दिया और उन्होंने इस पर कुछ काम न करके अमेरिका से कोई दवा मंगवाकर उसके इंजेक्शन देने आरम्भ कर दिये। उसका कुछ लाभ न होने से थोड़े काल बाद उसे भी बन्द कर दिया। किन्तु इस इतिहास प्रसिद्ध औषध का प्रचार न होने दिया। यह औषधि वहाँ राज परम्परा से प्रसिद्ध है। यह वनस्पति वहां के राजाओं को सिखाई जाती थी और उसके लिये सूत्र रूप में एक दोहा भी प्रसिद्ध है: "एताल बाजा बाजिया पेंताल आई जान, राजा बूंटी को पहचान जिसके तोर के दो पान।" इसका प्रयोग भी बड़ा सरल है। माघ की शुक्ला अष्टमी को वनस्पति का पंचांग पीसकर दस तोला स्वरस निकाल कर रोगी को पिला दें और दिन भर खाने को कुछ न दें। केवल सायंकाल एक बार घृत शर्करा ओदन समभाग मिला कर खिला दें। फिर जन्म भर स्नायुक रोग नहीं होता है। ऐसी उपयोगी औषध को मैंने ड्रग रिसर्च इन्स्टीच्यूट को भेजकर उस पर रीसर्च करने की प्रार्थना की। किन्तु खेद के साथ लिखना पड़ता है कि आज तक इस विषय में कोई अनुसन्धान नहीं हुआ और बार-बार स्मरण दिलाने पर कोई उत्तर भी नहीं प्राप्त होता। धन खर्च कर माल भेजो और फिर खुशामद करो, पर परिणाम कुछ नहीं। यही दशा गंगेरुकी की है। इस वृक्ष के मूलत्वक् का चूर्ण अस्थि-सन्धान के लिये परम उपयोगी है। सारे राजस्थान में इसका प्रयोग किया जाता है। केवल नौ दिन इसके मोदक खिलाये जाते हैं और कुछ द्रव्यों का प्लास्टर लगाकर खपच्चियें बांधी जाती हैं। रोगी सात दिन में चलने-फिरने लायक हो जाता है। आयुर्वेद शास्त्र की यह अमूल्य देन है। जो रोगी नवीन प्लास्टर-विधान से ६-६ सप्ताह तक नरक भोग करता है, वह यदि एक ही सप्ताह में काम लायक हो जावे तो क्यों न इसका उपयोग किया जाय। पर यहां तो 'अन्धे के सामने रोना और अपनी आंख को खोना' वाली कहावत चरितार्थ हो रही है। कहां तक बताऊं। राजस्थान में मांसरोहिणी नामक वृहत् वृक्ष मिलता है। यह निघंटु प्रसिद्ध द्रव्य है। वहां के आदि-वासी, भील इसके स्वरस को सद्यः व्रण पर लगाते हैं और व्रण चौबीस घण्टे में सन्धित हो जाता है। इस विषय में भी मैंने गवर्नमेण्ट आफ इण्डिया और मिलिटरी डिपार्टमेण्ट को बार-बार लिखा कि जंगल वारफेयर के लिये यह बहुत ही उत्तम वृक्ष है, पर नक्कारखाने में तूती की आवाज कौन सुनता है। बड़े सिंहाचित नोट पेपर पर उत्तर आता है "धन्यवाद, इस सूचना के लिये रिसर्च विभाग को आपका पत्र भेज दिया गया है।" पर आज तक रिसर्च विभाग से हमें कोई सूचना नहीं मिली कि इस विषय में क्या कार्रवाई हुई है। केवल मेरे अनुसन्धान किये हुए अमरफल पर राष्ट्रपति महोदय ने कृपाकर आसाम में खेती कराने की व्यवस्था कृषि-विभाग द्वारा की है, ऐसी सूचना मुझे मिली है।

आजकल मैं मूत्रग्रन्थी शोथ (प्रोसट्राइ-ट्रिस) पर पलांडु का प्रयोग विशेष सफलता के साथ कर रहा हूं।

क्या आपने कभी सोचा है कि काजू (किशियोनट्स) और मूंगफली (ग्राउण्डनट्स) के प्रभाव और भोजन शक्ति क्या है। यह दोनों द्रव्य आजकल जनसाधारण के उपयोग में बहुतायत से आ रहे हैं। यह हमारे वैद्यों

का कर्तव्य है कि हम इन पर अनुसन्धान करें और इनके रस-वीर्य-विपाक-प्रभाव का ठीक-ठीक मूल्यांकन कर राजा और प्रजा के सामने उपस्थित करें।

जनता की सेवा कैसे करें

अब आइये आप हम मिल कर विचार करें। आप जानते हैं कि आयुर्वेद स्वस्थातुर परायण है। हम लोग आजकल केवल आतुरों की दुःख निवृत्तिमात्र का यत्न करते हैं। किन्तु जन-साधारण के स्वास्थ्य के विषय में उदासीन हैं। इसलिए सर्वप्रथम हमें उनके स्वास्थ्य को उन्नत बनाने के लिए यत्नशील होना चाहिए।

अब आप अपनी शिक्षा पर ध्यान दीजिये। राजकीय पूर्ण नियन्त्रण न होने से भिन्न-भिन्न प्रान्तों में विभिन्न प्रकार की पाठ प्रणाली प्रचलित है। शुद्ध और अशुद्ध आयुर्वेद का द्वन्द अलग ही चल रहा है। जब तक हम सब मिलकर अष्टांग आयुर्वेद पढ़ाने की प्रणाली स्थिर नहीं करेंगे तब तक यह विकृत मनोवृत्ति बन्द नहीं होगी।

यदि हम आज के जमाने में उन्नति करना चाहें तो अपनी शिक्षा का सुधार करना होगा, वनस्पतियों के ज्ञान को बढ़ाना होगा, खनिज रसायन की अभिवृद्धि करनी होगी, एवं पंचकर्म-चिकित्सा, धाराकल्प चिकित्सा, शिरावेध, अग्निकर्म आदि समस्त चिकित्सा विधानों को इस ढंग से पुनरुज्जीवित करना पड़ेगा जिससे हम कायाकल्प-चिकित्सा को सजीव बना सकें अन्यथा इस प्रगतिशील जगत में हमारा कोई स्थान नहीं रहेगा। चाहे हम अपने मुख से अपनी कितनी ही बड़ाई करते रहें। बिना कर्मठ हुए दुनिया में हास्यास्पद बने रहेंगे। और आपके सारे ज्ञान-विज्ञान को विदेशी चिकित्सक अपना कर जगद्गुरु बन जायेंगे। जैसे डा० सेली (Dr Hans Seley of montreal university Canada) नवीन जान्तव परीक्षणों से त्रिदोष सिद्धान्त को अपनी भाषा में व्यक्त कर रहा है। "तत्र वातो यन्त्र तन्त्र धरः" की व्याख्या Stress नामक लेख में कर रहा है और "रोगस्तु दोष वैषम्यं दोषाः साम्यमरोगता" के सिद्धान्त को प्रतिपादित कर रहा है और ५००० से अधिक लेख इस विषय पर विदेशों में प्रकाशित हो चुके हैं। Stress theory का प्रचार होते ही बैक्टीरिया थ्योरी हवा हो जायेगी और आपका निम्न पद्य का वैज्ञानिक अनुवाद जगत् व्यापक हो जायेगा।

पित्तः पंगुः कफः पंगुः पंगवो मलधातवः।
वायुना यत्र नीयन्ते तत्र वर्षन्ति मेघवत्॥

आपके वात-पित्त-कफ का नाम रह जायेगा-STH (Soma tatropic hormone) DCA (Desoxy corticostirone) ACTH (cartisone) और इन को समझाने के लिए व्याख्या हो जायगी Pituitary gland और Suprarenal glands (adrenals) जो मस्तिष्क और वृक्क के ऊपर संलग्न है।

(वंगीय प्रोग्रेसिव कविराज कांग्रेस, कटाई, जि० मिदनापुर, के अध्यक्षीय भाषण का सारांश)

अश्विनी कुमारों को सोमरस-पान का अधिकार

लेखक—वैद्य हंसराज भाटिया, देहली

भारत के पश्चिम में नर्मदा नदी के किनारे भृगुनन्दन महर्षि च्यवन का सुन्दर आश्रम था। कई वर्षों की निरन्तर तपस्या से उनका शरीर दीमकों द्वारा एकत्रित मिट्टी से ढक गया था और केवल दो जुगनू की तरह चमकते हुए नेत्र ही मिट्टी में से उद्भासित हो रहे थे। एक बार राजा शर्याति अपनी इकलौती पुत्री "सुकन्या" को साथ लेकर उस रमणीय आश्रम पर गए। सुकन्या लताओं से खिलवाड़ करती तथा धीरे २ पग बढ़ाती हुई मिट्टी से सने हुए च्यवन के पास जा पहुंची। उस बाँबी के मध्य में चमकते हुए दो जुगनू देख कर उसने कांटा तोड़ कर उन जुगनुओं की ओर बढ़ा दिया। कांटा चुभते ही च्यवन के नेत्रों में रक्तिमा भर गई, ऋषि प्रवर च्यवन ने क्रोधवश शाप दे दिया "सैनिकों का मल मूत्र बन्द हो जाए" सभी सैनिक अत्यन्त पीड़ित हो उठे। राजा शर्याति समझ गए कि महर्षि च्यवन को किसी ने अनुचित तौर से पीड़ित किया है, उसी का फल है।

शर्याति, ऋषि के पास विनम्र भाव से जा कर खड़े हो गए और इस शाप की शान्ति का उपाय पूछा। ऋषि बोले भूपाल! इस कन्या को मुझे दे दो। राजा ने बिना संशय अथवा संकोच किये कन्या का हाथ ऋषि के हाथ में दे दिया। और सेना सहित अपनी राजधानी को लौट गए।

इधर सुकन्या भी च्यवन को पति रूप में पा कर प्रतिदिन प्रेमपूर्वक उनकी परिचर्या करने लगी।

एक दिन स्नान करते हुए अश्विनी-कुमारों ने उसे देख लिया। उस के समीप जा कर बोले, "बोलो हम तुम्हारी क्या सेवा करें" सुकन्या बोली, "देवेश्वरो" मैं अपने पतिदेव च्यवन मुनि में पूर्ण अनुराग रखती हूँ, अतः मेरे पति की यौवन-प्राप्ति का कोई उत्तम उपाय बताएं।

अश्विनी कुमारों ने कुछ रस रसायन (च्यवनप्राश आदि। क्योंकि इसी के बारे में शास्त्रों में वर्णन है कि च्यवन ऋषि इसी को खाकर वृद्ध से युवक बन गए थे। कहा है "अस्य प्रयोगाच्च्यवनः सुवृद्धोऽभूत् पुर्नयुवा") देकर बूढ़े च्यवन को फिर से जवान बना दिया। महातेजस्वी च्यवन ने मनोनुकूल रूप तरुणावस्था और सुन्दर शरीर प्राप्त कर के बहुत हर्ष का अनुभव किया और बोले—

"तस्माद् युवां करिष्यामि प्रीत्याहं सोमपीथिनौ
मिषतो देवराजस्य सत्यमेतद् ब्रवीमि वाम्" ॥

आप दोनों ने मुझ बूढ़े को जवान और सुन्दर युवक बना दिया, इसलिए मैं प्रसन्न हो कर आप दोनों को यज्ञ में देवराज इन्द्र के सामने ही सोमपान का अधिकारी बना दूंगा। यह मैं आप लोगों से सत्य कहता हूं।

सुकन्या के पिता राजा शर्याति को अपने जामाता च्यवन के पुनर्यौवन का जब ज्ञान हुआ, तो वह उन के पास गया और एक भारी यज्ञ का आयोजन किया। उस यज्ञ में महर्षि च्यवन ने अश्विनीकुमारों को प्रतिकार स्वरूप सोम रस का भाग हाथ में दिया तो इन्द्र बिगड़ गए और बोले :—

उभावेतौ न सोमार्हौ नासत्याविति मे मतिः।
भिषजौ दिवि देवानां कर्मणा तेन नार्हतः॥
चिकित्सकौ कर्मकरौ कामरूपसमन्वितौ।
लोके चरन्तौ मर्त्यानां कथं सोममिहार्हतः॥

मुने ! मेरा यह निश्चित मत है, कि ये दोनों अश्विनीकुमार यज्ञ में सोमपान के अधिकारी नहीं हैं, क्योंकि ये द्युलोक-निवासी देवताओं के वैद्य हैं और उस वैद्य वृत्ति के कारण ही इन्हें यज्ञ में सोमपान का अधिकार नहीं रह गया है।

यह दोनों चिकित्सा-कार्य करते हैं और मनमाना रूप धारण कर के मृत्यु लोक में भी घिचरते रहते हैं, फिर इन्हें इस यज्ञ में सोमपान का अधिकार कैसे हो सकता है ?

च्यवन ने कहा ये दोनों अश्विनी कुमार बड़े उत्साही और महान् बुद्धिमान् हैं। रूप-सम्पत्ति में भी सब से बढ़-चढ़ कर हैं। इन्हों ने ही मुझे देवताओं के समान दिव्य रूप से युक्त और अजर बनाया है। देवराज ! फिर तुम्हारे या अन्य देवताओं के सिवा इन्हें यज्ञ में सोमरस का भाग पाने का अधिकार क्यों नहीं है? पुरंदर ! इन अश्विनी कुमारों को भी देवता ही समझो।

परन्तु देवराज इन्द्र ने ज़िद्द की। च्यवन ने उनकी अवहेलना कर के अश्विनी कुमारों को देने के लिए सोमरस का भाग ग्रहण किया। इस पर इन्द्र क्रुध हो उठे और च्यवन पर वज्र से आघात करने को हाथ उठाया। उन के ऐसा करते ही च्यवन मुनि ने मुसकराते हुए इन्द्र की भुजा को स्तम्भित कर देने की आज्ञा दे दी। इन्द्र डर गया और ऋषि से क्षमा मांगते हुए कहा—

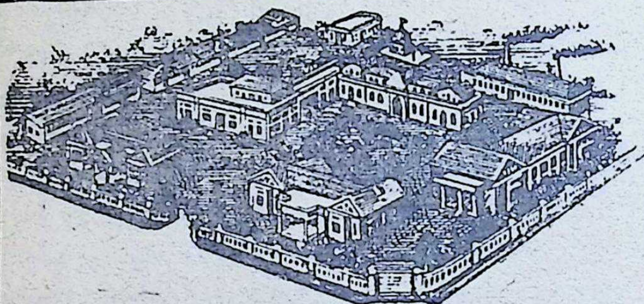
सोमार्हावश्विनावेतावद्यप्रभृति भार्गव।
भविष्यतः सत्यमेतद् वचो विप्र प्रसीद मे॥

ये दोनों अश्विनी कुमार आज से सोम पान के अधिकारी होंगे। मेरी यह बात सत्य है, अतः आप मुझ पर प्रसन्न हों।

यह ऐतहासिक घटना [श्रीमान भाटिया जी ! यह घटना ऐतिहासिक नहीं पौराणिक है, अगर किसी सनातन धर्मी की दृष्टि आप की इन पंक्तियों पर पड़ गई तो विष्णु भक्त शाप देने के लिए उद्यत हो जायेंगे। पुराण इतिहास है ऐसा तो केवल कुछ अंग्रेज ही मानते हैं। आपने यह कैसे स्वीकार कर लिया ?] त्रेता और द्वापर की सन्धि के समय घटित हुई थी। परन्तु आज पुनः कलियुग में देवेन्द्र श्री नेहरू द्वितीय पंचवर्षीय योजना रूपी यज्ञ [आह ! द्वितीय पंच वर्षीय योजना एक यज्ञ है। आप ने तो इस नवीन खोज से हमें आश्चर्य चकित कर दिया है। एक बार सर फिरोज खां नून ने जब वह वायसराय की ऐग्जैक्टिव के मैम्बर थे लंडन में भाषण देते हुए कहा था कि भारत डोमीनियन स्टेटस प्राप्त कर चुका है और इसका कांग्रेस व अंग्रेज दोनों को पता नहीं। आप की बात भी ठीक इसी तरह की है। एलोपैथी के लिए २६० करोड़ मंजूर किया जा रहा है और आप समझ रहे हैं कि एक यज्ञ हो रहा है] में देव-वैद्य अश्विनी कुमार श्री शिवशर्मा तथा इनके अनुयायी पूर्ण वैद्यसमाज को उनका यथाभाग देने को उद्यत नहीं हैं. वैद्य शिवशर्मा जी अश्विनी कुमारों की भाँति सुन्दर नैननक्श वाले तथा प्रतिभा-सम्पन्न वैद्य हैं। अवश्य ही दिल्ली के नार्थ ऐविन्यू में (पार्लियामेंट के मैम्बरों के आश्रमों के अन्दर) उन्हें कोई महर्षि च्यवन मिल जाएंगे। और यदि दो चार ऐसे महर्षि मिल जाएं, जैसे कि श्री मोहनलाल सक्सेना, श्री धुलेकर, श्री

वालिङ्ग तथा अन्य कई एक आयुर्वेद के पोषक मेंबर जिन्होंने आयुर्वेद का पृष्ठ-पोषण किया है तो अवश्य ही हमें अपना पूर्ण भाग मिल जायगा।

गत मास पार्लियामेंट के मैम्बरों के सन्मुख पहले व्याख्यान की महत्ता को उस प्रयत्न-शृङ्खला की पहली कड़ी समझना चाहिए और इस प्रयत्न को जारी रखना चाहिए ताकि इस का यह क्रम भंग न हो जाए। मेरे पास भी कई सदस्यों के उत्साह-पूर्ण सन्देश पहुंचे हैं। इसी कारण में यह संदेश देव-वैद्य श्री पं० शिवशर्मा तक पहुंचा रहा हूं, ताकि वे अपने इस प्रयत्न को जारी रखें, अपने लिए नहीं, आयुर्वेद के उद्धार के लिए।



आयुर्वेदवादावली

लेखक—वैद्य वाचस्पति पं० श्रीराम शर्मा

दोषलक्षणं नाम प्रथमो वादः

अथ दोषो विमृश्यते । शास्त्रकारा बहवः स्वस्वसमीहितसिद्ध्यै दोषलक्षणान्यन्यथा चान्यथा पठन्ति । तथा हि अनुमितिकारणीभूताभावप्रतियोगियथार्थज्ञानविषयत्वं, यद्रूपावच्छिन्नविषयकनिश्चयः प्रकृतानुमितिप्रतिबन्धकः तद्रूपावच्छिन्नत्वं इत्यादिना महता प्रबन्धेन हेतुदोषान् व्याचक्षते नैयायिकाः । रसानुभवप्रतिबन्धकत्वं दोषत्वमित्यालंकारिकाः । कलत्रभावदोषः पुत्रभावदोषः इत्यादीन् भावदोषान् भावप्रतिबन्धकान् वदन्ति ज्योतिर्विदः । ऊर्णकादि दोषान् कुटुम्बहानिकरान् कथयन्ति गवाश्वरक्षणविदः । एतत्सर्वानुगतं दोषशब्दप्रवृत्तिनिमित्तं किञ्चिद्वक्तव्यम् । स्वयं दुष्यति परानपि दूषयतीति व्युत्पत्या "दुष" धातोर्निष्पन्नोऽयं दोषशब्दः दूषणत्वं प्रवृत्तिनिमित्तीकृत्य सर्वत्र प्राज्ञैः प्रयुज्यते । आयुर्वेदे दोषशब्दः पारिभाषिकः । वातपित्तकफान् त्रीनपि दोषानभिधत्ते च । अस्य लक्षणमाह वाग्भटाचार्यः "दोषा एव हि सर्वेषां रोगाणामेककारणम्" इति । तथा च रोगकारणं दोष इति पर्यवसितम् । रोगनिष्ठकार्यतानिरूपितकारणत्ववानित्यर्थः । एतावन्मात्रोक्तौ तादृशकारणत्वस्य कालार्थं कर्मणां हीनमिथ्यातिमात्रकयोगादिनिमित्तकारणेऽपि स्यादतिप्रसक्तिः । तदर्थं कार्यतावच्छेदकसंबन्धो विवेचनीयः । समवायसंबन्धावच्छिन्नकार्यतेति कार्यतायां विशेषितायामपि असमवायिकारणे दूष्यसंमूर्च्छने दोषस्तदवस्थः । तत्परिहाराय च कारणतावच्छेदकसंबंधोऽपि निवेशनीयः । स च संबन्धस्तादात्म्यरूपः । तथा च समवायसंबन्धावच्छिन्नरोगनिष्ठकार्यतानिरूपिततादात्म्यसंबन्धावच्छिन्न कारणत्वं दोषे भवतीति दोषलक्षणं सुस्थम् ॥

वातादीनां लक्षणं तु "तत्र रूक्षो लघुः शीतः इत्यादिवाक्यैः पठितम् । अस्य विवरणं तृतीयवादे भविष्यतीति तत एवावसेयम् ।

ननु "वायुः पित्तं कफश्चेति त्रयो दोषाः समासतः" इति शास्त्रकारैः शास्त्रारम्भे दोषसंज्ञयैव व्यपदेशः कृतः । न तु धातुसंज्ञया । का तत्र युक्तिरिति चेदुच्यतेः—वातपित्तकफानां त्रयाणामपि सर्वदा दूषणस्वभावाद्दोषसंज्ञैव प्रधानतमेति शिष्यानवबोधयितुं शास्त्रारम्भे दोषपदं प्रायुङ्क्त । स्फुटयति चैतमर्थमुपरिष्टादाचार्यः । यथाः—"वयोऽहोरात्रिभुक्तान्ते तेऽन्तमध्यादिकाः क्रमा"दिति । अहनि त्रिधा विभक्ते कफपित्तवातानां प्रकोपः । एवमेव रात्रौ वयस्यभ्यवहारे च । तथा च सर्वदा त्रिदोषाणां प्रकोप एव शास्त्रकारैर्वर्ण्यते । परन्तु लघीयसा प्रकारेण प्रकोपः । प्रकोपे लघीयस्त्वं नाम विना विशेषचिकित्सां स्वयमेवोपशमः । एवं सर्वदा प्रकोपरूपदूषणस्वभावानामेतेषां दोषसंज्ञयैव व्यवहारः प्रधानतम इत्याचार्याणामभिमतम् ।

ननु सर्वदा प्रकोपे अभ्युपगम्यमाने दोषाणां धारणत्वं हीयेत । नेति ब्रूमः। लघीयस्सु प्रकोपेषु न व्याधिसंभवः। तथा च धारणस्वभावत्वस्य न कापि हानिः। यथा च रोगकारणत्वं दोषस्य लक्षणमित्युक्तं, तथा अरोग्यकारणत्वमप्यपरं लक्षणम्। अस्य च प्रमाणं "दोषसाम्यमरोगते" ति आचार्यवचनमेव। आरोग्यनिष्ठकार्यतानिरूपितकारणत्वमिति तदर्थः॥

इति वैद्यवाचस्पति पण्डित श्रीरामशर्मणः कृतौ आयुर्वेदवादावल्यां प्रथमो वादः॥

अथ रोगारोग्यविनिर्णयो नाम द्वितीयो वादः

अत्रैवं विचार्यते को नाम रोगः? किं वारोग्यमिति। पदार्थयोरेतयोर्दोषलक्षणघटकत्वात्प्राधान्येन ज्ञातव्यत्वाच्चायं प्रस्तूयते वादः। रुजधातोर्निष्पन्नोऽयं रोगशब्दः पीडाकरत्वं प्रवृत्तिनिमित्तीकृत्य ज्वरादिषु वर्तते। पीडाकरत्वं रोगत्वमिति तस्य लक्षणम्। एतावत्युक्ते प्रहारादिना आतपादिना वा जायमानायां पीडायामपि लक्षणस्यातिप्रसङ्गः। ततश्च त्रिदोषजन्यत्वे सति पीडाकरत्वमिति लक्षणे कृते न कोऽपि दोषः। पीडा, दुःखं वेदनेत्यादिकाः पर्यायवाचकाः शब्दाः। आत्मनि मनःसंयोगेन जायमानज्ञानविशेषः पीडा। तस्याश्च पीडायाः शरीरमधिष्ठानं, मनश्च। तथा च शरीरं तदङ्गभूतं मनो वा द्वारीकृत्यात्मनि जायमानः ज्ञानविशेष इति पर्यवसितोऽर्थः। प्रकारद्वयं दर्शयत्याचार्यो रोगशब्दनिर्वचने। "रोगस्तु दोषवैषम्यं" "कुपितास्तेन नैकधा। कुर्वन्ति विविधान् व्याधीन्" इति वचनद्वयं परस्परविभिन्नार्थकं दृश्यते। दोषवैषम्यमेव रोगो वा, दोषवैषम्येन जायमानः अपरः कश्चन पदार्थो वा रोग इति विवेचनीयम्।

इदमत्रावधातव्यम्। आशयस्थितास्त्रिदोषाः प्रकोपकारिभिराहारादिभिरुन्मार्गं प्रपन्ना विषमा इत्युच्यन्ते। ते च विषमा दोषा यदि दूष्यसंमूर्च्छनां लभन्ते तदा रोगं जनयन्ति। तथा च दोषा रोगं प्रति समवायिकारणम्। वैषम्यकारणीभूताहारविहारादयो निमित्तकारणम्। दूष्यसंमूर्च्छना असमवायिकारणम्। एवं समुदितेन कारणत्रितयेन रोगरूपकार्यं निष्पद्यते। तथा च वैशम्यानन्तरं जायमानदूष्यसंमूर्च्छना यदि न स्यात् तदा असमवायिकारणाभावेन कार्यनिष्पत्तिरेव न स्यात्। तथा च दोषवैषम्यं दूष्यसंमूर्च्छनासंपादनेन कार्यनिष्पत्तये भवति। तस्माद्दोषवैषम्यं रोग इति वदतामयमाशयः; अवश्यसंभावनीयां दूष्यसंमूर्च्छनां प्रपद्यैव कार्यं करोति। इति वचनान्तरैः स्पष्टोऽयमर्थः। तस्मान्न केवलदोषवैषम्यं रोगकारणम्। अनन्तरपर्वं समासाद्यैव व्याधीन् जनयति। अयमर्थः संप्राप्तिप्रकरणे स्पष्टः। "आमाशयं प्रविश्यामं...कुर्वन्ति गात्रमत्युष्णं ज्वरं निर्वर्तयन्ति ते"। इतीदं वचनमुन्मार्गगामिना दोषेण तत्र-तत्र संचरता ज्वराख्यो व्याधिर्भवतीति वैषम्यापेक्षया रोगस्य पार्थक्यं वदति।

ननु पार्थक्ये ज्ञातेऽपि रोगस्य स्वरूपज्ञानं न भवति। किं तद्द्रव्यं? गुणः क्रिया वा? न तावत्प्रथमः कल्पः युक्तेरभावात्। द्रव्यत्वे अभ्युपगम्यमानेऽपि किं तन्मूर्तम्? उत अमूर्तम्? मूर्तत्वे ग्राहकप्रमाणं वक्तव्यम्। न तच्चाक्षुषं रूपाभावात्। ननु रूपाभाव इति हेतुर्न साधुः। तदेव व्यक्ततां यातं रूपमित्यभिधीयत इति रूपवत्वस्मरणात्। नैतत्। वैद्यशास्त्र-

सिद्धमिदं रूपं चाक्षुषप्रत्यक्षौपायिकं रूपं नाभिधत्ते। तस्मादचाक्षुषत्वे कथं तस्य ग्रहणम्। न तावद्द्वितीयः कल्पः। निर्गुणा गुणा इति वचनेन गुणे गुणानङ्गीकारात्। ज्वरे उष्णत्वं गुणः। न तावत्तृतीयः कल्पः। सुतरामसंभवात्॥

अत्रोच्यते। संमूर्च्छनानन्तरं जायमानो रोगो द्रव्यमेव भवितुमर्हति। गुणाश्रयत्वरूपद्रव्यत्वस्य तत्राक्षतत्वात्। किञ्च द्रव्यमेव सन् स रोगः क्वचिदमूर्तः क्वाचिन्मूर्तश्च। रोगायतनत्वेन परिगणितानां स्थानत्रयाणां मध्ये अन्तर्भागावलम्बनाः प्रायशः सर्वेऽपि रोगा अमूर्ताः। बहिर्भागावलम्बना रोगाः समेऽपि मूर्ताः। अस्थिसंध्याश्रयाः सर्वेऽपि रोगा अमूर्ता इति वाग्भटाचार्यः स्पष्टमभिदधाति। अमूर्तानां रोगाणां विज्ञाने प्रत्यक्षं न प्रभवति। अनुमानेनैव तेषामवगमः। उष्णादिना बाह्यलिङ्गेन त्वाचप्रत्यक्षवेद्येन ज्वर अनुमीयते अयं ज्वरवान् उष्णाधिक्यात् देवदत्तवत् इति। एवमेवातिमलप्रवृत्या लिङ्गेनातिसारोऽनुमीयते। एवमेव सर्वत्रापि द्रष्टव्यम्। रोगाणाँ च त्रिदोषा एवोपादानकारणमित्यत्र सुश्रुताचार्यः सप्रमाणं सयुक्तिकं चोपपादयतिः— "दोषान् प्रत्याख्याय ज्वरादयो न भवन्ति; अथ च न नित्यः संबन्धः; यथा हि विद्युद्वाताशनिवर्षाण्याकाशं प्रत्याख्याय न भवन्ति, सत्यप्याकाशे कदाचिन्न भवन्ति, अथ च निमित्ततस्तत एवोत्पत्तिरिति, तरङ्गबुद्बुदादयश्चोदकविशेषा एव, वातादीनां ज्वरादीनां च नाप्येवं संश्लेशो न परिच्छेदः शाश्वतिकः, अथ च निमित्तत एवोत्पत्तिः" इति। अयमर्थः— रोगस्त्रिदोषेषु सन्नेवोत्पद्यते वा? असन्नुत्पद्यते वा? यदि सन् तदा आरोग्याभावः। यद्यसन् तदा देहान्तरे व्याधिसमुत्पत्ति-संभवः इत्युभयतःपाशा रज्जुरिति प्रष्टुराशयः। अत्राचार्यः प्रति-वक्तिः— सन्नेव रोगस्त्रिदोषेषूत्पद्यत इति नाभ्युपगच्छामः इति प्रथम-कोटिं प्रतिक्षिपन् द्वितीयविकल्पमर्वाङ्गीकारेणाभ्युपगम्य समाधत्ते। यदा पुनर्निमित्तकारणसामग्री संपन्ना भवति तदा असन्नपि रोग-स्त्रिदोषानेवोपादानीकृत्य तत्रैव भवति। तथा चोपादानकारणनि-मित्तकारणयोरैकाधिकरण्ये सति तत्रैव कार्योत्पत्तिरिति॥

तथा चायुर्वेदिनां मते सत्कार्यवादप्रतिक्षेपः सर्वथा अङ्गीकार्यः। सत्कार्यवादेऽभ्युपपगम्यमाने अरोग्यावस्थितेस्सर्वथा असंभावितत्वमेव स्यात्।

अथ आरोग्यपदार्थं विमृशामः। आरोग्यं नामारोगता। अरोगता तु रोगाभावः। ननु रोगाभाव एवारोग्यमिति वक्तुं न शक्यम्। यत आरोग्यस्य भावपदार्थत्वं लौकिका वैदिकाश्च सर्वे मन्यन्ते। नैवम्। भारापगमे दुःखमेव निवर्तते न तु सुखं भवति। तत्र दुःखाभावस्यैव सुखत्वभ्रमः। एवं व्याधिनिवृत्तौ वेदनापगमो भवति। ततश्च रोगाभावादन्य एव कश्चन भावपदार्थो जनैरिष्यमाणो वक्तव्यः। आरोग्यं च द्रव्यगुणक्रियासु कुत्रान्तर्भवतीत्यपि विवेचनीयम्। धातुसाम्यक्रिया, दोषसाम्यं, इत्यादिवचनैरारोग्यपदार्थः कैश्चिद्वर्ण्यते। सोऽपि चिन्तनीयः। यथा दोषवैषम्यात्पृथगेव रोगो भवति तदा दोषसाम्यादन्यः कश्चन पदार्थ आरोग्यपदाभिधेयः। न केवलं धातुसाम्यमात्र-मारोग्यं भवति। त्रिदोषसाम्ये वर्तमानेऽपि रसादिषु यदि कश्चनांशः क्षीयेत तदा तत्रातिप्रसङ्ग अशक्यवारणः। त्रिदोषसाम्ये वर्तमाने रसादिसाम्येनावश्यं भवितव्यमिति न नियमः। यतो रसादिक्षयेषु त्रिदोषप्रकोपस्य

कारणता शास्त्रकारैर्न वर्णिता। एवं कल्पने युक्तिरपि नास्ति। यतो ज्वरादिक्षीणेषु धातुसाम्येऽनुवर्तमानेऽपि आरोग्यसंपादनार्थं क्षीरादिपानमौषधसेवां च शास्त्रमनुशास्ति। ततश्चारोग्यस्यैतल्लक्षणं भवितुमर्हति; त्रिदोषसाम्ये रसादिसाम्ये पुष्टौ च सत्सु बलाधिष्ठानत्वमारोग्यमिति। तथा चाहाचार्यः :—'बलाधिष्ठानमारोग्यं' इति। इदमारोग्यं च गुणेष्वेवान्तर्भवति। अयं च गुणः समवायसंबन्धेन शरीरनिष्ठः अनुमानगम्यश्च।

अत्राधिकमाह वाग्भटाचार्यः। दोषाणामतीव प्रकोपे जाते तत आमविषं संभवति। आमविषेण संपृक्ता दोषाः यदा दूष्येण सह मिलन्ति तदा दूष्यमप्यामविषसंपृक्तं भवति। एतादृश्यामवस्थायां रोगस्य संभवः। तथा च रोगहेतुसामग्र्यामामविषमपि संयुक्तं भवति। ततश्च सर्वे रोगा आमविषसंयुक्ताः कृच्छ्रसाध्यतामसाध्यतां वा प्रपद्यन्ते। यदा पुनः आमविषसंयोगो ह्रसीयान् भवति तदा रोगस्य सुसाध्यता। इयं च रीतिः सर्वेष्वपि कायरोगेषु समाना। व्यतिरिक्तेषु च रोगेषु तत्तद्दोषानुगुण्येन अल्पीयः आमविषं संबध्नाति। अयमर्थः 'दोषेभ्य एवातिदुष्टेभ्यः' इत्यादिना प्रबन्धेन प्रपञ्चितः।

इति वैद्यवाचस्पति पण्डित श्रीरामशर्मणः कृतौ आयुर्वेदवादावल्यां द्वितीयो वादः ॥

अथ त्रिदोषविचारो नाम तृतीयो वादः

अथ दोषास्त्रयः। ते च वातपित्तकफनाम्ना व्यवह्रियन्ते। ते च द्रव्याणि। इतरैर्नवेति तानि कथितानि। आयुर्वेदतन्त्रे पुनर्द्वादश द्रव्याणि पठितानि। तानि चान्यैरभ्युपगतैर्नवभिर्द्रव्यैः साकं दोषत्रयाणामप्यङ्गीकारेण द्वादश भवन्ति। ननु तेषां पृथक् द्रव्यत्वे मानाभावः। यतस्तेषां पृथक् द्रव्यत्वाङ्गीकारेऽपि पञ्च महाभूतेष्वेवान्तर्भावो वक्तुं शक्यते। तेन तेषां पृथक् द्रव्यतया परिगणनं न समञ्जसं इति चेन्न। त्रयाणामेतेषां दर्शनान्तरानभ्युपगतानां प्रतितन्त्रसिद्धान्ततया आयुर्वेदमात्रपरिगृहीतत्वान्न किञ्चिदनुपपन्नं नाम। विकाराणामपि त्रिदोषाणां पृथक् तत्वतयाङ्गीकारो दृश्यते वेदान्तेषु। किञ्चैषां पृथक्तत्वत्वमुपनिषत्सु पश्यामः। यथा "एतस्माज्जायते प्राणो मनस्सर्वेन्द्रियाणि च खंवायुर्ज्योतिरापः पृथिवी विश्वस्य धारिणी" इति। अस्मिन् वाक्ये प्राणपदेनायुर्वैदिको वायुरेवाभिधीयते। उत्तरार्धे भूतवायोः पृथगुपादानात्। ब्रह्मसूत्रारूढश्चायमर्थः। यथा—"पञ्चवृत्तिर्मनोवद्व्यपदिश्यते" इति। प्राणवृत्तिप्राचुर्यात्प्राणशब्देन वायोस्त्रिदोषान्तर्गतस्य न दुष्यति प्राणशब्देन व्यवहारः। ततश्च महाभूतविकारत्वेऽपि पृथक् गणना समीचीना। अथैषां लक्षणमाहाचार्यः; "तत्र रूक्षो लघुः शीतः" "पित्तं सस्नेहरूक्षोष्णं" "स्निग्धः शीतः कफः" इति।

ननु दोषलक्षणं पूर्वमेवोक्तम्। पूर्वं सामान्यलक्षणस्योक्तावपि त्रिदोषेषु परस्परव्यावृत्तेरपेक्षितत्वात्पुनर्लक्षणान्तरानुधावनमिति चेत्, तदपि न रमणीयम्; यतो वातादिलक्षणवाक्येषु लक्षणघटकतया एकत्र षट् पदानि अन्यत्र सप्त पदानि च प्रयुक्तानि। तेषु चलत्वोष्णत्वगुरुत्वरूपैर्वातपित्तकफासाधारणधर्मैः परस्परव्यावृत्तौ सिद्धायामन्यानि पदानि निरपेक्षाणि परस्परव्यावृत्तये मन्दप्रयोजनानि भवेयुः। लक्षणवाक्यघटितानां तेषामपि सफलत्वसाधनाय इतरव्यावृत्तिर्वक्तव्या। इतिचेत्;

अत्रोच्यते । व्यावृत्तिर्द्विविधा, वस्त्वन्तरासंभावितधर्मयोगरूपा, तत्तज्जातीयासाधारण-धर्मानन्वयरूपा च । तत्र विलक्षणधर्मयोगे व्यक्त्यन्तरेभ्योऽन्यत्वं सिद्ध्यति । न त्वतज्जातीयत्वम्; तज्जातिव्यञ्जकधर्मानन्वयाधीनतज्जातीयत्वशङ्कानपगमात् । तदनन्वये तु तज्जातीयाव्यावृत्तिः सिद्ध्यति । यथा घटस्य संस्थानविशेषेण स्वेतरसमस्तवैलक्षण्यं सिद्धेऽपि पृथिवीत्वव्यवस्था-पकगन्धवत्त्वयोगात् पृथिवीजातीयत्वं नापैति । तदयोगव्यञ्जकादिषु तज्जातीयत्वापगमः । एवं रोगकारणत्वरूपविलक्षणधर्मान्वये सत्यपि दोषस्य वस्त्वन्तरजातीयत्वशङ्का अवतिष्ठत इति तज्जातीयताव्यावृत्तिः "रूक्षो लघुः शीतः" इत्यादिवाक्येन प्रतिपाद्यत इति तस्य सकलेतरव्यावृत्तत्वस्वरूपबोधकतोचितरुक्ता । अयं भावः । गन्धवत्वादिलक्षणेन पृथिव्यां पृथिवीतरत्वावच्छिन्नप्रतियोगिताकभेदानुमितिर्जायते । तादृशानुमितेरुदाहरणासंभवेन व्यति-रेकव्याप्त्यैवानुमितिनिश्चयो वक्तव्यः । साध्याभावव्यापकत्वं हेत्वभावस्येति रीत्या यत्र इतर-भेदाभावः तत्र गन्धाभावो भवति । इतरत् पृथिवीतरत् । तस्य भेदः पृथिवी । तस्याभावः इतरदेव । तथा च यत्र इतरत्वं तत्र गन्धाभाव इति भवति; तादात्म्यसंबन्धावच्छिन्नेतर-निष्ठव्याप्यतानिरूपितस्वरूपसंबन्धावच्छिन्नव्यापकताग्रहसहितस्य स्वरूपसंबन्धावच्छिन्नगन्धा-भावत्वावच्छिन्नाभावग्रहस्य पृथिव्यां सत्वात् । न तु जलत्वावच्छिन्नभेदकूटानुमितिः । तदात्म्येन जलं प्रति स्वरूपेन गन्धाभावस्य व्यापकताया अग्रहात् । गन्धादौ पृथिवीत्वसमनैयत्यरूप-पृथिव्यसाधारणधर्मत्वात्मकपृथिवीलक्षणत्वग्रहदशाया पृथिवीतरव्यावृत्तत्वग्रहमात्रेण इतर-व्यापकीभूताभावप्रतियोगित्वग्रहेऽपि जलत्वादिजातेः पृथिवीतरव्यावृत्तत्वग्रहासंभवेन तादात्म्येन जलत्वावच्छिन्नं प्रति गन्धाभावस्य व्यापकताया ग्रहीतुमशक्यत्वात् । येन संबन्धेन येन रूपेण व्यापकता गृह्यते तत्संबन्धावच्छिन्न तद्रूपावच्छिन्नाभाववत्ताज्ञानाद्यत्संबन्धेन यद्धर्मावच्छिन्नं प्रति व्यापकता गृह्यते तत्संबन्धावच्छिन्नप्रतियोगिताकतद्धर्मावच्छिन्नाभावस्यानुमितिरिति नियमात् । स्नेहाभावरूपलक्षणेन च जलत्वाद्यवच्छिन्नभेदानुमितिर्जायते । तादात्म्येन जलादिकं प्रति समवायसंबन्धेन स्नेहादेर्व्यापकताग्रहस्य पृथिव्यां तत्संबन्धावच्छिन्नस्नेहाभाव-ग्रहस्य च सत्वात् । एवं प्रकृतेपि रोगकारणत्वे सति चलत्वं वातस्य लक्षणं भवति । तेन च वातः इतरभेदवान् रोगकारणत्वे सति चलत्वात् इति अनुमितिस्सिद्ध्यति । तस्य वातासा-धारणत्वग्रहदशायां वातेतरतत्प्रतिस्वरूपसंबन्धेन उक्त लक्षणाभावस्य व्यापकताग्रहेऽपि वस्त्वन्तरादेः वातव्यावृत्तत्वाग्रहेण वस्त्वन्तरव्यावृत्तत्वस्य उक्तलक्षणाभावे अग्रहात्तं तल्लक्षणेन वातेतरत्वावच्छिन्नभेदानुमितिरेव जायते । रूक्षो लघुः शीतः इति लक्षणेन च द्रव्यान्त-रत्वावच्छिन्नभेदानुमितिः तस्य द्रव्यान्तरव्यापकीभूतधर्माभावघटितत्वात् । तथा च रूक्षो लघुः शीतः इत्यादिवाक्यत्रयेणेतरजातीयत्वावच्छिन्नप्रतियोगिताको भेदः सिद्ध्यतीत्या-चार्यैर्लक्षणान्तरं पठितम् । इतरजातीयत्वव्यावृत्तिश्चेत्थम् । रूक्षपदेन स्निग्धत्वव्यावृत्तिः तथैव जलाद्व्यावृत्तिश्च सिद्ध्यति । आयुर्वेदे च द्वादशद्रव्याण्यभ्युपगम्यन्त इति पूर्वमेवा-भिहितम् । ततश्च वातेतरैकादशद्रव्यव्यावृत्तिर्वक्तव्या । रूक्षपदेन महाभूतजलं लघुपदेन गुरुत्वव्यावृत्तिस्तथैव पृथिवीव्यावृत्तिश्च भवति । शीतपदेनोष्णद्रव्यव्यावृत्ति; स्तथैव महाभूताग्नित्रिदोषपित्ते च व्यावर्त्येते । खरपदेन तद्विरुद्धधर्मः कफः श्लक्ष्णो व्यावर्त्यते । सूक्ष्मशब्देन मनो व्यावर्त्यते । सूक्ष्मत्वं चाणुत्वप्रयुक्तव्याप्ति बहिर्व्याप्ति योग्यत्वम् । चलपदेन

चाकाशदिगात्मकाला व्यावर्त्यन्ते। एवमेव पित्तकफलक्षणयोरपि व्यावृत्तिः संपादनीया। एतेषां गुणानामर्थनिष्कर्षो वादान्तरे भविष्यति। एते च त्रिदोषाः साम्येन वर्तमानाः वर्तयान्ति शरीरम्। विषमाः पुनः शरीरं घ्नन्ति। साम्यप्तकोपावधिकृत्य विचारो वादान्तरे भविष्यति। तथा च। समवायसंबन्धेन रूक्षादिगुणवत्वं वातत्वम्। एवमेव स्नेहादिगुणवत्वं पित्तत्वम्; स्निग्धादिगुणवत्वं कफत्वमिति पर्यवसितम्।

ननु चलत्वं वायोरसाधारणधर्मत्वं पूर्वमुक्तम्। तन्न संगच्छते। पित्तकफयोरपि चलत्वस्यावश्यमभ्युपगन्तव्यत्वात्। ननु तयोर्लक्षणे चलत्वं न पठितम्। सत्यम्। अपठितत्वेऽपि स्वयमायुर्वेदिभिरूहनीयत्वात्। अन्यथा तयोः प्रकोप एव न संभवति। उन्मार्गगामित्वमेव प्रकोपः। तथा चोन्मार्गगमनशीलता त्रयाणामप्यविशेषेण शास्त्रकारैः पठिता अभ्युपगन्तव्या च। ततश्चोन्मार्गगामित्वान्यथानुपपत्या तयोरपि चलात्मकत्वमेष्टव्यम्; इति चेत्; उच्यते। द्विविधमुन्मार्गगामित्वम्। इतरनिरपेक्षं स्वातन्त्र्येण गमनशीलत्वमेकम्। तच्च वायावेव व्यवस्थितम्। वाय्वधीनगामित्वं पित्तकफयोः। तथा च तयोः परापेक्षमेव गमनशीलत्वं शकटवत्। उक्तं चाचार्यैः :—"पित्तं पंगु कफः पंगुः···वायुना यत्र नीयन्ते तत्र गच्छन्ति" इति। वचनेनानेन पित्तकफयोः पंगुत्वं वाय्वधीनगामित्वं च स्पष्टं भवति। अयमर्थः। प्रकोपकारणैराहारविहारैः प्रकोपं प्रापिते कफपित्ते स्वाशयात्प्रच्याव्य प्रतिलोमगत्या रसादिधातूनाशयान्तराणि च प्रापयति वायुः। तदात्वे वायोः प्रकोपकारणाभावात् प्रकृतिस्थ एव सन् वातकफावेव दुष्टौ न याति। यदा पुनः प्रकोपकारणेन स्वयमपि प्रकुपितो वायुर्भवति तदा स्वयमपि दोषसंज्ञा वहन् धात्वादीन् दूषयति। अयमर्थः स्पष्टमभिहितः आचार्येण। यथा :—"द्रुतत्वान्मारुतस्य च दोषा यान्ति, वायोश्च निग्रहात्" इति। अस्यर्थः: मारुतस्य द्रुतगतित्वात्तेन। नीयमाने एव कफपित्ते दूष्यैः संसृज्येते। वायोर्निग्रहात्कफपित्ते प्रकृतिस्थे भवतः। तस्माच्चलात्मकत्वं वायोरेवेति सिद्धम्।

प्राचीन तथा सुगम योग

लेखक—वैद्य श्री नानकचन्द्र शास्त्री, देहली

१. श्वासकास—लवण शीशा ½ पा० अर्क दुग्ध पावभर में खरल करके टिकिया बना उसे कुज्जा चौड़े मुखका लेकर उसमें रख देना; दूसरा कुज्जा ऊपर देकर कपड़ मिट्टी कर सुखा कर गजपुट में फूंक देना, ठण्डा होने पर निकालकर ऊपर के कुज्जे में लगे सत्व को खुर्च लेना और नीचे जो शेष हो पृथक् रखना। ऊपर के सत्व को ¼ रत्ती की मात्रा में श्वास रोगी को देने से लाभ होता है और नीचे के शेष की एक रत्ती मात्रा कासको नष्ट करती है इससे मल भी साफ हो जाता है।

२. हरताल भस्म—१ तोला वरकिया हरताल को शुद्ध करलेना, उसको नीम के खार (भीतर की छाल) ६ तोला में जो बारीक चूर्ण किया हो उसमें रखकर दो छोटी प्यालियों में सम्पुटकर तीन सेर जंगली गोहे की आग देना, श्वेतभस्म होगी। यदि कुछ न्यूनता रह जाये तो दो सेर की पाथियां लेकर उसमें फटकरी १ तो०, लवण १ तो० पीसकर हरताल मध्य में रख आग देना, भस्म हो जायगी। इसे अनुमान से रक्तविकारों पर प्रयोग करें।

३. केसर, सुहागभाग लेकर पानी से पीसकर मुखपर लेप करने से ११ दिन में व्यंगादि दोष दूर होते हैं।

४.जौं का चूर्ण, सरसों, हरिद्रा, छो. इलायची की छाल, घृत सब को सम लेकर पीसना गोमूत्र में वटना (उद्वर्त्तन) बनाकर मुखपर मलने से कील आदि (व्यंग) दूर होते हैं।

५. हिंगुल भस्म—शिगरफ २ तो० घीकुआर के रसमें १ दिन खरल करना पुनः एक दिन अर्क दुग्ध में खरल कर टिकिया बनाकर तुम्भेका फल लेकर उसमें रख देना। पीछे दो प्यालों में रख सम्पुट करना और सात सेर गोहों की आग निर्वातस्थान पर देना, भस्म तैयार होगी, इसे त्रिदोष ज्वरोंपर तथा वात, कफ के रोगों में देने से लाभ होता है।

ऊपर के योग वैद्यों के लाभार्थ वर्णन किये हैं, इन्हें वैद्य अनभव करें और पत्रिका में इनका लाभ लिखकर भेजें।

६. सुखविरेचन-जुलाबार हरड़ १ तोला, चीनी, १ तोला, गुलाब के फूल १ तोला इन तीनों को पीस कर इसमें से एक तोला लेकर शरबत वनफशा २ तोले के साथ निगल, जाने से तीन दस्त आवेंगे। यदि अधिक हों तो रोकने के लिए इसबगोल तीन माशा अर्क गाजुवान के साथ देना। खिचड़ी, दाल चावल पथ्य देना।

७. जैपाल शुद्ध ४ टंक, गेरी ३ टंक. कौड़ (कुटकी) ३ टंक इन सब को घीकुमारी के रस में खरल कर ८ रत्ती की गोली बना लें। फिर गोली जितनी काली मिरच साथ मिला

कर खायें उतने ही दस्त होंगे, अधिक हों तो इसबगोल अर्क गाजुबान के साथ देना। पथ्य पूर्ववत्।

८. उपदंशहर वटी-रसकपूर १ तोला को दो बोतल अर्क गुलाब से रगड़ना जब सब अर्क खरल करने से समाप्त हो जाये तो उसकी गोलियां काली मिरच समान बना लें। इसके एक गोली खाने से चिरकाल का भयंकर उपदँश भी शान्त हो जाता है। पथ्य चने का रस घृत युक्त या मांस रस हित होता है।

९. उपदंशहर सत्व-१ तोला रसकपूर, १ कुज्जा लेकर उसमें गौ का दुग्ध जिसमें रसकपूर डूब जाये डालकर दूसरा कुज्जा ऊपर रख कर सम्पुट करें और चूल्हे पर रख २ सेर वेरी की लकड़ी की आग दें। पीछे शांति होने पर ऊपर के पात्र में लगा सत्व निकाल लें और सुरक्षित रख लें इसमें से १ तिनका भर चीनी में देने से असाध्य उपदंश को भी लाभ प्राप्त होता है। पथ्य पूर्ववत्।

१०. अर्धशीर्ष व्यथापर-शुण्ठी का बारीक चूर्ण करके जिस तरफ दर्द हो उससे विपरीत नस्य देने से शीघ्र लाभ होता है।

११. पुनः-जंगली गोहे का अर्क दुग्ध से तर करके पीछे सूखने पर आग लगा दो जल जाने पर इस भस्म का नस्य देने से चिरकालिक शिरोव्यथा को शान्त करती है। जिस रोगी को आठवें दिन शिर दर्द होती हो उसे भी लाभ करती है।

१२. पुत्र प्रद योग-शिवलिंगी एक तोला, मुनक्का एक तोला, काली मिरच एक तोला सब को पीस कर छोटे बेर के समान गोली बना कर ऋतुकाल में अजा दुग्ध के साथ देने से काक वन्ध्या वा अठारह दोष युक्त स्त्री को २१ दिन तक गोली खाने को देने से लाभ होता है। अनुभव करो और यश धन संचय करो।

अनुभूत योग

वैद्य श्री बन्सरीलाल साहनी आयुर्वेदाचार्य

१. श्वेताभ्र भस्म

निर्माण विधि—वज्रजाति का श्वेताभ्र लेकर मूली के रस से मर्दन करें। अत्यन्त सूक्ष्म हो जाने पर सम भाग शोरा तथा गुड़ मिला कर टिकियाँ बना कर धूप में सुखालें और सम्पुट में बन्द कर गजपुट की अग्नि दे कर भस्म करलें। इसी प्रकार तीन बार करें। दूसरी बार शोरा आधा और तीसरी बार चतुर्थांश डालें। इस विधि से अभ्रक की अत्यन्त सूक्ष्म निश्चन्द्र तथा मृदु भस्म बन जाती है। यदि कुछ न्यूनता रह जाये तो जब तक मृदु न हो जाये तब तक पुट देते रहें।

मात्रा—२ से ४ रत्ती दिन में ३-४ बार

अनुपान—शीतलजल।

गुण—पित्तज्वर, रक्तपित्त, रक्त प्रदर, रक्तातिसार, पित्ताश्मरी, आदि अनेक पित्त-कृत रोगों में अमृत के समान गुणकारी है। यकृत, पित्ताशय अथवा मूत्राशय में संचित पित्त का स्राव कराकर मूत्र द्वारा निकाल देती है। मूत्र का वर्ण देखते रहना चाहिये। जब मूत्र श्वेत हो जाये तो समझ लें कि यकृदादि आशय पित्त से रहित हो कर शुद्ध हो गये हैं।

२. सुखविरेचन वटी

योग—जयपाल १ तोला, आमले ४ तोले।

निर्माण विधि—दोनों को अत्यन्त सूक्ष्म कर जल के संयोग से मूंग प्रमाण गोलियां बनालें। इस सम्पूर्ण योग की १२८० गोलियां बनती हैं।

मात्रा—१ से २ गोली।

अनुपान—उष्ण जल, दूध अथवा चाय।

सेवन काल—रात को सोते समय।

गुण—इस के सेवन से प्रातः काल विना कष्ट के एक दो वेग हो कर कोष्ठ शुद्ध हो जाता है। इस से कोष्ठ में मरोड़, जी मिचलना, गुड़-गुड़ाहट आदि कोई विकार नहीं होते। इसमें जयपाल होते हुए भी अत्यन्त सरल तथा सुखद योग है। वृद्धों, दूध पीते बच्चों तथा गर्भिणी स्त्रियों पर भी इस का प्रयोग किया गया है।

निरन्तर रहने वाले विबन्ध (Chronic Constipation दायमी कब्ज) में भी इस से उत्तम लाभ होता है।

निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ कार्यकारिणी समिति के १९५६ वर्षीय द्वितीय अधिवेशन का

कार्य-विवरण

स्थान—आयुर्वेदिक रसायन फार्मेसी, खारी बावली, देहली।

समय—३ बजे मध्याह्नोत्तर, दिनांक १४ जून, १९५६, दिन गुरुवार।

उपस्थिति :—

१. वैद्य श्री भि० वि० डेग्वेकर, जबलपुर, अध्यक्ष।
२. वैद्य श्री मोहनलाल शास्त्री, देहली, विद्यापीठोपाध्यक्ष।
३. वैद्य श्री घनानन्द पन्त, देहली।
४. वैद्य श्री अमरनाथ शास्त्री, पटियाला।
५. वैद्य श्री रामस्वरूप चक्रवर्ती, देहली।
६. वैद्य श्री सीताराम मिश्र, जयपुर, विद्यापीठोपमन्त्री।
७. वैद्य श्री आचार्य नित्यानन्द, पिलानी।
८. वैद्य श्री वासुदेव शास्त्री, उज्जैन।
९. वैद्य श्री शंकरदत्त गौड़, जबलपुर, विद्यापीठोपमन्त्री।
१०. वैद्य श्री बदरीविशाल त्रिपाठी, कानपुर।
११. वैद्य श्री आचार्य विरंचीलाल शर्मा, इस्लामपुर।
१२. वैद्य श्री कैलाशचन्द्र अग्रवाल, देहली।
१३. वैद्य श्री बाबूराम मिश्र, हापुड़।
१४. वैद्य श्री जयभगवान शर्मा, खुर्जा।
१५. वैद्य श्री भुवनचन्द्र जोशी, देहली।
१६. वैद्य श्री केशवप्रसाद आत्रेय, देहली।
१७. वैद्य श्री शिवनाथ शर्मा, देहली, कोषाध्यक्ष-विद्यापीठ।
१८. वैद्य श्री गणेशदत्त शास्त्री, मेरठ।
१९. वैद्य श्री बालकृष्ण शर्मा, देहली।
२०. वैद्य श्री नानकचन्द्र शास्त्री, विद्यापीठ-मन्त्री।

विद्यापीठाध्यक्ष वैद्यराज श्री भि० वि० डेग्वेकर जी महोदय की अध्यक्षता में कार्य प्रारम्भ हुआ।

निम्नांकित महानुभावों की ओर से सम्मतिपत्र प्राप्त हुए :—

सर्वश्री वैद्य वी० बी० नटराज शास्त्री, विद्यापीठोपाध्यक्ष, तिरुचिरापल्ली, देवराज मिश्र, अमृतसर, राजवैद्य माधवप्रसाद शास्त्री, रतलाम, चैनसुखदास, जयपुर, नारायणदत्त

शास्त्री, इन्दौर, राजवैद्य जीवराम काली दास शास्त्री, गोंडल, ज्वालाप्रसाद शास्त्री, बोदवड, विजयकाली भट्टाचार्य, कलकत्ता, रामेश्वरसिंह कंवर, जालन्धर, राजवैद्य मुंशीराम शर्मा, भटिण्डा, दीनदयालु तिवारी, नागपुर, अमरनाथ शास्त्री, देहरादून, वैद्यनाथ मिश्र, मुजफ्फरपुर, मिश्रीप्रसाद शास्त्री, उदयपुर, लक्ष्मीकान्त दामोदर पुराणिक, नागपुर, कृष्णगोपाल शर्मा, बारां, जनार्दन शर्मा, रायगढ़, लक्ष्मीशंकर रामकृष्ण शास्त्री, अहमदाबाद, इन्द्रमणि जैन, अलीगढ़, वैद्यरत्न कविराज प्रतापसिंह, बनारस।

इन सम्मतियों के विशेष-विशेष अंश पढ़ कर सुनाये गये।

तदुपरान्त कविराज श्री केशवप्रसाद जी आत्रेय, संयुक्तमंत्री, अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन, ने सूचना दी कि महासम्मेलन के प्रधानमंत्री, वैद्य श्री वामनराव दीनानाथ जी इस अधिवेशन में सम्मिलित होने के लिए देहली में पधार चुके हैं, किन्तु यहां आते ही वे बहुत रुग्ण हो गए हैं और इस अधिवेशन में भाग लेने के लिए आने में असमर्थ होने के कारण यहां नहीं आ सके। उन्होंने एतदर्थ खेद प्रकट किया है।

श्री अध्यक्ष महोदय ने कार्यवाही प्रारम्भ होने से पूर्व संक्षिप्त से भाषण द्वारा बतलाया कि इस वर्ष एक परीक्षक महानुभाव की ओर से उत्तर पुस्तकें जांच होकर कार्यालय की ओर से कई स्मरणपत्र तथा तार भेजे जाने पर भी अब तक कार्यालय में वापिस नहीं मिली हैं जिससे कार्यालय पूर्णरूपेण परीक्षाफल उपस्थित करने में असमर्थ हो गया है। उन्होंने उपस्थित महानुभावों तथा परीक्षकों से अनुरोधपूर्वक प्रार्थना की कि वह जब तक विद्यापीठ जैसी संस्था के निःशुल्क कार्य को अपने अन्य कार्यों पर प्राथमिकता न देंगे तब तक विद्यापीठ का कार्य सुचारु रूप से न चल सकेगा और सब वैद्यबन्धुओं का यह कर्तव्य है कि वह कुछ न कुछ समय इस प्रकार के कार्यों के लिए अवश्य निकालें। उन्होंने यह भी कहा कि परीक्षक महानुभावों को कुछ न कुछ पारिश्रमिक अवश्य देना ही चाहिए ताकि कार्य यथासमय पूर्ण हो सके।

१. गताधिवेशन की कार्यवाही पढ़ कर सुनाई गई जो आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका के मई १९५६ मास के अंक में प्रकाशित हो चुकी है।

कार्यवाही में एक संशोधन उपस्थित करते हुए श्री विद्यापीठमंत्री जी ने कहा कि गताधिवेशन के प्रस्ताव सं० ५ में वैद्य श्री दीनदयालु जी के नाम के आगे शब्द "तिवारी" के स्थान में "त्रिपाठी" छप गया है जो अशुद्ध है, अतः उसे ठीक किया जाय। सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि यह संशोधन कर दिया जाय।

आचार्य श्री बदरी विशाल जी त्रिपाठी, कानपुर, ने आपत्ति प्रकट की कि गताधिवेशन के प्रस्ताव संख्या १-२-३ क में अन्तिम से पहली पंक्ति में शब्द 'ममापि" अनावश्यकरूप से सम्मिलित हो गया है अतः इसे वहां से निकाल दिया जाय। सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि शब्द "ममापि" इस प्रस्ताव से निकाल दिया जाय।

२. १९५६ वर्षीय परीक्षाफल का विषय उपस्थित हुआ। श्री मंत्री जी ने बताया कि आयुर्वेदाचार्य द्वितीय खण्ड के एक विषय के परीक्षक की ओर से अभी तक परीक्षाफल पत्र

नहीं मिला है यद्यपि उनका आज तार मिला है कि उनके द्वारा परीक्षाफलपत्र उत्तर पुस्तकों सहित आज भेजा जा चुका है। श्री मंत्री जी ने यह भी बताया कि मराठी भाषा के हमारे एक परीक्षक तथा आयुर्वेद के प्रौढ़ विद्वान् स्वनाम धन्य वैद्य श्री पाण्डुरंग हरि देशपाण्डे जी का पूना में आकस्मिक स्वर्गवास हो जाने के कारण उनके पास भेजी हुई उत्तर पुस्तकें पुनः दूसरे परीक्षक महानुभाव के पास भेजनी पड़ीं जिस कारण यह परीक्षाफल भी अभी तक नहीं मिला है। श्री मंत्री जी ने यह भी बताया कि रायपुर एवं नागपुर परीक्षा केन्द्रों की कुछ परीक्षायें अवशिष्ट हैं अतएव इन केन्द्रों में प्रवेश पाने वाले परीक्षार्थियों का परीक्षा परिणाम भी अभी तैयार नहीं है।

शेष परीक्षाफल परीक्षा और खण्डवार पढ़कर सुनाया गया। प्रत्येक खण्ड में परीक्षाफल प्रतिशत कितना रहा यह भी बताया गया। तदुपरान्त इस परीक्षाफल की स्वीकृति और प्रकाशन का विषय उपस्थित हुआ। सर्वप्रथम कविराज श्री कैलाशचन्द्र जी अग्रवाल, देहली, ने कहा कि देहली केन्द्र के वैद्याचार्य एवं आयुर्वेदाचार्य के परीक्षार्थियों ने मौखिक परीक्षा के विषय में एक आपत्तिसूचक पत्र श्री विद्यापीठ मंत्री जी को भेजा था जिसके उत्तर में उन्हें श्री मंत्री जी के दो पत्र मिले हैं जो परस्पर विरोधी हैं। उन्होंने दोनों उत्तर सभा में पढ़कर भी सुनाये। देहली परीक्षा केन्द्र के अध्यक्ष वैद्य श्री घनानन्द जी पन्त ने भी परीक्षार्थियों की शिकायत पर प्रकाश डाला। तदुपरान्त विद्यापीठोपाध्यक्ष वैद्य श्री मोहनलाल जी शास्त्री ने उभय पत्रों की भाषा की समालोचना करते हुए बताया कि इन पत्रों में एक के बाद दूसरी सूचना दी गई है और कोई पारस्परिक विरोध उनमें निहित नहीं है। विद्यापीठोपमंत्री श्री सीताराम जी मिश्र ने कहा कि हमें समान सिद्धान्तों पर चलना चाहिए न कि एक स्थान विशेष के कुछ परीक्षार्थियों को ही विशेष सुविधा देनी चाहिए। विद्यार्थियों से सभी की स्वाभाविक रूप से सहानुभूति होती है परन्तु हमें नियम और नियंत्रण के भीतर-भीतर ही उन्हें सुविधाएं देनी चाहिएं। तदुपरान्त श्री विद्यापीठ मंत्री जी ने भी सम्पूर्ण स्थिति पर प्रकाश डाला और कहा कि इस प्रकार दबाव डालने पर नियम का उल्लंघन करना अच्छा न होगा। तत्पश्चात् कविराज श्री केशव प्रसाद जी आत्रेय ने उन परीक्षार्थियों का मूल पत्र पढ़कर सुनाया जिसमें उन्होंने अपनी मौखिक परीक्षा के परीक्षक "एक सुप्रसिद्ध बंगाली वैद्य" के विरुद्ध लिखा था। श्री कविराज आत्रेय जी ने परीक्षार्थियों के इस प्रकार के लेख को नितान्त अनुचित बताया। उन्होंने कहा कि ये परीक्षक महानुभाव भारत के इने-गिने आयुर्वेद के सुप्रसिद्ध विद्वानों में से एक हैं और देहली के आयुर्वेद क्षेत्र में बहुत सम्मानित हैं। परीक्षार्थियों के ऐसे विषयों पर ध्यान देना उचित नहीं। उन्होंने कार्यालय के उत्तर को भी पढ़कर सुनाया और कहा कि यह उत्तर सर्वथा न्यायोचित है। फिर उन्होंने कहा कि इस विषय पर बहुत विस्तृत विचार-विमर्श हो चुका है, इस पर सदस्यों का मत ले लिया जाय। इस पर कविराज श्री कैलाशचन्द्र जी ने कहा कि उन्होंने तो एक सूचना, जो उन्हें मिली थी, समिति के समक्ष रखी थी, परन्तु समिति जो निश्चय करेगी वे उसी के साथ हैं। तदुपरान्त सर्व सम्मति से निश्चय हुआ कि इस विषय में कार्यालय द्वारा जो निर्णय किया गया है और उत्तर दिया गया है वह सर्वथा ठीक है।

तदुपरान्त सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि जो परीक्षा फल तैयार है उसे प्रकाशित किया जाय। जो परीक्षाफल अभी तक नहीं आया है उसे प्राप्ति पर मंत्री महोदय रजिस्टरों में उसी प्रकार दर्ज करवा कर उसका नियमानुसार परिणाम घोषित कर दें।

आचार्य श्री बदरीविशाल त्रिपाठी, कानपुर, के प्रस्ताव पर एवं कविराज श्री केशव-प्रसाद जी आत्रेय के समर्थन पर सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि रायपुर और नागपुर परीक्षा केन्द्रों के सभी परीक्षार्थियों एवं कानपुर केन्द्र के आयुर्वेदाचार्य द्वितीय खण्ड के परीक्षार्थियों का तब तक परीक्षा परिणाम घोषित न किया जाय जब तक गताधिवेशन के प्रस्ताव सं० १, २, ३, के अनुसार किसी उच्चाधिकारी अथवा श्री पं० शिवशर्मा जी द्वारा तत्सम्बन्धी रिपोर्ट प्राप्त न हो जाय।

सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि समिति में वार्षिक परिणाम उपस्थित करते समय विगत वर्ष की उत्तीर्णता की प्रतिशत संख्या भी कार्यालय सदस्यों की जानकारी के लिए प्रस्तुत किया करे।

श्री बालकृष्ण वैद्य ने सुझाव दिया कि भिषक् परीक्षा के प्रश्नपत्रों की भाषा सरल संस्कृत होनी चाहिये तथा प्रश्नपत्रों का अनुवाद हिन्दी भाषा में परीक्षास्थल में एक श्यामपट पर लिख दिया जाना चाहिए।

पर्याप्त विचार-विमर्श के पश्चात् सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि प्रश्न पत्रों का हिन्दी भाषा में अनुवाद नहीं किया जा सकता किन्तु सब प्रश्न पत्रों, विशेषकर आयुर्वेद भिषक् परीक्षा के प्रश्नपत्रों, की भाषा सरल संस्कृत होनी चाहिए तथा सभी प्रश्न पाठ्य विषय के अन्तर्गत ही पूछे जाने चाहियें।

अध्यक्ष महोदय ने कार्यालय को आदेश दिया कि भविष्य में आवेदनपत्र भेजने के साथ ही प्रत्येक परीक्षार्थी को यह सूचना भी भेजी जावे कि प्रश्नपत्रों का भाषानुवाद नहीं किया जावेगा।

श्री बालकृष्ण वैद्य ने सुझाव दिया कि भविष्य में सब परीक्षाओं के मौखिक विषय के प्रश्नपत्रों में पर्याप्त मात्रा में विकल्प दिए जाने चाहियें।

कविराज श्री कैलाशचन्द्र जी अग्रवाल ने परीक्षा व्यवस्था में टेबूलर प्रणाली के समावेश का सुझाव दिया।

वैद्य श्री बालकृष्ण जी ने वैद्य विशारद क्रमांक ४६ का विषय उपस्थित किया कि यह परीक्षार्थी सहसा रुग्ण होने के कारण एक विषय की परीक्षा ठीक प्रकार न दे सका अतएव उसे इस विषय की परीक्षा का पुनः अवसर दिया जाय। वैद्य श्री घनानन्द जी पन्त ने भी इसकी सिफारिश की। कार्यालय की ओर से बताया गया कि इस परीक्षार्थी का पत्र कार्यालय में भी प्राप्त है और ऐसे बहुत से पत्र विभिन्न केन्द्रों से भी प्राप्त हैं। श्री मन्त्री जी ने कहा कि ऐसे परीक्षार्थियों के लिए नियमावलि में कोई व्यवस्था निर्धारित नहीं। श्री

प्रधान जी ने बताया कि किसी भी यूनिवर्सिटी में ऐसे परीक्षार्थियों को कोई विशेष सुविधा नहीं दी जाती। तदुपरान्त सर्वसम्मति से उक्त प्रकार के सभी पत्र रद्द किए गए।

उपर्युक्त विचार-विमर्श के अनन्तर सन् १९५६ वर्षीय परीक्षाफल सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ और निश्चय हुआ कि इसे प्रकाशित कर दिया जाय। यह भी निश्चय हुआ कि जो परीक्षाफल अवशिष्ट रहा है उसे श्री विद्यापीठ मन्त्री तैयार होते ही घोषित कर दें।

३--सितम्बर मासीय परिशिष्ट परीक्षाओं के लिए निम्नलिखित केन्द्र स्वीकार हुए :—

१-उज्जैन, २-उदयपुर, ३-देहली, ४-नागपुर, ५-पिलानी, ६-बड़ौदा, ७-बम्बई, ८-विजयवाड़ा, तथा ९-लखनऊ।

जालन्धर और सीकर में परिशिष्ट परीक्षाओं के लिए केन्द्र स्थापनार्थ प्राप्त पत्रों पर विचार हुआ और थोड़े वार्तालाप के अनन्तर उन्हें रद्द किया गया। इसी विषय में उज्जैन में परिशिष्ट परीक्षाओं के लिए केन्द्र स्थापनार्थ प्राप्त पत्र स्वीकार हुआ।

४--विद्यापीठ की परीक्षा व्यवस्था में परीक्षक, केन्द्राध्यक्ष एवं निरीक्षक महानुभावों को कुछ मानदेय अथवा पारिश्रमिक दिए जाने के विषय पर विचार उपस्थित हुआ। अधिकांश सदस्यों ने विचार प्रगट किया कि विद्यापीठ के परीक्षकों, केन्द्राध्यक्षों एवं निरीक्षकों को कुछ न कुछ पारिश्रमिक दिए बिना विद्यापीठ का कार्य पूरी तरह सुव्यवस्थित रीति से न चल सकेगा अतएव इन आनरेरी कार्यकर्ताओं को अब मानदेय अवश्य दिया जाय। विचार-विमर्श के अनन्तर सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि इस विषय पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने के लिए निम्नलिखित महानुभावों द्वारा संगठित एक उपसमिति का निर्माण किया जाय जो पारिश्रमिक धनराशि की संख्या, उस धन की प्राप्ति के साधन तथा मानदेय के अन्य नियमोपनियमों आदि पर विचार करके अपनी रिपोर्ट कार्यकारिणी समिति के समक्ष प्रस्तुत करे।

समिति के सदस्य:—

१-श्री विद्यापीठोपाध्यक्ष,
२-श्री विद्यापीठ मन्त्री,
३-कविराज श्री केशवप्रसाद आत्रेय
४-श्री गणेशदत्त शास्त्री, मेरठ
५-श्री बाबूराम मिश्र, हापुड़।

५-विद्यापीठ की वर्तमान स्थिति एवं उसके संगठन और कार्य को सुदृढ़ करने के सम्बन्ध में विचार उपस्थित हुआ। इस विषय में विद्यापीठ कार्यालय की ओर से प्रस्तुत की गई एक योजना भी उपस्थित की गई। पर्याप्त विचार-विमर्श के अनन्तर निश्चय हुआ कि कार्यालय द्वारा प्रस्तुत की गई योजना को सभी सदस्य महानुभावों के अध्ययनार्थ इस अधिवेशन के कार्यविवरण के परिशिष्ट रूप में आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका में प्रकाशित किया जाय और सदस्यों से प्रार्थना की जाय कि वे इस योजना पर अपना अभिमत अथवा टीका-टिप्पणी योजना प्रकाशन के एक मास के भीतर-भीतर विद्यापीठ कार्यालय में भेज

दें। तदुपरान्त उक्त योजना एवं उसपर प्राप्त अभिमतों पर प्रस्ताव सं० ४ के अन्तर्गत संगठित उपसमिति विचार-विमर्श करके अपनी रिपोर्ट कार्यकारिणी समिति के विचारार्थ प्रस्तुत करे।

६-अस्थायी कर्मचारियों के स्थायीकरण के विषय पर सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि प्रत्येक कर्मचारी के विषय में श्री विद्यापीठमन्त्री जी अपनी पृथक्-पृथक् रिपोर्ट लिखित रूप में आगामी अधिवेशन में उपस्थित करें।

७-सन् १९५५ के आयुर्वेदाचार्य क्रमांक १०२, श्री कान्तिनारायण मिश्र, पटियाला, का प्रार्थनापत्र दिनाँक ६ मई, १९५६, विचारार्थ उपस्थित हुआ और साद्यन्त पढ़कर सुनाया गया। इस पर सर्वप्रथम कविराज श्री कैलाशचन्द्र जी अग्रवाल, जिन्होंने कि गतवर्ष पटियाला केन्द्र के विषय में जांच की थी, ने कहा कि उनकी जांच का आयुर्वेदाचार्य क्रमांक १०२ के परीक्षाफल से कोई भी सम्बन्ध नहीं है, और न था, और न ही उस जांच में यह विषय उनको सौंपा गया था, अतएव उनकी जांच रिपोर्ट को इस विषय से मिलाना उचित नहीं। कविराज श्री केशवप्रसाद जी आत्रेय ने कहा कि कैलाशचन्द्र जी अग्रवाल ने जो भाव व्यक्त किए हैं वे सर्वथा उचित हैं और मैं उनका समर्थन करता हूं। तदुपरान्त सभी उपस्थित सदस्यों ने इस दृष्टिकोण को स्वीकार किया।

तत्पश्चात् श्री विद्यापीठाध्यक्ष, वैद्य श्री भि० वि० डेग्वेकर जी ने कहा कि यद्यपि पटियाला केन्द्र की जाँच रिपोर्ट का आयुर्वेदाचार्य क्रमांक १०२ के परीक्षाफल से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है, तो भी सदस्य महानुभावों की जानकारी के लिए बता देना चाहता हूं कि कविराज श्री कैलाशचन्द्र जी अग्रवाल द्वारा दी गई जांच रिपोर्ट पर बराबर पूरा विचार हुआ है और वह हमारे रिकार्ड पर है। श्री अध्यक्ष जी ने उक्त परीक्षार्थी के परीक्षाफल के विषय में जो-जो कार्यवाही परीक्षार्थी द्वारा, उसके दूत द्वारा तथा भूतपूर्व विद्यपीठ मन्त्री एवं कार्यालय द्वारा की गई उसका भी संक्षेप में इतिहास कह कर सुनाया।

तत्पश्चात् अधिकाँश सदस्यों ने कहा कि इस विषय पर गत वर्ष एक बड़ा काण्ड बीत चुका है और ४१वें आयुर्वेद महासम्मेलन द्वारा इस पर अन्तिम निश्चय भी किया जा चुका है, अतएव इस विषय पर अब विचार नहीं होना चाहिए। कुछ सदस्यों ने कहा कि नियमानुसार भी एक निर्णीत विषय पर इस प्रकार पुनः विचार नहीं हो सकता। श्री अमरनाथ शास्त्री, पटियाला, तथा श्री रामस्वरूप चक्रवर्ती, देहली, ने उपर्युक्त विचारों का विरोध किया और वे इस बात पर जोर देते गए कि पुनः विचार होना चाहिए। बहुत वाद-विवाद के अनन्तर कुछ सदस्यों ने श्री प्रधान जी से रूलिंग की मांग की। अन्त में श्री प्रधान जी ने कहा कि इस सभा के सदस्यों का प्रचण्ड बहुमत इस अभिमत एवं विचार का सूचक है कि इस विषय पर पुनः विचार नहीं होना चाहिए। सदस्यों के पुनः विचार के विषय पर इस प्रचण्ड विरोधीमत के सन्मुख नियम भी ऐसी आज्ञा नहीं देता कि इस विषय पर पुनः विचार किया जाय। तत्पश्चात् श्री अध्यक्ष जी ने रूलिंग दिया कि नियमा-

वलि के स्थिर नियमों के अनुसार इस स्थिति में इस विषय पर पुनः विचार नहीं हो सकता अतएव इस विषय को यहीं समाप्त किया जाय।

तत्पश्चात् सायं ५-३० पर अभ्यागत सदस्यों एवं श्री अध्यक्ष महोदय का धन्यवाद करके सभा विसर्जित हुई।

तदनन्तर सभी सदस्यों ने विद्यापीठोपाध्यक्ष वैद्य श्री मोहनलाल जी शास्त्री, अध्यक्ष, आयुर्वेदिक रसायन फार्मेसी, देहली, द्वारा आयोजित चाय पार्टी में भाग लिया। इस आयोजन के लिए श्री प्रधान जी ने श्री शास्त्री महोदय के प्रति औपचारिक कृतज्ञता प्रगट की तथा श्री शास्त्री जी ने सभी का आभार प्रकाशित किया। सायं ६ वजे सभी आनन्दमय वातावरण में विसर्जित हुए।

विशेष—नि० भा० अयुर्वेद विद्यापीठ के दृढ़ीकरण की योजना परिशिष्ट में देखें।

निवेदक
नानकचन्द्रः
विद्यापीठ मन्त्री

परिशिष्ट

सदस्य महानुभावों की जानकारी एवं अध्ययनार्थ नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ के दृढ़ीकरण की वह योजना निम्न प्रकाशित है जो कि विद्यापीठ कार्यकारिणी समिति के ता० १४-६-५६ के अधिवेशन में प्रस्ताव सं० ५ के अन्तर्गत विद्यापीठ कार्यालय की ओर से प्रस्तुत की गई थी। सभी वैद्यबन्धुओं से विनम्र प्रार्थना है कि इस योजना का समालोचनात्मक दृष्टि से सूक्ष्म एवं गम्भीर अध्ययन करें और इस पर अपनी अमूल्य सम्मति एवं टीका-टिप्पणी से मुझे यथासम्भव शीघ्र अनुगृहीत करें ताकि आपकी सम्मति के प्रकाश में प्रस्तुत योजना पर गम्भीरता पूर्वक पूर्ण विचार किया जा सके और इस पर उपयुक्त निर्णय तदर्थ समिति द्वारा किए जा सकें। —विद्यापीठ मंत्री

निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ के दृढ़ीकरण की योजना

नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ के समक्ष इस समय तीन मुख्य कार्य हैं जिन्हें सम्पन्न करने से आयुर्वेद की-पूर्णरूपेण रक्षा तथा नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ एवं इसके साथ ही अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का अस्तित्व दृढ़ बनना सम्भव है। वे कार्य निम्नलिखित हैं—

१—आयुर्वेद शिक्षणार्थ आदर्श पाठ्यक्रम का निर्माण एवं उसे प्रचलित करना।

२—विद्यापीठ के आधीन अधिकाधिक संख्या में देश के विभिन्न प्रदेशों तथा नगरों में विद्यालयों तथा महाविद्यालयों की स्थापना करना तथा कराना।

३—केन्द्रीय तथा प्रदेशीय सरकारों द्वारा विद्यापीठ की उपाधियों को रजिस्ट्रेशन तथा नौकरियों के लिये मान्य कराना।

ये कार्य कैसे सम्पन्न किये जायें इस विषय पर हमारे कुछ विचार संक्षेप में निम्न प्रकार हैं—

१—पाठ्यक्रम के निर्माणार्थ एक समिति संगठित की जाय। समिति का इस प्रकार कार्य निर्देश किया जाय जिससे यह समिति अपने लक्ष्य को भली प्रकार समझती हुई तदर्थ अपनी शिफारिशें कर सके। स्थूलरूप में संकेत ये होने चाहियें:—

क—विद्यापीठ की प्रचलित—आयुर्वेद भिषक्, वैद्यविशारद, आयुर्वेद विशारद, वैद्याचार्य तथा आयुर्वेदाचार्य, परीक्षाओं के क्रमशः ऐसे पाठ्यक्रम निर्माण करना जिससे उच्च श्रेणी के आयुर्वेदाचार्य तथा वैद्य एवं उपवैद्य, आदि अच्छी संख्या में तैयार किये जा सकें।

ख—उपर्युक्त परीक्षाओं के अतिरिक्त आयुर्वेद शास्त्र के विभिन्न अंगों के पारंगतों, रसायनशास्त्रियों, जटिल रोगों के विशेषज्ञों, शल्य वैद्यों, दन्त-वैद्यों, नेत्र वैद्यों, स्त्री वैद्याओं आदि के उत्पादनार्थ भी पाठ्यक्रम बनायें जाने चाहियें ताकि आयुर्वेद वर्तमान की—शान्ती अथवा युद्ध कालीन—सभी माँगों की पूर्ति कर सके और अन्य चिकित्सा प्रणालियों से पिछड़ा हुआ न कहा जा सके।

ग—सभी पाठ्यक्रम ऐसे हों जिन्हें सरकार द्वारा मान्यता मिल सके परन्तु तथाकथित आधुनिक विज्ञान का उनमें न्यूनतम आवश्यक अंश से अधिक समावेश न हो। ऐसी सिफ़ारिशें करते हुए इस बात का ध्यान रक्खा जाय कि आयुर्वेद के विशुद्ध रूप को किंचित मात्र भी ठेस न लगे।

घ—सम्पूर्ण आयुर्वेदाध्ययन का पाठ्यक्रम पांच वर्ष का निश्चित किया जाय जिस में डिप्लोमा कोर्स तीन वर्ष का रक्खा जाय और इसकी उपाधि आयुर्वेद विशारद निश्चित की जाय। एतदर्थ आयुर्वेद विशारद के तीन खण्ड कर दिये जायें जो क्रमशः तीन वर्ष में पूरे किये जा सकें। आयुर्वेदाचार्य को डिग्री कोर्स निश्चित किया जाय।

ङ—आयुर्वेद भिषक् परीक्षा वर्तमान क्रम से ही चालू रहे परन्तु इस योजना के अन्तर्गत आयुर्वेद भिषक द्वितीय खण्ड और आयुर्वेद-विशारद प्रथम खण्ड की परीक्षा समकक्षा मानी जाय तथा जो व्यक्ति आयुर्वेद-भिषक् उत्तीर्ण हों उन्हें सीधे ही आयुर्वेद विशारद की द्वितीय खण्ड की पढ़ाई में प्रवेश दिया जाय।

च—सम्पूर्ण पाठ्यक्रम गुरू-परम्परा तथा विद्यालयों द्वारा पठन-पाठन की मिश्रित प्रणाली पर आधारित किया जाय। इस प्रणाली के आधीन आयुर्वेद भिषक् और आचार्य की परीक्षाऐं गुरू-परम्परा प्रणाली द्वारा तथा। अथवा विद्यालयों में अध्ययन करके पूरी की

जा सके, ऐसी व्यवस्था मान्य की जाय परन्तु आयुर्वेद विशारद की पढ़ाई का त्रिवर्षीय क्रम निश्चित रूप से विद्यालयों में पढ़ कर ही पूरा किया जाय और यदि कोई परीक्षार्थी आयुर्वेद भिषक् परीक्षा उत्तीर्ण करने के अनन्तर आयुर्वेद विषारद परीक्षार्थ प्रवेश पावे तो उस दशा म उसे आयुर्वेद विशारद परीक्षा के शेष दो खण्ड विद्यालय में प्रवेश पाकर ही पूरे करने होंगे ऐसी पद्धित निर्धारित कर दी जावे।

ऐसी मिश्रित व्यवस्था से गुरू-परम्परा शिक्षण प्रणाली की भी मान्यता एवं सम्मान बने रहेंगे और आयुर्वेद विद्यालयों को भी वांछित प्रोत्साहन मिल सकेगा एवं परीक्षार्थियों को भी दोनों प्रणालियों के उत्तम लाभ थोड़े कष्ट और व्यय से उपलब्ध हो जायेंगे।

छ—यह मिश्रित प्रणाली सन् १९६० अथवा १९६१ से लागू की जाय, तब तक वर्तमान प्रणाली प्रचलित रहे। आयुर्वेदाचार्य के पाठ्यक्रम की पूर्ति तथा परीक्षा में प्रवेशार्थ दोनों सुविधायें विकल्प रूप से दी जायं अर्थात् इस परीक्षा के परीक्षार्थी विद्यालयों में पढ़ सकें और यदि चाहें तो गुरू-परम्परा प्रणाली से भी प्रवेश पा सकें।

यदि व्यवस्थित ढंग से कार्य किया जाय तो उपर्युक्त पाठ्यक्रम बंगलौर में सम्पन्न होने वाले ४२ वें अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन तक तैयार किये जा सकते हैं। और वहां स्वीकार कराये जा सकते हैं।

पाठ्यक्रमों की स्वीकृति के अनन्तर विषय विशेषों पर उच्च श्रेणी की पुस्तकें निश्चित की जायें और जिन-जिन विषयों पर उचित स्तर की पुस्तकें उपलब्ध न हो सकें उन्हें आवश्यकतानुसार चुने हुए धुरन्धर विद्वानों द्वारा लिखवाने की व्यवस्था की जाय। यद्यपि ३६ वें तथा ३७ वें अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन द्वारा इस कार्य को बहुत महत्त्वपूर्ण समझते हुए तदर्थ १५,००० पन्द्रह सहस्र रुपया प्रारम्भिक व्यय के लिये स्वीकार भी किये गये थे तो भी इस दिशा में अभी तक कुछ भी कार्य नहीं किया गया, किन्तु अब विद्यापीठ की रक्षार्थ इसका सूत्रपात परमावश्यक है।

२—विद्यापीठ के आधीन विद्यालय स्थापित करना:—

भारतवर्ष में इस समय सौ से अधिक छोटे बड़े आयुर्वेद विद्यालय हैं जिन में २८ विद्यालय नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ से सम्बद्ध हैं तथा १५ के लगभग विद्यालय राजकीय अथवा अर्द्धराजकीय हैं। इनके अतिरिक्त लखनऊ, बनारस, नागपुर, कलकत्ता, मद्रास, तथा आन्ध्र विश्वविद्यालयों द्वारा भी आयुर्वेद शिक्षण की व्यवस्था की गई है। लंका में भी एक आयुर्वेद विद्यालय चल रहा है। शेष विद्यालय सर्वथा स्वतन्त्र हैं।

जहाँ तक सरकार तथा विश्वविद्यालयों का सम्बन्ध है उनमें प्रचलित आयुर्वेद शिक्षण का पाठ्यक्रम बहुत मात्रा में डाक्टरी मिश्रित है और इसके फलस्वरूप जिन तथा-कथित आयुर्वेदिक स्नातकों की उपज हो रही है वे वास्तव में न तो वैद्य कहे जा सकते हैं और न ही डाक्टर तथा उनसे आयुर्वेद के किसी प्रकार के उद्धार की आशा रखना मृगतृष्णा के तुल्य है। आवश्यकता इस बात की है कि भारतवर्ष में आयुर्वेद के कुछ ऐसे सुव्यवस्थित

विद्यालय हों जिन्हें आयुर्वेदीय दृष्टिकोण से स्वयं आयुर्वेदज्ञ अपने मतानुसार चलायें। इसी से आयुर्वेद का वास्तविक स्वरूप सुरक्षित रखा जा सकता है। यह कार्य एकमात्र नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ का है और इसी ध्येय की सिद्धि के लिये ही गत बीस वर्षों से विद्यापीठ के समक्ष सर्वसाधनसम्पन्न एक आयुर्वेद विश्वविद्यालय स्थापित करने का जटिल प्रश्न उपस्थित है। इस लक्ष्यपूर्ति के लिये अब से दस वर्ष पूर्व भावी आयुर्वेद विश्वविद्यालय का विधान भी तैयार किया गया था और एतदर्थ दो करोड़ रुपया एकत्रित करने की योजना भी बनाई गई थी जो सम्भवतः एकदम महान होने के कारण कार्यान्वित नहीं की जा सकी। हमारे तुच्छ विचारों में यह योजना यदि निम्नप्रकार कार्यान्वित की जाय तो सफलता अधिक सम्भव है।

भारत में इस समय कई श्रेणियों के आयुर्वेद विद्यालय प्रचलित हैं। कुछ ऐसे विद्यालय हैं जो केवल मात्र एक दो कमरे में कार्य कर रहे हैं। कुछ ऐसे हैं जिन के पास भवन आदि तथा अन्य सम्पत्ति तो है परन्तु इन साधनों के अपर्याप्त होने के कारण तथा इन विद्यालयों के निःसहाय होने के कारण वे ठीक प्रकार चल नहीं रहे हैं कुछ ऐसे विद्यालय भी हैं जिनके पास विशाल सम्पत्ति है परन्तु किसी केन्द्रीय संस्था की ओर से उन्हें प्रोत्साहन न मिलने के कारण वे अपने कार्यक्षेत्र में वृद्धि नहीं कर सके। कई विद्यालय ट्रस्ट्स तथा सभाओं के आधीन हैं जो अपना कार्य बढ़ाने के लिये उत्सुक तो हैं किन्तु किसी बड़ी संस्था की ओर से उन्हें चेतना और परामर्श की आवश्यकता है। उक्त विद्यालयों के कार्य में जो कमी है उसकी पूर्ति नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ का सक्रिय आश्रय उन्हें मिलने से हो सकती है।

विभिन्न विद्यालयों को विद्यापीठ से सम्बद्ध करने अथवा उनको विद्यापीठ के आधीन लेने के लिये एक विराट नीति अथवा योजना का निर्माण किया जाना चाहिये, जिसे आयुर्वेद महासम्मेलन से स्वीकार करवा कर प्रकाशित किया जाय। उक्त नीति अथवा योजना के आधीन सभी विद्यालयों को आमंत्रित किया जाय कि वे विद्यापीठ के साथ अपना सम्बन्ध स्थापित करें। भारतवर्ष के कोने-कोने में विराजमान महासम्मेलन के प्रमुख सदस्यों एवं विद्यापीठ के स्नातकों द्वारा उन विद्यालयों के प्रबन्धकों अथवा प्रबन्धक समितियों से सम्पर्क स्थापित किया जाय और इस योजना से उन विद्यालयों को विशेषतया क्या-क्या लाभ पहुचेंगे यह उन्हें समझाया जाय ताकि वे इस कार्य की ओर प्रेरित हो सकें।

विद्यापीठ के आधीन विद्यालयों के लेने के लिये निम्नप्रकार अथवा इससे मिलती जुलती कोई नीति निश्चित करनी चाहिये:—

क—लिये जा रहे विद्यालयों की प्रबन्धक समिति तथा विद्यापीठ के तत्स्थानीय प्रतिनिधियों द्वारा संगठित एक सम्मिलित प्रबन्धक समिति नियुक्त की जाय जिसके आवश्यकतानुसार ७ से ११ तक सदस्य हों।

ख—इस विद्यालय की सभी सम्पत्ति इसी समिति के आधीन हो तथा आयुर्वेद महासम्मेलन-विद्यापीठ द्वारा निर्धारित विराट नीति के अनुसार विद्यालय का कार्य इसी समिति द्वारा संचालित किया जाय।

ग—जिस प्रदेश में वह विद्यालय विद्यमान हो वहाँ से उस विद्यालय के लिये अन्य दानादि संगृहीत करने तथा उसे उपयोग में लाने का अधिकार भी इसी समिति को हो।

घ—यही समिति स्थानीय नगरपालिका अर्थात् म्युनिसिपेलटी, क्षेत्रीय जनपद सभा अर्थात् डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, तथा तत्तत्प्रदेशीय सरकार अर्थात् स्टेट गवर्नमेन्ट एवं केन्द्रीय सरकार से भी अपने विद्यालय के लिये अधिकोधिक विभिन्न प्रकार के लाभ तथा ग्रान्ट्स आदि प्राप्त करने का यत्न करे और उक्त ग्रान्ट्स का उपयोग करे। इस कार्य सम्पादन में विद्यापीठ उन्हें उचित सहयोग दे।

ङ—प्रत्येक विद्यालय के अन्तर्गत न्यूनातिन्यून एक धर्मार्थ बाहरी औषधालय, १० शैयाओं का एक भीतरी आतुरालय, एक पुस्तकालय एवं वाचनालय, एक संग्रहालय अर्थात् म्युजियम, एक शवागार तथा शल्यक्रिया भवन बनाने का यत्न किया जाय। जिन विद्यालयों में यह साधन पहिले से ही विद्यमान हों उन्हें प्रसारित करने का प्रबन्ध किया जाय। ये सभी साधन जनता की सेवा के साथ साथ विद्यार्थियों के शिक्षण तथा क्रियात्मक ज्ञान एवं कर्माभ्यास के लिये प्रयोग में लाये जायँ।

च—प्रत्येक विद्यालय के साथ एक रसायनशाला स्थापित की जाय। उक्त फार्मेसी में ठीक शास्त्रोक्त ढंग से औषधियाँ तैयार करवाई जायें तथा विद्यार्थियों को औषध निर्माण कला सिखाई जाय। उक्त औषधियों को उस क्षेत्र के वैद्यों तथा जनता में प्रचारित एवं प्रसिद्ध किया जाय और उपयुक्त भावों पर बेचा जाय।

छ—महासम्मेलन-विद्यापीठ अपने अखिल भारतीय प्रभाव से अधिकाधिक धन प्रत्येक विद्यालय के लिये दान तथा ग्रान्ट्स के रूप में प्राप्त करने का प्रयत्न करे। नवीन दानादि से एकत्रित धन तथा रसायनशाला एवं औषध निर्माणशाला की बचत का दशमांश केन्द्रीय स्थिर कोष अर्थात् रिजर्वफन्ड के रूप में सभी विद्यालयों की सामूहिक रूप से उचित सहायता के लिये सुरक्षित रक्खा जाय।

ज—प्रत्येक विद्यालय में विद्यापीठ के पाठ्यक्रमानुसार पठन-पाठन तथा शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था हो।

झ—विद्यालयों के कार्य संचालन में विद्यापीठ तथा विद्यालय की प्रबन्ध समिति के अधिकारों एवं कार्यों में निश्चित विभाजन एग्रीमेन्ट्स द्वारा किया जाय ताकि बाद में मतभेद की सम्भावना न रहे। मतभेद स्थापित हो जाने की अवस्था में क्या किया जाय इसकी व्यवस्था भी उचित प्रकार प्रारम्भिक एग्रीमेन्ट्स में रखी जाय।

ञ—उपर्युक्त योजना को ठीक ढंग से कार्यान्वित करने के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि विद्यापीठ का केन्द्रीय कार्यालय बड़े पैमाने पर रक्खा जाय और विद्यापीठ का सम्पूर्ण प्रबन्ध एक वृहत् प्रतिनिधि प्रबन्धक समिति को सौंपा जाय।

विद्यापीठ की केन्द्रीय प्रबन्धक समिति का संगठन उच्च श्रेणी का होना चाहिये ताकि

सम्पूर्ण प्रबन्ध उच्च श्रेणी का ही हो। हमारे विचार में उक्त प्रबन्धक समिति का संगठन निम्नप्रकार होना चाहिये :—

१—महासम्मेलन से सम्बद्ध उस की प्रत्येक प्रादेशिक शाखा संस्था द्वारा निर्वाचित उस प्रदेश का आयुर्वेद का एक प्रौढ़ विद्वान्।

२—प्रत्येक सम्बद्ध अथवा अधीनस्थ आयुर्वेद विद्यालय अथवा महाविद्यालय की प्रबन्धक समिति द्वारा निर्वाचित एक प्रतिनिधि अथवा उसी विद्यालय का आचार्य।

३—विद्यापीठ के स्नातक मण्डल द्वारा निर्वाचित १० प्रतिनिधि।

४—अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन द्वारा निर्वाचित विद्यापाठ के पदाधिकारी वर्ग।

५—अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के प्रधान और प्रधानमन्त्री।

ट—विद्यापीठ के अनेक स्नातक इस समय अच्छे-अच्छे स्थानों की पूर्ति कर रहे हैं और उनका अपने अपने प्रदेश एवं कार्य-क्षेत्र में अच्छा प्रभाव है। अतएव विद्यापीठ के पुनर्गठनार्थ विद्यापीठ स्नातक मण्डल का दृढ़ संगठन किया जाय। विभिन्न विश्वविद्यालयों की भान्ति विद्यापीठ के आचार्यों तथा दस वर्ष की स्थिति वाले आयुर्वेद विशारदों को भी रजिस्टर्ड ग्रेजुएटस् के रूप में विद्यापीठ द्वारा रजिस्टर्ड किया जाय और उनकी सहायता-सहयोग से पूर्ण लाभ उठाया जाय जिसे वे लोग स्वाभाविक रूप से सहर्ष प्रदान करेंगे।

विद्यालयों को साथ जोड़ने के लिये जो कुछ ऊपर लिखा गया है इसे एक योजना की रूप रेखा मात्र मानना चाहिये तथा इस में उचित परिवर्तन, परिवर्धन एवं परिवर्जन विभिन्न-विभिन्न परिस्थितियों एवं आवश्यकताओं के अनुकूल किये जाने चाहियें, अर्थात् इस योजना को प्रारम्भिक विचार मात्रा मानना चाहिये।

धैर्य और सचेष्टता से चलते हुए सर्वप्रथम कुछ सम्बद्ध विद्यालय विद्यापीठ के आधीन लिये जायें। फिर अन्य-अन्य विद्यालय विद्यापीठ के आधीन लिये जायें। इस प्रकार विद्यापीठ के आधीन विद्यालयों की संख्या ५०, ६० तक पहुँच सकती है, और विद्यापीठ का कार्य क्षेत्र समस्त भारत में विस्तृत होने के कारण उसे आयुर्वेद विश्वविद्यालय स्वतः माना और बनाया जा सकता है।

इस योजना के आधीन अधिकाधिक विद्यालय विद्यापीठ के आधीन लिये जायें। भारत गणराज्य के प्रत्येक प्रदेश में आवश्यकतानुसार कई-कई आयुर्वेदिक विद्यालय होने चाहियें तथा जिन प्रमुख-प्रमुख नगरों अथवा प्रदेशों में अभी तक आयुर्वेद विद्यालय विद्यमान नहीं वहां विद्यालय स्थापित करने के लिये स्थानीय समितियां नियुक्त की जानी चाहियें और उनके सहयोग से विद्यालय स्थापित किए जायें। क्योंकि इस योजना के आधीन धन, शक्ति अथवा नियंत्रण को विशेषतया केन्द्रित करने का यत्न नहीं होगा प्रत्युत विकेन्द्रित करने का यत्न होगा, अतएव सभी स्थानों में वैद्यों की इस योजना में बहुत रुचि होगी और इससे उन्हें विशेष लाभ भी होगा। "आयुर्वेद विश्वविद्यालय अमुक स्थान में

ही होगा" जब ऐसा कहा जाता है तो उससे इतर स्थानों के वैद्य बन्धुओं की उस में समय, शक्ति, और धन लगाने की रुचि नहीं रहती और वे प्रायः उदासीन हो जाते हैं।

जिन स्थानों के विद्यालयों के लिये प्रचुर साधन जुट सकें उन्हें महाविद्यालय बनाया जाय। विद्यालय तथा महाविद्यालयों में विद्यार्थियों के मासिक शुल्क आदि विद्यापीठ द्वारा निश्चित किये जायें। प्रगल्भ विद्यार्थियों को तथा अन्वेषण कार्य के लिये छात्र-वृत्तियाँ दी जायें। इसके अतिरिक्त धनी मानी लोगों, रसायनशालाओं तथा अन्य आयुर्वेदिक उद्योगाधिपतियों से पारितोषिक एवं छात्र-वृत्तियां संगृहीत करने का यत्न किया जाय।

विद्यापीठ प्रधानतया परीक्षण संस्था ही रहे तथा अपने निश्चित परीक्षा-शुल्क लेकर छात्रों का परीक्षण करे और उपाधियां प्रदान करे। गुरू परम्परा प्रणाली की जो व्यवस्था ऊपर लिखी गई है उसे निजी विद्यालयों की संख्या क्रमशः बढ़ने पर घटाया जाना चाहिये। सभी विद्यालय एवं. महाविद्यालय विद्यापीठ से सम्बद्ध रहें। केन्द्रीय स्थिर कोष से उन्हें समय-समय पर आवश्यकतानुसार आर्थिक एवं द्रव्य रूप में सहायता दी जाय।

विद्यापीठ अपने सम्पूर्ण कार्य-संचालन में सभी को अपेक्षित मानदेय अथवा आनरेरियम दे और किसी से कोई कार्य सर्वथा निःशुल्क न कराये।

इस योजना में जैसे-जैसे विद्यापीठ अग्रसर होगा वैसे वैसे यह अपने विश्वविद्यापीठीय स्वरूप के समीप आता रहेगा। जब ५० के लगभग विद्यालय विद्यापीठ से सम्बद्ध हो जायेंगे तो इसे विश्वविद्यालय के रूप में सम्मानित कराने में कोई बाधा खड़ी न हो सकेगी, और इसे यह सम्मान मिल कर ही रहेगा।

जब उपर्युक्त योजना ठीक प्रकार कार्यान्वित हो जाय तो समय, शक्ति, धन एवं साधनों तथा आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विद्यापीठ का स्वरूप किसी भी प्रकार परिवर्तित किया जा सकेगा ताकि राष्ट्र, देश, आयुर्वेद विज्ञान एवं वैद्यक सम्प्रदाय की अधिकाधिक सेवा का श्रेय इसे प्राप्त हो सके।

३—तीसरा कार्य केन्द्रीय तथा प्रादेशिक सरकारों द्वारा विद्यापीठ की उपाधियों को रजिस्ट्रेशन तथा नौकरियों के लिये मान्य करवाने का है। इस दिशा में विद्यापीठ का जो तिरस्कार वर्तमान में कहीं-कहीं हो रहा है उसका उत्तरदायित्व स्वयं वैद्यों पर है। प्रायः सभी देशी चिकित्सा बोर्ड्स पर महासम्मेलन के सदस्य अच्छे अनुपात में विद्यमान हैं परन्तु उनमें से कईयों को विद्यापीठ के लिये कोई तड़प ही नहीं जिसके फलस्वरूप भारतवर्ष की सर्वोच्च संस्था होते हुए भी इसकी ठीक रक्षा नहीं हो रही है।

महासम्मेलन बहुत शक्तिशाली संस्था है, केवल इसने अपने प्रभाव का ठीक प्रकार प्रदर्शन नहीं किया जो आजकल के युग में परमावश्यक है। इस अवस्था में देशी चिकित्सा बोर्ड्स के सभी वैद्य बन्धुओं से विद्यापीठ के लिये कार्य करने की सानुरोध प्रार्थना की जाय और उन्हें आग्रहपूर्वक बाध्य किया जाय कि वे विद्यापीठ की उपाधियों को अवश्य सम्मानित करायें।

विद्यापीठ की परीक्षाओं को सदैव के लिये सम्मानित कराने के लिये उपर्युक्त प्रकार की योजना एवं आदर्श पाठ्यक्रम यथासम्भव शीघ्र प्रचलित किये जायें और विद्यालय स्थापित किये जायें। ऐसा करने से विद्यापीठ की उपाधियों का स्वतः ही सम्मान बढ़ेगा।

अन्त में हम यह निवेदन कर देना उचित समझते हैं कि यह योजना एक रूपरेखा एवं कुछ विचारों के रूप में ही प्रस्तुत की जा रही है, और इसे केवल गम्भीर विचार विमर्श के लिये प्रारम्भिक सामग्री मात्र मानना चाहिये।

आपका सहयोगाभिलाषी
नानकचन्द्र
मंत्री

देहली, ता० १४-६-५६। निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ.





नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ १९५६ वर्षीय अवशिष्ट परीक्षाफलम्

(१) वैद्याचार्य परीक्षाफलम्

(क) १—वैद्याचार्य प्रथम खण्ड परीक्षोत्तीर्णा :—११६ मनोहर बहाकर। ११७ रामदास ठाकरे।

(ख) वैद्याचार्य परिशिष्ट परीक्षाधिकारि—१०१ सदाशिव अष्टुनकर आयुर्वेदेतिहास।

(२) वैद्यविशारद परीक्षाफलम्

(क) वैद्यविशारद परीक्षोत्तीर्णा :—७७ तुलसीराम शर्मा द्वि०। १४१ प्रभाकर दामोदर ललित द्वि०। २०४ रामदास एकडे द्वि०। २११ पाण्डुरंग किनगे तृ०।

(ख) वैद्य विशारद प्रथम खण्ड परीक्षोत्तीर्णा:—१९५ पुरुषोत्तम राणे। १९६ पंजाबराव पाटील। १९७ दयाराम गायधने। २०० दादाराव देशमुख। २०१ अर्जुन गाडगे। २०२ गणेशराव देशमुख। २०५ शिवहरि गजधाणे। २०६ भानुदास जोशी। २०७ वासुदेव भुगुल। २१२ मधुकर निम्बोले।

(ग) वैद्यविशारद परिशिष्ट परीक्षाधिकारि :—१२ तुलसीराम मौखिक। १९३ हीरामण ख० चौधरी अष्टांग०। १९४ महादेव अर्जुन अम्बलकार अष्टांग०।

(३) आयुर्वेदभिषक परीक्षाफलम्

(क) आयुर्वेद भिषक परीक्षोत्तीर्णा :—५९० विश्वनाथ सावन्त द्वि०। ७३९ जगन्नाथ खरड तृ०। ७४० मोतीराम उमाले तृ०। ७४४ हिंमत सीताराम तृ०। ७४६ रामकृष्ण वराडे द्वि०। ११५१ सच्चिदानन्द शर्मा द्वि०।

(ख) आयुर्वेद भिषक प्रथम खण्ड परीक्षोत्तीर्णा:—६०९ लक्ष्मीबाई। ७५० रामचन्द सहस्रबुद्धे। ७५१ विट्ठल जब्रजाल। ७५४ तुकाराम आमटे। ७५५ दिनकर येनकर। १०९१ श्यामसुन्दर चौधरी।

(ग) आयुर्वेद भिषक परिशिष्ट परीक्षाधिकारि :—३५ उत्तमदेशमुख, मौखिक। ३६ रामदास श्रावण, मौखिक। ४० किशनराव, अगद०। ६१० गजानन मेलेकर, अगद। ६३४ रामावतार शर्मा, कौमार। ६७४ सोमशेखर धोत्रे अगद। ७४२ काशीराम पाटील, अगद। ७४५ परशुराम लुदरकार, अगद।

जून अंक में प्रकाशित परीक्षाफल का शुद्धिपत्र

अशुद्ध	शुद्ध
८६३ ओमप्रकाश शर्मा भारद्वाज	८६२ ओम्प्रकाश शर्मा भारद्वाज।
ललिता प्रसाद त्रिपाठी	८६९ ललिताप्रसाद त्रिपाठी।

आयुर्वेद लोक

दयानन्द महिला आयुर्वेदिक कालेज

"दयानन्द महिला आयुर्वेदिक कालेज" दयानन्द वाटिका, (रामबाग) सब्जी मण्डी, देहली, में आगामी वर्ष का प्रवेश आरम्भ है। प्रवेश के लिए प्रार्थना पत्र शीघ्र भेजने चाहियें।

कालेज में अ० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ की शिक्षा का आधुनिक विषयों सहित विशेष प्रबन्ध है तथा बोर्ड आफ आयुर्वेदिक एण्ड यूनानी सिस्टम्स आफ मेडीसन देहली स्टेट की पाठ्यविधि के अनुसार ४ वर्ष तक आयुर्वेद की शिक्षा देने का प्रबन्ध किया जा रहा है

क्रियात्मक शिक्षा का पूर्ण प्रबन्ध किया जा रहा है। छात्रावास का उत्तम प्रबन्ध है।

नियमावली तथा फार्म १।) रुपये में कालेज से ले सकते हैं।

बालकृष्ण वैद्य प्रिन्सिपल

गवर्नमेंट आयुर्वेदिक कालेज, जयपुर

गवर्नमेंट आयुर्वेदिक कालेज, जयपुर, का नवीन सत्र दिनांक ७ जुलाई, १९५६ से प्रारम्भ हो रहा है। प्रवेश की अन्तिम तिथि ७ अगस्त है। महाराणा संस्कृत कालेज की किसी भी विषय की उपाध्याय परीक्षोत्तीर्ण एवं बनारस की संस्कृत मध्यमा परीक्षोत्तीर्ण छात्र प्रविष्ट किए जाते हैं। संस्कृत प्रथमा एवं प्रवेशिका तथा संस्कृत विषय के साथ मैट्रिक उत्तीर्ण छात्र व्युत्पत्ति की जांच में सफल सिद्ध होने पर प्रवेश के अधिकारी हैं। कालेज में चिकित्सालय, भेषजनिर्माणशाला, पुस्तकालय, प्रदर्शनालय, प्रयोगशाला, छात्रावास, आरोग्यशाला, शल्य चिकित्सा एवं स्त्री रोग तथा प्रसव विज्ञान आदि की कार्याभ्यास एवं प्रायोगिक शिक्षण के साथ पूर्ण व्यवस्था है। इच्छुक छात्र प्रिन्सिपल, गवर्नमेंट आयुर्वेदिक कालेज, जयपुर, के पास आवेदन पत्र शीघ्र भेजें।

जिला वैद्यमण्डल, भटिण्डा

जिला वैद्य मण्डल भटिण्डा की कार्यकारिणी की बैठक १ जौलाई १९५६ को श्री पं० मुन्शीराम जी वैद्य की प्रधानता में हुई जिसमें निम्नलिखित प्रस्ताव पास हुए!

(१) पास हुआ कि स्वास्थ्य मन्त्री, पटियाला, को रजिस्ट्रेशन के सम्बन्ध में रजिस्ट्रेशन बोर्ड की धान्दली का पूर्ण परिचय कराया जावे।

(२) आयुर्वेदिक बोर्ड का चुनाव अवैधानिक है इस विषय में स्वास्थ्य मन्त्री जी से पत्र व्यवहार किया जावे।

(३) आयुर्वेदिक तथा यूनानी ज्ञान से रहित डाक्टरों को रजिस्टर्ड करके आयुर्वेद को रसातल में भेजने की व्यवस्था की गई है इसको रोका जावे।

संजीवनी बूटी मिली

मृत संजीवनी बूटी, जिसने राम-रावण युद्ध में लक्ष्मणजी की प्राण-रक्षा की थी, पुनः मिल गई है। भारत के वानस्पतिक उद्यान के विशेषज्ञों ने उसे असम में खोज निकाला है, जहां वह खासी की पहाड़ियों में प्रचुरता से मिलती है। बताया जाता है कि खासी की पहाड़ियों के आदिवासी मिर्गी और हिस्टीरिया रोगों में उसे प्रयुक्त करते हैं और वह बड़ी लाभदायक पाई जाती है।

इन विशेषज्ञों को अलभ्य वनस्पतियों की खोज करते समय इस बूटी की कुछ सूखी पत्तियां मिली थीं। इस पर उन्होंने दुर्गम जंगलों में खूब दूर तक अन्दर जाकर उसकी खोज की और उन्हें उसके अनेक जीवित पौधे भी मिल गए। यह उल्लेखनीय है कि भारत का राष्ट्रीय वनस्पति उद्यान लखनऊ में स्थित है।

दवे समिति हरद्वार में

आयुर्वेदिक यूनानी तिब्ब तथा होमियोपैथिक चिकित्सा पद्धतियों की शिक्षा में समानता लाने के प्रश्न पर विचार करने के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त दवे-समिति के आठ सदस्यों में से चार सदस्य लखनऊ से हरिद्वार आए।

समिति के सदस्यों ने ऋषिकुल आयुर्वेदिक कालेज, गुरुकुल सेवा समिति आदि औषधालयों का निरीक्षण किया और देहरादून, ऋषिकेश, मेरठ, अमरोहा आदि नगरों के लगभग सौ वैद्यों आदि के बयान लिए, जिनमें श्री भुवनचन्द्र जोशी वैद्य, डा० विष्णुदत्त भारद्वाज, पं० सागरदत्त वैद्य, पं० हरनाम दत्त वैद्य, स्वामी दयानन्द, पं० अमरनाथ वैद्यशास्त्री, श्री धर्मस्वरूप रतूड़ी, और डा० हरप्रसाद प्रमुख थे। श्री अमरनाथ ने प्रश्नोत्तरी के सम्बन्ध में, जो कि अंग्रेजी भाषा में भेजी गई थी, कहा कि आगे से यह हिन्दी (राष्ट्रभाषा) में आनी चाहिए। इस सुझाव को सदस्यों ने स्वीकार किया। समिति के सदस्य हरिद्वार से दिल्ली चले गए हैं।

शुद्ध आयुर्वेद कोर्स का परीक्षाफल

बम्बई राज्य शुद्ध आयुर्वेदिक कोर्स समिति के अन्तर्गत गत १ अप्रैल १९५६ में सम्पन्न आयुर्वेद प्रवीण परीक्षा का निम्नलिखित परिणाम घोषित किया गया है:—४, ५, ८, ११, १३, १४, १५, १६, १७, १९, २१, २२, २३, २६, २७, २८, २९, ३०, ३१, ३३, ३४

---

७ मई के भाषण के सम्बन्ध में एक अन्य अमेरिकन महिला के पत्र के उद्धरण

पण्डित शिवशर्मा, बम्बई ।
अमेरिकन एम्बेसी

प्रिय महोदय,

मई के प्रारम्भ में आपने देहली में जो भाषण दिया था उसे सुनने का सौभाग्य मुझे और मेरे पति को प्राप्त हुआ था । जिस ढंग से आपने आयुर्वेदिक सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया उससे हम बहुत प्रोत्साहित और प्रभावित हुए थे और इसके सम्बन्ध में और अधिक जानने को मैं बहुत उत्सुक हूं, विशेषकर उन दृष्टिकोणों को जो मानसिक-शारीरिक चिकित्सा, व्यक्तित्व तथा शारीर-प्रकारों सम्बन्धी पाश्चात्य गवेषणाओं से टक्कर लेते प्रतीत पड़ते हैं । यद्यपि कुछ वर्षों से मेरा सम्बन्ध इस विषय से छूटा हुआ है, मैं विवाह से पूर्व कई वर्षों तक एक मानसिक रोगों की चिकित्सा के अस्पताल में अनुसंधान सम्बन्धी कार्य कर चुकी हूं और मनोविज्ञान में मैंने एम० ए० की उपाधि प्राप्त की है (यूनिवर्सिटी आफ कैलेफोर्निया, बर्कले) । अब उस दिशा में गवेषणायें जारी रखने में मेरी रुचि पुनःजागृत हुई है ।

देहली में वैद्यों तथा अन्य व्यक्तियों से मैं ने वार्तालाप किया है और मुझे कुछ दूसरे व्यक्तियों के भी मिलने की आशा है जिनसे इस विषय पर मैं बातचीत कर सकूं । कृपा होगी यदि आप कुछ ऐसे व्यक्तियों से मेरा सम्पर्क स्थापित करा दें जो मेरा ज्ञानवर्धन करने को तैयार हों । क्या कोई ऐसी पुस्तक है, अंग्रेजी में हो तो अच्छा, जो सहायक हो, अन्य सामग्री यदि वह विशेषतया मूल्यवान और संक्षिप्त है तो उसका अनुवाद किया जा सकता है । निकट भविष्य में क्या आपके देहली में पुनः आगमन की सम्भावना है ? आपसे वार्तालाप करना परम सौभाग्य की बात होगी ।...........

भवदीया

Extracts from a letter received from another American Lady

Pandit Shiv Sharma,
Bombay.
American Embassy

Dear Sir,

When you spoke in Delhi in early May my husband and I were among those having the pleasure of hearing you. We were very much stimulated and impressed by your presentation of the principles of Ayurvedic medicine and I am most interested in learning more about it, particularly those aspects which seem to tie in with Western investigations in psychosomatic medicine, personality and body types, etc. Although I have been away from the subject for some years, before my marriage I was a research worker in a psychiatric hospital for several years and have my M.A. in Psychology (University of California, Berkeley). Now I have a rekindled interest in continuing investigations in that line.

I have talked to several Vaidyas and others here in Delhi and hope to find others whom I can discuss the subject. It would be appreciated if you could put me in touch with some who would be willing to help enlighten me ! Is there any reading which would be helpful—in English preferably, the other material could be translated if it were particularly valuable and not too extensive. Is there any chance that you yourself will be in the Delhi area again before too long ? It would be a great privilege to talk with you.........

Sincerely Yours


Compiled
1999-2000